Remove Watermark Now

Catalog

आग्रोतकांव्य 7+8 -C 1
अग्रोतकान्वय 44-259 -B 46

pdfelement

ग्रोतकान्वय

(अग्रवाल वैश्य जाति का इतिहास)

य गणराज्य संस्थापक श्री अग्रसेन जी महाराज

—निरंजन लाल गौतम

वतीप्रसाद खेतान ट्रस्ट

भवन, 198, [illegible] रोड, [illegible]-20.

Remove Watermark Now

अगलस्सोई को झंग और लालपुर के बीच में पढ़ें

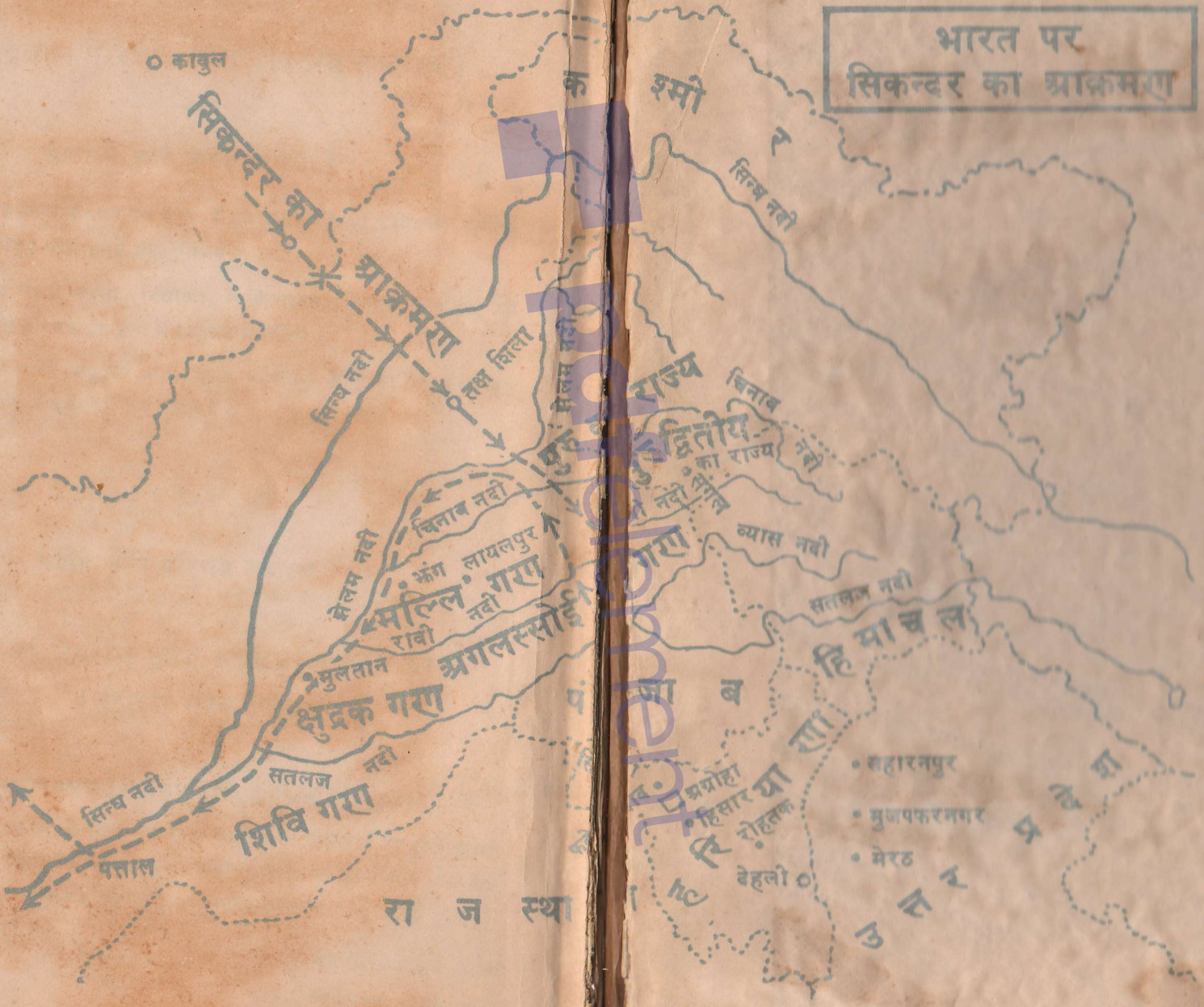

अगलस्सोई को झंग और ...लपुर के बीच में पढ़ें

Remove Watermark Now

अग्रोतकान्वय

(अग्रवाल वैश्यजाति का इतिहास)

संशोधित एवं परिवर्तित चतुर्थ संस्करण

वैद्य निरंजनलाल गौतम

भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट
खेतान भवन
१९८, जमशेद जी टाटा रोड,
चर्चगेट, रिक्लेमेशन, बम्बई-४०००२०

pdfelement
Remove Watermark Now

प्रकाशक—

भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट
"खेतान भवन"
१९८, जमसेदजी टाटा रोड,
चर्चगेट रिक्लेमेशन,
बम्बई-४०००२०

प्रथम संस्करण १९६७
द्वितीय संस्करण १९७१
तृतीय संस्करण १९७७
चतुर्थ संस्करण १९८२

सर्वाधिकार लेखकाधीन सुरक्षित

मूल्य : २० रुपये

प्राप्त स्थान—

(१) **वैद्य श्री निरंजनाल गौतम**
७/२८, ज्वाला नगर, गौतम मार्ग,
शाहदरा, दिल्ली-३२

(२) **भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट**
"खेतान भवन"
१९८, जमशेदजी टाटा रोड,
चर्चगेट रिक्लेमेशन,
बम्बई-४०००२०
दूरभाष—२२१६४५, २२१५५९
टैलीग्राम—खेतान सन्स, बम्बई

चोपड़ा प्रिंटर्स, मोहन पार्क, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

महालक्ष्मी का राजा अग्रसेन को आशीर्वाद

तव वंशे मही सर्वा पूरिता च भविष्यति
तव वंशे जातिवर्णेषु कुल नेता भविष्यति
अद्यारभ्य कुले तव नाम्नां प्रसिद्धयति
अग्रवंशीया हि प्रजाः प्रसिद्धाः भुवनत्रये
भुजा प्रसादं तव वसेत् नान्यस्मै प्रतिदापयेत्
येन सा सफला सिद्धिर्भूयात् तव युगे युगे
मम पूजा कुले यस्य सोऽग्रवंशो भविष्यति ॥

यह सारी पृथ्वी तेरे वंश से पूरित होगी। तेरे वंश में सब जाति और वर्गों के कुल नेता होंगे। आज से लगातार यह कुल तेरे नाम से प्रसिद्ध होगा। अग्रवंशी प्रजा तीनों लोक में प्रसिद्ध होगी।

तेरी भुजाओं में सदा प्रसाद रहे। इससे युग-युग में तेरी सब सिद्धि सफल हो। जिस कुल में सदा मेरी पूजा होती है, ऐसा यह अग्रवंश है।

pdfelement

Remove Watermark Now

अग्रोतकान्वय (अग्रोहाकुल) के संस्थापक

महाराजा-अग्रसेन

तथा

वैश्यों के "प्रवर" मन्त्रदृष्टा

राजा मांकिल

की

पुण्य स्मृति में

★

सृष्टि सम्वत्	१९७२९४९०८३
कृष्णावतार सम्वत्	५२०७
अग्रसेन जयन्ती सम्वत्	५१६८
महाराजा अग्रसेन सम्वत्	५१४३
कलयुग सम्वत्	५०८३
बुद्धावतार सम्वत्	२५२६
महावीर जैन सम्वत्	२५०९
मारवाड़ी विक्रम सम्वत्	२०३९
ईस्वी सम्वत्	१९८२
शक सम्वत्	१९०४
हिजरी सम्वत्	१४०२

—दिनांक २४ सितम्बर सन् १९८२ ई०

प्रथम भूमिका

अग्रवाल वैश्य जाति के सम्बन्ध में कई छोटी मोटी पुस्तकें उपलब्ध हैं, इनमें अग्रवाल वैश्यों की उत्पत्ति तथा विभिन्न क्षेत्रों में उनकी उपलब्धियों की चर्चा मिलती हैं। प्राचीन भारत की संगठित आर्थिक व्यवस्था में वैश्यों का महत्वपूर्ण योग था। न केवल धार्मिक सामाजिक एवं शैक्षणिक उन्नयन में दीर्घकाल तक उनका प्रमुख हाथ रहा अपितु देश की आर्थिक व्यवस्था को संचालित करने में भी मुख्य रूप से देश उन्हीं पर निर्भर था, हमारे देश के इतिहास का सिंहावलोकन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। विभिन्न व्यवसायों के संचालन में तथा आन्तरिक एवं बाहरी व्यापार के संवर्धन में वैश्य वर्ग बराबर संलग्न रहा। इस वर्ग ने श्रेणियों तथा निगमों की व्यवस्था द्वारा समय पर प्राचीन भारत की आर्थिक नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये। इन श्रेणियों तथा निगमों के प्रति शासन तथा जनता में उचित सम्मान था। उन्हें शासन की ओर से यह अधिकार प्राप्त था कि वे देश में मुद्राओं के प्रचलन की व्यवस्था करें। इन्हें श्रेणियों या निगमों द्वारा अपने व्यावसायिक संगठनों के नाम पर भी सिक्के जारी करने का अधिकार था। सुदृढ़ आर्थिक व्यवस्था पर ही देश की सामाजिक उन्नति तथा धर्म, दर्शन, भाषा, साहित्य एवं ललित कलाओं का उन्नयन निर्भर था।

वैश्य वर्ग की एक प्रमुख शाखा के रूप में वर्तमान अग्रवाल जन का उदय हुआ। इस जन का उत्पत्ति स्थान हरियाणा क्षेत्र का अग्रोहा नामक स्थान माना जाता है। इस स्थान में किए गए शोध कार्यों से पुरातत्व की कुछ दुर्लभ सामग्री मिली है। इनसे ज्ञात होता है कि ईसा की पूर्व प्रथम शती में इस नाम का जनपद, वर्तमान अग्रोहा तथा उसके आसपास के क्षेत्रों में स्थित था। महाभारत तथा अन्य कतिपय ग्रन्थों में भी आग्रे जनपद का उल्लेख मिलता है।

क्रमशः हरियाणा के पूर्व की ओर इस जनपद का विस्तार हुआ। वर्तमान उत्त प्रदेश के पश्चिमी भाग में अनेक स्थानों पर इन्होंने अपनी बस्तियाँ स्थापित कीं कालान्तर में इनका प्रसार प्रायः सम्पूर्ण उत्तर भारत में हो गया।

प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक वैद्य श्री निरंजन लाल गौतम ने साहित्यिक तथ पुरातत्वीय सामग्री के आधार पर अग्रवाल वैश्यों का इतिहास बड़े श्रम से तैयार किय

Remove Watermark Now

है। वंश की गणतन्त्रीय प्रणाली के अधिष्ठाता महाराजा अग्रसेन के समय से लेकर आधुनिक काल तक का इतिहास पुस्तक में वर्णित है। इस विषय में लिखने वाले अनेक पूर्ववर्ती विद्वानों के विचार विवेचनात्मक ढंग से दिए गए हैं। अग्रवाल वैश्यों की वैदिक धर्म के प्रति आस्था, नाग वंश से उनका सम्बन्ध तथा वंश के पारम्परिक विस्तार का विवरण लेखक ने क्रमबद्ध रूप से दिया है। पुस्तक में अनेक नवीन तथा उपयोगी सूचनाएँ हैं। आशा है इस प्रकाशन का समुचित आदर होगा। इस नई रचना के लिए लेखक को साधुवाद।

कृष्णदत्त वाजपेयी
अधिष्ठाता-कला संकाय
अध्यक्ष—प्राचीन भारतीय इतिहास,
संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,
सागर विश्व विद्यालय, सागर

इनकी दृष्टि में "अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ

"गत वर्षों में अग्रवाल जाति के प्राचीन इतिहास के सम्बन्ध में जो कार्य हुआ है, उसमें आप द्वारा लिखित "अग्रोतकान्वय" का विशिष्ट स्थान है। उस द्वारा कितने ही नये तथ्य सम्मुख आये हैं और कितनी ही बातों का नये दृष्टिकोण से विवेचन किया गया है। आपके ग्रन्थ "अग्रोतकान्य" द्वारा अग्रवाल इतिहास की खोज के कार्य में प्रगति हुई है।"

(डा०) सत्यकेतु विद्यालंकार,
ए-१/३२, सफदरजंग एन्क्लेव,
नई दिल्ली-१६

मेरा निवेदन

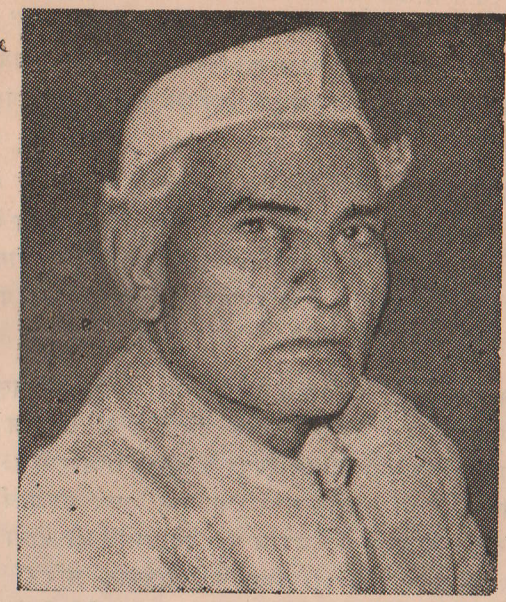

"अग्रोतकान्वय ग्रन्थ" (अग्रवाल वैश्य जाति का इतिहास) का प्रथम संस्करण सन् १९६७ में प्रकाशित हुआ था और उसका समाज में जैसा समादर हुआ उसके कारण मेरा उत्साह बढ़ा। अतः प्रथम संस्करण में जो त्रुटियाँ रह गई थीं और जो सामग्री प्रकाशित होने से छूट गई थी, उन्हें संशोधित कर परिवर्धित रूप में इसी ग्रन्थ का द्वितीय संस्करण १९७१ में प्रकाशित किया।

"अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के द्वितीय संस्करण को भी समाज में जो सम्मान मिला उसे देखते हुए मैंने और अधिक खोज कार्य आरम्भ किया। कई अवसरों पर अग्रोहा के खण्डहरों में भ्रमण किया, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, हैदराबाद, जबलपुर, नागपुर, भोपाल तथा ग्वालियर आदि स्थानों की यात्रायें करके जो भी ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध हुई, उसका संग्रह किया।

इस बीच मैंने अनुभव किया कि अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास जहां पुरातत्वीय सामग्री, महाभारत और धार्मिक जैन ग्रन्थों एवं साहित्यिक ग्रन्थों में अनेक स्थानों पर बिखरा पड़ा है, वहाँ हमारी अखिल भारतीय अग्रवाल संगठन सभाओं के तथा भारत भर में फैली अग्रवाल सभाओं के कार्य कलापों में भी उपलब्ध हैं। आज से

pdfelement
Remove Watermark Now

३०० वर्ष पूर्व का इतिहास दक्षिण भारत की अग्रवाल सभाओं की वार्षिक रिपोर्टों, भजनों, संस्थाओं एवं राजकीय पत्रों में भरा पड़ा है। यदि हम उस सब का संग्रह कर लें तो भविष्य में हम इस काल के इतिहास की खोज के श्रम से बच सकते हैं। अतः मैंने तृतीय संस्करण में अखिल भारतीय अग्रवाल सभाओं का अद्यतन इतिहास तथा भारत की लगभग २०० अग्रवाल सभाओं का परिचय "अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के तृतीय संस्करण के उत्तरार्ध में समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया। निःसन्देह इस प्रयास से अग्रवाल संगठन को बल मिला था अतः वर्तमान चतुर्थ संस्करण में अपने इस प्रयास को और बढ़ाया है।

मैंने "अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के द्वितीय सस्करण में "अग्रवालों के सप्त ऋषि" एवं अग्रवालों की सतियां नाम से दो अध्याय बढ़ाये थे। तृतीय संस्करण में "वैश्य जाति के आध्यात्मिक महापुरुष" और "देश निर्माण में अग्रवालों का योगदान" दो नये अध्याय और बढ़ाये थे। प्रस्तुत चतुर्थ संस्करण में इन अध्यायों को परिवर्धित किया गया है और कुछ नये अध्याय जोड़े गये हैं।

"अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के पाठक गण वैद्यराज श्री पं० **श्यामलाल श्री जोशी** से भली भांति परिचित हैं। वैद्यराज जी ने इस ग्रन्थ के "अग्रवाल वैश्य जाति की प्राचीनता" अध्याय के लिए बड़ा मन्दिर जयपुर के पुस्तक भण्डार से पं० रइधू कृत तथा पं० पुष्पदत्त के अपभ्रंश ग्रन्थों से खोज करके "अग्रवाल" शब्द की प्राचीनता के प्रमाण प्रस्तुत किये थे। तृतीय संस्करण में वैद्यराज पं० श्यामलाल जी जोशी ने इसी प्रसंग में अग्रवाल जाति के सर्व प्रथम कवि श्री श्रीधर के "पाषणाह चरिउ" ग्रन्थ की खोज करके आमेर भण्डार (पुस्तकालय) जयपुर से जो उद्धरण भेजे थे उससे ऐतिहासिक शोध के कार्य में वृद्धि हुई है। अतः वैद्यराज पं० श्याम लाल जी जोशी का यह योगदान अग्रवाल जाति के इतिहास में चिर स्मरणीय रहेगा। मैं इनकी इस निःस्वार्थ सेवा के लिये हृदय से आभारी हूं।

बेहली के सुप्रसिद्ध चित्रकार श्री आशा राम जी शुक्ल ने इस ग्रन्थ के मुख्य पृष्ठ को जो भव्य रूप प्रदान किया है मैं उनका आभार मानता हूं। इस ग्रन्थ में अग्रोहा गणराज्य एवं सिकन्दर का भारत पर आक्रमण नामक जो दो मानचित्र प्रकाशित हुए हैं उनके चित्रण का श्रेय भी श्री शुक्ल जी को ही है।

इस बार चोपड़ा प्रिंटर्स ने इस ग्रन्थ की छपाई की जो सुन्दर व्याख्या की है मैं उनका हृदय से आभारी हूं। इनके अथक परिश्रम एवं सहयोग से इस बार यह ग्रन्थ शुद्ध एवं सुन्दर रूप धारण कर सका है।

'अग्रोतकान्वय के प्रकाशन से पूर्व जो महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए थे उनमें **"अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास"** डा० श्री पं० सत्य केतु जी विद्यालंकार कृत, तथा **"अग्रवाल जाति का विकास"** डा० श्री युत परमेश्वरी लाल जी गुप्त कृत विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अतः मैंने इन ग्रन्थों से प्रेरणा प्राप्त की एवं इन के ज्ञान को प्रसाद

समझ कर ग्रहण किया और 'अग्रोतकान्वय' उस समय प्रकाशित किया जब कि उपर्युक्त दोनों ग्रन्थ बाजार में उपलब्ध नहीं थे। अतः मैं श्री डा० परमेश्वरी लाल जी गुप्त तथा डा० श्री पं० सत्यकेतु विद्यालंकार जी का हृदय से आभारी हूं और अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

"अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के चतुर्थ संस्करण के संदर्भ में मेरी राजस्थान यात्रा का बहुत महत्व है अतः इसका उल्लेख करना आवश्यक है।

मैं श्रीयुत सेठ भगवती प्रसाद जी खेतान के निमन्त्रण पर उनसे भेंट करने के लिए तथा "अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के चतुर्थ संस्करण के प्रकाशन से सम्बद्ध वार्ता के लिए २३-८-८२ को झुन्झुनू गया था। इस यात्रा का लाभ उठाकर मैंने श्री राणी सती मां तथा श्री चावो सती जी के पवित्र मन्दिरों के दर्शन किये और बहुमूल्य ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त की जिनका प्रकाशन इस ग्रन्थ में किया गया है। झुंझुनू में सेठ भगवती प्रसाद जी खेतान ने जो सम्मान मुझे दिया उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है।

झुंझुनू से चलकर मैं लक्ष्मणगढ़ पहुंचा जहां श्रीयुत बाबू राम जी गुप्त से भेंट की और बहुत उपयोगी जानकारी अग्रवालों के बांकों के विषय में उनसे उपलब्ध हुई जिसे इसी संस्करण में प्रकाशित किया गया है। श्री गुप्त जी के सौजन्य से मैंने लक्ष्मण गढ़ को अपने ऐतिहासिक अन्वेषण के लिए केन्द्र बनाया और वहां से फतेहपुर पहुंचा जहां सरस्वती पुस्तकालय के मन्त्री श्री राम गोपाल जी वर्मा से भेंट की। आप श्री चमड़िया हायर सैकण्डरी स्कूल, फतेहपुर के प्रधानाचार्य हैं और इनके पास अग्रवाल जाति का महत्वपूर्ण साहित्य है। इनके सौजन्य से ही मुझे श्री गुलजारी लाल जी पाण्डेय का पता मिला जो आजकल लक्ष्मणगढ़ में निवास करते हैं। उनसे भेंट करने पर कई बहुमूल्य ऐतिहासिक जानकारी मिली और उनसे ही आदरणीय श्री पण्डित देवकी नन्दन जी खेडवाल, फतेहपुर के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण परिचय प्राप्त हुआ। अग्रवाल जाति के ऐतिहासिक अनुसंधान कार्य में मुझे जो सहयोग इन दोनों महानुभावों से मिला मैं इसका आभार मानता हूं। श्री खेडवाल जी से भेंट करके अग्रवाल जाति के इतिहास और अखिल भारतवर्षीय मारमाड़ी अग्रवाल महा सभा सम्बन्धी ऐसे सूत्र मिले जिनके आधार पर कई अशुद्धियां दूर हो गईं और उनके विशाल पुस्तकालय को देखने का अवसर मिला। श्री पं० देवकी नन्दन जी उस दिन अस्वस्थ थे किन्तु ज्वरावस्था में भी उन्होंने मेरा जैसा स्वागत किया और अपने पुस्तकालय से जितनी भी अधिका[illegible] जानकारी दी, मैं उनका आभारी हूं।

फतेहपुर से चलकर मैं चूरू पहुंचा और श्री डा० ज्ञान प्रकाश जी गु[illegible] निवास स्थान पर ठहरा। उसी दिन मुझे अग्रवाल जाति के इतिहास की खोज[illegible] संदर्भ में श्री सत्य नारायण जी सर्राफ, श्री राम निवास जी बाजौरिया, श्री [illegible] नाथ जी धानुका, श्री सुबोध कुमार जी अग्रवाल तथा श्री गोविन्द जी अग्रवाल से[illegible] का सुअवसर प्राप्त हुआ और श्री गोविन्द जी अग्रवाल के लोक संस्कृति शोध संस्[illegible]

pdfelement
Remove Watermark Now

"नगर श्री" से जो महत्वपूर्ण जानकारी मिली उससे मेरी यह यात्रा अत्यन्त सफल रही। श्री गोविन्द जी अग्रवाल कई दिनों से अस्वस्थ थे किन्तु उन्होंने अपने स्वास्थ्य की चिन्ता न करके मुझे सभी जानकारी उपलब्ध कराई और अपने भ्राता श्री सुबोध कुमार जी अग्रवाल के माध्यम से अपने विशाल पुस्तकालय का मुझे अधिकाधिक लाभ पहुंचाया। मैं इसके लिए श्री गोविन्द जी तथा श्री सुबोध कुमार जी का हृदय से आभारी हूं। रात्रि को अग्रवाल संसद् द्वारा आयोजित एक बैठक में अग्रवाल जाति के इतिहास पर मेरा भाषण कराया गया और उसी अवसर पर श्री गोविन्द जी बजाज के दर्शन हुए। उन्होंने दूसरे दिन अपने निवास स्थान पर भोजन के लिए तो मुझे आमन्त्रित किया ही "अग्रवालों की सतियां" अध्याय के लिए **श्री ढांढण सती जी** के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी दी जो इस ग्रन्थ में प्रकाशित की गई है। मैं डा० ज्ञानप्रकाश जी गुप्त का आभारी हूं जिन्होंने मेरी सुख-सुविधा की सुन्दर व्याख्या की और जिनके सहयोग और आत्मीय सद्व्यवहार से मुझे अग्रवाल जाति के इतिहास के कार्य में बल मिला। श्री विश्वनाथ जी धानुका तथा श्री राम निवास जी बाजौरिया जी ने तो मुझे इतना समय और सुविधा प्रदान की कि मैं उनका किन शब्दों में आभार प्रकट करूं। श्री सत्य नारायण जी सर्राफ द्वारा अतिथि सम्मान और चूरू के बन्धुओं द्वारा भाव भीनी सादर विदाई तो चिरकाल तक स्मरण रहेगी।

ग्रन्थ की भूमिका श्रद्धेय श्रीकृष्ण दत्त जी बाजपेयी ने जब वे अधिष्ठाता कला संकाय, अध्यक्ष प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, सागर विश्व विद्यालय, सागर मै थे, लिखी है और इस ग्रन्थ पर प्रशंसा के पुष्प चढ़ा कर एवं पुरातत्व विभाग के अधिकारी के रूप में इसकी सामग्री को प्रमाणित किया था अतः मैं इनका हृदय से आभारी हूं। इस महानता के कारण अग्रवाल समाज श्री वाजपेयी जी का चिर ऋणि रहेगा।

मैं अ० भा० अग्रवाल सर्व हितकारी समाज (रजि०) का भी आभारी हूं जिनका नैतिक बल एवं सभी सम्भव सहयोग मेरे साथ रहा है!

इस बार इस ग्रन्थ के चतुर्थ संस्करण का प्रकाशन सेठ भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट, बम्बई द्वारा हुआ है। इस सम्बन्ध में मुझे इतना ही कहना है कि इस ग्रन्थ के तृतीय संस्करण से प्रभावित होकर सेठ भगवती प्रसाद जी ने इस ग्रन्थ को अपने ट्रस्ट की ओर से प्रकाशित करने का निश्चय किया और मैंने उसे मूर्तरूप दे दिया। सेठ भगवती प्रसाद जी खेतान की गुण ग्राहकता की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। अतः श्री भगवती प्रसाद जी खेतान की ७२वीं वर्षगांठ पर उन्हें "अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ का चतुर्थ संस्करण उपहारस्वरूप भेंट करता हूँ।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि अग्रवाल समाज इस उपादेय ग्रन्थ के इस संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण का पूर्ववत् स्वागत करेगा।

२४ सितम्बर सन् १९८२ ई०

— वैद्य निरंजन लाल गौतम

भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट, बम्बई का परिचय एवं समाज सेवा में इसकी भूमिका

ट्रस्ट के संस्थापक ट्रस्टी

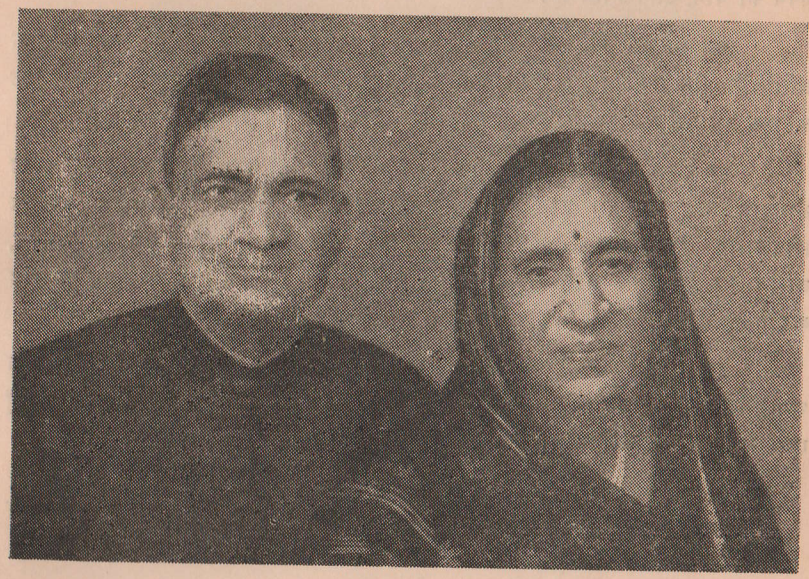

श्री युत सेठ भगवती प्रसाद जी खेतान एवं श्रीमती भगवतीबाई जी खेतान

"श्री भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट" की स्थापना ३० मार्च, सन् १९५५ ई० में बम्बई नगर में हुई। आरम्भ में श्री भगवती प्रसादजी खेतान द्वारा "खेतान भवन" १९८. जमशेदजी टाटा रोड, बम्बई-४०००२०. में स्थित अपने फ्लैट नं० १३ व १४ ट्रस्ट की आय हेतु सात वर्ष के लिए प्रदान किये गये। तत्पश्चात् ३० मार्च सन् १९५७ के अधिकार-पत्र द्वारा उपर्युक्त अवधि आगामी १४ वर्ष के लिए और बढ़ा दी ग ताकि ट्रस्ट सार्वजनिक जन जीवन में अपना योगदान पूर्ण रूप से प्रदान कर सके।

दिनांक ३० मार्च १९५५ से २७ फरवरी सन् १९७० तक ट्रस्ट की आय सार्वजनिक कार्यों के साथ-साथ बढ़ती गई।

ट्रस्ट ने अपने स्थापना काल से ही समाज के होनहार विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति असाध्य तथा गरीब रोगियों का इलाज, वृद्ध व असमर्थ लोगों के जीवन निर्वाह क

pdfelement
Remove Watermark Now

प्रशंसनीय कार्य किया है। इसके साथ ही ट्रस्ट ने आयुर्वेद की प्रगति, अनुसंधान में सहायता हेतु अथक प्रयास किया है।

ट्रस्ट के प्रशंसनीय योगदान द्वारा आज से १५ वर्ष पूर्व झुन्झुनू में—श्री चावो सतीजी के जीर्ण-शीर्ण मन्दिर का नवीनीकरण कराया। मारवाड़ी विद्यालय, बम्बई में विद्यादायनी "**सरस्वती**" की संगमरमर की मूर्ति व कैवल्यधाम-लोनावला के प्रांगण में भी "**सरस्वती**" मन्दिर व आयुर्वेद शोध व योग के अनुसंधान व प्रगति हेतु तीस हजार रुपये का दान उल्लेखनीय है।

कैवल्यधाम की प्रशासनिक-व्यवस्था (गवर्निंग बाड़ी) में इस ट्रस्ट का एक प्रतिनिधि अवश्य रहेगा और इसी प्रकार "श्री चावो सतीजी" के ट्रस्ट में भी इस ट्रस्ट का एक प्रतिनिधि अनिवार्य रूप से ट्रस्टी के रूप में ट्रस्ट का प्रतिनिधित्व करेगा।

इसके साथ ही साथ ट्रस्ट अपने समान उद्देश्यीय संस्थाओं के साथ प्रशंसनीय योगदान देता रहा है। ट्रस्ट की भावी गतिविधियों में मालाड़, बम्बई में आयुर्वेद औषधालय, राजस्थान के पिछड़े जिले उदयपुर के अन्तर्गत नाथद्वारा में औषधालय, वाचनालय, कम आय वाले परिवारों को सस्ते दाम पर भोजन तथा मकान उपलब्ध कराने की योजना है।

इस ट्रस्ट के संस्थापक ट्रस्टी श्री भगवती प्रसादजी खेतान हैं तथा श्रीमती भगवतीबाई भ० खेतान व श्रीमती राजकुमारी आर० हरलालका ट्रस्ट के ट्रस्टीगण हैं एवं श्री परमेश्वरलाल डालमिया इसके मानद मंत्री हैं।

श्री भगवती प्रसादजी खेतान, बम्बई : जीवन परिचय

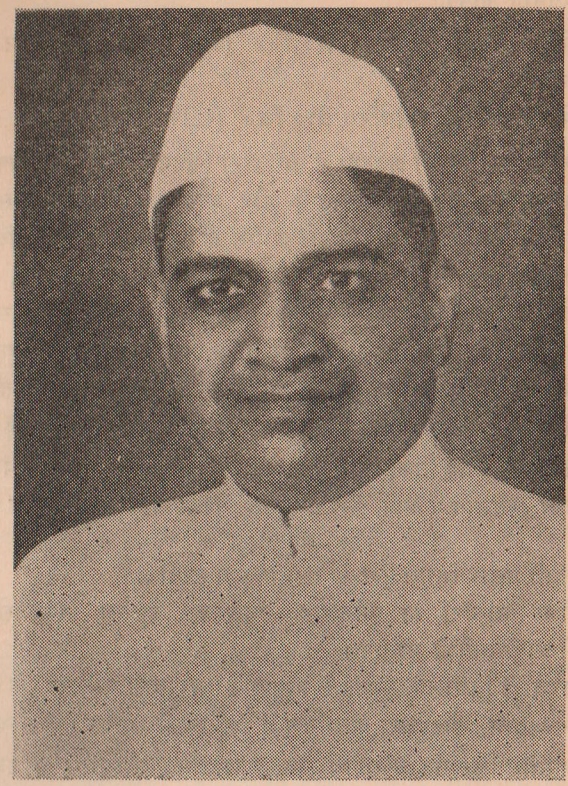

झुन्झुनू (राजस्थान) निवासी सेठ श्री **रामकरणदासजी खेतान रामबिलास राय जी खेतान** के नाम से विख्यात परिवार में आपका जन्म २४ सितम्बर, १९११ ई० में हुआ। आपके पिताश्री का नाम सेठ श्री मन्नालालजी खेतान, दादाजी का नाम सेठ श्री रामबिलासरायजी खेतान व पड़दादाजी का नाम सेठ श्री रामकरणदासजी खेतान था, इनका पुराना सुविख्यात परिवार "सेठ रामकरणदास-रामबिलासराय खेतान" झुन्झुनू निवासी कहलाता है।

४० वर्ष की अवस्था तक अपने पूज्य पिताजी व मामाजी तथा ससुराल वालों के विभिन्न उद्योग व व्यवसाय के उच्च पदों पर रहकर आपने विशेष महत्व के साथ सहयोग प्रदान कर प्रखर प्रतिभा का परिचय दिया।

सन् १९५१ में अपने स्वयं के विस्तृत व्यवसाय को सुचारु रूप से संचालन करने हेतु आपने पोद्दार ग्रुप आफ कन्सर्न से अपने को निवृत्त कर लिया। वर्तमान में आप अपनी निम्नलिखित कम्पनियों का कार्य देखते हैं :—

pdfelement
Remove Watermark Now

१. मेसर्स खेतान बिजनेस कार्पोरेशन प्रा० लि० (माईन ओनर, आयात व निर्यात कार्य),

२. मेसर्स खेतान इण्डस्ट्रीज प्रा० लि० (आर्ट सिल्क, कपड़ा रंगाई एवं प्रिंटिंग मील),

३. मेसर्स तन्ना इंजिनियरिंग प्रा० लि० (स्टील रोलिंग मील)

आज भी ७२ वर्ष की अवस्था में नाथद्वारा (उदयपुर) में स्थित अपनी सोपस्टोन डोलोमाईट की माईन का कार्य संभालते हैं और आपका अधिकांश शेष समय बम्बई में व्यतीत होता है। स्वास्थ्य व नैसर्गिक सुख शान्ति के लिए सप्ताह में २ दिन **लोनावला** रहते हैं। इसके अलावा वर्ष में १-२ बार उदयपुर, जयपुर, झुन्झुनू, हरिद्वार की यात्रा करते हैं। ४० वर्ष की अवस्था में एक बार विदेश "जापान" की सफलयात्रा की है। अभी भी ईश्वर की कृपा से और सब लोगों के प्यार से स्वास्थ्य बहुत अच्छा चल रहा है। अपने देश की उन्नति व देश की अर्थव्यवस्था की प्रगति हेतु इतने परिश्रम व लगन से कार्य करते हैं कि युवक भी उन्हें देखकर शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

सार्वजनिक, सांस्कृतिक, धार्मिक व आध्यात्मिक जीवन में भी आपका महत्वपूर्ण योगदान है तथा वर्तमान में आप निम्नलिखित संस्थाओं से विशेष रूप से सम्बन्धित हैं :—

१. श्री भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट के संस्थापक व ट्रस्टी हैं।
   (१) जीर्ण मन्दिरों का पुर्नरुद्धार—विशेषकर झुन्झुनू (राजस्थान) स्थित श्री चावो सतीजी मन्दिर।
   (२) मारवाड़ी विद्यालय, बम्बई के प्रांगण में "**सरस्वती मन्दिर**" के संस्थापक।
   (३) कैवल्यधाम, लोनावला के प्रांगण में : सरस्वती मन्दिर : के संस्थापक।
   (४) भारतीय संस्कृति के रक्षार्थ योग, प्राणायाम, आध्यात्म व स्वास्थ्योपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन।

२. खेतान चेरीटेबल ट्रस्ट, बम्बई के संस्थापक व ट्रस्टी हैं।
   (१) सेठ श्री मन्नालालजी खेतान राजकीय प्राथमिक पाठशाला, गाँव-राबचा-नाथद्वारा, जिला—उदयपुर (राजस्थान) के संस्थापक हैं।
   (२) श्रीमती सरस्वतीदेवी आयुर्वेदिक औषधालय, अन्धेरी, बम्बई के संस्थापक व ट्रस्टी हैं।

३. श्री सेठ रामकरणदासजी खेतान लोक कल्याण संस्था, बम्बई के संस्थापक व ट्रस्टी हैं।

४. श्री ठाकुरजी लक्ष्मीनाथजी ट्रस्ट, झुन्झुनू के ट्रस्टी हैं।

५. श्री चावो सतीजी ट्रस्ट, झुन्झुनू के ट्रस्टी हैं।

६. श्री आयुर्वेद प्रचार संस्था, बम्बई के ट्रस्टी हैं। इसमें श्रीमती कमलादेवी गौरीदत्त मित्तल कालेज, और दस आयुर्वेदिक औषधालय चल रहे हैं।

७. श्री राजस्थानी सेवा संघ, जे. बां. नगर, अन्धेरी, बम्बई के ट्रस्टी हैं।

८. श्री जगन्नाथ गिगराज खेमका चेरीटेबल ट्रस्ट, बम्बई के ट्रस्टी हैं।

९. श्री बालक एजुकेशन सोसायटी, सायन, बम्बई के ट्रस्टी हैं।

१०. मारवाड़ी विद्यालय, बम्बई के ट्रस्टी हैं।

११. बम्बई हिन्दी विद्यापीठ, माहिम, बम्बई के ट्रस्टी एवं संरक्षक हैं।
(इस संस्था के द्वारा प्रति वर्ष ४० हजार अहिन्दी भाषा-भाषी राष्ट्रभाषा हिन्दी की परीक्षायें देकर लाभान्वित होते हैं)

१२. अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष, बम्बई के अढ़ाई वर्ष तक "**अध्यक्ष**" रहे हैं।

१३. सार्वजनिक आयुर्वेदिक औषाधालय, माटुंगा के सभापति ३० वर्ष से हैं।

१४. भारतीय विद्या भवन, चौपाटी के आजीवन सदस्य हैं।

१५. अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा (पंजीकृत) दिल्ली के आजीवन सदस्य एवं कार्यकारिणी सदस्य हैं।

१६. अग्रवाल सेवा समाज, बम्बई के संरक्षक हैं।

१७. वर्ष १९८०-८१ में महाराष्ट्र सरकार ने स्पेशल इकिजक्युटिव मजिस्ट्रेट, (विशेष निष्पादन दण्डाधिकारी) की उपाधि से २ वर्ष विभूषित किया।

स्वास्थ्य, आरोग्य व क्रीड़ा हेतु निम्नलिखित संस्थाओं के मेम्बर हैं :—

१. क्रिकेट क्लब आफ इण्डिया स्पोर्ट्स क्लब, बम्बई,
२. नेशनल स्पोर्ट्स क्लब,
३. डब्ल्यु. आई० ए. ए. क्लब,
४. माटुंगा जिमखाना,
५. रायल वेस्टर्न इण्डिया टर्फ क्लब,
६. मारवाड़ क्लब।

आध्यात्मिक, यौगिक संस्थाओं के आजीवन सदस्य है :—

१. दि इण्टरनेशनल सोसायटी फार कृष्णा कौंसियसनेस, हरे कृष्णा हरे रामा,
२. श्री जयगुरुदेव,
३. विपश्यना : सयाजी ऊबाखिन,
४. कैवल्यधाम, लोनावला के गवर्निग बाड़ी के मेम्बर हैं।

उपर्युक्त संस्थाओं के अतिरिक्त आप अनगिनत संस्थाओं के आजीवन सदस्य हैं।

आपका शुभ—विवाह सुविख्यात पोद्दार परिवार में श्री राजा रामदेवजी-पोद्दार की सुपुत्री सौ० भगवतीबाई के साथ सम्ववत् १९८४ (सन् १९२७ ई०) में हुआ। श्रीमती भगवतीबाईजी धार्मिक एवं उदार विचारों की महिला हैं। आपकी सन्तान में चि० रविन्द्र प्रसाद, सौ० कुमुदबाई क्याल, सौ० राजकुमारी हरलालका, सौ० आशाबाई अग्रवाल, चि० राजकुमार, चि० अशोककुमार खेतान हैं। सभी पुत्र स्वतन्त्र रूप से अपने व्यवसाय में संलग्न हैं।

आपका वर्तमान स्थायी पता:—
श्री भगवती प्रसादजी खेतान, "खेतान भवन" ६ माला,
१९८. जमशेदजी टाटा रोड, चर्चगेट रिक्लमेशन,
बम्बई—४०० ०२०.
टेलीफोन नम्बर : २२ १६ ४५/२२ १५ ५९. तार : "खेतानसन्स" बम्बई।

pdfelement
Remove Watermark Now

खेतान परिवार का परिचय व इतिहास

राजस्थान के शेखावटी क्षेत्र में झुन्झुनू नगर का अपना विशिष्ट स्थान है। आज जिस स्थान पर यह शहर वर्तमान रूप में विद्यमान है विक्रम संवत् १५०० से पूर्व झुझू जाट की ढानी नामक एक छोटा सा ग्राम था। सं० १४७६-७७ के आसपास हिसार के एक साहसी कयामखानी मुहम्मद ने झुझू जाट की इस ढानी में डेरा डाला और उस स्थान पर एक नगर गढ़ की नींव डाली तथा झुझू जाट के परामर्श से इस नगर का नाम झुन्झुनू रखा। इस प्रकार सं० १५०७ वि० में इस शहर को वर्तमान रूप प्राप्त हुआ।

झुन्झुनू शहर स्थापित होने पर आस पास के अग्रवाल परिवार यहाँ आकर बसने लगे। सं० १५५० में हिसार से दीवान जालीराम का आगमन हुआ और इसी के आस पास सेठ खेतसीदासजी आये। सेठ खेतसीदासजी की विशेष स्थिति के कारण इनका परिवार **"खेतसीदास वाले"** नाम से प्रसिद्ध हुआ जो आगे चलकर संक्षिप्त रूप धारण कर **खेतान** नाम से प्रसिद्ध हो गया। पूज्य श्री खेतसीदासजी किस सम्वत् में झुन्झुनू पधारे, यह तो नहीं कहा जा सकता किन्तु अनुमान से कहा जा सकता है कि वे १५वीं शताब्दी में आये होंगे।

खेतान परिवार अग्रवाल है और इनका गोत्र गर्ग है। पूज्य श्री खेतसीदासजी की अब १५वीं पीढ़ी चल रही है जिसकी बंशावली निम्न प्रकार है :—

१. पूज्य श्री खेतसीदासजी
२. पूज्य श्री मोहनदासजी
३. ,, ,, छबीलदासजी
४. ,, ,, राजारामजी
५. ,, ,, देवकरणदासजी
६. ,, ,, हरकरणदासजी
७. ,, ,, पोलणसीदासजी
८. ,, ,, जगनरामजी
९. ,, ,, प्रेमराजजी
१०. ,, ,, रामकरणदासजी, स्वर्गवास कार्तिक बदी ३, वि० सं० १९५४
११. ,, ,, रामबिलासरायजी, जन्म श्रावण वदी ११, सं० १९२४ वि०
१२. ,, ,, मन्नालालजी, जन्म मिती माघ वदी १२, सं० १९४४ वि०
१३. ,, ,, भगवती प्रसादजी, जन्म आश्विन सुदी २, सं० १९६८ वि०
१४. ,, ,, रबिन्द्र प्रसादजी, जन्म आषाढ़ सुदी २, सं० १९९२ वि०
१५. ,, ,, निर्मल कुमारजी, जन्म कार्तिक सुदी २, सं २०१३ वि०

pdfelement

श्री चावो सती दादी

सब का

कल्याण करे।

★

— खेतान परिवार —

Remove Watermark Now

श्री चावो सतीजी, झुंझुनूं के मन्दिर का मुख्य प्रवेश द्वार

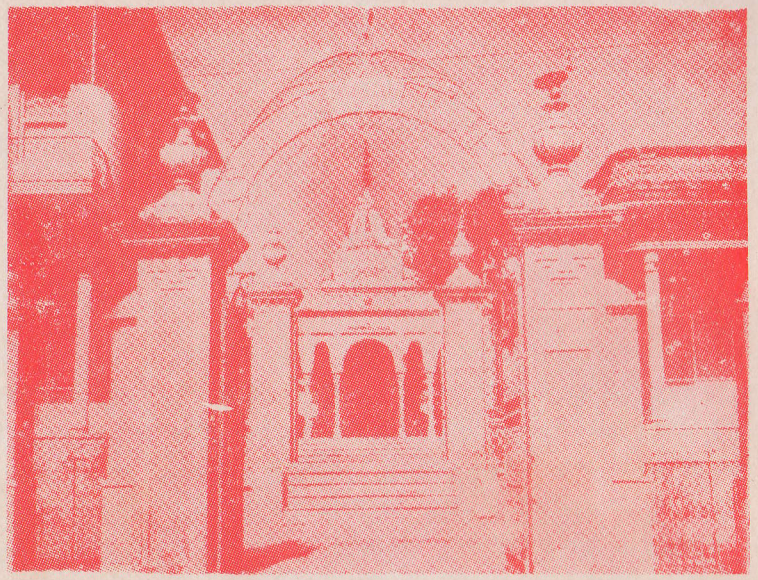

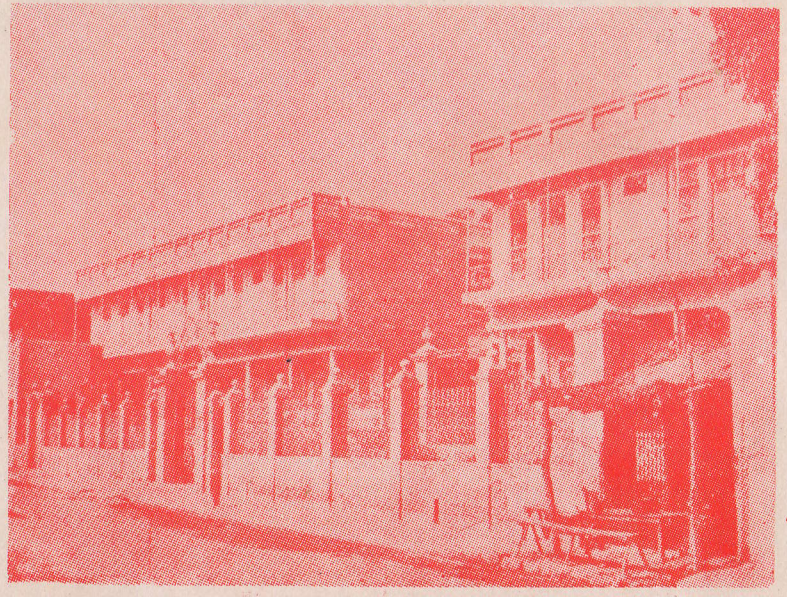

श्री चावो सतीजी, झुन्झुनूं के मन्दिर का बाहरी दृश्य

स्व० सेठ मन्नालाल जी खेतान, झुंझुनूं
श्री चावो सती मन्दिर झुंझुनूं के उद्धारक तथा
श्री चावो सती मन्दिर ट्रस्ट के प्रथम संस्थापक

pdfelement
Remove Watermark Now

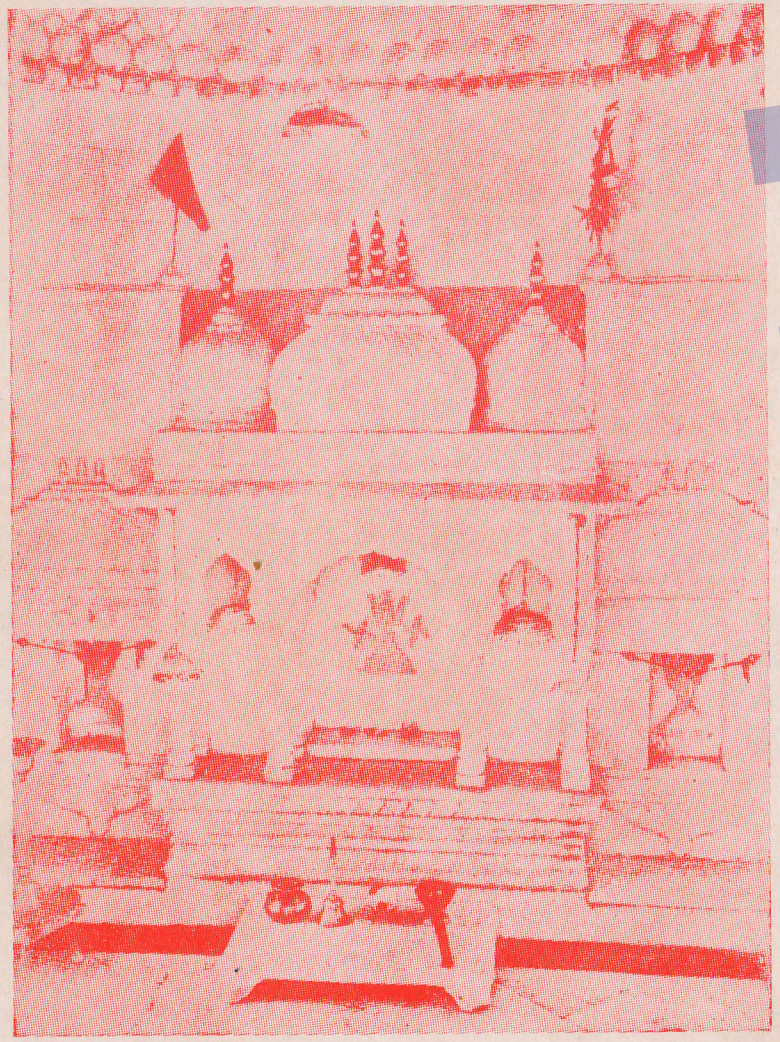

श्री चावो सतीजी का पवित्र सिंहासन, झुँझुनूं (राजस्थान)

श्री चावो सतीजी ट्रस्ट के शुभेच्छु

श्री तुलसीप्रसादजी खेतान,
(अमृत वनस्पति लिमि०, गाजियाबाद)

अपने पूर्वजों की स्मृति शृंखला में श्री तुलसीप्रसादजी खेतान माता श्री चावो सतीजी का रजतसिंहासन सत्तर हजार रुपये की लागत निर्मित करवाकर अपना भक्ति भावना का परिचय दिया है।

pdfelement
Remove Watermark Now

श्री ठाकुरजी लक्ष्मीनाथ जी का मन्दिर, झुंझुनूं

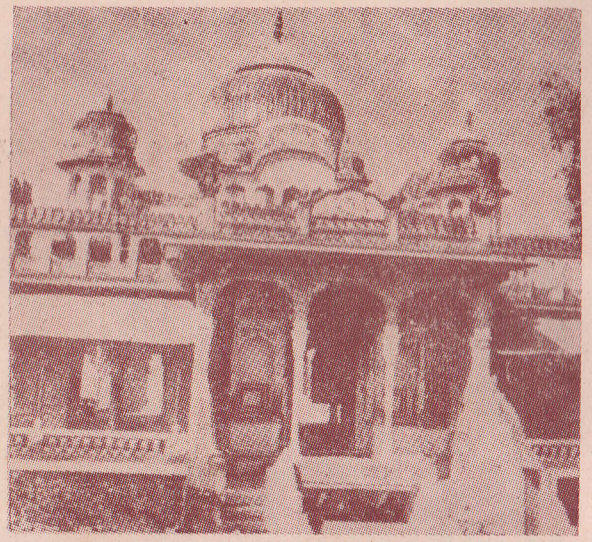

पूज्य स्व० श्री रामविलासराय जी खेतान. झुँझुनूं
श्री ठाकुर लक्ष्मी नाथ जी ट्रस्ट, झुंझुनू के
प्रमुख संस्थापक ट्रस्टी

श्री ठाकुरजी लक्ष्मीनाथजी ट्रस्ट झुंझुनू के संस्थापक ट्रस्टी

स्व. सेठ श्री बसन्तलालजी खेतान
जन्म : माघ शुक्ल ५, वि.सं. १९४२
निधन : फागन कृष्णा २ वि.सं. १९९४
बम्बई में

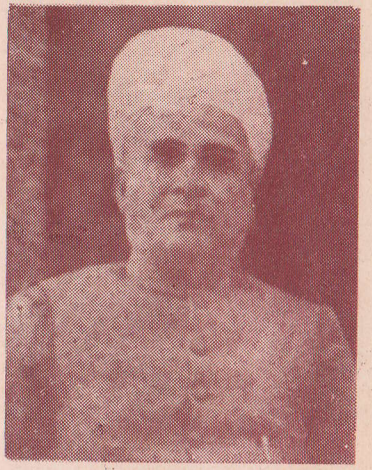

स्व. सेठ श्री मन्नालालजी खेतान
जन्म : माघ शुक्ल १३, वि.सं. १९४४
निधन : वैशाख कृष्ण १३, वि.सं २०१७
बम्बई में

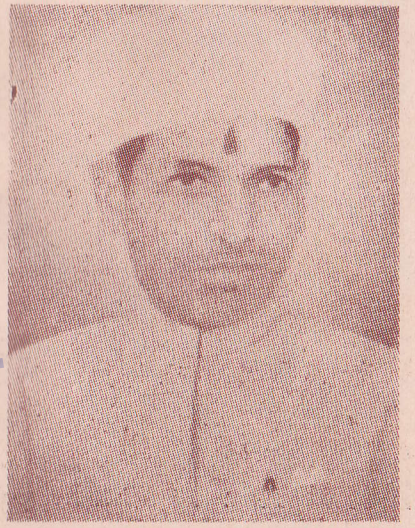

स्व. सेठ श्री चिरंजीलालजी खेतान
जन्म : माघ शुक्ल ६, वि.सं. १९४९
निधन : ३ जून ईस्वी १९५६

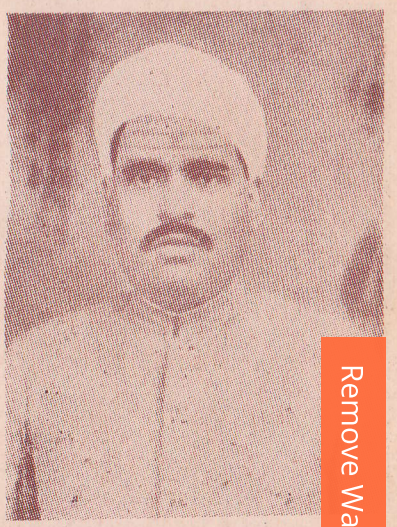

स्व. सेठ श्री मदनलाल जी खे
जन्म : पौष ४, वि. सं. १९
निधन : श्रावण कृष्ण ४, वि.सं. २

pdfelement
Remove Watermark Now

स्व. सेठ श्री लीलाधरजी खेतान
जन्म : कार्तिक शुक्ल १४, वि. सं. १९६०
निधन : ज्येष्ठ शुक्ल ४, वि. सं. १९८०
कानपुर में

श्री भगवतीप्रसाद खेतान
जन्म : २४ सितम्बर १९११
वर्तमान ट्रस्टी

श्री चण्डीप्रसाद खेतान
जन्म : १२ मार्च १९१३ ई०
वर्तमान ट्रस्टी

श्री राधावल्लभ खेतान
जन्म : २२ सितम्बर १९१७ ई०
वर्तमान ट्रस्टी

श्रीमान् सेठ श्री रामविलासरायजी खेतान : झुन्झुनूं निवासी : के समय का कानपुर में लिया गया सामूहिक छाया-चित्र.
मारवाड़ी विक्रमी संवत् १९७६ (ईस्वी सन् १९१९) गंगासागर जाते वक्त.

(१)

श्रीमान् सेठ श्री मन्नालालजी खेतान : झुन्झुनू निवासी : के समय का बम्बई में लिया गया सामूहिक छाया-चित्र.
मारवाडी विक्रमी सवत् २०१२. (ईस्वी सन् १९५५) (२)

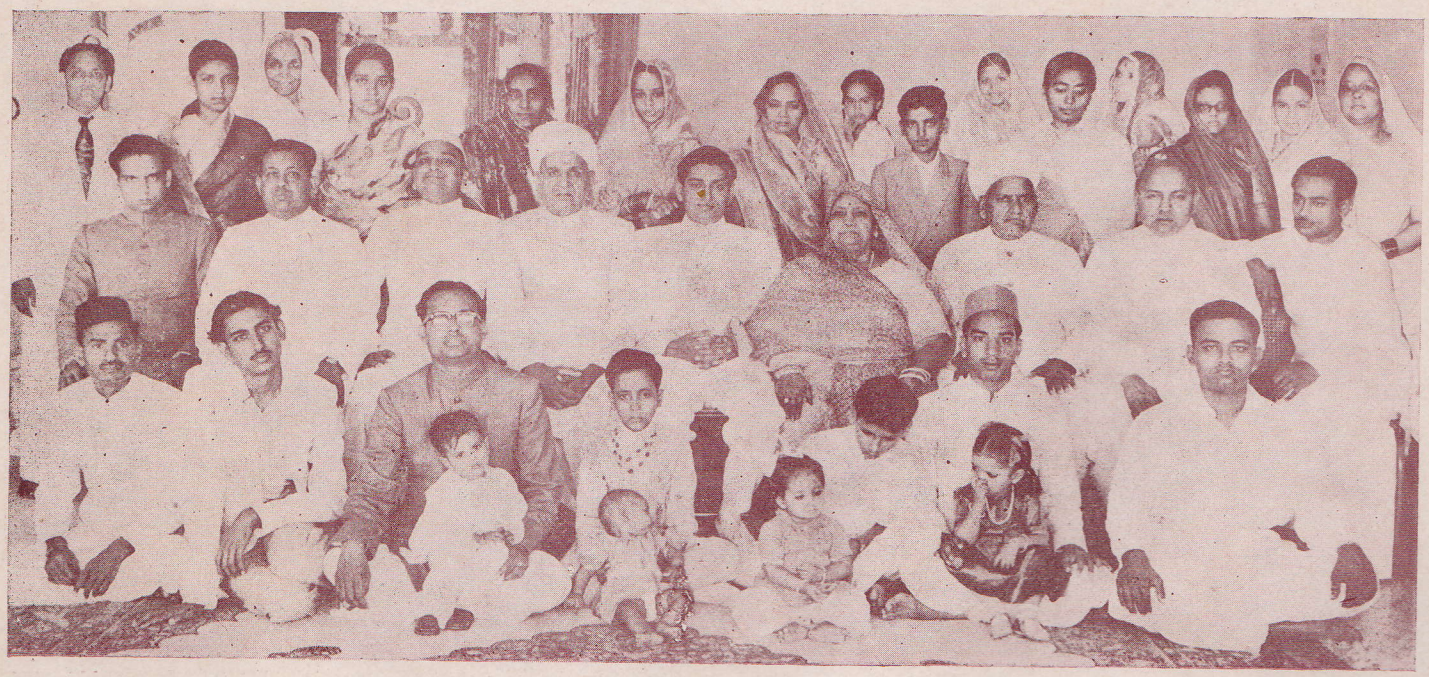

pdfelement

श्री भगवती प्रसाद खेतान परिवार का छाया-चित्र : उटाकामंड: यात्रा के जाने के पूर्व का
बम्बई में मारवाडी विक्रमी संवत् २००६. सन्दिनांक (१३-३-१९४९) (३)

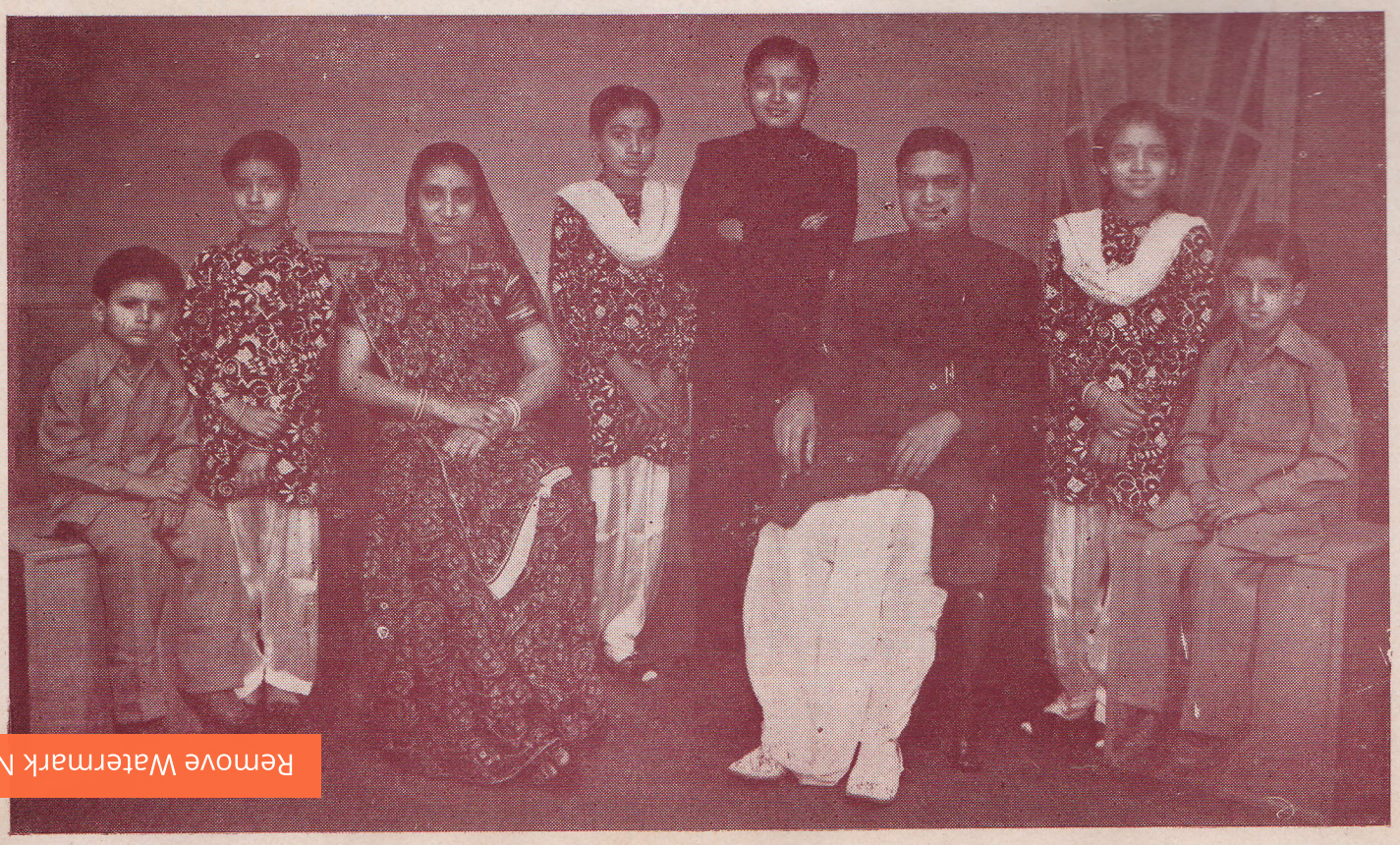

Remove Watermark Now

खेतान परिवार का तिथिवार इतिहास श्री रामकरणदासजी खेतान से उपलब्ध है। यद्यपि इनकी जन्म तिथि तथा फोटो चित्र तो उपलब्ध नहीं है तदपि इनका स्वर्गवास कार्तिक बदी ३, सं० १९५४ वि० में हुआ था। उनके हाथ के लिखे हिसाब, तथा व्यापार की बहियाँ उपलब्ध हैं।

खेतान परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने का श्रेय पूज्य श्री रामकरणदासजी खेतान को ही है। उन्होंने सं० १९०९ वि० में अपनी प्रथम व्यापारिक यात्रा झुन्झुनू से बम्बई तक पैदल चलकर ४ मास में पूरी की थी। वे बम्बई में अढ़ाई वर्ष तक रहकर पैदल ही झुन्झुनू लौटे थे। उस अढ़ाई वर्ष की अवधि में उन्होंने ८ से १० हजार रुपये तक कमाये थे। एक साल के बाद सं० १९१३ में उन्होंने बम्बई की दूसरी यात्रा की, और सं० १९१७ में झुन्झुनू लौटे। इस बार उन्होंने बम्बई से अहमदाबाद तक रेल से यात्रा की और अहमदाबाद से झुन्झुनू तक पैदल चलकर आये। उस समय उन्होंने इतना धन कमाया कि झुन्झुनू पहुँचकर उन्होंने एक आलीशान हवेली का निर्माण कराया। वह हवेली आज भी श्री चिरंजीलालजी खेतान के अधिकार में है। इसके बाद भी वे बम्बई आते जाते रहे।

श्रावण बदी ११, सं० १९२४ में श्री रामकरणदासजी खेतान को एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जिसका नामकरण रामबिलासराय हुआ। उस समय तक पूज्य श्री रामकरणदासजी की पर्याप्त उन्नति हो चुकी थी अतः उन्होंने सं० १९२६ वि० में झुन्झुनू में एक धर्मशाला का निर्माण कराया जो आज तक विद्यमान है। आज दिन इसके आधे भाग में गेस्ट हाउस है और शेष भाग राजस्थान आयुर्वेदिक अनुसंधानशाला को दिया हुआ है। इसी प्रकार उनका कार्य सं० १९३५ तक इतना बढ़ा कि सं० १९३५ में आपने कानपुर, देवरिया तथा झुन्झुनू में अनेकों भूखण्ड तथा मकान क्रय कर लिये। श्री रामकरणदासजी अपने समय के बड़े प्रतापी, साहसी और कठोर परिश्रमी थे।

श्री रामकरणदासजी के पुण्य प्रताप से उनके पुत्र पूज्य सेठ श्री रामबिलासरायजी खेतान ने भी अपने जीवन काल में बहुत उन्नति की और वे ५० वर्ष तक झुन्झुनू के **नगर सेठ** की पदवी से अलंकृत रहे। उन्होंने सं० १९७६ वि० में **श्री ठाकुरजी लक्ष्मीनाथजी ट्रस्ट** की स्थापना की। इस ट्रस्ट के अन्तर्गत झुन्झुनू में मन्दिर, हरिद्वार में कोठी तथा जयपुर में मकान है। इनमें से बहुत सी सम्पत्ति आज भी इसी ट्रस्ट के अधिकार में है। वर्तमान में इस ट्रस्ट की सुचारु व्यवस्था श्री चण्डी प्रसादजी खेतान के कुशल नेतृत्व में है।

सेठ श्री रामबिलासरायजी खेतान की वंश परम्परा को उनके सुयोग्य पु[illegible] श्री मन्नालालजी खेतान ने और आगे बढ़ाया। सेठ श्री मन्नालालजी खेतान [illegible] श्री चावोसतीजी के मन्दिर को नागा साधुओं से छुड़ाकर इस मन्दिर का जीर्णोद्धा[illegible] कराने का विशेष उल्लेखनीय कार्य किया और इस मन्दिर का एक ट्रस्ट बना दिया गया

ए

श्री भगवती प्रसाद खेतान व **श्रीमती भगवती बाई खेतान** (४)

आत्मज स्वर्गीय मन्नालाल खेतान, निवासी झुन्झुनू (राजस्थान) म आत्मजा राजा रामदेव पोद्दार, निवासी नवलगढ़ (राजस्थान)

के दाम्पत्य जीवन की "**स्वर्ण जयन्ती**" (50 वर्ष पूर्ण) के अवसर पर परिवार का सामूहिक छायाचित्र

जिसकी प्रबन्ध व्यवस्था सेठ चण्डी प्रसादजी खेतान के कुशल एवं सुदृढ़ हाथों में है। सेठ श्री मन्नालाल जी खेतान ने सं० १९८१ वि० में झुन्झुनू में खेतान मार्ग पर स्थित एक भव्य एवं विशाल हवेली का निर्माण कराया, जो आज भी बहुत अच्छी हालत में है।

सेठ श्री मन्नालालजी खेतान के सुपुत्र सेठ भगवती प्रसादजी खेतान ने अपने बंश की परम्परा को चार चाँद लगा दिये हैं। आपने भारतीय संस्कृति, संस्कृत एवं हिंदी भाषा, आयुर्वेद विज्ञान तथा समाज के असहाय वर्ग की सहायता हेतु—३० मार्च सन् १९५५ ई० में "**भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट**" की बम्बई में स्थापना करके एक सराहनीय कार्य किया है।

हर्ष की बात है कि इस बार समस्त अग्रवाल जगत् में सुविख्यात "**अग्रोतकान्वय**" ग्रन्थ (अग्रवाल वैश्य जाति का इतिहास) के चतुर्थ संस्करण का प्रकाशन "भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट" की ओर से किया गया है। अतः अग्रोतकान्वय ग्रन्थ के प्रकाशन कार्य से इस ट्रस्ट के अनेकों शुभ कार्यों की श्रृंखला आगे बढ़ी है। ऐसे उपयोगी तथा उपादेय प्रकाशन को प्रकाशित कराके "**भगवती प्रसाद खेतान ट्रस्ट**" ने अग्रवाल समाज की सराहनीय सेवा की है।

श्री ठाकुरजी लक्ष्मीनाथजी ट्रस्ट, झुन्झुनू

●

झुन्झुनू के सुप्रसिद्ध खेतान परिवार के पितामह पूज्य सेठ रामबिलासरायजी खेतान ने अपने पूज्य पिता श्री सेठ रामकरणदासजी की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिये "श्रीठाकुरजी लक्ष्मीनाथजी ट्रस्ट" की झुन्झुनू में स्थापना १ फरवरी, सन् १९१९ ई० में की थी। इस ट्रस्ट के ट्रस्टीगण निम्नांकित महानुभाव बनाये गये :—

१. पूज्य श्री रामबिलासरायजी खेतान	२. सेठ श्री मन्नालालजी खेतान
३. ,, ,, बसन्तलालजी खेतान	४. ,, ,, चिरंजीलालजी खेतान
५. ,, ,, मदनलालजी खेतान	६. ,, ,, लीलाधरजी खेतान
७. ,, ,, भगवती प्रसादजी खेतान	८. ,, ,, चण्डी प्रसादजी खेतान
९. ,, ,, राधावल्लभजी खेतान	

ट्रस्ट डीड रुपया १,२००/- के कागज पर उर्दू में लिखा गया था और इस ट्रस्ट की सुचारु व्यवस्था उपर्युक्त ९ ट्रस्टियों को सौंपी गई थी। आगे चलकर इस ट्रस्ट की प्रबन्ध-व्यवस्था को लेकर ट्रस्टियों में मतभेद उत्पन्न हो गया जिसका निपटारा अन्त में पारस्परिक बातचीत द्वारा सन् १९६१ ई० में बम्बई में हुआ और सर्व सम्मति से प्रथम—पाँच वर्ष के लिये सेठ भगवती प्रसादजी खेतान मैनेजिंग ट्रस्टी नियुक्त हुए। सेठ भगवती प्रसादजी खेतान ने उन पांच वर्षों में बड़ी लगन उत्साह एवं सूझ-बूझ के साथ ट्रस्ट की सच्ची सेवा की और इस ट्रस्ट को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ बनाते हुये इसकी काया-कल्प कर दी। ट्रस्ट के लिये नियमोपनियम बनाये गये और आगे आने वाले मैनेजिंग ट्रस्टियों का मार्ग प्रशस्त कर दिया तथा ट्रस्ट की आय बढ़ गई।

सन् १९६१ ई० में ट्रस्ट के निश्चयानुसार श्री भगवती प्रसादजी खेतान ने पाँच वर्ष की अवधि पूरी होने पर अपना पद रिक्त कर दिया अतः दिनाँक २८-१-१९६६ ई० में इस ट्रस्ट के ट्रस्टियों की एक बैठक में श्री परमेश्वरी प्रसाद जी खेतान को सर्व सम्मति से मैनेजिंग ट्रस्टी नियुक्त किया गया। लगभग डेढ़ वर्ष तक ट्रस्ट की सेवा करने के पश्चात् अपनी अस्वस्थता तथा जययुर प्रवास के कारणों से श्री परमेश्वरी प्रसादजी खेतान ने अपने पद पर बने रहने में असमर्थता प्रगट की। अतः दिनाँक १२-८-१९६७ ई० को हुई ट्रस्टियों की बैठक में सेठ चण्डी प्रसादजी खेतान को सर्व सम्मति से मैनेजिंग ट्रस्टी नियुक्त किया गया।

pdfelement
Remove Watermark Now

दिनाँक १५ अगस्त १९६७ ई० को इस ट्रस्ट का कार्यभार संभालने के पश्चात् सेठ चण्डी प्रसाद खेतान ने ट्रस्ट के कार्यालय को सुव्यवस्थित किया और नियमित रूप से ट्रस्ट का दैनिक हिसाब-किताब तथा रोजनामचा आदि रखने की परिपाटी को व्यवहारिक दृष्टिकोण से सुगम और स्पष्ट कर दिया, साथ ही "श्रीलक्ष्मीनाथजी महाराज" की सेवा, पूजा-पाठ, भोग तथा प्रसाद वितरण प्रणाली को निकट से देखा और उसमें आवश्यक सुधार किये।

इस प्रकार ट्रस्ट का झुन्झुनू स्थित कार्यालय और सम्पत्ति आदि की व्यवस्था ठीक करके श्री सेठ चण्डी प्रसाद खेतान का ध्यान हरिद्वार स्थित ट्रस्ट की जायदाद व मकान की ओर गया। यह हरिद्वार का मकान पूज्य सेठ श्री रामबिलासरायजी खेतान की तपोभूमि रही है। उन्होंने पर्याप्त समय तक यहाँ रह कर गंगातट पर भगवत भजन किया था। अतः सभी ट्रस्टियों की स्वीकृति से उनकी संगमरमर की मूर्ति गंगा घाट पर विधिवत् स्थापित कराके उनकी पुण्य स्मृति चिरस्थायी कर दी गई व मकान की व्यवस्था के लिये एक मुनीम तथा एक जमादार रख दिये गये।

अब ६-७ वर्ष पूर्व हरिद्वार मकान के एक भाग में एक छोटा रमणीक मन्दिर का नव निर्माण कराकर **"श्री गोविन्ददेवजी"** की प्राण प्रतिष्ठा व स्थापना की गई है। श्री चण्डी प्रसादजी खेतान की अनुमति व आज्ञानुसार श्री परमेश्वरी प्रसाद खेतान के सुपुत्र श्री चन्द्र प्रकाशजी खेतान भगवत भक्ति भावना से प्रेरित होकर— **"श्री गोविन्ददेवजी"** की पूजा-पाठ व सेवा करते हैं।

हरिद्वार की जायदाद की सुव्यवस्था के पश्चात ट्रस्ट ने कानपुर स्थित मकान—जायदाद की ओर ध्यान दिया। यहां का मकान नं० ४९/१५ जनरलगंज, कानपुर में स्थित है। इस घर पर ऐसे किरायेदारों का कब्जा है जिनसे इतना भी किराया नहीं मिलता है कि उस जीर्ण-शीर्ण मकान की मरम्मत कराई जा सके।

इस ट्रस्ट के ऋषिकेश, बद्रीनारायण एवं काशी में भी बहुत छोटे-छोटे मकान हैं उनकी स्थिति में भी सुधार के प्रयत्न चल रहे हैं।

अब तक ट्रस्ट की धनराशि बैंकों में जमा रहती थी जिससे बहुत कम आय होती थी। अतः सभी ट्रस्टियों की सहमति से देवरिया की जायदाद व कानपुर की जायदाद व मकान को बेचकर जयपुर में भूमिखण्ड क्रय करके उस पर मकान का निर्माण कराया गया है जिसके किराये से ट्रस्ट को रुपया ६,०००/-मासिक की आय होती है। इस प्रकार इस ट्रस्ट का आय-व्यय संतुलित ढंग से चल रहा है।

जन सेवा की दृष्टि से झुन्झुनू में ट्रस्ट की ओर से मन्दिर के एक भाग में "श्री लक्ष्मीदासजी दातव्य आयुर्वेदिक औषधालय" की स्थापना की गई है, जहाँ निःशुल्क जनता की आयुर्वेदिक पद्धति से सेवा की जाती है।

सम्पर्क सूत्र—सेठ श्री चण्डी प्रसाद जी खेतान
'खेतानों की हवेली' सेठ मन्नालाल मार्ग
झुन्झुनू (राज०)

महाराजा अग्रसेन का वंश वृक्ष

ब्रह्मा
⋮
कश्यप (कई पीढ़ी बाद)
⋮
विविस्वान तथा ८ पुत्र और
⋮
मनु— (आदि मानव)
⋮
□

pdfelement
Remove Watermark Now

□ इला (पुत्री) · इक्ष्वाकु · धृष्णु · सर्याति · नरिष्यन · प्रांशु · नाभाग · नेदिष्ट · करुष · पृषध्र

नेदिष्ट → भलन्द (मन्त्र दृष्टा ऋषि) → वात्सप्रि

(माकिल) · प्रांशु (द्वितीय)

प्रांशु (द्वितीय) → प्रजाति → वैशाल

(माकिल) → धनपाल वंश में (वैशाल की ८ कन्यायें धनपाल की ८ पुत्र वधुएँ बनीं जो अग्रवालों की ८ मातृकाएँ कहलाती हैं)

शिव · नल · नन्द · कुमुद · अनल · बल्लभ · कुन्द · शेखर

शिव → आनन्द → अय → विश्व (वंश में) जम्बू द्वीप संस्थापक → सुदर्शन → धुरन्धर → नन्दिवर्धन → अशोक → समाधि

समाधि → गुणाधि (वर्णवाल वैश्यों) के वंशकर्ता · मोहन (वंश में) ×

× नेमिनाथ (प्रपौत्र) → वृन्द → गुर्जर → हरि (वंश में) रंग तथा ९९ अन्य पुत्र ❖

❖ विशोक → मधु (वंश में) → महीधर

महीधर → वल्लभ (द्वितीय) तथा अन्य पुत्र

अग्रसेन · सूरसेन

अग्रसेन → विभु तथा अन्य ५३ पुत्र → नेमिनाथ [द्वितीय] → विमल → शुक देव → धनन्जय → श्रीनाथ

श्रीनाथ → दिवाकर · महादेव

दिवाकर → सुदर्शन

महादेव → योगधर → मलय

मलय → वसु · नन्द

वसु आठ पुत्र हुये जिनसे आठ वंशों का उदय हुआ

नन्द → चन्द्रशेखर → अग्रेचन्द्र

"अग्रोतकान्वय" की विषय सूची

विषय	पृष्ठ संख्या
१. "अग्रोतकान्वय एक दृष्टि में	१
२. वैश्य वंश का उदय	११
३. अग्रवाल वैश्य जाति की प्राचीनता	२९
४. महाराजा अग्रसेन का जीवन परिचय	३३
५. अग्रवाल वैश्यों के नागवंश से सम्बन्ध	४०
६. अग्रवाल वैश्यों के १८ गोत्र	४८
७. अग्रोहा का उत्थान-पतन और पुनरोत्थान	६१
८. अग्रवाल वैश्य जाति का विस्तार	७३
९. मुगलकाल के कुशल अग्रवाल प्रशासक एवं घराने	८४
०. वैश्य जाति के अध्यात्मिक पुरुष	९९
११. अग्रवाल वैश्यों के सप्त ऋषि	१०५
१२. सती प्रथा—एक अध्ययन	१३०
१३. अग्रवालों की सतियाँ	१४८
१४. देश निर्माण में अग्रवालों का योगदान	१५८
१५. समाज सेवा में संलग्न अग्रवाल संगठन	१६५
१. अखिल भारतीय अग्रवाल संस्थायें—	
१. अखिल भारत वर्षीय वैश्य महासभा, मेरठ	१६५
२. अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा, (पंजीकृत) देहली	१७३
३. सभायें आजम तथा	१८०
४. अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा, अलीगढ़	१८०
५. अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन	१८३
६. अखिल भारतीय अग्रवाल महासंघ, देहली	१८९
७. अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष, बम्बई	१९१
२. राज्यों में अग्रवाल सभायें—	
१. दक्षिण भारत की अग्रवाल सभायें	१९३
२. आन्ध्र प्रदेश की अग्रवाल सभायें	१९५
३. गुजरात की अग्रवाल सभायें	१९८
४. महाराष्ट्र की अग्रवाल सभायें	२००
५. राजस्थान की अग्रवाल सभायें	२०७
६. मध्य प्रदेश की अग्रवाल सभायें	२३६
७. पंजाब हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश की अग्रवाल सभायें	२६१
८. देहली की अग्रवाल सभायें	२७४
९. उत्तर प्रदेश की अग्रवाल सभायें	२९८
१०. विहार तथा उड़ीसा की अग्रवाल सभायें	३३१
११. बंगाल तथा आसाम की अग्रवाल सभायें	३३५

patelement

अग्रोहा के खण्डहरों में उत्खलन योग्य स्थल की खोज

अग्रोहा के खण्डहरों के ऊपर निर्मित दीवान नन्नू मल अग्रवाल के प्रसिद्ध किले की दीवार के पास से दूर-दूर तक फैले अग्रोहा के खण्डहरों का अवलोकन करते हुए वैद्य श्री निरंजन लाल जी गौतम

Remove Watermark Now

नन्नू मल जी अग्रवाल के किले की प्राचीर पर

दो प्रसिद्ध इतिहासकार डा० श्री परमेश्वरी लाल गुप्त एवं
वैद्य श्री निरंजन लाल गौतम खण्डहरों के अवलोकन कार्य में निमग्न

दूर-दूर तक फैले अग्रोहा के खण्डहरों का ऐतिहासिक दृष्टि से अवलोकन करते हुए
अग्रवाल जातीय इतिहास के दो प्रख्यात इतिहासकार
डा० परमेश्वरी लाल गुप्त एवं वैद्य श्री निरंजन लाल गौतम

pdfelement

Remove Watermark Now

अग्रोहा के खण्डहरों में गहरी घाटी के बीच

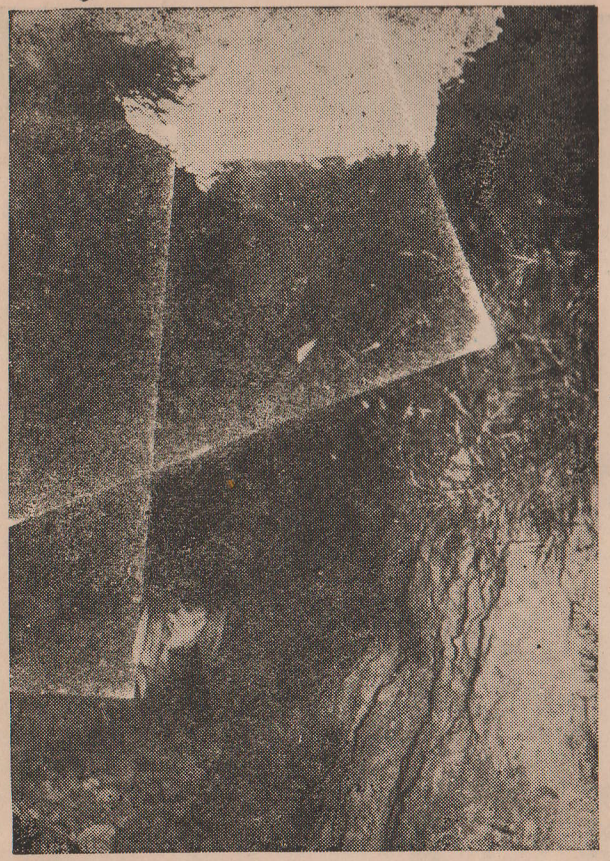

अग्रोहा के खण्डहरों में स्थित गहरी घाटी में खड़े होकर अग्रोहा के प्रसिद्ध दुर्ग की भग्नावशेष प्राचीरों के अवलोकन कार्यों में संलग्न वैद्य श्री निरंजन लाल गौतम एवं डा० परमेश्वरी लाल गुप्त

अग्रोतकान्वय

(अग्रवाल वैश्यजाति का इतिहास)

एक दृष्टि में

अग्रवाल वैश्य जाति का इतिहास लिखते समय नवीन लेखकों को अब जो सुविधाएं उपलब्ध हैं वे ये हैं कि अब तक छोटे-बड़े दो दर्जन के लगभग अग्रवाल जाति के इतिहास लिखे जा चुके हैं, अतः उनसे सामग्री जुटाना अत्यन्त सरल है और अपने विचार बनाने में सुविधा होती है। किन्तु सबसे अधिक कठिनाई महाराजा अग्रसेन और उनके काल-निर्णय के सम्बन्ध में लेखकों का पारस्परिक विरोधाभास है जो यहाँ तक दीख पड़ता है कि उनके लेखों से न केवल एक दूसरे की बात का खण्डन हो जाता है, वे अपने ही लेखों में विरोधाभास प्रकट करने लग जाते हैं और सर्व साधारण पाठक एक झमेले में पड़ जाता है कि वह किस बात को माने और किसे छोड़े। उदाहरण के लिए हम कुछ लेखकों के विचार—विशेषकर महाराजा अग्रसेन के जन्म काल सम्बन्धी—यहाँ प्रस्तुत करते हैं। इनसे पाठक हमारे कथन की सत्यता का पता लगा सकेंगे।

अग्रवाल वैश्य जाति के संगठनकर्ता महाराजा अग्रसेन के अस्तित्व तथा उनके जन्म काल के सम्बन्ध में हमारी जो मान्यता है उसका आधार महाभारत और अब तक उपलब्ध अग्रवाल जाति के ऐतिहासिक ग्रन्थ, भारतीय इतिहास की सामग्री, शिलालेख और राज मुद्रायें हैं। ये राज मुद्रायें सन् १९३८ में अग्रोहा की खुदाई में प्राप्त हुई थीं। सरकारी अधिकारियों की दृष्टि में ये मुद्रायें २००० वर्ष पूर्व की हैं। जब तक अग्रोहा के खण्डहरों की वर्तमान खुदाई पूर्ण नहीं होती और ठोस ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिल जाते उपर्युक्त प्राप्त ऐतिहासिक सामग्री का प्रयोग ही अग्रवाल वैश्य जाति के इतिहास का आधार रहेगा।

pdfelement
Remove Watermark Now

हमारी मान्यतायें

हमने प्रायः सभी लेखकों के विचारों को समझने का प्रयत्न किया है और अपने विचार बनाये हैं। हमारी मान्यता का सार निम्न प्रकार है :—

१. महाराजा अग्रसेन अवश्य हुए हैं।

२. वे वैश्यगण राज्य के, जिसका उल्लेख महाभारत में है, संस्थापक थे और उन्होंने अग्रोहा नगर का निर्माण कराया था। अतः वे वैश्य जाति के संगठनकर्ता थे और उन्हीं के नाम पर वैश्य गणराज्य का नाम अग्रगण राज्य पड़ा।

३. महाराजा अग्रसेन ने अग्रोहा बसाया अतः जो वैश्य अग्रोहा छोड़कर अन्यत्र गए, वे आग्रेय या अग्रोतकान्वय कहलाये और सन् १७०० से १८०० में अगरवाल या अग्रवाल नाम से प्रसिद्ध हुए, यद्यपि सन् ११३२ में भी अगरवाल और अग्रोतकान्वय शब्दों का प्रचलन था।

४. अग्रोहा में महाराजा अग्रसेन के वंश सहित राज्यों में बसे एक लाख वैश्यों का प्रतिनिधित्व १८ कुटुम्बों में बंटा हुआ था अतः वे १८ कुटुम्ब ही महाराजा अग्रसेन की अध्यक्षता में अग्रगण राज्य का प्रबन्ध चलाते थे।

५. इन १८ कुलों के गोत्र ही अग्रवालों के १८ गोत्र हैं।

६. आज के समस्त अग्रवाल वैश्य उपर्युक्त १८ कुलों (कुटुम्बों) की सन्तान हैं।

७. अग्रोहा छोड़ने से पूर्व अग्रोहा में बसे १८ कुलों के सदस्य अपने को अग्रोहा कुल के वैश्य कहते थे और अपने कुल का गोत्र भी अपने नाम के आगे लगाते थे।

८. महाराजा अग्रसेन का जन्म मंगसिर बदी ५ द्वापर के अन्तिम चरण में महा-कलियुग से ८५ वर्ष पूर्व हुआ और कलियुग के ११९ वर्ष बीतने पर ब्रह्मसर पर शरीर त्यागा। इस प्रकार महाराजा अग्रसेन की आयु २०४ वर्ष थी।

अब हम अपनी उपर्युक्त मान्यताओं के सम्बन्ध में कुछ विवेचना करेंगे जिनसे इन्हें बल मिलेगा।

१. महाराजा अग्रसेन का अस्तित्व

विश्व ख्याति के मुद्राशास्त्री विद्वान् लेखक श्री डॉ० परमेश्वरी लाल जी गुप्त ने सबल प्रमाणों से महाराजा अग्रसेन के अस्तित्व को अस्वीकार किया है किन्तु अग्रोहा गणराज्य को मान्यता दी है। उनकी मान्यता है कि अग्रोहा से निकास होने के कारण पहले अग्रोतकान्वय, फिर अगरवाल या अग्रवाल वैश्य कहलाये।

श्री गुप्त जी का तर्क है कि पुराणों तथा पुरातत्वीय सामग्री में महाराजा अग्रसेन का कहीं उल्लेख नहीं है अतः इनका अस्तित्व अमान्य है। इसी सम्बन्ध में हमारी मान्यता है कि १८ पुराणों की रचना महाभारत काल से पूर्व ही हो चुकी थी और ऋषियों ने ब्राह्मण ग्रन्थों और उपनिषदों की रचना से पूर्व ही इतिहास-पुराणों का निर्माण कर लिया था। ऐतिहासिक सामग्री से ओत-प्रोत प्रसिद्ध पुराण निम्न प्रकार हैं :—

१. वायु पुराण, २. ब्रह्माण्ड पुराण, ३. मत्स्य पुराण, ४. विष्णु पुराण।

इसकी पुष्टि प्रसिद्ध अनुसन्धानकर्ता स्व० श्री पं० भगवद्दत्त जी कृत भारत का बृहद् इतिहास पृ० सं० ७७६ पर दिये लेख से होती है। साथ में हमें यह भी विचार करना होगा कि महाराजा अग्रसेन का जन्म महाकलिकाल से ८५ वर्ष पूर्व हुआ था और उनकी ख्याति फैलने में लगभग ४० वर्ष की अवधि तो मानी ही जावेगी। अतः शेष ४५ वर्ष के स्वल्प काल में पुराणों की रचना में स्थान पाना कोई साधारण बात न थी। हमें अपने काल की ऐतिहासिक घटना की याद है कि आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने सन् १८६३ (सम्वत् १९२० वि०) में अपना प्रचार कार्य आरम्भ किया और समाज में एक अद्भुत क्रांति को जन्म दिया किन्तु उनका नाम भारतवर्ष के इतिहास में सन् १९४६ से पूर्व नहीं आ सका। फिर जिस समय महाराजा अग्रसेन का जन्म हुआ उस समय तो भारत में ब्राह्मण और क्षत्रियों का बोलबाला था। अतः ऐतिहासिक पुराणों में केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय वंशों का ही वर्णन मिलता है, वैश्यों का वर्णन तो कहीं प्रसंग-वश आ गया है।

महाराजा अग्रसेन का प्रारम्भ से ही देवताओं के राजा इन्द्र से संघर्ष चलता रहा और कुछ समय के लिए नागों की शक्ति के सहयोग के कारण अग्रगण की जो कुछ उन्नति हुई जन्मेजय के नागयज्ञ के समय नागों (वैश्यों) का सामूहिक रूप से जो ह्रास हुआ उसका प्रभाव भी अग्रोहा के अभ्युदय पर अवश्य पड़ा। ऐसी अवस्था में कोई आश्चर्य नहीं यदि अग्रसेन जी का उल्लेख किसी इतिहास पुराण में नहीं मिलता।

अब हम उन साम्प्रदायिक पुराणों की चर्चा करेंगे, जिनका प्रकाशन १४-१५वीं शताब्दी में हुआ और जिनमें प्रारम्भ तथा अन्त के पृष्ठ इसीलिए बन्द नहीं होते थे कि प्रक्षेप रूप से जब चाहा और जैसा चाहा पुराण के नाम से लिख दिया। ऐसे पुराणों को तो एक-दूसरे पर कीचड़ उछालने से ही फुरसत नहीं मिलती थी। यदि हम ऐसे साम्प्रदायिक पुराणों में महाराजा अग्रसेन का नाम देखना चाहें तो फिर हम भविष्य पुराण के लक्ष्मी महात्म्य प्रकरण के केदार खण्ड में 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तन' नाम के सोलहवें अध्याय या 'उरु चरितम्' का विश्वास क्यों न करें। इनका रचना काल भी सम्वत् १९११ के आस-पास का है।

यदि हम यह भी मान लें कि अग्रवैश्य वंशानुकीर्तन तथा उरु चरितम् विश्वस्त साहित्य नहीं हैं तो भी महाराजा अग्रसेन का अस्तित्व तो बना ही रहता है। यदि महाभारत या उसके समकालीन साहित्य में इनका नाम नहीं मिलता तो महाभारत में अग्रगण राज्य का तो स्पष्ट वर्णन मिलता ही है।

जब अग्रगण राज्य का अस्तित्व प्रमाणित है तो इसका निर्माता, संगठनकर्ता गणराज्य का संचालक तो अवश्य ही कोई रहा होगा। फिर अग्रगण राज्य का संस्थाप अग्रसेन है, इसमें किसी को क्या आपत्ति होनी चाहिए।

pdfelement
Remove Watermark Now

भद्रान् रोहितकांश्चैव अग्रोयान् मालवान् अपि।
गणान् सर्वान् विनिर्जित्य नीतिकृत प्रहसन्निव ॥

(महाभारत वन पर्व २५४-२०)

हमने ऊपर महाभारत के वन पर्व का २५४-२० श्लोक उद्धृत करके अग्रगण-राज्य का अस्तित्व प्रदर्शित किया है। यहां कर्णविजय का वर्णन है। इसमें अग्रगण जीतने का स्पष्ट वर्णन है और अग्रगणराज्य रोहतक से आगे है इससे अधिक स्पष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है! फिर एक बात और भी विचारणीय है कि कर्णविजय के लगभग २५ वर्ष पूर्व नकुल ने भी भारत विजय यात्रा की थी किन्तु उस समय इसी स्थान पर मरुभूमि का वर्णन है, अग्रगण उस समय नहीं था :—

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनधान्यवत्।
कार्तिकेयस्य दयितं रोहीतक मुपाद्रवत् ॥
तत्रयुद्धं महच्चासीच्छूरैर्मत्त मयूरकैः।
मरुभूमि स कात्स्न्येन तथैव बहुधान्यकम् ॥
शैरीषकं महेत्थं च वशे चक्रे महाद्युतिः
आक्रोशं चैव राजर्षितेन युद्धम् भून्महत्।
तान दशार्णान स जित्वा च प्रतस्थ पाण्डुनन्दनः ॥

(सभापर्व ३५।४।६)

इससे यह स्पष्ट है कि नकुल और कर्णविजय के २५ वर्ष के कालान्तर में ही 'अग्रगण' राज्य की स्थापना हुई और यही काल अग्रसेन के जन्म से सम्बद्ध है; क्योंकि महाराजा अग्रसेन ने २५ वर्ष की आयु में विवाह करके अग्रगण राज्य की स्थापना की थी और अग्रोहा नगर बसाया था।

यदि हम अग्रवैश्य वंशानुकीर्तन, उरु चरितम् तथा महाभारत को एक ओर रख दें तो सम्वत् १३८४ वि० में सारवन का अभिलेख स्पष्ट घोषणा कर रहा है— **'तस्यां पुर्यस्ति वणिजामग्रोतक निवासिनां'** इसी लेख में स्पष्ट उल्लेख है कि 'अग्रोतक' हरियाणा में है। क्या यह स्पष्ट उल्लेख किसी भी पुराण के लेख से कम महत्व का है? अतः जब तक अग्रगण, अग्रोदक और अग्रोहा नाम उपलब्ध हैं उस समय तक इनके संस्थापक का नाम अग्रसेन भी स्वतः प्रमाणित है।

२ महाराजा अग्रसेन और अग्रवाल वैश्य

महाराजा अग्रसेन ही वैश्य-गणराज्य के संस्थापक थे और उन्होंने एक लाख वैश्यों का संगठन करके अग्रगण राज्य नाम से वैश्य-गणराज्य की स्थापना की। यह वही वैश्य गणराज्य है जिसका वर्णन महाभारत में निम्न प्रकार अंकित है। उसकी राजपुरी अग्रोहा थी। इसी राज्य में वैश्यों के प्रतिनिधि १८ कुल थे जो इस गणराज्य की सभी प्रकार की संचालन व्यवस्था के लिए उत्तरदायी थे :—

क्षत्रियोपनिवेशाश्च वैश्य शूद्र कुलानि च।
शूद्राभीराश्च दरदाः काश्मीराः पशुभिः सह। ६७।

(भूमिपर्व अध्याय ९।६७)

इसमें क्षत्रियों के उपनिवेश, वैश्य और शूद्रों के जनपद, शूद्र, आभीर, दरद, काश्मीर, पशुपति ये जनपद कहे हैं।

भूल से कुछ इतिहासकारों ने महाराजा अग्रसेन को अपनी भावुकता और श्रद्धावश अग्रवालों का वंशकर्ता मान लिया और अपने आप को महाराजा अग्रसेन की संतान मान बैठे हैं। किन्तु हमें इसमें एक बड़ी आपत्ति है कि यदि सभी अग्रवाल महाराजा अग्रसेन की संतान हैं और सभी अग्रवाल उनके कुल के हैं तो फिर उनमें परस्पर विवाह कैसे होता है? भारत में लगभग सभी जातियाँ अपने कुल (कुटुम्ब) की कन्या से विवाह करना पसन्द नहीं करतीं। हम देखते हैं कि अग्रवाल गोत्र बचा कर परस्पर विवाह करते हैं। यदि ये गोत्र अग्रसेन के पुत्रों के होते तो वे बहिन-भाई के विवाह के दोष से बच नहीं सकते थे। सौभाग्य से बात ऐसी नहीं है अतः कुछ इतिहासकारों ने इस भूल का समाधान भी किया। सभी दृष्टियों से विचार करके हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि अग्रोहा में वैश्यों के १८ कुल या कुटुम्ब थे जिनमें से एक कुटुम्ब महाराजा अग्रसेन और उनके पुत्रों का भी था और महाराजा अग्रसेन के कुल का गोत्र गर्ग था। शेष सभी वैश्यों के १७ कुटुम्ब (कुल) थे जिनके गर्ग के अतिरिक्त भिन्न-भिन्न १७ गोत्र थे। आज हम उन्हीं वैश्यों के १८ कुलों की सन्तान हैं और सब का गोत्र भिन्न होने से विवाह निश्चित करने से पूर्व एक दूसरे को गोत्र उच्चारण द्वारा पहचान लेते हैं तथा हम एक ही कुल में विवाह करने के दोष से आज तक बचे रहे हैं। अतः हमारा यह स्पष्ट मत है कि महाराजा अग्रसेन हमारे अग्रगण राज्य के संस्थापक, वैश्य संगठनकर्ता और इस रूप में ही वंशकर्ता थे कि उन्होंने अग्रगण राज्य (जिसे अन्य लोग वैश्य गणराज्य कहते थे) की स्थापना की थी। जहाँ तक वंश का सम्बन्ध है हम सब अग्रवाल १८ वंश (कुटुम्बों) के हैं जिनमें गर्ग गोत्रीय अग्रवाल महाराजा अग्रसेन के निज कुटुम्ब के हैं।

३. अगाच्च मित्रपदा गणराज्य की स्थापना

महाराजा अग्रसेन ने वैश्य-गणराज्य का संगठन किया अतः उनके नाम से इस गणराज्य को अग्रगण कहते थे। किन्तु ईसा के ३२६ वर्ष पूर्व सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया और अग्रोहा पर भी इस आक्रमण की छाया पड़ी। संभावित युद्ध के भय से बहुत से लोग अग्रोहा छोड़कर चले गये।

सिकन्दर के भारत से चले जाने के पश्चात् आग्रेय निवासियों ने आस[illegible] छोटे-छोटे गणराज्यों के साथ मिल कर 'अगाच्च मित्रपदा' नामक गणराज्य [illegible] किया। ऐसा जान पड़ता है कि सिकन्दर के समय जो वैश्य अग्रोहा छोड़कर चले [illegible] १. हिसार, २. हाँसी, ३. तोशाम, ४. सिरसा, ५. नारनौल, ६. रोहतक, ७. प[illegible], ८. जींद, ९. कैथल, १०. मेरठ, ११. दिल्ली, १२. सहारनपुर, १३. ज[illegible]

pdfelement
Remove Watermark Now

१४. विद्यानगर, १५. नाभर, १६. अमृतसर, १७. अलवर, १८. उदेपुर आदि नगरों में जा बसे और सिकन्दर के भारत आक्रमण की समाप्ति पर इन स्थानों पर बसे 'अग्रोतकान्वय' वैश्यों ने 'अगाच्च मित्रपदा' नाम से अपना पुनर्गठन किया और गण-राज्य का कार्य सुचारु रूप से चलता रहा। सन् १९३८ में भारतीय पुरातत्व विभाग ने अग्रोहा के खण्डहरों की खुदाई कराई थी। परिणामस्वरूप ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी की कुछ ताम्र मुद्राएं इन खण्डहरों से उपलब्ध हुई थीं। ये मुद्राएं चौकोर हैं और उन पर ब्राह्मी लिपि में **अगोदके अगाच जनपदस'** अंकित है इसका अर्थ है 'अगाच' जनपद के अगोदक (अग्रोहा) राजधानी की मुद्रा। 'अगाच' प्राकृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ आग्रेय है जो संस्कृत शब्द है।

"अग्रोतकान्वय" शब्द का प्रचलन

११९५ ई० में जब मुसलमानों (मुहम्मद गौरी) ने अग्रोहा को पूरी तरह उजाड़ दिया तो बचे हुए वैश्य राजस्थान में चले गये और अपने आपको "अग्रोतकान्वय वणिक" और आगे चलकर १७०० से १८०० ई० के बीच अग्रवाल वैश्य कहने लगे। इस सम्बन्ध में पहला हस्तलेख 'तजकिरातुल उमरा' लन्दन स्थित इण्डियन आफिस लाइब्रेरी लन्दन में है जिसके लेखक कासना (दिल्ली) निवासी श्री केवलराम ने अपने को 'अग्रवाल' लिखा है। इस सम्बन्ध में जो भी लोग अग्रोहा छोड़कर अन्यत्र बसे वे अपने आपको 'अग्रोतकान्वय' कहा करते थे। किन्तु वे अपने नाम के साथ अग्रोतकान्वय वणिक तथा अपने गोत्र का उल्लेख अवश्य करते थे जिससे अग्रोहा की अन्य जातियों से उनकी अलग पहचान हो सके। सन् १७००-१८०० के बीच जब 'अगरवाल' और 'अग्रवाल' शब्दों का प्रचलन हुआ तो उस समय भी अग्रवाल के साथ अग्रवाल वणिक, अग्रवाल बनिया, अग्रवाल बक्काल तथा अग्रवाल वैश्य ही लिखा जाता था ताकि अग्रोहा की वैश्येतर जातियों में से इन्हें सुगमता से पहचाना जा सके।

४. अग्रवाल वैश्यों के १८ गोत्र

जैसा कि हम इससे पूर्व लिख चुके हैं अग्रगण राज्य का संचालन कार्य महाराजा अग्रसेन तथा अग्रोहा के वैश्यों के प्रतिनिधि १७ वंशों (कुटुम्बों) द्वारा होता था और इन १८ कुटुम्बों ने मिलकर १८ यज्ञ किये। इसकी अग्रवाल वैश्यों में वंशानुगत चर्चा रही है। इन १८ यज्ञों में जिन-जिन ऋषिमुनियों ने पुरोहित का कार्य किया उनके नाम से प्रचलित १८ गोत्रों में अग्रवाल वैश्य सगोत्र विवाह नहीं करते। हमारे १८ गोत्र न तो पुरोहितों के गोत्र हैं न ब्राह्मणों के गोत्रों से इनकी तुलना करने की बात है। सीधी-सादी बात यह है कि अग्रगण के जिन १८ कुलों ने १८ यज्ञ किये और जिन-जिन मुनियों ने १८ यज्ञों का पौरोहित्य कर्म कराया उनके नाम से उन १८ कुलों के गोत्र चले और वे ही गोत्र अपभ्रंश रूप में आज तक चले आ रहे हैं। इन गोत्रों को संस्कृत करने का प्रयत्न स्व० श्री बाबू मदन मोहन दास आनरेरी मजिस्ट्रेट, इटावा ने सम्वत् १९५३ वि० में "सुज्ञात प्रकाश पत्र" प्रकाशित करके तथा श्री रामचन्द्र गुप्त, अजमेर-

निवासी ने किया था जो एक सराहनीय कार्य था किन्तु अग्रवालों ने इन संशोधित गोत्रों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया और कुछ परिवारों को छोड़कर अन्य परिवार पूर्ववत् अपने १८ प्रचलित गोत्र मानते आ रहे हैं।

यहाँ हमें एक बात पर ध्यान देना होगा कि अग्रवालों के जिन अठारह मुनियों के नाम गोत्रों के साथ दिए गए हैं उनका अस्तित्व भी है या नहीं। इस सम्बन्ध में हमारा उत्तर 'हाँ' में है। हमने महाराजा अग्रसेन का काल कलि काल से ८५ वर्ष पूर्व माना है अतः उनका जन्म काल आज से ५१६७ वर्ष पूर्व बनता है। उस समय ऋषियों के स्थान पर मुनियों का युग था। अग्रगण के १८ कुलों द्वारा आयोजित यज्ञों के पुरोहित मुनि थे। जो नाम ऋषियों के हैं उनका अभिप्राय उन मुनियों से है जो उस ऋषि के वंशज थे। उदाहरण के लिए भारतवर्ष का बृहत् इतिहास स्व० पं० भगवद्दत्त कृत में दिये गये नामों में तित्तिरि मुनि ५२३८ वर्ष पूर्व (१९८२ से) तैतरेय मुनि ५१३८ वर्ष पूर्व तथा ताड्यमुनि भी उन्हीं के समकालीन हैं। इससे प्रकट होता है कि महाराजा अग्रसेन के समय वे सभी मुनि विद्यमान थे जिनके नाम अग्रवालों के गोत्रों से सम्बद्ध हैं। वास्तव में अग्रवालों के गोत्र इन्हीं मुनियों के नाम से हैं किन्तु काल और स्थान भेद से मुनियों के नाम से अपभ्रंश हो गये हैं।

इन गोत्रों के अतिरिक्त अग्रवालों में ऐसे नाम भी प्रचलित हैं जिनसे गोत्रों का भ्रम होता है। वास्तव में वे उनके गोत्र नहीं, बाँक अल्ल, खाता, स्थान या घराने के सूचक हैं। जब किसी परिवार में कोई विशिष्ट पुरुष होता था तो उसके परिवार के लोग उसके नाम से प्रसिद्ध हो जाते थे या किसी स्थान से सम्बद्ध होने के कारण उनके परिवार में उस स्थान का सम्मिश्रण हो जाता था। जैसे उदाहरण के लिए हम मारवाड़ी अग्रवालों के बाँको (घराने या खाते) का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं—

१. केडिया—केड का रहने वाला परिवार विशेष

२. बगडिया—बगड का रहने वाला परिवार विशेष

इसी प्रकार डालमिया, खेतान, जालान आदि परिवारों के नाम समझने चाहिये।

गोत्र और खाता (अल्लो-घराने) में इतना ही अन्तर है कि अग्रवालों में गोत्रों की संख्या तो सीमित है किन्तु घरानों की संख्या किसी भी समय बढ़ सकती है। ऐसे ही घरानों की विस्तृत सूची हमने इस ग्रन्थ के **"अग्रवाल वैश्यों के १८ गोत्र"** अध्याय में दी है।

pdfelement
Remove Watermark Now

महाराजा अग्रसेन तथा उनके जन्मकाल सम्बन्धी विभिन्न मत

नाम पुस्तक	लेखक	महाराजा अग्रसेन थे या नहीं थे	जन्म-काल
१. अग्रवैश्य वंशानुकीर्तन	अज्ञात	थे	कलि के आरम्भ में
२. अग्रवालों की उत्पत्ति	भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र	थे	,, ,,
३. उरु चरितम्	अज्ञात	थे	,, ,,
४. अग्रवाल वंश कौमुदी	सुखानन्द मालवी	थे	त्रेता प्रथम भाग में
५. मुख्तसिर हालात महाराजा अग्रसेन	जफर प्रेस, मुरादाबाद	थे	कलि पूर्व २४५६
६. अग्रवंश (अग्रवाल जाति का) इतिहास	बा० रामचन्द्र गुप्ता, अजमेर	थे	१९७२९४१५७२ आर्य सं०
७. संक्षेप वृत्तान्त	मुन्शी अनूपसिंह	थे	युधिष्ठिर से १५५६ वर्ष पूर्व
८. सचित्र इतिहास अग्रवंश कुल भूषण	ब्रह्मचारी ब्रह्मानन्द	थे	परशुराम के समय में
९. अग्रवाल वैश्योत्कर्ष	हीरालाल शास्त्री, बम्बई	थे	कलि प्रथम में
१०. भाटों के गीत	शिवकर्ण	थे	बदि मंगसिर शनि पंचमी त्रेता पहले चरण
११. अग्रवाल जाति का इतिहास	चन्द्रराज भण्डारी	थे	.....
१२. अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास	डा० सत्यकेतु विद्यालंकार	थे	कलियुग के आरम्भ में
१३. अग्रवाल जाति का विकास	डा० परमेश्वरी लाल गुप्त	नहीं थे	.....
१४. लेखों में	डा० वासुदेव शरण अग्रवाल	नहीं थे	.....
१५. अग्रसेन और अग्रवाल	वैद्य कृपाराम अग्रवाल	थे	मंगसिर वदी ५ शनि कलि १
१६. अग्रोतकान्वय	वैद्य निरंजन लाल गौतम	थे	कलयुग से ८५ वर्ष पूर्व

pdfelement

महाराजा अग्रसेन का काल-निर्णय—

अग्रवाल जाति के इतिहास में सबसे कठिन निर्णय महाराजा अग्रसेन के काल का है। इस सम्बन्ध में सभी इतिहासकारों के भिन्न-भिन्न मत हैं। किन्तु यदि बहुत प्राचीन सिद्ध करने की धुन को एक ओर रख दें और वास्तविकता को दृष्टि से ओझल न करें तो महाराजा अग्रसेन के समय का निर्णय बहुत जटिल नहीं रह जाता। जैसा कि हम इससे पूर्व लिख चुके हैं कि नकुल और कर्ण विजय के समय में २५-३० वर्ष का अन्तर है, जहां नकुल विजय के समय रोहतक के पास मरुभूमि जीतने का वर्णन है वहाँ कर्ण विजय के समय रोहतक के पास अग्रगण का स्पष्ट नामोल्लेख है। अतः २५-३० वर्ष के बीच में ही अग्रगण नामक नये गणराज्य का अस्तित्व सामने आता है। यह भी एक तथ्य है कि महाभारत युद्ध से लगभग १४ वर्ष पूर्व (पाण्डवों के वनवास के समय) कर्ण ने अपनी विजय यात्रा आरम्भ की थी।

उपलब्ध प्राचीन सामग्री के आधार पर कुछ ऐसे तथ्य भी हैं जिनसे महाराजा अग्रसेन के काल-निर्णय में सुविधा होती है। यथा—

महाराजा अग्रसेन के काल निर्णय के आधार

महाराजा अग्रसेन का काल निर्धारित करते समय निम्नांकित ऐतिहासिक तथ्यों को ध्यान में रखना आवश्यक है कि द्वापरकाल में पुरुषों की सामान्य आयु २०० वर्ष या इससे अधिक होती थी।

१. राजा अग्रसेन के पूर्वज धनपाल और वैशाल वंशकर्ता राजा वैशालक के समकालीन थे।

२. राजा अग्रसेन का जन्म राजा धनपाल की २१वीं पीढ़ी में हुआ था।

३. राजा वैशालक, अयोध्या के राजा कल्माषपाद और काशी के राजा धर्मकेतु समकालीन थे।

४. महाभारत युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर ने ३६ वर्ष ८ मास, २५ दिन तक राज्य किया और कलयुग के प्रथम दिन राज्य त्यागा एवं महाराजा अग्रसेन युधिष्ठिर के समकालीन थे।

५. राजा अग्रसेन का विवाह नागवंश में हुआ था। जब राजा अग्रसेन ने राज्य त्याग किया उस समय कलयुग के १०८ वर्ष बीत चुके थे और उस समय वे बहुत वृद्ध थे।

६. जब राजा अग्रसेन गद्दी पर बैठे तो द्वापरयुग समाप्त हो रहा था उनकी आयु २५ वर्ष के लगभग थी।

७. महाभारत काल के पश्चात् नाग लोगों ने उत्तरी भारत में बड़े पैमाने आक्रमण किया और राजा परीक्षित को मार डाला अतः जन्मेजय ने नाग आक्र को परास्त करने का बड़ा प्रयत्न किया और नागों की शक्ति को सर्वथा नष्ट करके अ पिता की मृत्यु का बदला लिया।

Remove Watermark Now

८. इस समय कलिकाल सं०५०८२ (सन् १९८२ में) है। कलयुग आरम्भ ५० वर्ष पूर्व दानी कर्ण की भारतवर्ष विजय के समय अग्रगण राज्य विद्यमान् था। अतः कर्ण विजय के समय अग्रगण राज्य के संस्थापक महाराजा अग्रसेन की आयु लगभग ३५ वर्ष की थी और अग्रगण राज्य कौरवों के अधीन हो गया था।

९. कौरवों के शासन काल में अग्रगण राज्य वैभवशाली और शक्तिशाली था। महाभारत युद्ध के पश्चात् राजा युधिष्ठिर ने ३६ वर्ष ८ मास २५ दिन राज्य किया (सत्यार्थ प्रकाश ११वां समुल्लास) महाभारत युद्ध होने तक लगभग १४ वर्ष और लगे। इस प्रकार इससे पूर्व ही अग्रगण राज्य की स्थापना हुई। यह समय लगभग ५१ वर्ष का बनता है अर्थात् अग्रगण राज्य की स्थापना का समय द्वापर के अन्तिम चरण में कलयुग प्रारम्भ होने से लगभग ५१ वर्ष पूर्व का समझना चाहिए इस प्रकार आज से (सन् १९८२ ५१३३ वर्ष पूर्व अग्रगण राज्य की स्थापना सम्भव है।

१०. महाराजा अग्रसेन की आयु २०४ वर्ष की थी।

कुछ लोग महाराजा अग्रसेन की २०४ वर्ष की आयु को पढ़ कर इसे अतिशयोक्ति पूर्ण मानेंगे किन्तु हम द्वापर काल के कुछ ऐसे दीर्घजीवी लोगों की सूची देना चाहेंगे जिनकी आयु २०० या इससे अधिक थी। यथा—

१. द्रोणाचार्य की आयु महाभारत युद्ध के समय ४०० वर्ष की थी।

२. व्यास की आयु ३०० वर्ष थी। ये जन्मेजय के समय तक जीवित थे।

आयुर्वेद के इतिहास के अनुसार भी द्वापर में साधारण मनुष्यों की आयु २०० वर्ष होती थी।

अतः महाराजा अग्रसेन २०४ वर्ष जीवित रहे तो इसमें न कोई अतिशयोक्ति है, न आश्चर्य।

६. महाराजा अग्रसेन का मूल स्थान

महाराजा अग्रसेन के पूर्वजों के स्थान के सम्बन्ध में भी कई मतभेद हैं किन्तु जिन्होंने अग्रोहा देखा है, इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि महाराजा अग्रसेन के पूर्वज राजस्थान या इसके निकट के किसी स्थान के थे और वह प्रतापनगर हो सकता है। अग्रोहा मरुधर प्रदेश है। यातायात के सीमित साधन तथा पानीका अभाव ऐसे तथ्य हैं जिनके कारण कोई भी सुदूर वासी पुरुष इस स्थान को अपने राज्य की राजधानी बनाना पसन्द न करता। अतः वैश्यों का एक गणराज्य बसाने का संकल्प और अग्रोहा को इसकी राजधानी बनाने का निश्चय तो अग्रोहा के निकटतम क्षेत्र राजस्थान के किसी महापुरुष द्वारा ही सम्भव है। अतः महाराजा अग्रसेन का जन्मस्थान प्रतापनगर राजस्थान में ही होना चाहिए। जो सज्जन महाराजा अग्रसेन का जन्म स्थान प्रतापनगर (मालव) में समझते हैं वह भी मध्य पंजाब का भाग है और मालव की सीमाएं भी तो प्राचीन काल में हरियाणा की सीमाओं से मिलती थीं।

२

वैश्य वंश का उदय

ऋग्वेद में 'पणि' और 'विश्' दो शब्दों का प्रयोग उन लोगों के लिए हुआ है जो वनों में रह कर कृषि, पशुपालन और वस्तु विनियोग का कार्य करते थे। पणि स्वभावतय चतुर व्यापारी थे। वे नावों द्वारा विदेशों में भी जाते थे। इन्होंने बड़ी-बड़ी नौकाओं और जलयानों का निर्माण किया और एशिया माइनर में बेबीलोन, मिस्र और ग्रीस तक पहुँच गये। आगे चल कर इन का व्यापार स्पेन तक भी फैल गया था। वे अपने साथ नाना प्रकार के वस्त्र, काँच के सामान, सोने चाँदी की वस्तुएं, सुगन्धित द्रव्य, अगरु ले जाते थे और अपार धन संग्रह करते थे। ये समुद्र यात्राओं में इतने निपुण और साहसी हो गये थे कि अभयरूप से इनके जलयान विदेशों में जाते थे। इन्होंने पश्चिम के देशों को स्वरलिपि भी पहुँचाई। इन्हें घी, दूध, पनीर आदि के व्यापार का ज्ञान भी था। आर्य लोग अपने वर्ग को विश् कहते थे। पणि और विश् लोगों का पारस्परिक संघर्ष बहुत समय तक चलता रहा जिसमें 'पणि वर्ग' 'विश्' वर्ग से सदैव पराजित होता रहा किन्तु दोनों एक दूसरे के पूरक होने के कारण अन्त में मिलकर रहने लगे।

ऋग्वेद के मन्त्र सं० १-४८-९, १-५६-२, १-१६-५ इस बात के प्रमाण हैं कि 'विश्' वर्ग देश-देशान्तरों में व्यापार करता था। ऋग्वेद के मन्त्र सं० ८।३५।१७ से भी यह बात भली भांति विदित होती है कि 'विश्' वर्ग आर्य जाति का एक बड़ा वर्ग था। यह 'विश्' वर्ग कौन सा था, इसका पता ऋग्वेद मन्त्रों में लगता है। ब्राह्मण और क्षत्रियों की शक्ति प्रबल होने पर वे आर्य जाति के शेष भाग से अलग होते गये और जो शेष आर्य जनता थी वही 'विश्' कहलाती थी।

'उरु चरितम्' के अनुसार संसार का सबसे आदि पुरुष ब्रह्मा है। ब्रह्मा की कई पीढ़ी के बाद कश्यप हुए और कश्यप के ९ पुत्रों में से एक का नाम विवस्वान था। इनके पुत्र मनु हुए। मनु सभी आश्रमों और वर्णों के संस्थापक माने जाते हैं। मनु के एक पुत्र का नाम नाभानेदिष्ट या नाभादिष्ट और कन्या का नाम इला था। इला की सन्तान क्षत्रिय हैं। नाभादिष्ट ने वैश्य कन्या से विवाह किया अतः वे वैश्य हो गये। इनका वंश वैशाल वंश प्रसिद्ध हुआ। नाभानेदिष्ट के पुत्र का नाम भलन्द था। भलन्द की स्त्री का नाम मरुन्धती था। भलन्द के पुत्र का नाम वात्सप्रि तथा वात्सप्रि के पुत्र का नाम

pdfelement
Remove Watermark Now

मांकिल था। भलन्द, वात्सप्रि और मांकिल मन्त्रदृष्टा वैश्य ऋषि थे। ये ही वैश्यों के तीन प्रवर माने जाते हैं।

मांकिल के वंश में परमप्रतापी तेजस्वी एवं चरित्रवान धनपाल का जन्म हुआ। ब्राह्मणों ने उन्हें स्वयं राज में प्रतिष्ठित किया था। वह प्रताप नगर (राजस्थान) के राजा बने। इनके आठ पुत्र थे—१. शिव, २. नल, ३. नन्द, ४. कुमुद, ५. अनल, ६. वल्लभ, ७. कुन्द, ८. शेखर। इनमें से एक पुत्र नल उत्कृष्ट विद्वान् तथा ज्ञानवान हुआ और उसने सन्यास लेकर हिमालय में जाकर तपस्या की। शेष सातों पुत्रों ने सातों द्वीपों पर राज्य स्थापित किये। इनमें से शिव ने जम्बू द्वीप बसाया। शिव के चार पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम आनन्द था। वही राजगद्दी पर बैठा, शेष सभी सन्यासी हो गए।

आनन्द के पुत्र का नाम था अय। अय का पुत्र विश्व था। अय वैश्य राजा था। उसके समय में वैश्य-कुल की बहुत उन्नति हुई।

विश्व के वंश में सुदर्शन उत्पन्न हुआ। सुदर्शन की दो रानियाँ थीं—१. सेवती, २. नलिनी। सेवती के गर्भ से धुरन्धर का जन्म हुआ। धुरन्धर के पुत्र नन्दिवर्धन से अशोक पैदा हुआ। अशोक के पश्चात् प्रतापी राजा समाधि का जन्म हुआ। समाधि की कीर्ति विश्वविख्यात है। इसके बाद वैश्य कुल में क्षीणता आने लगी, वंश में परस्पर बैर बढ़ने लगा और इनका कुल देश छोड़ कर संसार के अन्य भूभागों में बिखरने लगा।

समाधि के वंश में आगे चलकर प्रसिद्ध राजा मोहन दास हुआ। इसके वंश में नेमिनाथ का जन्म हुआ। नेमिनाथ का पुत्र वृन्द था। वृन्द से गुर्जर नामक पुत्र हुआ। इसी गुर्जर के वंश में हरि उत्पन्न हुआ। हरि के १०० पुत्र थे। जिनमें से सबसे बड़े का नाम रंग था। हरि शरीर से दुर्बल था अतः उसने अपना राज्य अपने पुत्र रंग को सौंप दिया और स्वयं हिमालय में जाकर तपस्या करने लगा। इससे रंग के ९९ भाई बहुत अप्रसन्न हुए और वे प्रजा के साथ अत्याचार करने लगे। राज्य में त्राहि-त्राहि मच गई। यज्ञ-कार्य रुक गए, जनता में घोर असंतोष फैला। तब इन अत्याचारों से पीड़ित प्रजा, मुनि याज्ञवलक्य के यहाँ पहुँची। मुनि याज्ञवलक्य राजा रंग की राज्य सभा में पहुँचे और राजा के ९९ पुत्रों को श्राप देकर शूद्र बना दिया।

रंग का पुत्र विशोक हुआ, उसके पश्चात् मधु हुआ। उसके पश्चात् महीधर हुआ। महीधर के सात पुत्र हुए। सबसे बड़े पुत्र का नाम वल्लभ था। वल्लभ के दो पुत्र हुए—१. अग्रसेन, २. शूरसेन। अग्रसेन ने गौड़ देशों में अपना राज्य बसाया और ये ही अग्रोहा राज्य के संस्थापक महाराजा अग्रसेन थे।

राजा धनपाल के समकालीन वैशाल वंशकर्ता वैश्य राजा वैशालक का पुराणों में उल्लेख मिलता है। इसने वैशाली नगरी बसाई थी। वैशालक की ८ कन्याएँ थीं : १. पद्मावती, २. मालती, ३. कान्ति, ४. शुभ्रा, ५. भव्यका, ६. सुमति, ७. रजा, ८. सुन्दरी। इनका विवाह धनपाल के आठ पुत्रों के साथ हुआ।

इससे प्रकट है कि धनपाल और वैशालक दोनों वंशों के पारस्परिक सम्बन्ध बड़े दृढ़ थे। वैशालक की आठ कन्याएँ अग्रवालों की आठ मातृकायें मानी जाती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राजा नाभानेदिष्ट से लेकर महाराज अग्रसेन तक वैश्य जाति का विकास होता रहा और महाराजा अग्रसेन के काल में "अग्रोतकान्वय वणिक" नामक एक वैश्य शाखा का प्रादुर्भाव हुआ है।

दूसरी ओर वैशाल, नाग, गुप्त और वर्धन वैश्य शाखाएँ चली आ रही हैं। 'मंजु श्रीमूल कल्प' बौद्ध ग्रन्थ में इन वैश्य-वंशों का वर्णन है।

इन्हीं वैश्यों का एक गणराज्य स्थापित हुआ जिसका उल्लेख महाभारत के भूमिपर्व अध्याय ९।६७वें श्लोक में मिलता है जिसका उल्लेख हम पृष्ठ ५ पर कर चुके हैं।

वैश्यों के कर्मों में परिवर्तन

पाणिनी काल में पणि और विश् वर्ग का सूचक 'वाणिज' शब्द में ऊँच-नीच की भावना न थी। किन्तु आगे चलकर हमारे देश में सामाजिक व्यवस्था को समयानुसार एवं आवश्यकतानुसार रूप देने का कार्यभार स्मृतिकारों के हाथ में आ गया। ब्राह्मण वर्ग के इस अधिकार का समस्त वैश्य जाति के सामाजिक जीवन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। कभी-कभी ऐसा भी होता रहा कि जब-जब ब्राह्मण शक्ति प्रबल हुई तो उसने अपनी सत्ता रखने हेतु भी, वैश्य जाति के अधिकारों को सन्तुलित कर दिया, कभी-कभी ब्राह्मण और क्षत्रियों के गठबन्धन-स्वरूप भी वैश्य जाति को अपने सामाजिक स्तर में गिरावट अनुभव हुई और उसके निराकरण का भी यथासमय प्रयत्न हुआ।

इसी प्रसंग में हम समय-समय पर स्मृति ग्रन्थों द्वारा वैश्य जाति के लिए निर्धारित किये गए कर्मों का दिग्दर्शन करा रहे हैं।

मनु की स्मृति से पूर्व अत्रि मुनि ने एक स्मृति ग्रन्थ की रचना की जो 'अत्रि स्मृति' नाम से विख्यात है, उसमें वैश्यों के लिए निम्नांकित चार कर्म निर्धारित किये गये हैं :—

"दानमध्ययनं वार्ता यजनं चेति वै विशः।"

(अत्रि स्मृति अध्याय १, श्लोक १५)

१. दान देना, २. अध्ययन करना, ३. व्यापार करना, ४. यज्ञ करना।

अत्रि स्मृति के अनुसार ये चार कर्म वैश्य जाति के लिए निश्चित किये गये हैं।

बढ़ती हुई आवश्यकताओं के आधार पर मनु के समय में वैश्यों के—निम्नांकित तीन कर्म बढ़ाकर सात कर दिये गए। ये सात कर्म मनु स्मृति द्वारा निर्धारित हुए।

पशूनां रक्षणं दानमज्याध्ययनमेव च।
वणिक् पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च॥

(मनु स्मृति अध्याय १, श्लोक ९०)

pdfelement
Remove Watermark Now

१. पशुओं की रक्षा, २. दान देना, ३. यज्ञ करना, ४. अध्ययन करना, ५. वाणिज्य करना, ६. ब्याज लेना, ७. कृषि करना।

अर्थात् अत्रि स्मृति द्वारा निर्धारित चार कर्मों के अतिरिक्त पशुओं की रक्षा, कृषि एवं ब्याज लेना ये तीन कर्म और बढ़ाए गए। अतः अत्रि एवं मनु द्वारा निर्धारित कर्मों के फलस्वरूप एक ओर भलन्द, वात्सप्रि तथा मांकिल जैसे मन्त्र-दृष्टा ऋषि वैश्य जाति को उपलब्ध हुए जिन्हें वैश्य जाति का प्रवर कहा जाता है और दूसरी ओर समाधि जैसे तपस्वी वैश्य भी इस जाति में जन्म लेते रहे।

किन्तु आगे चलकर हारीत मुनि ने स्मृति ग्रन्थ में वैश्यों के सात कर्मों में से अध्ययन एवं यज्ञ करने के दो अधिकार कम कर दिए। यथा—

गोरक्षा कृषि वाणिज्यं कुर्याद्वैश्यो यथा विधि।
दानदेयं यथा शक्त्या ब्राह्मणानांभोजनम्॥
(हारीर स्मृति अध्याय २, श्लोक ३)

अर्थात् वैश्य गोरक्षा, कृषि, वाणिज्य यथाविधि करें, एवं यथा शक्ति दान दें तथा ब्राह्मणों को भोजन करायें।

हारीत मुनि द्वारा वैश्यों के अध्ययन एवं यज्ञ के अधिकार छीन लेने से वैश्य समाज में ऋषि, मुनि एवं याज्ञिक प्रतिभा का स्रोत बन्द हो गया।

आगे चलकर सूत्रकारों ने वैश्य वर्ग को ब्राह्मण और क्षत्रियों से हेय माना; इसी आधार पर कृषि एवं व्यापार को वेदाध्ययन से परस्पर विरोधी बताकर वैश्यों के वेदाध्ययन को चुनौती दे दी और एक प्रकार से वैश्यों का वेदाध्ययन अधिकार छिन गया।

वैश्यों के निर्धारित कर्म शनैः-शनैः कम होते गए और महाभारत युद्ध से पूर्व तो वैश्यों की ऐसी दयनीय दशा हो गई कि यदि कोई वैश्य अपने कर्मों से च्युत हो जाता था तो वह ब्राह्मण या क्षत्रिय के कर्म को नहीं अपना सकता था अपितु इसे शूद्र कर्म स्वीकार करना होता था।

महाभारत युद्ध के पश्चात् मुनि वेदव्यास जीवित रहे और उन्होंने महाभारत ग्रन्थ में वैश्यों के लिए कर्म निर्धारित करते समय अपने पूर्ववर्ती स्मृतिकारों की परम्परायें तोड़ डालीं और 'कृषि गोरक्षा वाणिज्यं वैश्य धर्म स्वभावजम्' की सामान्य व्यवस्था के साथ निर्णय दिया कि :—

वाणिज्या पशुरक्षा च कृष्या दान रतिः शुचिः।
वेदाध्ययन सम्पन्न स वैश्य इति संज्ञितिः॥

अर्थात् व्यापार, पशुरक्षा, कृषि कार्य करते हुए दान देने में तत्पर और पवित्रता के साथ वेदाध्ययन सम्पन्न वैश्य ही वैश्य कहाने का अधिकारी है।

कालान्तर में देश में वाम मार्ग प्रचलित हो गया, लोग वैदिक धर्म की मर्यादाओं

से दूर हट गए, सर्वत्र हिंसामय वातावरण फैल गया। अतः देश में जैन धर्म का प्रचार आरम्भ हुआ। अग्रोहा के तत्कालीन राजा दिवाकर के काल में जैन मुनि लोहाचार्य जी ने अग्रोहा में प्रचार यात्रा की और राजा दिवाकर को जैन धर्म में दीक्षित किया। वैसे भी वैश्य वाम मार्ग तथा हिंसामय वातावरण से त्रसित थे अतः बहुत से वैश्यों ने जैन धर्म स्वीकार कर लिया। किन्तु उनके खान-पान और बेटी-विवाह सम्बन्ध वैदिक धर्मावलम्बी वैश्यों के साथ यथापूर्व चलते रहे।

देश में जैन धर्म के प्रचार का परिणाम यह हुआ कि वैश्यों में ब्राह्मणों को दान देने, ईश्वर-भक्ति, यज्ञ, वेदाध्ययन एवं ब्राह्मणों की सेवा का भाव घट गया। अतः श्रीमद्भागवत् में पुनः वैश्यों के लिए पाँच कर्म निर्धारित किये गये :—

आस्तिक्यं दान निष्ठा च अदम्भो ब्रह्म सेवनम्।
अतुष्टिर अर्थोपचयैः वैश्य प्रकृत्यः तु इमा॥
(श्रीमद्भागवत् स्कन्द पुराण ११, अध्याय १७)

अर्थात् वैश्य ईश्वर में विश्वास करे, दान देने में निष्ठावान हो, सादगी से रहे (दिखावट, सजावट से दूर रहे) और ब्राह्मणों की सेवा करता रहे। साथ ही धन को अर्जित करने में कभी सन्तुष्ट न हो अर्थात् अपार धन अर्जित करे, ये वैश्य के स्वाभाविक ५ कर्म हैं।

वैश्यों की स्थिति

फिर भी हम देखते हैं कि वैश्य वर्ग में राज्य करने, राज मन्त्री बनने, सेनापति बनने तथा युद्धों में लड़ने की पर्याप्त क्षमता रही है और यह जाति एक उच्च कोटि की शासक और व्यवस्थापक है। उदाहरण के लिए महाभारत काल में महाराजा अग्रसेन, गुप्त और हर्षवर्धन वंश, पटियाला के वीर दीवान नानूमल अग्रवाल, मुगल काल में हेमु वैश्य, भामाशाह, राजा रतनचन्द, देहली के खजांची परिवार वाले, तोपखाने वाले, मेरठ के कानूनगो परिवार वाले, नशीपुर का राजवंश, आदि इतिहास प्रसिद्ध हैं।

ईसा से ४-५ हजार वर्ष पूर्व की हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो की सिन्धु घाटी सभ्यता तो वैश्य जाति के वैभव के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। ये नगर १-१ मील परिधि में फैले थे और व्यापार के केन्द्र थे। हड़प्पा की आबादी लगभग ४० हजार थी।

ईसा के ५ हजार वर्ष पूर्व सिंध पर ईरान के आक्रमण हुए और सिंध ईरान का २०वां प्रांत बनकर ईरान के राजा को कर देने लगा था। उसी समय से ईरान अरब देशों के व्यापारी भारत में आए और यहाँ के व्यापारियों के साथ सम्पर्क स्था कर लिया।

महाभारत युद्ध से ५१ वर्ष (आज से ५१७०) पूर्व ही वैश्य जनपद बन था जिसके संस्थापक महाराजा अग्रसेन थे। उसी समय से (आज से लगभग ५ वर्ष पूर्व) जन्मजात वैश्य वर्ग विद्यमान था जिसके १ लाख घर अग्रोहा में ही थे।

pdfelement
Remove Watermark Now

ईसा के ७०० ई० पूर्व तक भारत के वणिक वैदिक धर्म को मानते थे। किन्तु ६०० ई० पूर्व में जैन तथा बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ और उस समय बड़े वैभवशाली वैश्य उपस्थित थे। 'उपासक दशासूत्र' जैन ग्रन्थ में उस समय के एक आनन्द नामक वैश्य का वर्णन इस प्रकार मिलता है :

आनन्द नामक वैश्य के पास ४ करोड़ रुपये का सोना खजाने में था, ४ करोड़ रुपये का सोना ऋण रूप में बँटा हुआ था और ४ करोड़ का सोना भूमि पर लगा हुआ था। इनके यहाँ ४० हजार गाय-भैंसें थी। विदेशी व्यापार के लिए ५०० गाड़ियाँ चलती थीं और ५०० गाड़ियाँ स्वदेश में चलती थीं। इनके ४ जलयान विदेशों में जाते थे और ४ जलयान देश के व्यापार में लगे थे।

वैश्य राज्य

वैश्य राज्य वंशों की राज्य सीमाओं को ध्यान से देखने पर मालूम होता है कि उनका उदय आग्रेय गणराज्य अग्रोहा के आस-पास है। वर्धन वंश की राजधानी थानेश्वर रही जो हिसार जिले में अग्रोहा के निकट है।

चन्द्रगुप्त का जन्म मथुरा में हुआ जो अग्रोहा राज्य में ही आता है। आग्रेगण राज्य में वैश्य राज्यों की सीमाएँ अग्रोहा से मथुरा-आगरा तक रही किन्तु चन्द्रगुप्त के समय ये सीमायें मगध तक विस्तृत हो जाती हैं, जहाँ नन्दवंश का उदय हुआ और जिसे मौर्यवंश ने समाप्त कर दिया।

नागों का वैश्य वंश

उपर्युक्त वैश्य राज्यों के अतिरिक्त दक्षिण-पश्चिम का नागवंश भी वैश्य राज्य था जिसका अग्रवालों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। महाराजा अग्रसेन का विवाह कोल्हपुर के नागराजा कुमुद तथा महीधर की पुत्रियों से हुआ था और इसी नागवंश में आगे चलकर कुशाण शासन से भारत को मुक्त कराने वाले भारशिव वंश का उदय हुआ था।

महाभारत के पश्चात् उत्तरी राज्य शिथिल पड़ गये और छोटे-छोटे गणराज्य बन गए। अतः दक्षिण के नागवंश ने उत्तर की ओर बढ़ना आरम्भ कर दिया। इनके साथ संघर्ष में राजा परीक्षित मारे गए। नागों के इस आक्रमण को रोकने के लिए जन्मेजय ने नागों के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया और उनके आक्रमण को विफल ही नहीं किया अपितु सामूहिक संहार करके नागवंश को प्रायः समाप्त कर दिया। जन्मेजय के नागयज्ञ (सामूहिक संहार) से बचे नागों ने अपनी शक्ति का पुनः संगठन करके सन् ३१५ में भारशिव वैश्य वंश के रूप में अपनी शक्ति संचित की और भारत के इतिहास में देश को विदेशी दासता से मुक्त कराने में बड़ा सराहनीय योगदान किया। भारत में पाये जाने वाले लेखों तथा सिक्कों में भारशिव वैश्य वंश का स्थान-स्थान पर वर्णन मिलता है और इस ऐतिहासिक तथ्य की पुष्टि 'मंजु श्रीमूल कल्प' ऐतिहासिक ग्रन्थ से भी होती है।

कुशाण राज्य को बाहर निकालने के लिए और छोटे गणराज्यों को कुशाण शासकों से मुक्त कराने के लिए भारशिव वंश ने अथक प्रयत्न तथा घोर संघर्ष किया। भारशिव वैश्य जिस गणराज्य को कुशाण शासक से मुक्त कराते थे उनके साथ अपनी कन्याओं के सम्बन्ध स्थापित करते थे। भारशिव वंश इतना शक्तिशाली एवं प्रभावशाली राज्य वंश था कि प्रत्येक गणराज्य भारशिवों की कन्या ग्रहण कर अपने-आप को गौरवशाली समझता था। भारशिव वंश वास्तव में प्राचीन नागवंश की ही शाखा थी।

वैश्यों का गुप्त वंश

इसके पश्चात् भारत में प्रसिद्ध वैश्य राज्य वंश, "गुप्त वंश" है।

गुप्त वंश का प्रारम्भ श्रीगुप्त से होता है। इनका पुत्र घटोत्कच गुप्त था। इन दोनों को ताम्रपत्रों और शिलालेखों में 'महाराज' लिखा गया है।

"कलयुग राज वृत्तान्त" पुस्तक के अनुसार इसी वंश का प्रथम सम्राट चन्द्रगुप्त प्रथम है। इसका विवाह लिच्छिवी वंश की कुमारी 'कुमारीदेवी' से हुआ था। इस विवाह का उल्लेख शिलालेखों में मिलता है। चन्द्रगुप्त की मुद्राओं में महाराज चन्द्रगुप्त और महारानी कुमारी देवी की साथ-साथ खड़ी मूर्तियाँ अंकित हैं। चन्द्रगुप्त के काल में स्वर्ण मुद्राएँ भी प्रचलित की गई थीं। इनकी राजधानी पाटलीपुत्र (पटना) थी। इन्हीं के नाम से गुप्त संवत् का प्रारम्भ हुआ। इन्होंने ७ वर्ष राज्य किया।

समुद्रगुप्त

चन्द्रगुप्त प्रथम का बड़ा पुत्र समुद्रगुप्त प्रसिद्ध सम्राट हुआ। इनके राज्य काल की मुद्राएँ अब भी सुलभ हैं। समुद्रगुप्त अनेक नामों से प्रसिद्ध थे किन्तु चहुँदिशा में अपूर्व विजय प्राप्त करके चक्रवर्ती समुद्रगुप्त के नाम से प्रख्यात हुए। चतुर्दिक विजय प्राप्त करके समुद्रगुप्त ने अश्वमेध यज्ञ किया। उस अवसर की अनेक स्वर्ण मुद्राएँ आज सुलभ हैं। ह्वानत्सांग ने लिखा है कि श्रीवस्ती के विक्रमादित्य ने भारत विजय के पश्चात् दीन-दुखियों के लिए ५ लाख स्वर्ण मुद्राएँ वितरित कीं। इसका राज्यकाल ५१ वर्ष का था।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य

गुप्त वंश के महाराजाधिराज चन्द्रगुप्त को विक्रमादित्य के नाम से सम्बोधित किया गया है। इसके अतिरिक्त इनके अनेक उपनाम प्रख्यात हैं। इसने शक राज्य का अन्त किया और विक्रमादित्य पद प्राप्त किया।

चन्द्रगुप्त को ध्रुवदेवी के गर्भ से दो पुत्र—गोविन्द गुप्त और कुमारगुप्त तथा एक कन्या प्रभावती, प्राप्त हुई।

इसके शासन काल में ही कालिदास और वररुचि जैसे विद्वान हुए।

pdfelement
Remove Watermark Now

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने, मथुरा से उपलब्ध शिलालेख के अनुसार तथा "कलयुग राज वृत्तान्त" पुस्तक के अनुसार, ३६ वर्ष राज्य किया। यह वही चन्द्रगुप्त है जो विक्रमादित्य के नाम से भी प्रसिद्ध है जिसका सम्वत् वर्तमान काल में विक्रम सम्वत् के नाम से प्रचलित है। यह सम्वत् शक राज्य के नाश से २४१ वर्ष पश्चात् चला।

कुमार गुप्त

इसने अश्वमेध यज्ञ किया और स्वर्ण मुद्रायें चलाईं। इनकी अन्य मुद्राओं पर इनका अनेक नामों से उल्लेख है। इनके समय के उपलब्ध शिलालेखों के अनुसार इनका राज्य काल ४२ वर्ष तक रहा। इनके स्कन्द गुप्त नामक पुत्र महान् बलशाली महाराजाधिराज हुए।

स्कन्द गुप्त

इसके अनेक नाम प्रचलित थे। स्कन्द गुप्त हूणों से हुए युद्ध में विजयी होने के कारण बहुत प्रसिद्ध हुए। "चन्द्रगर्भ-परिपृच्छा सूत्र" में इनके द्वारा हुए एक युद्ध का वर्णन इस प्रकार मिलता है :—

'कुमार गुप्त का जन्म कौशाम्बी में हुआ था। उसका एक पुत्र बहुबलशाली था। जब उसकी आयु १२ वर्ष की थी तो कुमार गुप्त पर तीन विदेशी महान् शक्तियों ने आक्रमण कर दिया। आक्रान्ता थे— १. यवन, २. पल्हिक, ३. कुशाण। इन्होंने गान्धार से गंगा के उत्तर के प्रदेशों पर अपना अधिकार कर लिया। कुमार गुप्त के बलशाली युवक ने सेना संचालन की आज्ञा लेकर विदेशी आक्रान्ताओं का मुकाबला किया। शत्रु सेना ३ लाख थी और सेना संचालन विदेशी राजाओं के हाथ था। महासेनापति यवन था। कुमार गुप्त के पुत्र की सेना २ लाख थी। उसका संचालन ५०० सामन्तों के द्वारा हो रहा था। वे सब राजा के मन्त्रियों के युवाकुमार, बलशाली और हिन्दू भावना से ओत-प्रोत थे। कुमार ने शत्रु सेना को छिन्न-भिन्न करके विजय-पताका फहरा दी। युद्ध से लौटने पर राजा कुमार गुप्त ने उसे राजतिलक करके राजा बना दिया। अन्त में राजकुमार ने तीनों शत्रु राजाओं को पकड़ लिया और उन्हें प्राण-दण्ड दिया तथा शान्तिपूर्वक जम्बू द्वीप पर २५ वर्ष राज्य किया।

नृसिंह गुप्त

स्कन्द गुप्त के जीवन काल में ही इनके पुत्र का देहावसान हो गया अतः अपने पुत्र के शोक में वह भी राजकाज से विमुख हो गया था। इनके जीवन काल में ही स्कन्द गुप्त के भाई प्रकाशादित्य ने अपने पुत्र नृसिंह गुप्त को भारत सम्राट बनाया। इसने ४० वर्ष तक राज्य किया। प्रकाशादित्य के जेष्ठ भ्राता शाक्य महाबल ने हरिद्वार तथा कश्मीर का मध्य भाग जीत लिया था।

कुमार गुप्त द्वितीय

नृसिंह गुप्त का पुत्र कुमार गुप्त द्वितीय राजगद्दी पर बैठा। उसने हूणों से युद्ध किया और अनेक राजाओं को जीता। इसने ४४ वर्ष तक राज्य किया किन्तु इसके राज-काल में ही गुप्त वंश की शक्ति क्षीण हो गई और हूणों के आक्रमणों का मुकाबला करने में असमर्थ हो गये अतः गुप्त साम्राज्य छोटे-छोटे राज्यों में बँट गया।

वायु पुराण में गुप्त वंश की राज्य सीमाओं का वर्णन इस प्रकार मिलता है :—

अनुगंग प्रयागं च साकेत मगधांस्तथा।
एतान् जनपदान सर्वान् भोक्ष्यन्तेगुप्तवंश जाः॥

वैश्यों का वर्धन वश

'मंजु श्री मूल कल्प' नामक ऐतिहासिक बौद्धिक ग्रन्थ के अनुसार थानेश्वर (हिसार के पास) के वर्धन राजाओं का परिचय इस प्रकार है :—

इस वंश का प्रारम्भ आदित्य वर्धन से होता है। ये श्रीकण्ठ के निवासी थे। आदित्य वर्धन से प्रभाकर वर्धन और इनके राज्य वर्धन तथा इतिहास प्रसिद्ध हर्ष वर्धन हुए।

इस वंश के राजा हर्ष वर्धन का शासन काल ६०६ ई० से ६४७ ई० तक है।

वर्धन वंश ने कुल ७८ वर्ष राज्य किया था अतः इस वंश का राज्य सन् ५६९ से आरम्भ हुआ।

हर्ष वर्धन के शासन काल में चीनी यात्री ह्यूनत्सांग का आगमन हुआ था। वह हर्ष वर्धन की राजसभा में बहुत समय तक रहा था। इस चीनी यात्री ने हर्ष वर्धन को वैश्य राजा ही लिखा है।

इस प्रकार अन्य वैभवशाली वैश्यों के वर्णन जैन ग्रंथों में मिलते हैं।

वैश्यों द्वारा विदेशी व्यापार संचालन

कौटिल्य के अर्थशास्त्र से वैश्यों के व्यापार पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। उस समय वैश्य वर्ग नाना प्रकार के अगुरू जैसे जोंगक, काल चित्र, मंडल चित्र (काला गुरू) दोंगक, पारस मुद्रक, चित्र रूप उशीर, नाना प्रकार के चन्दन काष्ठ, लाल चन्दन, सुगंधित द्रव्यों तथा दुकूल वस्त्रों अंशु पट्ट, क्षोमवस्त्र, सोने-चांदी के आभूषण आदि व व्यापार सम्पूर्ण पश्चिम एशिया, अफ्रीका, ग्रीक, स्पेन आदि देशों के साथ करता था।

फ्रांस के डा० प्रो० फैरिन डी लाकूपैरी (Prof. Ferrien De Lacowperi Ph. D.) ने अपनी खोज के आधार पर लिखा है कि भारत के वैश्य व्यापारी ईसा ७०० वर्ष पूर्व चीन के साथ भारी मात्रा में व्यापार करते थे और इन्होंने चीन में अप व्यापारिक उपनिवेश भी स्थापित किये थे। ६३१ ई० पूर्व भारत के वणिकों के प्रधा

pdfelement
Remove Watermark Now

पवित्र गाय के साथ तुंगदीप के लू वंशीय राजकुमार की सभा में भी गये थे जहाँ उनका भव्य स्वागत हुआ था।

ई० पूर्व ५८०-५५० में भारत के वणिकों ने चीन के व्यापारियों से मिलकर मुद्रा संघ की भी स्थापना की थी किन्तु आगे चलकर ४७२ ई० पूर्व में मुहवंश के चीनी वीर ने भारतीय उपनिवेशों को नष्ट कर दिया और चीन के साथ व्यापार शिथिल पड़ गया। फिर भी भारत के वणिक पूर्व में जावा के साथ ७५ ई० पूर्व तक व्यापार करते रहे।

किन्तु वैश्यों का व्यापार प्रसार ईसा की पहली शताब्दी में हुआ और यह प्रवाह छठी शताब्दी तक निर्बाध गति से चलता रहा।

ईसा की प्रथम शताब्दी में भारत का व्यापार मिश्र के साथ बहुत बढ़ा हुआ था। यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि सबसे पूर्व मिश्र में कपास भारत से जाती थी।

भारत के वणिक वास्कोडिगामा से पूर्व ही अमेरिका में भी पहुँच चुके थे और वहाँ के लोगों के साथ व्यापार करते थे। अमेरिका के मध्य भाग मैक्सिको में पाये गये उस काल के मंदिर तथा मूर्तियाँ इन सम्बन्धों को सिद्ध करने वाले हैं। टीटा काका झील के पास इस्क राज्य के चिह्न मिले हैं। इस राज्य को मास्को ने बसाया था। यहाँ 'राम सीतो था' का मेला भी प्रचलित था जो भारत के रामलीला मेले की याद दिलाता है।

मुसलमानों के आक्रमणों से व्यापार को क्षति

मुसलमानों ने प्रभावशाली आक्रमण सन् १००१ में पंजाब के राजा जयपाल पर किया और विजय प्राप्त की।

सन् १००८ में आनन्दपाल की संगठित सेना (देहली, कन्नौज, अजमेर के राजपूतों की सम्मिलित सेना) पेशावर के पास हार गई और लाहौर गजनी के राज्य में मिलाकर वहाँ मुसलमान शासक नियुक्त कर दिया गया।

सन् १००९ में महमूद गजनी नगरकोट के मन्दिर पर आक्रमण करके अपार धन लेकर गजनी लौट गया।

सन् १०१८ में महमूद ने कन्नौज पर आक्रमण किया और अपार सोना, चाँदी, हीरे भेंट में लेकर लौटा। रास्ते में मथुरा के मन्दिरों को भी लूटा।

सन् १०२५ में महमूद ने भारतवर्ष के प्रसिद्ध सोमनाथ मन्दिर को लूटा तथा अपार धन-राशि खच्चरों पर लादकर ले गया। साथ ही बहुत से हिन्दुओं को भी बन्दी बनाकर साथ ले गया जो गजनी के बाजार में दासों के रूप में बेचे गये।

मुसलमानों के आक्रमणों की यह श्रृंखला बँध गई। सन् ११७५ में मुहम्मद गौरी ने मुलतान पर आक्रमण कर विजय प्राप्त की।

सन् ११९१ में मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज पर आक्रमण किया किन्तु तरावड़ी के युद्ध में हार गया। अतः उसने सन् ११९२ में डेढ़ लाख सेना के साथ पुनः आक्रमण

किया जिसमें राजपूतों की हार हुई, पृथ्वीराज बन्दी बनाकर गजनी ले जाया गया और उसे अन्त में कत्ल कर दिया गया।

सन् ११९४ में मुहम्मद गौरी ने कन्नौज पर भी आक्रमण कर दिया और चन्दावर के मैदान में विजय प्राप्त कर कन्नौज पर भी कब्जा कर लिया।

सन् ११९५ में मुहम्मद गौरी ने अग्रोहा को भी उजाड़ दिया।

बाद में गौरी के योग्य वायसराय कुतुबद्दीन ऐबक ने गुजराल, बंगाल, बुंदेलखण्ड पर अपना अधिकार करके मुस्लिम राज्य की स्थायी नींव डाल दी।

विदेशी आक्रमणों का वैश्यों पर प्रभाव

अग्रोहा पर विदेशी आक्रमणों के कारण वैश्य अपना गणराज्य छोड़कर अग्रोहा से पूर्व दिशा में राजस्थान में चले गये और पशुपालन, कृषि तथा व्यापार उनके प्रमुख साधन बने और यह क्रम ५-६ वी सदी तक चलया रहा। छठी और १२वीं शताब्दी के बीच भारत पर विदेशी आक्रमण होते रहे अतः इस बीच में वैश्यों को कृषि और पशुपालन छोड़कर अपनी सुरक्षा के लिए राजस्थान में, अरावली की उपत्यकाओं में तथा बुन्देलखण्ड की पहाड़ियों की ओर जाना पड़ा। अब केवल व्यापार ही उनका एक मात्र सहारा रह गया था। इस प्रकार ७वीं सदी में वैश्यों ने कृषि और पशुपालन स्वयं ही छोड़ दिया। परन्तु उनके कष्टों का यहीं अन्त न हुआ। मुसलमान व्यापारियों ने भी भारत में प्रवेश किया और १२वीं शताब्दी में मुसलमान आक्रमणों के परिणामस्वरूप भारत में मुसलमानों का आधिपत्य होने पर अरब तथा ईरान के व्यापारियों ने पूरी तरह भारतीय व्यापार पर भी कब्जा कर लिया। मुसलमान आक्रांताओं तथा शासकों से मुसलमान व्यापारियों को पूरा सहयोग मिलने लगा अतः वैश्यों के व्यापार का भी प्रायः अन्त हो गया। ऐसे संकट के समय वैश्यों को राजस्थान तथा मालवा के हिन्दू राजाओं का पूरा संरक्षण मिला। व्यापार में रजवाड़ों द्वारा वैश्यों को जो सहयोग प्राप्त हुआ उनके व्यापार के कारण हिन्दू राजाओं की भी समृद्धि हुई। उस समय हिन्दू राजपूत राजा वैश्यों को अपने राज्य में बसाना राज्य की समृद्धि का चिह्न मानते थे।

१२ से १६वीं शताब्दी तक वैश्यों का व्यापार उत्तर भारत में प्रायः समाप्त हो गया। एक ओर मुसलमानी व्यापारियों के कारण दूसरे गुलाम, खिलजी, तुगलक, सैयद, लोधी मुसलमान तथा मुगल बादशाहों के राज्य इस प्रकार बदलते रहे—

१. सन् १२०६ से १२९० तक दास वंश ने शासन किया।
२. सन् १२९० से १३२० तक खिलजी वंश का राज्य रहा।
३. सन् १३२० से १४४४ तक तुगलक वंश राज करता रहा।
४. सन् १४४४ से १४५० तक सैयद वंश का राज्य था।
५. सन् १४५० से १५२६ तक लोदी वंश का शासन रहा।
६. और अन्त में १५२६ से १८५७ तक मुगल वंश का राज्य रहा।

अतः उपर्युक्त ३०० वर्षों की देश की अस्थिर स्थिति के कारण भी वैश्यों क

pdfelement
Remove Watermark Now

राजस्थान, बुन्देलखण्ड तथा मालवा के अतिरिक्त कहीं सुरक्षा न मिली। १६वीं शताब्दी में मुगलों का राज्य स्थिर हुआ किन्तु अकबर के राज्य में अरबी, ईरानी मुसलमान सौदागरों को विशेष संरक्षण मिले और वैसे भी १२ से १६वीं शताब्दी के ४०० वर्ष के काल में उनका व्यापार भारत में पूरी तरह जम गया था।

तब भारतीय वैश्य व्यापारियों के सम्मुख दो ही रास्ते रह गए—(१) वे मुगलों के मोदी बनकर पेट पालें और भाग्य की प्रतीक्षा करें, (२) या मुगलों की नौकरी करके अपनी योग्यता के परिचय द्वारा अपना भाग्य निर्माण करें।

किन्तु जो वैश्य राजस्थान और गुजरात की ओर बस गये थे उनके व्यापार के लिए भी मुगल काल स्वर्ण अवसर सिद्ध हुआ क्योंकि दक्षिण भारत से दिल्ली का मार्ग राजस्थान होकर हिसार के पास से गुजरता था अतः इनको व्यापार का बड़ा अच्छा अवसर मिलता रहा।

उत्तर भारत के बहुत से वैश्यों ने अकबर के समय में मुगलों का मोदी तथा राजकीय सेवा का कार्य स्वीकार कर लिया और अपनी योग्यता के बल पर दोनों ही कार्यों में अच्छी सफलता प्राप्त की। जैसा कि आगे के विवरण से विदित होगा कि मुगलों के शासन काल में वैश्यों ने राज प्रबन्ध में इतना ऊंचा नाम कमाया कि मुगलों का शासन प्रायः वैश्यों के हाथों में ही था। उससे उन्हें यश और वैभव दोनों की प्राप्ति हुई।

इस प्रकार सन् १००१ से १८५७ तक के लम्बे काल में भारत वर्ष में हिन्दुओं की राजसत्ता का पूर्ण रूप से लोप हो चुका था। सैनिक शक्ति का ह्रास तो राजसत्ता के साथ होना स्वाभाविक ही है। इस लम्बे समय के बीच में हर प्रकार के मान-अपमान, अत्याचारों को सहते हुए और भीषण संघर्ष से बच निकलना हिन्दुओं के लिए जीवन-मरण का प्रश्न बना रहा। उन्होंने हर प्रकार के सम्भव उपायों द्वारा अपने-आपको जीवित रखते हुए दासता से मुक्त होने का कोई अवसर अपने हाथ से नहीं जाने दिया।

राजस्थान के वैश्य

सन् ११९५ में शाहबुद्दीन गौरी ने अग्रोहा पर आक्रमण किया फलतः अग्रोहा पूरी तरह उजड़ गया। इबनबतूता फारसी यात्री ने लिखा है कि १३०० ई० में यह नगर उजड़ा पड़ा था। अग्रोहा हिसार से १३ मील दूर है और हिसार का शेखावटी (राजस्थान) से गहरा सम्बन्ध रहा है। अब अग्रोहा के वैश्यों ने अपना जन्म स्थान छोड़कर ईधर-उधर सुरक्षित स्थानों को पलायन किया तो वे हिसार होकर राजस्थान में सर्वाधिक संख्या में गये, विशेषकर शेखावटी की ओर, क्योंकि हिसार के मार्ग से फतेहपुर (शेखावटी) का व्यापारिक सम्बन्ध पुराने समय से चला आता था।

फलतः १५वीं शताब्दी में झुंझनूं वैश्यों की बहुत बड़ी बस्ती बन चुकी थी। इसी

प्रकार शेखावटी के अन्य शहरों में भी वैश्यों की आबादी बढ़ने लगी। राजस्थान में राजपूत शासन में वैश्यों ने सुख की साँस ली।

१५२६ ई० तक भारत में गुलाम, खिलजी, तुगलक, सैयद, लोदी आदि मुसलमानों का ३०० वर्ष का अस्थिर शासन समाप्त होकर मुगलों का शासन आरम्भ हुआ। इस काल में मुगल शासन के अधीन स्थान-स्थान पर नवाबी शासन प्रचलित हुए। जैसा कि हम इससे पूर्व लिख चुके हैं, गुजरात की ओर से जो काफले दिल्ली की ओर आते थे उनका मार्ग हिसार होकर था अतः राजस्थान में बसे वैश्यों ने व्यापार से अपार धन कमाया, परिणामतय केवल शेखावटी में ही ७५ करोड़पति और हजारों लखपति सेठ तथा अनेकों सफल व्यापारियों ने वैश्य जाति के गौरव को चार चाँद लगा दिये।

उत्तर भारत में भी मुगलों से मिलकर वैश्यों ने मुगलों के मोदी बनकर तथा राज-काज में अपनी कार्यकुशलता का परिचय देकर यथेष्ठ सम्मान और वैभव संचित किया, इसका उल्लेख अन्यत्र किया जा चुका है।

वैश्यों के अभ्युदय का यह क्रम १७०७ ई० तक चलता रहा। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् राजस्थान के राजपूतों ने नवाबी शासन का अन्त करने का निश्चय किया और स्थान-स्थान पर नवाबों को परास्त करके उनके किलों पर अपना अधिकार प्राप्त कर लिया। इस अशान्ति के वातावरण में वैश्यों के व्यापार को अपार क्षति पहुँची और उन्हें भी अपनी सुरक्षा के लिए इधर-उधर पलायन करना पड़ा। किन्तु कुछ ही समय में राजपूतों ने नवाबी शासन का अन्त करके नये किलों की नींव डाली और वैश्य तथा ब्राह्मणों को खोज-खोज कर अपने-अपने नगर-गढ़ों में लाकर ससम्मान बसाया था। उस समय किसी भी नगर-गढ़ का मूल्यांकन उसमें बसे सेठों की संख्या से किया जाता था; क्योंकि नगर-गढ़ों की उन्नति के लिए उन्हें सेठों की आवश्यकता थी, अतः वे बड़े सम्मान के साथ बड़े-बड़े सेठों को अपने नगर गढ़ में बसाना अपना गौरव समझते थे। सेठों से नगर-गढ़ को बसाने और वैभवशाली बनाने में राजपूतों को सहयोग मिलता था, अतः सन् १७०० से १८०० तक राजस्थान में बहुत से नगर-गढ़ बसे जिनमें से शेखावटी के प्रमुख नगर कोट निम्न प्रकार थे जिनसे अग्रोहा से आकर बसने वाले वैश्यों का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है :—

१. खंड़ेला, २. सीकर, ३. नवलगढ़, ४. मुकुन्दगढ़, ५. डूंड्लौद, ६. मंडावा, ७. पाटोद, ८. बठोठ पाटोद, ९. बिसाऊ, १०. धोद, ११. दातारामगढ़, १२. खेतड़ी, १३. उदैपुर (शेखावाटी), १४. चिराणा, १५. परसराम पुरा, १६. गोविन्दगढ़, १७. महणसर, १८. लोसल, १९. खूंड, २०. चूड़ी, २१. सिंगरावट, २२. सुजरासन खेरा, २३. बगड़।

जब सामन्तों में पारस्परिक राज्य का बंटवारा होता था तो प्रत्येक सामन्त बँटवारे के समय इस बात का विशेष ध्यान रखता था कि उसके हिस्से में राज्य के

pdfelement
Remove Watermark Now

अधिक-से-अधिक सेठ आयें। जब नवलगढ़ के एक राजपुत्र ने अलग होकर मुकुन्दगढ़ बसाया तो वह १० प्रसिद्ध सेठों को अपने साथ ले गये। इससे वैश्यों की उपादेयता सर्वत्र प्रमाणित होती है। मुगलों के शासनकाल में भी एक कहावत सर्वत्र प्रचलित थी, 'पहले शाह पीछे बादशाह।'

मुगलों के परिवार में षड्यंत्र और भाई-भाई के कत्ल बराबर चलते रहे। मराठों, जाटों, राजपूतों के दांव-पेच सदैव बदलते रहे। उस समय राजपूतों तथा अन्य जातियों में दोनों ही प्रकार के मनुष्य पैदा होते रहे जिनमें से एक वर्ग ने विजयताओं से मेल-मिलाप बढ़ाकर अपनी शक्ति सुदृढ़ करने का यत्न किया और दूसरा वर्ग जीवन-पर्यन्त विजयताओं से सन्धि न करके उन्हें हर समय युद्ध के लिए ललकारता रहा। उदाहरण के लिए राजपूतों में राजा मानसिंह और उनके साथियों ने अकबर को अपनी लड़कियाँ देकर मेल बढ़ाया और राणा प्रताप घास की रोटियाँ खाकर एवं जंगल-जंगल भटकते रहकर भी अन्त तक अकबर का मुकाबला करते रहे। यही हाल वैश्य जाति का भी रहा। वैश्यों के एक वर्ग ने राष्ट्र के साथ मेल-मिलाप बढ़ाकर अपना यश बढ़ाया और दूसरे वर्ग ने युद्ध और असहयोग का विनाशकारी मार्ग चुना।

जिन दिनों राजस्थान के वैश्व राजस्थान में व्यापार द्वारा अपार धन अर्जित कर रहे थे और उत्तर भारत के वैश्व मुगलों के मोदी तथा प्रबन्धक बनकर यश और वैभव बढ़ा रहे थे, वैश्यों का एक वर्ग मुगलों का विरोध कर रहा था। एक ओर प्रतिभाशाली अग्रवालों ने मुगल राज्य में अपनी प्रतिभा का उपयोग करके धन, यश और गौरव प्राप्त किया दूसरी ओर वैश्य अग्रवालों का एक वर्ग अपनी आन-बान-शान के लिए विदेशी आक्रामकों से टक्कर ले रहा था। वे स्वाभिमानी राष्ट्रभक्त वैश्य मुगलकाल में पददलित हुए और अपमानजनक माहुर (विष की गाँठ अर्थात् शत्रु) नाम से संबोधित हुए। एक ओर देश-प्रेम से ओत-प्रोत त्याग और बलिदानों की कहानी है जो अग्रवाल जाति के विशाल भवन की नींव की ईंटों की भाँति इतिहास की दृष्टि से ओझल हो चुकी है और दूसरी ओर वे व्यक्ति और परिवार हैं जिन्होंने अपनी प्रतिभा से विदेशी आक्रामक शासकों का साथ देकर अपना गौरव बढ़ाया और इतिहास के पन्नों पर जाज्वल्यमान हैं। उनके मित्र मुगल और अंग्रेज शासकों के लेख पत्रों में इनकी सेवाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा अंकित की गई है।

अतः हम उन देशभक्त, त्यागी, बलिदानी और राष्ट्रप्रेमी वैश्यों के प्रति अपनी गहरी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए, जिनका पूर्ण यश इतिहास भवन की नींव की ईंटों की भाँति ओझल है, उन परिवारों का संक्षिप्त परिचय आगे प्रकाशित करेंगे जो विदेशी शासकों की राजकीय सेवा करके चमके थे।

इस प्रकार अग्रवालों के दो भेद सामान्यतया अकबर के शासनकाल सन् १५५६ से १६०५ के बीच में ही हो गये और इन भेदों के कारण वे एक दूसरे से अलग हो गये—एक अग्रवाल दूसरा माहुर।

सन् १७१२ से १७२० के बीच राजा रतनचंद का भी कट्टरपंथी अग्रवालों ने साथ न दिया, किंतु वे एक सबल प्रभावशाली राजा थे अतः उन्होंने अपनी अलग राजाशाही बिरादरी बना ली।

इन सब परिस्थितियों में हम किसी व्यक्ति की देशभक्ति या देशद्रोह की सीमाओं को यहाँ बाँधना नहीं चाहते। यह पाठकों के विचार स्वातंत्र्य पर छोड़ते हैं कि इन प्रतिभाशाली पुरुषों में से कौन किसको प्रभावित करता है।

यूरोप के व्यापारियों का आगमन

१७वीं शताब्दी में डच, पुर्तगाली, फ्रांसिसी और अंग्रेज व्यापारी भारत में आने लगे। उन्होंने मुगलों से विशेष अधिकार प्राप्त करके व्यापारिक कोठियाँ बम्बई, मद्रास, कलकत्ता आदि स्थानों पर बना लीं और धीरे-धीरे भारत के व्यापार पर छा गये। भारत में व्याप्त पारस्परिक फूट का लाभ उठाकर वे यहां की राजनीति में भी हस्तक्षेप करने लगे और अपने व्यापार के साथ-साथ राज सत्ता पर भी अपना अधिकार जमाने लग गये। १८वीं शताब्दी तक अंग्रेजों ने, डच, पुर्तगाली और फ्रांसिसी व्यापारियों को समाप्त कर दिया तथा मुगलों के शासन की बागडोर इनके हाथों में चली गई। इसी शताब्दी में अंग्रेजों की ईस्ट इन्डिया कम्पनी भारत के पीड़न, शोषण और धन अपहरण में विश्वास करती थी। इसने भारत के व्यापार को समूल उखाड़ फेंका और नये व्यापारिक मार्गों की कुंजी उनके हाथ लग गई। भारत के अच्छे-अच्छे जगत सेठ अंग्रेजों के सामने धूल चाट गये। यह समय वैश्य जाति के विशेष ह्रास का था और हम देखते हैं कि उत्तर तथा दक्षिण भारत का सम्पूर्ण व्यापार अंग्रेजों के हाथ में चला गया। भारत का वैश्य निराशा भरी आँखों से इन नये परिवर्तनों को देख रहा था। कुछ वैश्यों ने इस बदलती हुई परिस्थिति के अनुरूप मुगलों का साथ छोड़कर अंग्रेजों का साथ दिया किन्तु लार्ड क्लाइव जैसे चालाक लोगों ने धोखा देकर उन्हें परास्त कर दिया और आगे नहीं बढ़ने दिया। उस समय अंग्रेजों की नीति यह थी कि भारत के व्यापार का सूत्र संचालन उनके हाथ में रहना चाहिए। भारत का शासन चलाने के लिए उन्हें स्वामी भक्त कर्मचारियों तथा व्यापार की उन्नति के लिए एजेंटों की आवश्यकता थी, वे भारत के व्यापार को समूल नष्ट करने पर उद्यत थे।

राजस्थान से पलायन

१८वीं शताब्दी में राजस्थान के वैश्यों के ऊपर तो विपत्ति का पहाड़ ही पड़ा। जो हिन्दू राजे १२ से १६वीं शताब्दी तक अपने राज्य में वैश्यों को प्रतिष्ठा पूर्वक बुलाकर राज्यों में बसाते रहे और वैश्यों को अपने राज्यों की सुख-समृद्धि का कारण मानकर उनको विशेष सम्मान देते रहे उन्हीं के उत्तराधिकारी राजपुत्रों ने वै को अपना भक्ष्य समझ कर उन्हें लूटना आरम्भ कर दिया। एक ओर मुगल शा की समाप्ति के कारण राजस्थान का व्यापार शिथिल पड़ गया तो दूसरी ओर उन

pdfelement
Remove Watermark Now

संचित पूंजी को नये राजाओं ने लूटना आरम्भ कर दिया। एक दिन ऐसा आया कि राजस्थान में वैश्य वर्ग असहाय अवस्था में अपना घर छोड़ने पर मजबूर हो गया। जब उसके पास एक समय को पेट भरने का भोजन भी शेष न रहा तो सन् १८३५ में वह अपनी एक मात्र सत्य की पूंजी और लुटिया डोर लेकर निहत्था, साधनहीन राजस्थान से पैदल चलकर जिधर मुंह उठा चल पड़ा और १००-१०० दिन पैदल चलकर दक्षिण में पूना तक, पूर्व में बंगाल, आसाम तक फैल गया। अर्ध पेट रहकर, जंगल-जंगल, पहाड़ों की कन्दराओं में चोर-डाकुओं से त्रसित होकर भी अपने व्यापार की खोज में इधर-उधर भटकता रहा। उस समय सर्व साधारण लोग सीधे-सादे और ईमानदार थे, अतः वैश्यों ने अपने पैतृक संस्कारों और व्यापारिक अनुभवों का लाभ उठाकर जंगल और ग्रामों में अपने व्यापार को कुछ ही समय में जमा लिया। अन्त में कलकत्ता, बम्बई, पूना, नागपुर, उत्तर प्रदेश के हाथरस, कानपुर, बनारस, बिहार के पटना, राँची, धनबाद, झरिया, मध्य प्रदेश, के जबलपुर, दक्षिण के हैदराबाद, मद्रास आदि स्थानों पर अपना पूर्व वैभव फिर से जमा लिया।

इस प्रकार कुछ वैश्य परिवारों के त्याग, और तपस्या के फलस्वरूप राजस्थान से बाहर जो व्यापारिक क्षेत्र बना उसके सहारे अनेक राजस्थानी वैश्य तथा अन्य जाति के लोग राजस्थान से चलकर नवीन क्षेत्रों में पहुँच गये और दिन-प्रतिदिन नये-नये व्यापारिक क्षेत्र खुलने लगे। वैश्यों के पलायन का क्रम १८३५ से १८६० ई० तक चलता रहा। राजस्थान के व्यापारियों ने अंग्रेज व्यापारियों से मिलकर उनके उत्पादनों की एजेंसियाँ लीं और अपार धन संचय किया। अपनी सूझबूझ और व्यापारिक प्रतिभा से वे बिहार में कोयला और लोहा, बंगाल में जूट, बम्बई में विदेशी मालों के एकछत्र वितरक बनकर व्यापार में पूरी तरह सफल हुए।

राजस्थान से वैश्य जाति के पलायन का प्रभाव यह पड़ा कि रजवाड़ों में धूल उड़ने लगी और अर्थहीन होकर प्रजा कष्ट पाने लगी। देश से व्यापार और व्यापारी वर्ग के चले जाने के कारण १६ से १९वीं शताब्दी तक राजस्थान में ५० अकाल पड़े जिनमें सन् १८९९ का अकाल तो छप्पनियाँ के अकाल के नाम से आज तक प्रसिद्ध है। राजस्थान का वैश्य यद्यपि घोर यन्त्रणाओं और शोषण से पीड़ित होकर राजस्थान छोड़ने पर मजबूर हुआ था, किन्तु वह जब राजस्थान से बाहर अपने पूर्व वैभव को पाने में सफल हुआ तो उसका लाभ राजस्थान को भी पहुंचा! राजस्थानी वैश्यों ने राजस्थान से बाहर व्यापार स्थापित करके भी अपना नाता अपनी मातृभूमि से न तोड़ा था अतः वर्ष में एक दो बार वे अपनी प्यारी मातृभूमि में अवश्य आते थे और अपने संचित धन से, विद्यालय, धर्म क्षेत्र, औषधालय, जलाशय, धर्मशाला आदि पर अपार धन राशि व्यय करते रहे। राज्य को भी चुंगी आदि से आर्थिक लाभ होता था। किन्तु राजस्थान के रजवाड़ों ने फिर भी इन वैश्यों के वैभव से ईर्षा करने के कारण उन्हें उत्साहित न किया कि वे पुनः देश में व्यापारिक संस्थान स्थापित करके राजस्थान को सुखी बनावें। उनका प्रजा शोषण पूर्ववत् चलता रहा और अन्त में इसी के परिणाम-

स्वरूप राजस्थान से राजाशाही समाप्त हो गई, राजाओं के महल बिकने लगे। यह भी अवसर की बात है कि जिन वैश्यों को राजाओं ने लूटा, उनके महलों को भी उन्हीं वैश्यों ने खरीद लिया किन्तु अपने लिए नहीं राजस्थान के सार्वजनिक हित के लिए। परिणामतयः आज के दिन कई राजमहलों का उपयोग विद्यालय तथा अन्य सार्वजनिक हित के कार्यों के लिए होता है।

सन् १८०३ तक कम्पनी शासन उत्तर भारत में पंजाब तक फैल गया। सन् १८२९ तक देश के राज मार्गों के नक्शे बन गये। किन्तु सन् १८५७ में प्रथम राष्ट्रीय संग्राम (जिसे गदर की संज्ञा दी गई थी) के कारण अंग्रेजों के पैर उखड़ गए। उसी समय सिक्खों ने सैनिक दृष्टि से तथा वैश्यों ने व्यापारिक दृष्टि से अंग्रेजों का साथ दिया अतः १८५९ तक १९वीं शताब्दी में अंग्रेजों ने पूर्णरूप से भारत पर विजय प्राप्त कर ली, देश का सम्पूर्ण परिवहन, यातायात, व्यापार व्यवस्था, अर्थनीति उत्पादन पर अंकुश, भाव नियन्त्रण और देशवासियों के पैतृक व्यापार और उत्पादनों का भी पूरा नियंत्रण अंग्रेजों के हाथ में चला गया।

यही समय वैश्यों के अभ्युदय का एक नवीन अवसर लेकर उपस्थित हुआ। १९वीं शताब्दी में उन्होंने एक ओर अंग्रेज व्यापारियों के माल की दलाली का कार्य अपने हाथ में ले लिया और दूसरी ओर नये-नये कल-कारखानों की स्थापना का कोई भी अवसर इन्होंने अपने हाथ से जाने न दिया तथा अपने कार्य-कौशल का नया परिचय दिया। दक्षिण भारत में विजयनगरम्, बंगाल, आसाम, बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश और बम्बई आदि स्थानों पर वैश्यों का व्यापारिक शौर्य प्रस्फुटित हो गया। तब स्थान-स्थान पर सेठों की नयी-नयी गद्दियाँ स्थापित होने लगीं और नये-नये कल-कारखानों की स्थापना हुई।

१९वीं शताब्दी के अन्त में तथा २०वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही देश में अंग्रेजी शासन काल के विरुद्ध देशव्यापी आंदोलन आरम्भ हुए। वैश्य जाति को गर्व है कि इस राष्ट्रीय आंदोलन के संचालन की बागडोर अन्त में वैश्य शिरोमणि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के हाथ में आई और सेठ जमना लाल बजाज ने उनके प्रत्येक आर्थिक मोर्चे को संभाला।

वैश्यों ने अंग्रेजों को देश से उखाड़ फेंकने में नैशनल कांग्रेस का पूरा-पूरा साथ दिया। राष्ट्रीय आंदोलन में लगभग दो करोड़ रुपये केवल राजस्थान के वैश्यों ने ही दिये थे और प्रजातन्त्र की स्थापना हेतु देश के व्यापारी वर्ग की कुल सहयोग राशि १० करोड़ से भी अधिक है।

वैश्यों ने देश को स्वतन्त्र कराने में जहाँ नैशनल कांग्रेस को तन-मन-धन अर्पि किया वहाँ राष्ट्र निर्माण का वह महान कार्य भी पूरा किया जिसके बिना देश क स्वतन्त्रता व्यर्थ थी। हमारा अभिप्राय औद्योगिक स्वतंत्रता से है। यदि वैश्य वर्ग ने इ थोड़े से समय सन् १९०० से १९४७ तक में देश का औद्योगिक विकास पूरा न किय

pdfelement
Remove Watermark Now

होता तो हम राजनीतिक गुलामी से छुटकारा पा लेने पर भी औद्योगिक दृष्टि से विदेशों के गुलाम बने रहते।

अतः वैश्यों की देश के लिए यह महान देन थी कि वस्त्र उद्योग, जूट, कोयला, लोहा, सीमेंट, लकड़ी, मिश्रित धातु, सैन्य सामग्री, बिजली, मशीनों और मशीनी औजार, जलयान, रेल-इंजन, सड़क परिवहन, आदि अनेकों उद्योगों की सफल स्थापना द्वारा देश को सबल बनाया।

सन् १८९४ में वैश्यों ने नैशनल चैम्बर आफ कोमर्स की स्थापना करके विदेशी व्यापारियों से मुक्त होने का प्रयत्न किया। सन् १८९९ में मारवाड़ी चैम्बर आफ कोमर्स की स्थापना द्वारा औद्योगिक स्वतन्त्रता की ओर दूसरा पग बढ़ाया गया। उसी समय सर्व श्री पनैचन्द सिन्धी, रामजीदास बाजोरिया तथा सर बद्रीनाथ गोयनका ने वेल्डजूट एसोसियेशन की स्थापना करके जूट उद्योग को अंग्रेजी व्यापारियों से मुक्त किया। अन्त में वैश्यों ने देश की राजनीतिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ १९४७ में देश से विदा लेने वाले अंग्रेज कारखानेदारों के कारखाने रात-रात में खरीदकर देश को औद्योगिक दृष्टि से स्वावलम्बी बना दिया। इस औद्योगिक स्वतन्त्रता का एकमात्र श्रेय वैश्य जाति को है।

३

अग्रवाल वैश्य जाति की प्राचीनता

अग्रवाल और अग्रोतकान्वय शब्दों की प्राचीनता

अग्रवाल वैश्य जाति कितनी प्राचीन है, इसकी जानकारी अब तक प्राप्त शिलालेखों, राज्य-मुद्राओं और जैन ग्रन्थों एवं अपभ्रंश भाषा के धार्मिक ग्रन्थों की पुष्पिकाओं से मिलती हैं। सबसे प्राचीन उल्लेख अपभ्रंश भाषा के ग्रन्थों में है जो जयपुर के तेरापंथी बड़ा दिगम्बर जैन मंदिर तथा बाबा दुलीचन्द के भण्डारे में सुरक्षित हैं। इन पुस्तकों का वर्णन श्री पं० परमानन्दजी शास्त्री ने अपने ग्रन्थ अपभ्रंश जैन ग्रन्थ प्रशस्ति संग्रह (द्वितीय भाग) में तथा डा० श्री परमेश्वरीलाल गुप्त ने अपनी पुस्तक 'अग्रवाल जाति का विकास' में विस्तार पूर्वक किया है—

१. सम्वत् ११८९ वि० में कविवर श्रीधर के स्वकृत "पासणाहं चरिउ" में इस रचना के प्रेरणा सूत्र श्री नट्टल साहू की जाति परिचय देते हुए उन्हें "अग्रोतकान्वय" (अग्रोहाकुल के) बताया है और अपना परिचय देते हुए लिखा है कि अयरवाल कुल में मां बील्हा के गर्भ से उत्पन्न हुये। पूरा उल्लेख पृष्ठ ३२ पर देखें।

२. "प्रद्युम्न चरित्र" काव्य की रचना सं० १४११ वि० के भाद्रपद में एरछ नगर (उ० प्र०) में हुई थी। इस ग्रन्थ का प्रकाशन जैन साहित्य शोध संस्थान, जयपुर द्वारा हुआ है। इस ग्रन्थ के अन्त में काव्य रचयिता वैश्य कवि सधारू ने अपना परिचय देते हुए अपनी जाति "अगरवाल" लिखी है और अगरवाल जाति का निकास स्थान "अगरोएपुर" होना लिखा है। इससे सिद्ध होता है कि सं० १४११ वि० के आसपास "अगरवाल शब्द का भी प्रचलन हो चुका था। किन्तु इस शब्द का व्यापक प्रचार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी ने सं० १९२८ वि० में किया था।

३. यशः कीर्ति कृत अपभ्रंश काव्य हरवंश पुराण की एक प्रति जयपुर में बाबा दुलीचन्द के भण्डारे में है। इस काल की रचना का समय विक्रमी सं० १५१० भादों सुदी ११ गुरुवार है। इस काव्य को लिखाने वाले अग्रवाल वंश गर्ग गोत्र में दिवड़ा साहु थे। काव्य प्रशस्ति में उनके वंश का सविस्तार वर्णन है।

४. कविरइधू ने अपने अपभ्रंश ग्रन्थ सिद्ध चक्क माहप्प कहा (सिद्ध चक्र

pdfelement
Remove Watermark Now

माहात्मय कथा अपर नाम श्रीपाल कथा) की रचना गोपाचल (ग्वालियर) में संवत् १५२१ वि० (सन् १४६४ ई०) में की थी। यह ग्रन्थ सिरि अइरवाल वंशहि महंतु (श्री हर सिंध साहू) अइरवाल वंशहि (अग्रवाल वंश) ने लिखाया है। यह ग्रन्थ जयपुर में बाबा दुलीचन्द के भण्डारे में सुरक्षित है।

५. पार्श्वनाथ पुराण (अपभ्रंश काव्य) की प्रति फरखनगर के जैन भण्डारे में है जिसका लेखन काल संवत् १५४८ चैत्र बदी ११ शुक्रवार है। यह पुस्तक प्रति भट्टारक हेमचन्द्रदेव की आम्नाय वाले 'अग्रोतकान्वय' के गोयल गोत्र के आशीवाल सराफ के कुटुम्ब वालों ने रइधू कवि से लिखवाई थी।

६. श्री बाबा दुलीचन्द के भण्डारे में प्राप्त तीसरा ग्रन्थ रइधू कवि पद्मावती पुरवाल द्वारा अग्रोतकान्वय के गर्ग गोत्र के कुटुम्ब की गूजर पुत्री बाई मीसों ने अपने कर्मों के क्षय के लिए माह सुदी ५ सोमवार सं० १५६४ में लिखवाई थी।

७. पुष्पदंतकृत आदि पुराण (अपभ्रंश काव्य) की एक प्रति तेरापंथी बड़ा दिगम्बर जैन मंदिर जयपुर में है। यह प्रति संवत् १६५३ जेष्ठ शुक्ल तृतीय बृहस्पति वार को संग्रामपुर में राजाधिराज महाराज मानसिंह श्री के राज्यकाल में पार्श्वनाथ चैत्यालय में श्री मूलसंघ नन्दि आम्नाय बलात्कार गण, सरस्वती गच्छ कुन्द-कुन्दान्वय के भट्टारक पद्म नन्दि, उनके शिष्य शुभचन्द्र, उनके शिष्य जिनचन्द्र, उनके शिष्य प्रभाचन्द, उनके शिष्य चन्द्रकीर्ति, उनके आम्नायवर्ती अग्रोतकान्वय के भूगिल गोत्र में सा० श्री···के लिए लिखी गई थी।

८. कवि रइधूकृत पार्श्वनाथ पुराण की एक और प्रति तेरापंथी जैन मंदिर जयपुर में है। यह ग्रन्थ जोगिनीपुर के सुप्रसिद्ध अग्रवाल कुल के एडिल गोत्र के लिए था।

९. श्री डा० परमात्मा शरण, एम० ए०, पी० एच० डी०, काशी विश्व-विद्यालय, वाराणसी की सूचनानुसार लन्दन की लाइब्रेरी में काशन (दिल्ली) निवासी केवलरामकृत 'तजकिरातुल उमरा' नामक हस्तलिखित पुस्तक में, जो १८वीं शताब्दी की लिखी प्रतीत होती है और इसमें औरंगजेब के समय तक के अमीर उमराओं का उल्लेख है, इस पुस्तक के लेखक ने अपने आपको 'अग्रवाल' लिखा है।

१०. विक्रमी सम्वत् १६३२ में अकबर कालीन सुप्रसिद्ध जैन ग्रंथकार पं० राजमल्ल ने संस्कृत में 'जम्बू स्वामी चरितम्' पुस्तक लिखी है। उसमें लेखक ने अपने संरक्षक को 'अग्रोतक वंश के गर्ग गोत्र' का बताया है। जम्बू स्वामी चरितम् कथामुख वर्णन प्रथम सर्ग, श्लोक ६४।

११. एपिग्रेफिका इण्डिका, भाग २, पृ० २४३ के अनुसार प्रयाग के सुप्रसिद्ध प्राचीन नगर कोशाम्बी (आधुनिक कोसम) के निकट भपोसा पहाड़ (प्रभास पर्वत) की धर्मशाला में विक्रमीय संवत् १८८१ की एक प्रशस्ति लगी हुई है। इस धर्मशाला के निर्माता ने अपना परिचय 'अग्रोतकान्वय गोल गोत्र' लिखा है।

शिला लेख

(१) अब तक प्राप्त शिला लेखों में सबसे प्राचीन शिला लेख सं० १३८४ फाल्गुन सुदी ५ मंगलवार का है जो कुछ समय पूर्व तक देहली के लालकिले के अजायबघर में था। इसका उल्लेख लालकिले में म्यूजियम के पुराने कैटैलॉग से पता लगता है। यह शिलालेख सुलतान मुहम्मद बिन तुगलक के समय का है। यह देहली से ५ मील दूर दक्षिण दिशा में स्थित सारबान नामक ग्राम से प्राप्त हुआ था। इसमें 'वणिजामग्रोतक निबासिना' (अग्रोतक निवासी वणिक का उल्लेख है। इस शिलालेख का प्राचीन नं० बी-६ था किन्तु नवीन कैटैलांग में इसका यह अम्बर बदल गया है और यह शिलालेख अब लाल किले में नहीं है। अब यह नैशनल म्यूजियम, नई देहली में देखा जा सकता है।

(२) दूसरा शिलालेख मुहम्मदशाह कालीन है जो बनारस कालेज में रखा गया है। इसमें 'अग्रोतक निवासिन वणिक' का उल्लेख है। (इंडियन एन्टीक्वैरी, भाग १५, पृष्ठ ३४३)।

(३) तीसरा शिलालेख विक्रमी सं० १५५५ बैशाख सुदी ६ बुधवार का है जिसमें 'अग्रस्थान' शब्द का उल्लेख है। यह लेख बिगड़ गया है अतः पढ़ा नहीं जाता। यह शिलालेख बहलोल लोदी के समय का है और अलवर राज्य के प्राचीन माचेडी ग्राम की अग्रवालों की बाबड़ी पर लगा है। यह सूचना महामहोपाध्याय डा० गौरीशंकर हीराचन्द जी ओझा से प्राप्त हुई थी।

डा० श्री परमेश्वरी लाल जी के इन उल्लेखों की सम्पुष्टि के लिए हमने अपने मित्रवत हितैषी श्री पं० श्यामलाल जी जोशी, प्रधानाचार्य, जयपुर आयुर्वेदिक कालेज हल्दिया हाउस, जौहरी बाजार, जयपुर, सम्प्रति धन्वन्तरि महाविद्यालय, बाँदीकुई (जयपुर) को लिखकर निवेदन किया कि वे स्वयं बड़ा मंदिर तथा श्री दुलीचन्द जी के भण्डारे में जाकर उपरोक्त पुस्तकों की खोज करके उनके लेखों की प्रतियाँ हमारे पास भेजें। श्री पं० श्यामलाल जी जोशी ने हमारी प्रार्थना पर व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी लेकर इस कार्य को अपने हाथ में लिया और उन्होंने हमें १५वीं शताब्दी में लिखी गई हस्तलिखित पुस्तकों से आवश्यक अंशों की निम्नाँकित दो प्रतिलिपियाँ भेजी हैं और तीसरी प्रति सं० ११८९ वि० की है।

१. सिद्धान्तार्थ—पं० रइधूकृत। पत्र संख्या ११५। सं० १५९३ वि०, बैशाख सुदी १३। वेस्टन संख्या २०८८ बड़ा मंदिर, जयपुर।
इस पुस्तक के अन्त में लिखा है :—
'अग्रोतकान्वये। गर्ग गोत्र। आसि वास। जोगिनी पुरि वारतव्य तवस्। आ

२. आदिपुराण...पं० पुष्पदन्त। पत्र सं० १४३। लेखन काल सं० १५३७ फ
फाल्गुन सुदी ६ वेस्टन ८५। बड़ा मंदिर, जयपुर।

pdfelement
Remove Watermark Now

इस पुस्तक के अन्त में लिखा है 'अग्रोतकान्वये गोइल गोत्रे मिलिक यशोधर तयो पुत्रा मलिक भट्टिया।' इत्यादि।

३. सम्वत् ११८९ वि० में अग्रवाल जाति के प्रथम कवि श्री श्रीधर ने "पाषणाह चरिउ" अपभ्रंश ग्रन्थ में अपना परिचय इस प्रकार दिया :--

(१) सिरि अयरबाल - कुल - संभवेण,
जणणी - वील्हा गुब्भुवेण।
अणवरय विणय - पणयारुहेण,
कइण बहु गोल्ह - तणुरुहेण।
पयडिय तिहुअण - वई गुण भरेण,
मरिणाय सुहि सुअणें सिरिहरेण।

(पाषणाह चरिउ पृ० ४५)

इसका भाव है कि इनका (श्रीधर का) जन्म अयरवाल (अग्रवाल) कुल में माँ वील्हा के गर्भ से हुआ।

श्री धर कवि ने इसी ग्रन्थ में अपने आश्रय दाता नट्टल साहू का परिचय देते हुए लिखा है कि—

(२) अग्रोतकान्वय - नभोङ्गण - पार्व्वणेंदुः,
श्री माननेक-गुण-रंजित चारु-चेताः॥
ततोऽभवत्सोढल नामधेयः सुतो द्वितीयो द्विपतामजेयः।
धर्मार्थकामत्रितये विदग्धो जिनाधिप-प्रोक्तवृषेण मुग्धः॥
पश्चाद्बभूव शशिमंडल - भासमानः,
ख्यातः क्षितीश्वर जनादपि लब्धमानः।
सद्दर्शनामृत - रसायन - पानपुष्टः,
श्री नट्टलः शुभमनाक्ष पितारिदुष्टः।
तनेदमुत्तमधिया प्रविचित्य चित्ते,
स्वप्नोपमं जलदशेषमसार भूतं।
श्री पार्श्वनाथ चरितं दुरितापनोदि,
मोक्षाय कारितमितेन मुदं व्यलेखि॥

(प्रति आमेर भंडार सं० १५७७)

इन उद्धरणों से सिद्ध है कि सं० १३८४ विक्रमी से अग्रोतकान्वय' शब्द का सर्व-साधारण में प्रचलन था और यह क्रम सवत् १५३७ वि० तक अबाध गति से प्रचलित रहा तथा गोत्रों की जानकारी भी हमें थी।

उपर्युक्त संदर्भ भी वैद्यराज पं० श्याम लाल जी जोशी, प्रधानाचार्य धन्वन्तरि आयुर्वेद महाविद्यालय, बाँदीकुई (जयपुर) के सौजन्य से हमें सन् १९७७ में प्राप्त हुआ था जिसका उल्लेख हम पृ० २९ पर कर चुके हैं।

४

महाराजा अग्रसेन का जीवन-परिचय

जीवन-परिचय

आग्रेयगणराज्य के संस्थापक, वैश्य संगठनकर्त्ता, अग्रवंश-शिरोमणि, अग्रवाल जाति के पितामह, देवतुल्य, प्रातःस्मरणीय महाराजा अग्रसेन का जन्म महालक्ष्मी व्रत-कथा के अनुसार प्रताप नगर (राजस्थान) के राजा धनपाल के वंश में राजा वल्लभ के घर में हुआ। राजा वल्लभ के दो पुत्र हुए—(१) अग्रसेन; (२) शूरसेन।

अग्रवंश-शिरोमणि अग्रसेन का जन्म मंगसिर वदी ५, शनिवार कलिकाल से ८५ वर्ष पूर्व प्रतापनगर में हुआ। महाराजा अग्रसेन महाप्रतापी और शक्तिशाली राजा थे। इनके राज्य की सीमायें उत्तर में हिमालय से नीचे गंगा-यमुना तक, पश्चिम में वर्तमान मारवाड़ की सीमा को छूती हुई, पूर्व में आगरा तक तथा दक्षिण में अग्रोहा तक थीं।

इन्द्र से युद्ध

महाराजा अग्रसेन ने वैश्य जनपद की स्थापना की अतः इन्द्र और क्षत्रियों ने वैश्य जनपद का स्वागत नहीं किया।

उसी समय नागराज कुमुद ने अपनी पुत्री मागधी का विवाह महाराजा अग्रसेन से कर दिया। देवराज इन्द्र भी मागधी से विवाह करना चाहते थे, अतः वे महाराजा अग्रसेन के अभ्युदय को सहन न कर सके।

फलस्वरूप अग्रसेन और इन्द्र में युद्ध छिड़ गया। इन्द्र की शक्ति महान थी। साथ ही अग्रसेन के राज्य में दीर्घकाल तक वर्षा नहीं हुई। परिणामस्वरूप सूखा के कारण राज्य में अकाल पड़ गया। इन्द्र पर विजय पाने के लिए अग्रसेन ने महालक्ष्मी की पूजा आरम्भ की। महालक्ष्मी अग्रसेन की पूजा से प्रसन्न होकर प्रकट हुईं और उन्हें आशीर्वाद दिया तथा इन्द्र पर विजय प्राप्त करने के लिए कोल्हपुर के नाग राजा महीधर की कन्याओं के स्वयंवर में जाने का आदेश दिया।

महालक्ष्मी की आज्ञा का पालन करके अग्रसेन कोल्हपुर पहुंचे और स्वयंवर में

pdfelement
Remove Watermark Now

नाग कन्याओं के साथ पाणिग्रहण करने में सफल हुए। नागराजा महीधर ने विवाह में अग्रसेन को बहुत से हाथी, रथ, घुड़सवार, पैदल सेना, दास, दासियाँ, हीरे, मोती अतुलधन, स्वर्ण और बहुमूल्य पदार्थ दिये। उन दिनों नागराजा बहुत बलशाली था अतः ऐसे बलशाली राजा की सहायता प्राप्त कर महाराजा अग्रसेन की शक्ति बढ़ गई। अन्त में इन्द्र ने नारद जी को बीच में डालकर वैश्यों के राजा अग्रसेन से सन्धि कर ली।

गृहस्थाश्रम में प्रवेश

महाराजा अग्रसेन ने इस सन्धि द्वारा युद्ध-कार्य से निवृत्त होकर यमुना तट पर नव-विवाहिता नाग कन्या के साथ महालक्ष्मी की तपस्या आरम्भ कर दी। इस पर महालक्ष्मी ने इन्हें पुनः आदेश दिया कि 'हे राजन, अपनी तपस्या बन्द करो, गृहस्थाश्रम का पालन करो; क्योंकि यही चारों आश्रमों का आधार है, सब इसी आश्रम की शरण लेते हैं। तुम्हारे वंश के लोग सदैव सुखी रहेंगे, तुम्हारा कुल तुम्हारे नाम से प्रसिद्ध होगा। तुम्हारी प्रजा अग्रवंशी कह लायेगी, तुम्हारे कुल में मेरी पूजा होती रहेगी अतः यह कुल वैभवशाली रहेगा। यह कहकर महालक्ष्मी अन्तर्धान हो गईं। महाराजा अग्रसेन महालक्ष्मी की आज्ञानुसार अपनी राजधानी प्रतापनगर में लौट आये।

जिस स्थान पर इन्द्र को वश में किया गया था, वह स्थान हरिद्वार से पश्चिम दिशा में १४ कोस गंगा-यमुना के बीच है। यहाँ महाराजा अग्रसेन ने एक स्मारक बनवाया था।

अग्रोहा निर्माण

इसी बीच उनके पिताश्री का स्वर्गवास हो गया अतः अस्थि विसर्जन के लिए वे लोहार्गल तीर्थ पर गये। मार्ग में हरियाणा की वीर-प्रसूता भूमि ने उन्हें बहुत प्रभावित किया अतः उन्होंने वहीं अपना नया गणराज्य स्थापित करने का निश्चय किया और कुछ समय पश्चात् महाराजा अग्रसेन जी ने एक नये नगर की स्थापना की। इस नगर का विस्तार १२ योजन था। नगर के बसाने में करोड़ों रुपये व्यय किये। नगर चार मुख्य सड़कों द्वारा विभक्त था। प्रत्येक सड़क के दोनों ओर राजमहल के ऊँचे-ऊँचे भवनों की पंक्तियाँ थीं। नगर में बहुत से उद्यान, कमलों से भरे विशाल तालाब थे। नगर के बीच में देवी महालक्ष्मी का विशाल मन्दिर स्थापित किया गया था जहाँ रात दिन महालक्ष्मी की पूजा होती रहती थी। इसी नगर का नाम अग्रोहा था जो देहली से ११३ मील—अब हिसार जिले के अन्तर्गत—सिरसा-हिसार की सड़क पर छोटे गांव के रूप में विद्यमान है और इसके पास प्राचीन नगर के भग्नावशेष (खण्डहर) ६५० एकड़ भूमि में टीले के रूप में फैले हैं।

महाराजा अग्रसेन ने अग्रोहा का निर्माण करके उसमें अपने वंश के लोगों के साथ अन्य वैश्यों को बसाकर उसे वैश्य जनपद की राजधानी बनाया। इनके समय में अग्रोहा में एक लाख वैश्यों के घर थे।

१८ यज्ञों का आयोजन

महाराजा अग्रसेन ने अग्रोहा और आगरा बसाया। अग्रोहा में स्वयं महाराजा अग्रसेन १८ गण प्रतिनिधियों के सहयोग से राज करते थे और आगरा का राज्य अपने भाई शूरसेन को सौंप दिया। जब दोनों भाई सुखपूर्वक राज्य करने लगे तो गर्ग मुनि के आदेश तथा महाराजा अग्रसेन ने अपने भाई शूरसेन की सहायता से यज्ञ करने का निश्चय किया। सब देशों में यज्ञ का निमन्त्रण भेज दिया गया। यज्ञ का समाचार सुनकर मुनि, देवता और विद्वान् यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए अग्रोहा पहुँचे। अतिथि-सत्कार का सारा प्रबन्ध शूरसेन के हाथ में था और अतिथियों के आदर-सत्कार में कोई कमी नहीं की गई थी। यज्ञ के अधिष्ठाता महाराजा अग्रसेन बने।

यज्ञों में ब्रह्मा का आसन गर्ग मुनि ने ग्रहण किया। १७ यज्ञ निर्विघ्न पूरे हो गये। १८वें यज्ञ से पूर्व रात्रि के समय महाराजा को बोध हुआ और उन्हें यज्ञ में दी जाने वाली पशु बलि से घृणा हो गई। उनके मन में हिंसा के प्रति घोर द्वन्द्व चलने लगा। वे सोचने लगे कि जिस हिंसा से नीच लोग नरक को पाते हैं, मैं उसी हिंसा को प्रोत्साहन दे रहा हूँ। वैश्यों का परम धर्म तो पशु-पालन तथा रक्षा है। पशुवध तो महापाप कर्म है। १८वें दिन प्रातः महाराजा यज्ञ में नहीं पहुँचे। याज्ञिक लोग प्रतीक्षा कर रहे थे। अन्त में शूरसेन महाराजा के पास पहुँचे और अपने भाई को घोर चिन्ता में मग्न पाया।

शूरसेन ने हाथ जोड़कर महाराजा से चिन्ता का कारण जानना चाहा तो अग्रसेन ने कहा 'वैश्यों का कर्तव्य पशुपालन और पशुधन की रक्षा करना है। हिंसा करना महापाप है। वैश्यों के लिए हिंसा का निषेध है। मैंने बड़ी भूल की कि यज्ञ में पशुबलि दी। न जाने इसका क्या फल मुझे भोगना होगा। न जाने कितने जन्म-जन्मान्तर मुझे नरक में वास करना होगा।' यह कहकर महाराजा अग्रसेन ने शूरसेन को आदेश दिया कि इस हिंसामय यज्ञ को बन्द करो, इसी में हमारा भला है।

शूरसेन ने विनयपूर्वक महाराजा से निवेदन किया कि 'हे दुखियों पर दयालु, मेरे वचन को सुनो, अब केवल एक यज्ञ शेष बचा है, उसे पूर्ण कर लें, यही अच्छा है। इसके पश्चात् हिंसामय यज्ञ मत करना यह मेरी सम्मति है। यज्ञ का समय टल रहा है, इसलिए शीघ्र ही यज्ञ-मण्डप में पधारें।'

इस पर अग्रसेन ने शूरसेन को समझाया कि "तुम समझदार होकर भी ऐसी बात मुझे क्यों कहते हो। मनुष्य को जहाँ तक भी हो पाप कर्म से बचना चाहिए। जितना ही वह पाप कर्म से बचेगा, उतना ही उसका कल्याण होगा। पशुहिंसा बड़ा पाप है तुम्हें भी पशुहिंसा रोक देनी चाहिए। तुम्हें भी मेरी बात मानकर प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हमारे वंश में कोई हिंसा न करे।"

अग्रसेन की धर्मानुकूल सम्मति से प्रभावित होकर शूरसेन के मन में भी हिंसा के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। दोनों भाई राजमहल से निकलकर यज्ञ स्थल पर पहुँचे।

parliament
Remove Watermark Now

पंडितों के आदेश से महाराज ने सिंहासन पर बैठकर अपने परिवार के सभी पुत्र-पुत्रियों और अन्य सदस्यों को अपने पास बैठाया और उपस्थित जनों को सम्बोधित करके बोले :—

अहं स्वभ्रातृन् पुत्रांश्च तथा कन्या कुटुंबिनः ।
इदमेवोपदिशामि न कश्चिद्वधमाचरेत ।।

'यज्ञ में पशुहिंसा से मेरे हृदय में घृणा हो गई है। अब मैं पशुहिंसा को उचित नहीं समझता अतः मैं अपने भाई, पुत्रों, कन्याओं और कुटुम्बियों को तथा उपस्थित १७ वैश्य कुलों को यही उपदेश देता हूँ कि कोई हिंसा न करे।' और १८वाँ यज्ञ ऐसे ही अधूरा रह गया।

विचार-परिवर्तन का वैश्य जाति पर प्रभाव

महाराजा अग्रसेन के इस विचार-परिवर्तन का वैश्य जाति के जीवन पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा और यही कारण है कि समस्त वैश्य अहिंसा व्रत का पालन करते हैं। निरामिष भोजन, दया और धर्म वैश्य जाति की वंश-परम्परागत थाती है।

महाराजा अग्रसेन की जाति

कई लोग महाराजा अग्रसेन को क्षत्रिय जाति का राजा मानते हैं और कहते हैं कि उन्होंने वैश्य धर्म स्वीकार कर लिया था। किन्तु हम इस विचार से सहमत नहीं हैं। हमारी दृढ़ धारणा है कि महाराजा अग्रसेन जन्म से ही वैश्य थे। हमने महाराजा अग्रसेन का जन्म कलियुग से ८५ वर्ष पूर्व द्वापर के अन्तिम चरण में अंकित किया है जो कि वर्ण परिवर्तन का समय न होकर जन्मगत जातियों का काल है। महाभारत में वैश्य जनपद का स्पष्ट उल्लेख है और महाराजा अग्रसेन ही वैश्य जनपद और तत्पश्चात् अग्रोहा गणराज्य के संस्थापक एवं वैश्यों के संगठनकर्ता थे।

जैसा कि हम पूर्व भी लिख चुके हैं महाराजा अग्रसेन का विवाह भी नागवंश में ही हुआ था जो उस समय का महाप्रतापी वैश्य वंश था।

वास्तविकता यह है कि उस समय की परम्परा के अनुसार वैश्यों को **'वार्ताशस्त्रोपजीवी'** कहा जाता था जिसका अर्थ है **'व्यापार करने वाली और उसकी रक्षा हेतु आवश्यकता पड़ने पर युद्ध करने वाली जाति।'** अतः इसी कारण कुछ लोग महाराजा अग्रसेन को क्षत्रिय राजा मानते हैं किन्तु जन्मगत जाति से महाराजा अग्रसेन वैश्य कुल के ही थे।

महाराजा अग्रसेन का निज वंश

'महालक्ष्मी व्रत-कथा' के अनुसार महाराजा अग्रसेन की १८ रानियाँ थीं।

१. मित्रा २. चित्रा ३. शुभ्रा ४. शीला ५. शिखा ६. शान्ता ७. रजा

८. चरा ९. शची १०. सखी ११. शिरा १२. रम्भा १३. भवानी १४. सरसा १५. समा १६. माधवी

दो रानियों के नाम नहीं मिलते। पटरानी माधवी थी जो कोल्हपुर के नागराजा कुमुद की पुत्री थी। इन रानियों से ५४ पुत्र तथा १८ कन्यायें हुईं, जिनकी नामावली इस प्रकार है :—

पुत्र

१. विभु २. विरोचन ३. वाणी ४. पावक ५. अनिल ६. केशव ७. विशाल ८. रक्त ९. धन्वी १०. धामा ११. पामा १२. पयोनिधि १३. कुमार १४. दवन १५. माली १६. मन्दोकन १७. कुण्डल १८. कुश १९. विकाश २०. विरण २१. विनोद २२. वपुन २३. वली २४. वीर २५. हर २६. रव २७. दन्ती २८. दाडिमी दंत २९. मधुदर ३०. कर ३१. खर ३२. गर ३३. शुभ्र ३४. पलश ३५. अनिल ३६. सुन्दर ३७. धर प्रखर ३८. मल्लीनाथ ४०. नन्द ४१. कुन्द ४२. कुलुम्बक ४३. कान्ति ४४. शान्ति ४५. क्षमाशाली ४६. पथ्यमाली ४७. विलासद तथा अन्य ७ पुत्र—कुल ५४ पुत्र थे।

पुत्रियाँ

१. दया २. शान्ति ३. कला ४. कान्ती ५. तितिक्षा ६. अधरा ७. अमला ८. शिखा ९. मही १०. रमा ११. रामा १२. यामिनी १३. जलदा १४. शिवा १५. अमृता १६. अर्जिका तथा २ अन्य कन्यायें थीं—कुल १८ कन्यायें थीं।

अग्रसेन के सबसे बड़े पुत्र का नाम विभु था। कलिकाल १०८ में महालक्ष्मी की आज्ञानुसार महाराज अग्रसेन अपने पुत्र को राजगद्दी देकर वन चले गये।

विभु की आयु १०० वर्ष की थी। विभु के समय में आग्रेय राज्य की यह परम्परा थी कि यदि कोई आग्रेय (अग्रवाल) गरीब हो जाता था तो राजा विभु की ओर से एक लाख मुद्रा दी जाती थीं और उसे ऊँचा उठा देते थे।

विभु के पश्चात् उनका पुत्र नेमिरथ राजगद्दी पर बैठा। इसके पश्चात् विमल, शुकदेव, धनंजय और श्रीनाथ के नाम मिलते हैं जो अग्रोहा की गद्दी पर क्रमशः आते रहे किन्तु इनके समय की कोई उल्लेखनीय घटना नहीं मिलती।

श्रीनाथ का लड़का दिवाकर हुआ और उसने जैन धर्म स्वीकार कर लिया। तब से अग्रवालों में जैन धर्म का प्रचलन हुआ। दिवाकर के शासनकाल में जैन मुनि लोहाचार्य की अग्रोहा यात्रा और उनके प्रभाव से जैन धर्म की दीक्षा का विवरण जैन ग्रन्थों में भी उपलब्ध है। दिवाकर का अनुसरण कर अग्रोहा के बहुत से निवासी भी जैन धर्म में दीक्षित हो गये।

parliament
Remove Watermark Now

दिवाकर के पश्चात् सुदर्शन राजा बना जिसने वृद्धावस्था में राजकाज छोड़ कर सन्यास धारण किया और काशी वास में चले गये।

सुदर्शन के पश्चात् महादेव, यमाधार, मलय, वसु, नन्द (वसु का भाई), चन्द्रशेखर और अग्रचन्द ने क्रमशः राज्य किया।

तपस्वी जसराज

महाराजा के परिवार में उनकी बहिन श्रीमती कुमुद कुमारी तथा उनके भानजे श्री जसराज जी का विशिष्ट स्थान है। श्री जसराज जी महान् तपस्वी थे और अपने मामा महाराजा अग्रसेन को बड़ी श्रद्धा से देखते थे।

महाराजा अग्रसेन जी के १८ पुत्रों का विवाह नागराजा वासुकी (विशानन) की १८ पुत्रियों से हुआ और नागराजा दशानन ने भी अपनी १८ पुत्रियों का विवाह महाराजा अग्रसेन के अन्य १८ पुत्रों के साथ कर दिया। इस प्रकार नागराजा विशानन और दशानन महाराजा अग्रसेन के समधी बने।

किन्तु नागराज की इन पुत्रियों के साथ महाराजा अग्रसेन के पुत्रों का विवाह सुखद सिद्ध नहीं हो रहा था क्योंकि नाग कन्यायें विशिष्ट प्रकार का चोला पहनती थीं जिसके कारण वंश वृद्धि सम्भव नहीं थी। अतः महाराजा अग्रसेन के परिवार में एक विशेष प्रकार की चिन्ता व्याप्त रहती थी। महाराजा अग्रसेन की इस चिन्ता का समाचार जब उनके भानजे महान् तपस्वी जसराज जी के पास पहुँचा तो वे अपने मामा जी का शोक मिटाने का उपाय सोचने लगे।

एक दिन महान् तपस्वी जसराज जी विशानन और दशानन के राज्य में जा पहुँचे और एक वृक्ष के नीचे कमण्डल रख कर बैठ गये। कुछ ही समय में उनके तप के प्रभाव से नागराजा विशानन और दशानन के राज्य में पत्थर-वर्षा आरम्भ हो गई, जिससे घबराकर वे दोनों नागराजा तपस्वी जसराज जी के निकट पहुँचे और उनके क्रोध का कारण पूछा। तब तपस्वी जसराज जी ने उनसे कहा कि उन्होंने महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के साथ छल-कपट से अपनी पुत्रियों का विवाह कर दिया है और उन वधुओं के चोले वंश-वृद्धि में बाधक हैं, जब तक वे इस छल का निवारण न करेंगे पत्थर-वर्षा न रुकेगी।

इस प्रकार नागराज ने गोपनीय भेद बताया कि उनकी नाग पुत्रियों को वे चमत्कारी चोले बहुत प्रिय हैं जिन्हें वे अपने से अलग नहीं होने देना चाहेंगी। किन्तु वे नाग पंचमी के दिन स्नान के लिए जाती हैं और उन चोलों को उतारकर रख देती हैं। यदि कोई उस समय उन चोलों को चुरा ले और उनको लेकर अग्नि में बैठ जाय तो उनके साथ ही ये चोले जल सकते हैं और महाराजा अग्रसेन की चिन्ता सदैव के लिए मिट सकती है अन्यथा नहीं।

तपस्वी जसराज जी इस विधि से परिचित होकर सन्तुष्ट हुए और पत्थर-वर्षा रोककर अग्रोहा लौट आये। कुछ दिन पश्चात् ही नाग पंचमी आ पहुँची। तपस्वी जसराज जी ने छिपकर नाग कन्याओं के उतारे हुए चोले उठा लिये और पहले से तैयार चिता में जा बैठे। किन्तु जैसे ही महाराजा अग्रसेन को तपस्वी जसराज जी के इस बलिदान का पता लगा, वे दौड़े हुए चिता स्थल पर जा पहुँचे और शोक-सागर में डूब गये। किन्तु अब क्या हो सकता था। महाराजा अग्रसेन ने तपस्वी जसराज जी के परिवार का सारा भार अपने ऊपर ले लिया और अपने पुत्रों को भी इस भार को निभाने का आदेश दिया।

तपस्वी जसराज का वह अपूर्व बलिदान हजारों वर्ष से आज तक अग्रवालों के जन-जन की वाणी द्वारा गाथा बनकर गूँजता चला आ रहा है।

अन्तिम जीवन

एक दिन महाराजा अग्रसेन पूजा कर रहे थे, उसी समय देवी महालक्ष्मी प्रकट हुईं और उन्होंने महाराजा अग्रसेन को आदेश दिया कि 'अब तुम बूढ़े हो गये हो। धर्मानुसार अब अपना राज्य अपने पुत्र को सौंप दो।' महाराजा अग्रसेन महालक्ष्मी के आदेशानुसार कलिकाल १०८ में अपने बड़े पुत्र विभु को राजगद्दी पर बैठा कर स्वयं अपनी पत्नी तथा भाई शूरसेन के साथ वन में चले गये और ब्रह्मसर नामक स्थान पर घोर तप किया।

राज्य-त्याग के समय महाराजा अग्रसेन की आयु (कलिकाल सं० १०८ में) १९३ वर्ष की थी। अन्त में ११ वर्ष तक तप करने के पश्चात् अग्रहण मास की एकादशी के दिन कलयुग सं० ११९ में महाराजा अग्रसेन ने ब्रह्मसर पर तप करते हुए प्राण त्याग किये। मृत्यु-समय महाराजा अग्रसेन की आयु २०४ वर्ष की थी।

pdfelement
Remove Watermark Now

५

अग्रवाल वैश्यों के नाग वंश से सम्बन्ध

१. अग्रवालों के नागों के साथ प्राचीन सम्बन्ध हैं। आज नाग का अर्थ सर्प लेकर अग्रवाल साँपों की पूजा करते हैं। नागपंचमी के दिन साँपों को दूध पिलाते हैं, और सर्प को मारना पाप समझने हैं। कहीं-कहीं अग्रवालों के घरों में मुख्य द्वार पर सर्पों के चिन्ह भी अंकित किये जाते हैं। अग्रवाल वैश्य नाग को मामा कहते हैं। किन्तु वास्तविकता यह है कि नाग वंश-वैश्यों का एक शक्तिशाली वंश था जिसकी प्राचीनता इतिहास प्रमाणित है और महाराजा अग्रसेन का विवाह इसी नाग-वंश में हुआ था, इसी कारण अग्रवाल नागों को मामा कहते हैं।

२. आस्तीक मुनि की माता नागराज वासुकि की बहिन थी। इन्होंने तक्षक नाग की रक्षा की थी। इसी कारण अग्रवाल आस्तीक मुनि की भी पूजा करते हैं।

३. उत्तरी भारत के प्रसिद्ध देवता गुगा पीर का भी नागों के साथ सम्बन्ध रहा है। कुछ लोगों की धारणा है कि गूगा पीर के उपासकों को सर्प-दंश का भय नहीं रहता। राजस्थान के अग्रवाल लोग गूगा पीर की पूजा करते हैं।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि अग्रवाल जाति के नागों से प्राचीन सम्बन्ध हैं और अब लोग नाग को सर्प समझ कर पूजने लग गये हैं। वास्तव में नाग वंश दक्षिण भारत का प्रसिद्ध एवं शक्तिशाली वैश्य वंश था जिसके साथ सम्बन्ध स्थापित करना गौरव की बात समझी जाती। इस वंश के साथ कोई टक्कर लेने का साहस नहीं करता था।

इसी नाग कुल में कोल्हपुर (अहिनगर) के नागराज कुमुद की पुत्री माधवी के साथ महाराजा अग्रसेन का विवाह हुआ था।

नाग वंश के साथ अग्रवालों के सम्बन्ध कुशाण शासन काल तक पाये जाते हैं। जब अग्रोहा कुशाण राजाओं के आधीन हो गया तो भारत में नागों की एक शाखा भारशिव वंश ने ही कुशाणों को हराकर भारतवर्ष से चले जाने पर विवश कर दिया और भारतवर्ष के अन्य राज्यों के साथ अग्रोहा भी कुशाणों की दासता से मुक्त हुआ।

ऐसी अवस्था में हम अपने बन्धुओं को नागों के सम्बन्ध में कुछ जानकारी देना आवश्यक समझते हैं।

नाग जाति बहुत प्राचीन है। हम निस्संकोच कह सकते हैं कि नाग जाति आर्यों के साथ-साथ दक्षिण पश्चिम दिशा में विद्यमान थी और उनके उस समय के आर्य लोगों से वैवाहिक सम्बन्ध थे।

नागवंश

महाभारत के उद्योग पर्व में नाग वंश का वर्णन इस प्रकार मिलता है।

महामुनि नारद ने इन्द्र के सखा तथा सारथि मातलि को उनकी कन्या के लिये वर बताते हुए उपरोक्त नागों का परिचय दिया है।

इयं भोगवती नाम पुरी वासुकिपालिता।
यदृशी देवराजस्य पुरीवर्यामरावती॥ (महाभारत १०३ । ९ से १७)

यह नागराज वासुकि द्वारा सुरक्षित उनकी "भोगवती" नामक पुरी है। देवराज इन्द्र की सर्वश्रेष्ठ नगरी अमरावती की तरह यह भी सुख समृद्धि से सम्पन्न है।

एष शेषः स्थितो नागो येनेयं धार्यते सदा।
तपसा लोक मुख्येन प्रभावसहिता मही॥

ये शेषनाग स्थिर स्वभाव के हैं जो अपने लोक प्रसिद्ध तपोबल से उत्पन्न प्रभाव एवं शक्ति के बल पर पृथ्वी को सदा अपने सिर पर धारण करते हैं।

इह नानाविधाकारा नानाविधविभूषणाः।
सुरसायाः सुता नागा निवसन्ति गतव्यथाः॥

सुरसा के पुत्र ये नागगण शोक सन्ताप से रहित होकर यहां निवास करते हैं। इनके रंग रूप और आभूषण अनेक प्रकार के हैं।

मणिस्वस्तिचक्रांकः कमण्डलुकलक्षणाः।
सहस्रसंख्या बलिनः सर्वे रौद्राः स्वभावतः॥

ये सभी नाग सहस्रों की संख्या में यहां रहते हैं। ये सब के सब अत्यन्त बलवान तथा स्वभाव से ही भयंकर। हैं इनमें से किन्हीं के शरीर में मणि, किन्हीं के शरीर में स्वस्तिक, किन्हीं के शरीर में चक्र और किन्हीं के शरीर में कमण्डलु के चिह्न हैं।

बहूनीह सहस्त्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च।
नागानामेकबंशानां यथाश्रेष्ठ तु मे श्रृणु॥

यहाँ एक-एक वंश के नागों की कई हजार कई लाख तथा कई अर्वुद् संख्या है। जेठे छोटे के क्रम से इनका संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है:—

वासुकिस्तक्षकश्चैव कर्कोटकधनञ्जयो।
कालियो नहुश्चैव कम्बलाश्वतरावुभौ॥

Remove Watermark Now

वाह्यकुण्डो मणिर्नागस्तथैवापूरणः खगः।
वामनश्चैलपत्रश्च कुकुरः कुकुणस्तथा ॥
आर्यको नन्दकश्चैव तथा कलशपोतकौ।
कैलासकः पिञ्जरको नागश्चैरावतस्तथा ॥
सुमनोमुखो दधिमुखः शंखो नन्दोपनन्दकौ।
आप्तः कोटरकश्चैव शिखी निष्ठूरिकस्तथा ॥
तित्तिरिर्हस्तिभद्रश्च कुमुदो माल्य पिण्डकः।
द्वौ पद्मौ पुण्डरीकश्च पुष्पो मुद्गरपर्णकः ॥
करवीरः पीठरकः संवृत्तो वृत्त एव च।
पिण्डारो विल्वपत्रश्च मूषिकादः शिरीषकः ॥
दिलीपः पंखशीर्षश्च ज्योतिष्कोऽथापराजितः।
कौरव्यो धृतराष्ट्रश्च कुहुरः कृशकस्तथा ॥
विरजा धारणश्चैव सुबाहुर्मुखरो जयः।
वधिरान्धौ विशुण्डिश्च विरसः सुरसस्तथा ॥
एते चान्ये च वहवः कश्यपस्यात्मजाः स्मृताः।
मातले पश्य सद्यत्र कश्चित् ते रोचते वर; ॥

वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, धनंजय, कालिय, नहुष, कंबल, अश्वतर, वाह्याकुण्ड, मणिनाग आपूरण, खग, वामन, एल पत्र, कुकुर, कुकुण, आर्यक, नन्दक, कलश, पोतक, कैलासक, पिन्जरक, ऐरावत, सुमनोमुख, दधिमुख, शंख, नन्द, उपनन्द, आप्त, कोटरक, शिखी निष्ठुरिक, तित्तिरि, हस्तिभद्र, कुमुक, माल्य पिण्डक, पद्म नामक दो नाग, पुण्डरीक, पुष्प, मुद्गर, पर्णक करवीर, पीठरक, संबृत्त, बृत, पिण्डरो, बिल्व पत्र, मूषिकाद, शिरीषक, दिलीप, शंखशीर्ष, ज्योतिष्क, अपराजित, कौरव्य, धृतराष्ट्र, कुहुर, कृशक, बिरजा, धारण, सुबाहु, मुखर, जय, वधिर, अन्ध, विशुण्डि, विरस, तथा सुरस ये और बहुत से दूसरे नाग कश्यप के वंशज हैं। मातुले यहाँ कोई वर तुम्हें पसन्द हो तो देखो।

मातलिस्त्वेकमव्यग्रः सतत सनिरीक्ष्य वै।
पप्रच्छ नारद तत्र प्रीतिमानिव चाभवत् ॥

तब मातलि स्थिर चित्त होकर एक नाग को निरंतर देखते हुए निरीक्षण करके प्रसन्न होकर नारद जी से इस प्रकार पूछा :—

स्थितो य एष पुरतः कौरव्यस्पार्यकस्यतु।
द्युतिमान् दर्शनीयश्च कस्यैष कुलनन्दनः ॥

हे देवर्ष नारद ! यह जो कौरव्य और आर्यक के आगे कान्तिमान् और दर्शनीय नाग कुमार खड़ा है किसके कुल को आनन्दित करने वाला है (किस कुल का है)।

कः पिता जननीचास्य् कतमस्यैष भोगिनः।
वशस्य कस्यैष महान् केतुभूत इवस्थितः ॥

इसके माता पिता कौन हैं, किस नाग का पौत्र है तथा महान ध्वज के समान किस वंश की शोभा बढ़ा रहा है।

प्राणिधानेन धैर्येण रूपेण वयसा च मे।
मनः प्रविष्टो देवर्षे गुणकेश्याः पतिर्वरः ॥

हे देवर्षि यह अपनी एकाग्रता, धैर्य, रूप तथा तरुण अवस्था के कारण मेरे मन में समा गया है। यह गुणकेशी (मेरी पुत्री) का श्रेष्ठ पति होने के योग्य है।

मातलिं प्रीतमनसं दृष्ट्वा सुमुखदर्शनात्।
निवेदयामास तदा माहात्म्यं जन्म कर्म च ॥

मातलि को सुमुख के दर्शन से प्रसन्नचित्त देखकर नारद जी ने उस समय उस नाग कुमार के जन्म, कर्म और महत्त्व का परिचय देना आरम्भ किया—

ऐरावतकुले जातः सुमुखो नाम नागराट्।
आर्यकस्य मतः पौत्रो दौहित्रो वामनस्य च ॥

मातले ऐरावत कुल में जन्मे इस नाग कुमार का नाम सुमुख है। यह आर्यक का पुत्र तथा वामन का दौहित्र है।

एतस्य हि पिता नागश्चिकुरो नाम मातले।
नचिराद् वैनतेयेन पञ्चत्वमुपादितः ॥

हे मातुल ! इसके पिता का नाम नागराज चिकुर है जिन्हें काल ने कुछ समय पूर्व ही अपना ग्रास बना लिया है अर्थात जिनकी हाल में ही मृत्यु हो चुकी है।

ततोऽब्रवीत् प्रीतमना मातलिर्नारदं वचः
एष मे रुचितस्तात जामाता भुजगोत्तमः।

तब मातिल ने प्रसन्नचित होकर नारद जी से कहा कि तात यह श्रेष्ठ नाग मुझे अपना जामाता बनाने के योग्य जचता है।

क्रियतायत्र यत्नो वै प्रीति मानस्म्यनेन वै।
अस्मै नागाय वै दातुं प्रियां दुहितरं मुने ॥

मैं इससे बहुत प्रसन्न हूं। आप इसी के लिए यत्न कीजिए। मुनिवर मैं इसी कुमार को अपनी प्यारी पुत्री को देना चाहता हूं। (उद्योग पर्व अध्याय १०३)

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि नाग महापराक्रमी, करोड़ों की संख्या में नागलोक में बसनेवाली शक्तिशाली मनुष्य जाति थी, सर्प जाति नहीं। यही नागलोग आगे चलकर देश के कौने-कौने में बस गए थे।

यह नाग वंश दक्षिण भारत के निवासी थे। आगे चलकर इनका विस्त
पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण तक हुआ जैसा कि स्थान-स्थान पर नाग वंश
चिह्नों से विदित होता है।

महाभारत उद्योग पर्व में एक नागराज का स्थान गोमती नदी के तट पर इ
प्रकार वर्णित है :—

pdfelement
Remove Watermark Now

अहमप्यत्र वत्स्यामि गोमत्याः पुलिने शुभे ।
कालं परिमिताहारो यथोक्तं परिपालयन् । १२ ।
(शान्ति पर्व सप्तपंचादशधिक त्रिशततयोध्यायः)

'मैं भी गोमती के सुन्दर तट पर परिमित आहार करके तुम्हारे बताये हुए समय की प्रतीक्षा करता हुआ निवास करूंगा।' धर्मारण्य ब्राह्मण ने नागराज पद्मनाभ की पत्नी को कहा ।

सर्वे संभूय सहिता हास्य नागस्य बान्धवाः ।
भ्रातरस्तनया भार्या ययुस्तं ब्राह्मणं प्रति । २३ ।

तब नागराज के भाई-बन्धु, स्त्री, पुत्र सब मिलकर उस ब्राह्मण के पास गये ।

इन प्रसंगों से नागों का गोमती के आस पास राज्य और आश्रम प्रमाणित हैं ।

नाग लोग बड़े प्रतापी, बलशाली और प्रतिष्ठित थे, इसका वर्णन भी महाभारत में इन शब्दों में मिलता है :—

सुरासुर गणानां च देवर्षीणां च भाविनि ।
ननु नागा महावीर्याः सौरसेयास्तरस्विनः ॥१३॥
(महाभारत, षष्ठयधिक त्रिशततमोध्यायः श्लोक ३)

सुरसा के वंशज नाग महापराक्रमी और अत्यन्त बलशाली होते हैं। वे देवताओं असुरों और देवर्षियों के लिए भी वन्दनीय हैं ।

आर्यों के साथ नागों के संबंध

ऐसे शक्तिशाली वंश से आर्यों के सम्बन्ध रहे, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं— कुछ किंवदन्तियों के रूप में तथा कुछ ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर ।

प्राचीन साहित्य में समुद्र मंथन और १४ रत्नों की प्राप्ति की घटना बहुत प्रसिद्ध है। यदि हम वर्णन का विचारपूर्वक अध्ययन करें तो दो बातें बड़ी स्पष्ट जान पड़ती हैं :—

देवता (आर्य), दैत्य और नागों के सहयोग से समुद्र मंथन द्वारा विश्व की जानकारी हेतु एक विशाल आयोजन किया गया। नागों ने साधन जुटाए तथा देव और दैत्यों ने समुद्र यात्राएँ करके १४ रत्नों की प्राप्ति की। इस कार्य में नागराज शेषनाग ने नाव बनाने के लिए मन्दराचल पर्वत से लकड़ी एकत्र की और बासुकि ने स्तूप के लिए रस्सी जुटाई। इससे आर्य, दैत्य और नागों के पारस्परिक सहयोग की झाँकी मिलती है ।

नागों के मधुर सम्बन्धों की कल्पना इस बात से भी की जा सकती है कि जन्मेजय के अतिरिक्त किसी आर्य राजा ने नागों के साथ युद्ध नहीं किया। तक्षक नाग इन्द्र का मित्र था और वीर अर्जुन इन्द्र का पुत्र था अतः नागों का पाँडवों से घनिष्ठ सम्बन्ध होना स्वाभाविक है। जन्मेजय के साथ नाग युद्ध का कारण तो यही प्रतीत होता है कि किसी कारणवश नागों ने महाभारत युद्ध के बाद पांडवों के राज्य पर आक्रमण

करके परीक्षित को मार डाला और जन्मेजय ने अपने पिता के वध का बदला नागों से लिया। अन्त में आस्तीक मुनि ने बीच में पड़कर तक्षक की रक्षा की तथा नाग-युद्ध समाप्त कराया ।

आर्यों के साथ नागों के वैवाहिक सम्बन्ध भी रहे हैं, इसका दिग्दर्शन प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है :—

१. मेघनाथ की स्त्री सुलोचना नाग कन्या थी ।

२. महाराजा रामचन्द्र के पुत्र कुश ने नाग कन्या से विवाह किया था ।

३. महाभारत काल में दुर्योधन ने भीम को विष देकर नदी में बहा दिया। नागों ने भीम को निकाल कर बचाया क्योंकि भीम नागराज का दौहित्र का दौहित्र था ।

४. सूरसेन का जन्म नागराज कन्या से हुआ था ।

५. कुन्ती सूरसेन की पुत्री थी ।

६. भगवान् कृष्ण की नानी नागकन्या थी ।

७. नागराज बासुकि की बहिन का विवाह जरत्कारु ऋषि से हुआ और उन्हीं के पुत्र आस्तीक ऋषि थे, जिन्होंने जन्मेजय तथा नागों के पारस्परिक युद्ध बन्द कराके तक्षक नाग की रक्षा की थी ।

डा० श्री काशीप्रसाद जायसवाल ने नागों के इतिहास की खोज करके ऐसे प्रमाण प्रस्तुत किये हैं जिनसे विदित होता है कि नागों का स्थान विदिशा में था और ई० पू० ११० से ई० पू० ३१ तक में कुछ नाग राजाओं की जानकारी भी दी है :—

नागराज शेष	ई० पू०	११०-९० तक
,, भोगिन	,,	९०-८० ,,
,, रामचन्द्र	,,	८०-५० ,,
,, धर्मवर्मन	,,	५०-४० ,,
,, वंगर	,,	४०-३१ ,,

इससे आगे कुछ समय के लिए यह शृंखला टूट जाती है और फिर कुछ अन्य नाग राजाओं का वर्णन मिलता है :—

भूत नन्दी	ई० पू०	२०-१० तक
शिशु नन्दी	,,	१० से २५ ई० तक
यश नन्दी	ई०	२५-३० ,,

फिर ३० ई० से ७८ ई० तक के कुछ नाग राजाओं के नाम मिलते हैं :—
पुरुषदत्त, उत्तमदत्त, भवदत्त, शिवनन्दी ।

कुशाण और नाग

शिवनन्दी के शासनकाल के अन्त में कुशाण शासकों ने अपना अधिकार जमा लिया और कुशाण वंश का भारत भूमि पर सन् ८० से १७५ ई० तक पूर्ण रूप से

pdfelement
Remove Watermark Now

अधिकार रहा। इस बीच नाग लोग विदिशा से पीछे हटकर मध्यप्रदेश के जबलपुर के आस-पास पहाड़ों और जंगलों में ५० वर्ष तक गुप्त रूप से राज्य करते रहे।

नव नागवंश और मथुरा

नागों की शक्ति क्षीण हो जाने पर इसी वंश की नव विकसित शक्ति नव नाग नाम से प्रसिद्ध हुई। नव नागों का काल १४० ई० से आरम्भ होता है। यही वंश आगे चलकर भारशिव नाम से प्रसिद्ध हुआ। इन्होंने मथुरा में एक बार पुनः वैश्य शासन की स्थापना की थी। जैसा कि निम्नांकित वर्णन से स्पष्ट है :—

कुशाण राज्य के अन्तिम काल में नागों की शक्ति पुनः प्रकट होती है और ये मध्य प्रदेश से निकलकर बघेलखण्ड होते हुए गंगा के तट पर वाराणसी तक पहुँचे और काशी में उन्होंने अश्वमेध यज्ञ करके राज्याभिषेक कराया। अब नागों ने कान्तिपुर को अपना केन्द्र बनाकर पश्चिम की ओर बढ़ना आरम्भ किया। तब इस वंश का नाम नव नाग वंश प्रसिद्ध हुआ और इस वंश के प्रथम राजा नवनाग का राज्य उत्तरप्रदेश के पश्चिम में १४० ई० से १७० ई० तक रहा। इसी वंश में वीरसेन नागराजा हुआ जिसने कुशाणों को हराकर मथुरा में हिन्दू राज्य की स्थापना की। इसने २१० ई० तक राज्य किया और कुशाणों को पीछे धकेल कर पंजाब से बाहर निकाल दिया।

वीरसेन के पश्चात् २१० से ३१५ ई० तक के नाग राजाओं के नाम भी उपलब्ध हुए हैं :—

१. हय नाग	२१० से २४५ ई० तक
२. त्रय नाग	२४५ से २५० ,,
३. बर्हिन नाग	२५० से २६० ,,
४. चरज नाग	२६० से २९० ,,
५. मन नाग	२९० से ३१५ ,,

भारशिव भी नाग थे

इसके पश्चात् नव नाग वंश की शक्ति क्षीण हो गई और इनके स्थान पर भारशिवों ने भारतीय इतिहास में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया था। भारशिवों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना गौरव की बात समझी जाती थी। भारशिवों की यह नीति थी कि वे छोटे-छोटे राज्यों से सम्बन्ध स्थापित करके अपनी पुत्रियों का विवाह उसी कुल में कर देते थे अतः वह कुल भारशिवों के साथ प्रगाढ़ सम्बन्धों में बन्ध जाता था, इसके फलस्वरूप भारशिवों को आंतरिक विद्रोह की चिन्ता से मुक्ति मिल जाती थी। यही कारण है कि भारशिवों ने एक ऐसी विशाल, अदम्य शक्ति को भारत से निकाल बाहर कर दिया जिसकी सेनापूर्ति का केन्द्र स्थल भारत से बाहर था और जहाँ से सैन्य शक्ति का हर समय जमाव और दबाव बना रहता था।

अग्रोहा के उद्धारक

जब अग्रोहा कुशाण वंश के अधीन हो गया तो अन्त में भारशिवों के सहयोग से ही अग्रोहा का उद्धार हुआ और भारशिवों ने अग्रोहा के राज वंश के साथ भी विवाह सम्बन्ध स्थापित किये। इन्हीं सम्बन्धों के कारण अग्रवाल वैश्य नागों को मामा कहते हैं।

महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के नागवंश से विवाह

जैसे कि हम इससे पूर्व लिख चुके हैं राजा परीक्षित के काल में नागों ने उत्तर भारत पर आक्रमण कर दिया और युद्ध में राजा परीक्षित मारे गये। इस पराजय और अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए जन्मेजय ने न केवल नागों के बढ़ते आक्रमण को रोका ही नागों का सामूहिक वध भी किया। इसका परिणाम यह हुआ कि नाग और क्षत्रिय राजाओं के सम्बन्ध बिगड़ गये। यही नहीं, बचे हुए नागों को उत्तरी भारत से भागना पड़ा। अतः महाराजा अग्रसेन ने नागों की शक्ति को पुनः जीवित करने और अपने वंश के नागवंश से सम्बन्धों की कड़ी को बढ़ाने के लिए अपने पुत्रों का विवाह विशानन तथा दशानन नागों की कन्याओं से किया। इस प्रकार देश में दो महान् वैश्य वंशों के संगठन के कार्य महाराजा अग्रसेन की संगठन भावना का द्योतक है।

नव नागवंश का अग्रोहा से सम्बन्ध

कुशाण वंश का भारत भूमि पर सन् ८० से १७५ ई० तक पूर्ण रूप से अधिकार रहा। १०० वर्ष के शासन काल में कुशाणों ने भारत भूमि को पूरी तरह से अपनी दासता में जकड़ लिया। इनका विस्तार पूर्व में बंगाल की खाड़ी तक, उत्तर में यमुना तक, दक्षिण में नर्वदा नदी तक, पश्चिम में काश्मीर, पंजाब, सिंध, ब्लूचिस्तान, गुजरात, काठियावाड़ तक हो चुका था; अतः ऐसे सशक्त कुशाणों ने अग्रोहा पर भी अधिकार कर लिया किन्तु कुशाणों के राजा रिसालू के साथ अच्छे सम्बन्ध थे। अतः अग्रोहा में कुशाण वंश की बहुत-सी मुद्रायें उपलब्ध हुई थीं। फिर भी अन्त में भारशिवों ने ही अग्रोहा को कुशाण शासन से मुक्त कराया।

डा० श्री काशी प्रसाद जायसवाल ने भी "मंजुश्री मूल कल्प" नामक ग्रन्थ के श्लोक ७४-५२ द्वारा प्रमाणिक रूप से नाग वंश (नव नाग तथा भारशिवों सहित) को वैश्य वंश सिद्ध किया है।

pdfelement
Remove Watermark Now

६

अग्रवाल वैश्यों के १८ गोत्र

अग्रवालों में १८ गोत्रों का बड़ा महत्त्व है। प्रत्येक संस्कार के समय तथा वैवाहिक अवसरों पर गोत्रों का उच्चारण आवश्यक माना जाता है। अब तक प्रचलित प्रणाली के अनुसार समान गोत्रीय दो परिवारों में विवाह सम्बन्ध नहीं हो सकते।

किन्तु अग्रवालों में गोत्रों का इतना महत्व होते हुए भी जितना अज्ञान पाया जाता है और गोत्रों के नामों को जितना बिगाड़ा गया है उतना अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। अग्रवालों के गोत्रों पर विचार करने से पूर्व हम गोत्रों के आदि स्रोत पर पहले विचार करते हैं :—

मूलगोत्राणि चत्वारि समुत्पन्नानि भारत
अंगिरा कश्यश्चैव वशिष्ठो भृगुरेव च ॥
(महाभारत, शान्तिपर्व, अध्याय २९८)

इसमें गोत्रों के प्रवर्तक केवल चार ऋषियों को माना गया है और इन्हीं के नाम से मूल रूप में चार गोत्र माने गये हैं :—

नाम ऋषि	नाम गोत्र (ब्राह्मणों के)
१. अंगिरा	अंगिरस
२. कश्यप	काश्यप
३. वशिष्ठ	वाशिष्ठ
४. भृगु	भृगु (भार्गव)

ये चारों ऋषि आर्य जाति की सूर्यवंशी शाखा के ऋषि थे और मनु के उस प्रथम दल के सदस्य थे जिन्होंने देव-दानव युद्ध से तंग आकर भारत भूमि को बसाया और इसे आर्यावर्त नाम दिया।

जब आर्यों की संख्या बढ़ी और मनु की दूसरी शाखा चन्द्रवंशी दल ने आर्यावर्त में प्रवेश किया तो उस समय ऋषि संख्या वृद्धि के साथ-साथ गोत्रों की संख्या भी बढ़ी

और बोधायन ने निम्नांकित आठ ऋषियों को आठ गोत्रों का कारण माना है :—

जमदग्नि भारद्वाजो विश्वमित्रोऽत्रि गौतमौ।
वशिष्ठकश्यपाऽगस्त्या मुनयो गोत्रकारिणा ॥
एतेषां यान्यपत्यानि गोत्राणि मन्यते
सप्तानां सप्तर्षीणां अगस्त्यष्ठमानां यदपत्यातद्
गोत्रमित्या चक्षते ॥ (बोधायन गृह सूत्र)

इस प्रकार प्रारम्भ में प्रचलित ४ मूल गोत्रों तथा ऋषियों एवं बोधायन द्वारा उल्लिखित ऋषियों के नामों में जो अन्तर है वह इस प्रकार है :—

१. चौथे मूल गोत्र में उल्लिखित भृगु ऋषि के स्थान पर उनके वंशज जमदग्नि का नाम लिया गया है।

२. अंगिरस के स्थान पर उनके दो पौत्र (१) गौतम तथा (२) भारद्वाज के नाम लिये गये हैं।

३. अत्रि, विश्वमित्र और अगस्त्य तीन नये नाम बढ़ाये गये हैं।

ब्राह्मणों के प्रचलित गोत्रों में, प्राचीन ४ मूल गोत्र और बोधायन द्वारा उल्लिखित ८ गोत्रों में बहुत कम अन्तर आया है और गोत्रों में अशुद्ध रूप तो आने ही नहीं पाये हैं। ब्राह्मणों में पंच गौड़ का भेदभाव उत्पन्न होने पर गौड़ ब्राह्मणों के पाँच गोत्र यथापूर्व हैं :

१. भारद्वाज २. कौशिक ३. वशिष्ठ ४. कश्यप ५. गौतम

आज दिन ब्राह्मणों के जमदग्नि गोत्र को छोड़ कर निम्नांकित अल्लें आठ गोत्रों से भिन्न हैं यथा :—

१. तिवारी २. उपाध्याय ३. पचौरी ४. तेनगुरिया ५. शुक्ल ६. पाण्डेय ७. मिश्र ८. दीक्षित ९. मुदगल १०. कात्यायन ११. वात्स्यायन १२. जैमिनी १३. पतंजलि १४. याज्ञवल्क्य आदि।

इन अल्लों का ऋषियों के नामों से सम्बन्ध नहीं फिर भी इन अल्लों के नाम भद्दे और निरर्थक नहीं हैं।

किन्तु जब गोत्रों की संख्या अनगिनत बढ़ी तो धर्मशास्त्र के लेखकों ने अनुभव किया कि—

गोत्राणां तु सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च।
ऊन पञ्चाशदेवैषां प्रवरा ऋषि दर्शनात् ॥

जब धर्मशास्त्र के लेखकों के विचार से गोत्रों की संख्या हजारों और लाखों तक पहुँच गई तो धार्मिक कृत्यों में गोत्र को आधार न मान कर प्रवर को प्रमुखता दी गई, क्योंकि प्रवर संख्या ५० से अधिक नहीं है और वैश्यों की प्रवर संख्या तो केवल ३ है। अतः उन्हीं हजारों गोत्रों में से अग्रवालों की गोत्र-सूची भी बहुत विस्तृत रूप में है।

pdfelement
Remove Watermark Now

भिन्न-भिन्न स्थानों पर प्रचलित गोत्र

१. डा० श्री परमेश्वरीलाल कृत अग्रवाल जाति का विकास के आधार पर

१. गर्ग, गरग, गर ।
२. गोयल, गोइल, गोभिल, गोहिल ।
३. गौतम, गौन, गौण, गोयन, गोइन ।
४. गावाल, गालव, ग्वाल, गरवाल, गवन ।
५. काँसिल, कासिल, कांसल, कंसल ।
६. कंछल, काँछल, कंछल, कुच्छल, कचहल, कच्छल, कश्यप ।
७. कौसिल, कौशल, कौशिक ।
८. बिंदल, बुगल ।
९. सिंहल, सिंगल, सींगल, सैंगल, सहगल, सिंघल ।
१०. बांशल, बांशल, बांसिल, बंशल, वांसिल, वासल, वात्सल, वात्सल्य ।
११. मित्तल, मीतल, मैत्रेय ।
१२. जिंदल, जीतल, जींदल, जैमिनी ।
१३. मंगल, मण्डल, मिंदल, माँगल ।
१४. मधुगल, मुग्दल, मुधकल, मुधकल ।
१५. मैथल ।
१६. माण्डव्य ।
१७. भदल, भद्दल, भन्दल भोगिल ।
१८. तंगल, तांगल, तिंगल, तुंगल, तुन्दल, तुन्दिल, दिंगल, दींगल, टिंगल, टींगण, ढिंगण ।
१९. तित्तिल, तित्तल ।
२०. तायल, ताइल, तैत्तरेय, तान्डेय ।
२१. ऐरण, ऐरन, एरण, एरन, येरन, औरन ।
२२. टेरन, टेलण, ढरन, ढालन, टेरण, ढेलन, ढेलण, तैर, तैरन, धैरन, धरैन, धान्याश, टेहलन ।
२३. नागल, नागिल, नागेन्द्र नितुन्दल ।
२४. इन्दल, एडिल
२५. रंगिल
२६. महवार ।
२७. मोहन ।
२८. जावार ।

२. डा० सत्यकेतु विद्यालंकार कृत 'अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास' में गोत्र प्रकरण के पृष्ठ १२७ पर श्रीयुत क्रुक की सूची में १८ गोत्र

गर्ग	गोभिल	गौतम
बांसल	कौशिक	सैंगल
मुद्गल	जैमिनी	तैत्तरीय
औरण	धान्याश	ढेलन
गौण	ताण्डेय	मैत्रेय
कश्यप	माण्डव्य	नागेन्द्र

३. श्री अग्रवाल सभा, इटावा की सूची में १८ गोत्र

१. गर्ग	२. गोयल	३. कछल (कश्यप)
४. मंगल	५. बिंदल	६. ढालन
७. सिंघल	८. जिंदल	९. मीतल
१०. तुंगल	११. कंसल	१२. तायल
१३. बंसल	१४. नागल	१५. मधुकल (मकुकल)
१६. इन्दल	१७. एरन	१८. गौतम (गोइन)

४. 'अग्रवाही' इन्दौर नवम्बर, १९६६, वर्ष ५ के अंक १ में प्रकाशित गोत्र सूची

१. गर्ग	२. गौभल	३. गरवाल या गावाल
४. वात्सिल (बंसल)	५. सिंहल (सिंघल)	६. कांसिल
७. मंगल	८. भंदल	९. तिंगल
१०. ऐगे	११. ढिंगल	१२. तित्तल
१३. मित्तल	१४. तायल	१५. गोयल
१६. धैरण	१७. विंदल	१८. गौतम

५. महालक्ष्मी व्रत कथा में १८ गोत्र

(अग्रवैश्य वंशानुकीर्तिनम् में दिये गये १८ गोत्र)

गर्ग	गोइल	गावाल
वात्सिल	कांसिल	सिंहल
मंगल	भंदल	तिंगल
एरण	धैरण	ढिंगल
तित्तल	मित्तल	तायल
गोभिल	तुन्दल	गवन

pdfelement
Remove Watermark Now

यदि हम विदेशी विद्वानों की सूचियों को एक तरफ कर दें और अग्रवैश्य वंशानुकीर्तिनम् की सूची को ही लें, जिसका समर्थन श्री पंडित सत्यकेतु विद्यालंकार, डी० लिट० ने किया है, तो इस सूची में अग्रवालों में प्रचलित गोत्रों से भिन्नता पाई जाती है। श्री पं० सत्यकेतु जी की सूची में 'जिंदल' तथा कुच्छल (कश्यप) गोत्र नहीं हैं जो अग्रवालों के प्रचलित गोत्रों में हैं। ऐसी अवस्था में हमारी राय यह है कि 'अग्रवाल उत्पत्ति' के लेखक अजमेर निवासी श्री रामचन्द्र की सूची में जो जीतल, कुच्छल (कश्यप) और गौतम गोत्र भी दिये गये हैं, वे ही प्रचचित जिंदल, कुच्छल (कश्यप) और गौतम गोत्र हैं। अतः अग्रवालों में सर्वाधिक प्रचलित १८ गोत्रों की सूची हम यहाँ दे रहे हैं। यहाँ उनके शुद्ध रूपों के प्रस्तावित सुझाव भी दिये जा रहे हैं :—

प्रचलित १८ गोत्र और उनके प्रस्तावित शुद्ध रूप

प्रचलित गोत्र	प्रस्तावित शुद्ध रूप	प्रचलित गोत्र	प्रस्तावित शुद्ध रूप
१. गर्ग	गर्ग	१०. ऐरण	और्व, उरु
२. गोयल	गोभिल	११. धारण	धौम्य
३. गौइन	गौतम	१२. ढिंगल मधुकुल	मुद्गल
४. बंसल	वात्सल्य	१३. विंदल	वशिष्ठ
५. कंसल	कौशिक	१४. मित्तल	मैत्रेय
६. सिंगल	शांडिल्य	१५. तायल	तैत्तिरेय
७. मंगल	मांडव्य (मंगल)	१६. भंदल	भारद्वाज
८. जिन्दल	जैमिनी	१७. कुच्छल	काश्यप
९. तिंगल	तांड्य	१८. नांगल	नगेन्द्र

अब समय आ गया है कि जिस प्रकार हमने बच्चों के नाम सार्थक एवं कर्णप्रिय रखने आरम्भ कर दिये हैं, उसी प्रकार हम अपने गोत्रों के नामों का भी शुद्धिकरण करके प्रचलित गोत्रों को ऋषियों के नामों के आधार पर ही रखें, ऐसा हमारा सुझाव है। इस बात की शंका न की जाये कि अमुक गोत्र तो ब्राह्मणों से मिलता है। वास्तव में तो ब्राह्मणों, वैश्यों और क्षत्रियों के गोत्र मुनियों के नामों से ही लिए गए हैं और ऋषियों के द्वारा ही उनकी शक्ति जहाँ-जहाँ गई, इन वर्णों को गोत्र दिए गये थे।

गर्गस्य गावौ यत्र त्रायन्ति ते गार्ग्या

एक प्रचलित परिपाटी के अनुसार ब्राह्मणों के गोत्र ऋषियों के नाम से लिए जाते हैं और ब्राह्मणेतर जातियाँ अपने गोत्र पुरोहितों के नाम से लेती हैं, ऐसा धर्म-सूत्रों का वचन है। परन्तु गोत्र ग्रहण करने की इस प्रणाली में आगे अन्तर पड़ गया है। हम देखते हैं कि ब्राह्मणेतर वर्गों में ऐसे बहुत से गोत्र हैं जो उनके पुरोहितों से नहीं लिये गये अपितु उनके वंश में उत्पन्न हुए किसी विशिष्ट व्यक्ति या स्थान के नाम से प्रचलित हुए हैं।

यह बात अग्रवालों के १८ गोत्रों के सम्बन्ध में भी प्रचलित है। अग्रवालों में

प्रचलित तिंगल, ऐरण, धैरण, ढिंगल, तित्तल, जिंदल, तायल, गवन ऐसे गोत्र हैं जिनका अग्रवालों के गौड पुरोहितों के गोत्रों से कोई सम्बन्ध नहीं हैं। अतः यह मानना पड़ेगा कि अग्रवालों के १८ गोत्र अग्रगण राज्य के १८ कुटुम्बों के मुनियों के नाम से प्रचलित हैं जिन्होंने १८ यज्ञ कराये थे।

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं भारत में जनसंख्या और परिवार संख्या वृद्धि के साथ-साथ गोत्रों की भी संख्या बढ़ती गई। इसका कारण हम ऊपर बता चुके हैं कि जिस कुल में कोई विशिष्ट व्यक्ति उत्पन्न हुआ उस कुल का एक नया गोत्र उस विशिष्ट व्यक्ति के नाम से प्रचलित हो गया। वैसे कुल के विशिष्ट व्यक्ति के नाम से प्रचलित गोत्र, गोत्र नहीं हैं अपितु अल्ल, खाता, बाँक, घराने ही समझने चाहिए। गोत्र संख्या तो १८ ही है जिनकी विवेचना ऊपर हो चुकी है।

प्रवर

गोत्रों की बढ़ती हुई संख्या को दृष्टि में रख कर ही धार्मिक विधि-विधानों में गोत्र को प्रमुखता न देकर प्रवर को प्रमुखता दी गई है।

प्रवर की परिभाषा में बताया गया है कि किसी वंश का पूर्वज ऐसा ऋषि हुआ हो जिसने वेद-मन्त्रों की रचना की हो और वेद-मन्त्रों द्वारा अग्नि की स्तुति की हो, तो उस ऋषि को उस वंश का 'प्रवर' कहा जाता है। वैश्य कुल में तीन ऐसे ऋषि हुए हैं जिन्हें वैश्य 'प्रवर' माना जाता है :—

१. भलन्द　　वात्सप्रि　　३. मांकिल।

एक समय के पश्चात् वेद-मन्त्रों की रचना समाप्त हो गई अतः प्रवर संख्या भी ५० से ऊपर नहीं पहुँची; किन्तु गोत्रों की संख्या गोत्रकर्ता विशिष्ट व्यक्तियों के कारण बढ़ती गई अतः उनकी संख्या सीमित नहीं है। यद्यपि ये बढ़े हुए गोत्र नहीं हैं तथापि गोत्रों के अंग बन गए हैं।

गोत्रों का परिपालन आवश्यक

गोत्रों का परिपालन ही तो अग्रवाल जाति की एक बड़ी विशेषता है। विवाह अवसर पर गोत्र उच्चारण द्वारा पिता पुत्र को गोत्र सौंपता चला आया है। अतः यह कड़ी आज से (सन् १९८२ में) ५१२६ वर्ष से सुरक्षित चली आ रही है। मैं तो यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि जो वैश्य अपने गोत्र भूल गये हैं या अशुद्ध गोत्र को ग्रहण किये हुए हैं, वे पुनः यज्ञ कराके गोत्र ग्रहण कर लें और आगे सगोत्र विवाह से बचें।

याज्ञवलक्य स्मृति वैवाहिक प्रकरण में लिखा है।

अरोगिणी भ्रातृमती असमानार्ष गोत्रजाम्।
पञ्चमात्सप्तमाद्वर्ज्जा मातृतः पितृतस्तथा ॥५॥

नीरोग, भ्राता वाली, असमान ऋषि गोत्र की और माता की पाँच तथा पिता की सात पीढ़ी दूर की कन्या से विवाह करना चाहिए।

(याज्ञवलक्य स्मृति श्लोक १२)

pdfelement
Remove Watermark Now

यहां समान ऋषि गोत्र बचाने का स्पष्ट आदेश है। यहीं तक नहीं अपने से भिन्न गोत्र में विवाह करने की अवस्था में भी यह देखना आवश्यक है कि अपनी माता की पाँच पीढ़ी तथा पिता की सात पीढ़ी की कन्या से भी विवाह न करें। सुधार के नाम पर गोत्रों का परित्याग शोभनीय या लाभप्रद नहीं है। फिर गोत्रों के पालन में कोई कठिनाई नहीं होती क्योंकि आज तो अग्रवालों की संख्या १ करोड़ से भी अधिक है जब कि आज से लगभग ५१२६ वर्ष पूर्व अग्रोहा के १८ गण प्रतिनिधियों को महाराजा अग्रसेन ने उनके कुटुम्बों के लिए १८ गोत्र दिलाए थे, उस समय अग्रोहा की जनसंख्या एक लाख वैश्य घरों की थी। अतः बढ़ती संख्या में तो गोत्र बचाकर विवाह की पुरानी परिपाटी की रक्षा करना और भी सरल है और अच्छी बात है।

१८ गोत्रों के सम्बन्ध में एक और भ्रम

आज दिन अग्रवालों ने जहाँ गोत्रों के अधिकांश अशुद्ध रूप ग्रहण किए हुए हैं, इसके साथ एक भ्रम यह भी फैला हुआ है कि महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्र थे और उनके गोत्र ही अग्रवालों के १८ गोत्र हैं। जो तनिक भी बुद्धि रखता है वह इसे मतिभ्रम ही कहेगा। यदि महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्रों के १८ गोत्र होते तो सगोत्र विवाह न करते हुए भी एक भाई दूसरे भाई की कन्या से विवाह के दोष से कैसे मुक्त हो सकता है? साथ ही यदि एक भाई की कन्या का दूसरे भाई के पुत्र से (दोनों के गोत्र भिन्न होने की अवस्था में) विवाह हो सकता है, तो फिर गोत्रों की आवश्यकता ही क्या है? अतः विवेकशील लोगों का यह दृढ़ मत है कि अग्रवालों में प्रचलित १८ गोत्र अग्रोहा के १८ वैश्य कुलों के १८ प्रतिनिधियों के परिवार-प्रमुखों के गोत्र हैं और प्रत्येक गोत्र एक कुटुम्ब का बोधक है।

इस सम्बन्ध में कुछ लोगों को मेरी इस बात का समाधान इस रूप में करते पाया गया है कि सृष्टि के आरम्भ में भी तो सभी भाई-बहिन थे। किन्तु यह समाधान-कर्ता यह भूल जाते हैं कि सृष्टि के प्रारंभ में तो जो मानव सृष्टि हुई थी वह पृथ्वी के गर्भ से अमैथुनिक सृष्टि थी। यथा—

अजेष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधः सौभगाय।
युवा पिता स्वपा रुद्र सुदुधा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः॥

(ऋग्वेद मंडल ५, सूत्र ६०, मंत्र ५)

सृष्टि के आरम्भ में समान आयु के युवा स्त्री-पुरुष पृथ्वी के गर्भ से अमैथुनिक ढंग से उत्पन्न हुए।

अतः उस समय उत्पन्न स्त्री-पुरुषों में एक माता-पिता से उत्पन्न सन्तान के समान भाई-बहिन का सम्बन्ध न था, यह सम्बन्ध तो मैथुनिक सृष्टि के साथ जुड़ा। अतः इस समाधान के आधार पर महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्रों के १८ गोत्र मानना तर्कसंगत नहीं है। अतः यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि महाराजा अग्रसेन का निज गोत्र गर्ग था और यही एक गर्ग गोत्र महाराजा अग्रसेन के सभी पुत्रों का था। शेष १७ गोत्र अग्रोहा के १७ वैश्य गण प्रतिनिधियों के थे।

अग्रवालों के बंक, अटक और उपनाम

अजितसरिया, अडूकिया, अंगूठीवाले, अमरसरिया, आड़ा, आसलसरिया, आजनिया, आदमपुरवाले, आमेरिया, आर्य, आलमाल, आलमपुरिया, ऊटवलिया, उलाजपुरिया, इंद्रानीवाले, इसरका, औलवाड़ीवाले, औलख, औरय्यावाले।

ककरानिया, ककरैचा, ककरौलीवाले, कचहरीवाले, कटारूवाला, कनोई, कन्दोई, कटारीवाला, कंठीमालावाले, कमरीवाले, कमलिया, करनावट, करूड़िया, कयाल, कलानेरिया, कलबलिया, कलवाडावाले, कलंगी, कसूमावाले, कसेडिया, कसेरा, कहनानी, कहौरा, काइया, काया, कांकरिया, काकोलिया, कागलावाले, कागलीवाला, काजरिया, काजड़िया, कानसरिया, कानूगो, कानूनगो, कानोगिया, कानोडिया, कांबटिया, कारीवाले, कालेड़ावाले, कागदानावाले, कामठीवाले, काबरिया, कारीवाला, काला, कालमोद, कालिए, कालूडिया, कासूका, किठानिया, किरतुका, किश्तवाला, किल्ला, किसनपुरिया, कुलताजपुरिया,कुचामणिया, केजड़ीवाल, कुसुंबीवाले, कैमरीवाल, केमलावाले, कौड़िया, केसान, कुचामनिया, ककड़ीवाले, कोटपाड़ावाले, कोटावाले, कौड़ीवाले, कोठीवाल, कोतवालवाले, कौदिया, कोल्हावाले, कोहलीवाले, कौसली।

खगरिया, खजांची, खंडेलिया, खदरिया, खनानिया, खनुआवाले, खराईवाले, खाकोरिया, खाटूवाल, खापरा, खारखौलिया, खिरनीवाले, खिरोडिया, खींवसरिया, खुनखुनजीका, खुरकिया, खुरडीकर, खेडावाले, खेड़िया, खेड़कावाले, खेडलावाले, खेतावत, खेतान, खेदिया, खेमका, खेमाणी, खौरिया।

गाड़िया, गढ़वाल, गणेशगढिया, गण्डेरीवाल, गनेरीवाल, गंगानगरिया, गाडेवाला, गाडौदिया, गाजीपुरिया, गिदड़ा, गिदौड़िया, गीयला, गुटगुटिया, गुडवाले, गुडेवाला, गुडयानीवाला, गुप्त, गुरगुटिया, गुललहा, गुलगुलिया, गुलावटी, गोइन, गोइनका, गोयनका, गोदका, गौकुलका, गोयदका, गोटेवाले, गौरावाले, गोविन्दका, गौयनर, गोयलका, गोवला, गौवाडिया, गौहल्याणा, गौरीसरिया, गोग्यासरिया।

घिरैया, घोड़ीवाले, घीसीय, घुवालेवाला, घोड़ावत।

चंगोईवाले, चचेरीवाल, चन्द्रवाजीवाले, चन्देला, चमड़िया, चरिया, चसहाला, चाकसूवाले, चाचाण, चांदगोठिया, चांदसेन, चांदीवाले, चालीसा, चालीसिया, चिड़ावेवाले, चिड़ियावाले, चिड़िपाल, चिड़ीमार, चरानिया, चीनानिया, चीपवाले, चूड़ीवाले, चुरूवाल, चूनेवाले, चूरयावाले, चुरूवाले, चैनवाले, चोखानी, चौकड़ीत चेलानी, चौधरी, चौमूका, चौमूवाला, चौरूका।

छपारिया, छमारी, छापछरिया, छावछारिया, छानीवाला, छामुनिया छिगनीवाले, छोटेवाले, छीतरका, छाजूसरिया।

जगतरामका, जड़ावतावाले, जगनानी, जटिया, जनकपुरिया, जमालिया जमनका, जमुका, जयपुरिया, जयनगरवाला, जलाली, जलेबीचोर, जसरापुरिया जसरासरिया, जहाजगढिया, जलालपुरिया, जाखलिया, जांगलिये, जाकोडिया जायल्या, जाखड़िया, जाखरिया, जाजोदिया, जाटीवाला, जावदवाला, जावरावाले

pdfelement
Remove Watermark Now

जावतमाल, जालूका, जगोरिया, जालान, जालानी, जासोडिया, जितानी, जिखवाडिया, जीवराजका, जींदगर, जीतिसरिया, जीतमलजीका, जीतपुरिया, जुगरका, जैन, जेजानी, जौधानी, जौहरी।

झण्डवाला, झंकोड़िया, झरोखेवाला, झाझरिया, झाझड़िया, झाझरी, झिरका, झुनझुनुवाला, झूरिया, झूथरा, झोरवाडावाले।

टंकसाली, टपूकड़ा, टांटिया, टाटीवाले, टारिया, टाइवाला, टालवाले, टीबीवाले, टिकमाणी, टिक्कीवाल, टीबड़ेवाला, टीपीवाले, टेकड़ीवाल, टेकवाले, टेमानी, टेलटिया, टोड़ीवाला, टोपीवाले, टोरियावाले, टालीवाल, ठरड़।

डगायची, डगेडिया, डरोलिया, डडरेरिया, डाणी, डाकनिया, डांगवाले, डाबड़ीवाला, डाबड़ा, डालमिया, डोगवाले, डिवाईवाले, डीडवानिया, डूंगरीवाला, डेरावाले, डेरीवाले, डेघिया, डांकनिया, डोबीवाले, डोरिया, डोरेवाले, डोलिया।

ढांढणिया, ढांढरिया, ढाणीवाल, ढीलकीवाल, ढेढ़िया, ढेलनहारा।

तम्बाकूवाले, तलवाड़िया, तलवंडीवाले, तलावाले, तलगैया, त्यौदावाला, तायलीय, ताजपुरिया, ताड़पल्लीवाले, तायला, तारानगरवाले, तालुका, तारगिट्टीवाले, तिगरीवाले, तिजारिया, तीमड़ेवाले, तुलस्यान, तुहीरामका, तुदेवाले, नेलकीकूलियावाले, तोतारामका, तोदी, तोदावाले, तोला, तोशेरवानेवाला।

थरड़, थरपाल, थांवलावाले, थावरिया, थोईवाले।

दंगलवाले, दड़वावाले, दंतियावाले, ददरेवाले, दलेला, दलपतिया, दहीड़वाले, दलिया, दांदलीवाला, दादियावाले, दादू, दांतिल, दारूका, दादरीवाला, दालवाले, दिनोदिया, दीवान, दीवानजीवाला, दूदवेवाले, दुजोदवाले, दुशालेवाले, दुरालिया, दुहावन, दूदावत, देतूलीवाले, देवरालिया, देवरियावाला, देवगांवका, देलोदवाले, देवड़ा, दोचानिया, दोदराजका।

धनपतसिंहका, धनजीपंजीवाले, धनावत, धनानीवाल, धनानिया, धंवालिया, धरणीधरका, धानुका, धाड़ीवाल, धानोटी, धामनोदवाले, धामोरिया, धींगपुरवाले, धीमपुरिया, धीरवासिया, धुआसेवाला, धूत, धूंधरीवाल, धोणा, धोलिया, धोलपुरवाले, धोलेटा।

नाथानी, नवलगढ़िया, नरसिंहपुरिया, नरेणावाले, नरेडी, नरवासीवाले, नवलेवाले, नागरका, नांगल, नाजवाला, नागेवाला, नाथानी, नागौरी; नारनौली, नारसरिया, नारौजवाला, नाथूरामका, नालपुरवाले, निगानिया, निवाईवाले, निनाणवाले, निजामाबादवाले, निम्बोदिया, नीठलानावाले, नीरतू, नूहावाले, नूनवाले, नेवटावाले, नेवटिया, नेमाणी, नोतवाले, नौपरावाले, नौपाणी, नौरंगदेसरिया, नौसरिया, नौहरिया।

पकौड़ीवाले, पजेवाले, पटवारी, पटवा, पचैड़ीवाले, पढ़ानावाला, पत्थरका, पत्थरवाले, पतासिया, पजियार, तपंगिया, पदाग्या, पपरूनिया, परसरामपुरिया, परसरामका, परसाड़ीवाले, परतापुरवाले, परवाल, पल्लावाले, पवानीका, परवणवाले, परानुका, प्रह्लादका, पलसाण, पलसावाले, पलसाणी, पलुसीकी, पनजीवाले, पंसारी,

पहाड़िया, पहाड़वाले, पांचौतासवाले, पाटनवाले, पाटौदिया, पाटौरिया, पाडिया, पाड़ावाले, प्राणसुखका, पातलिया, पाढ़लिया, पापड़ावाले, पारूवा, पालड़ीवाले, पालकिया, पासरोटिया, पिंडारा, पित्ति, पिनानिया, पिनानवाले, पिसाड़ेवाले, पीवलवा, पीरूमल, पुडियावाले, पुनिया, पुवालेवाला, पूर्णमलका, पौतदार, पोद्दार।

फतेहपुरिया, फव्वारेवाले, फागीवाले, फाटेवाले, फिटकड़ीवाला, फेफाणावाले, फोगला, फौजदार, फूसखानिया।

बंका, बगड़ीवाल, बगडोदिया, बगरोदिया, बगलावाले, बगवाड़ावाले, बगड़िया, बगाड़िया, बघेरिया, बघेलावाले, बड़वेवाले बड़नेरावाले, बड़ालिया, बड़गांववाला, बडोपलिया, बजाज, बजारी, बड़का, बद्रुका, बंटवाल, बजीतपुरिया, बनेटी, बदनपुरवाले, बवादावाले, बवाईवाला, बणीवाले, बलोदावाले, बरेलिया, बसईवाला, बरखेड़ावाले, बहतेड़वाले, बहलवाला, बहादुरपुरवाले, बारबोलिया, बागड़ी, बागला, बागवाले, बागडिया, बांकेरायवाला, बागढ़वाले, बाजपेयी, बाजोरिया, बावलिया, बावरी, बावलीवाला, बायेवाल, बायती, बारजेवाला, बाढकोठरीवाले, बालिया, बारड, बोलोजी, बालोतरिया, बांसवाले, बासडावाले, बिरकालीवाले, बीदासरिया, बीदड़िया, बीपीसरिया, बीरकानीवाले, बीसका, बीसा, बीसाहुमड, बुकरेलीवाला, बुडाकिया, बुधरामका, बुधिया, बुकनसरियाबजरवाले, बुरावाड़ावाले, बूबना, बुरेवाले, बुचासिया, बेगनिया, बेरीवाला, बेड़िया, बेसवाल, बेगूवाले, बेरलिया, बैराठी, बैरासकिया, बोरडीवाला, बौड़ा, बौरलिया, बाडीहाला, बौलीवाले, बोदिया।

भगत, भंगिया, भगेरिया, भगोलावाले, भड़ेच, भड़ेलिया, भट्टूवाले, भट्टेवाले, भवाना, भरथिया, भरमिया, भमारीवाला, भदसानेवाले, भाकरीवाल, भागचंदका, भादरावाला, भावगी, भावसिंगका, भावपुरकर, भानगढ़वाले, भालोटिया, भारूका, भिवानीवाले, भीमराजका, भीमसहरवाला, भीमानीवाला, भीवराका, भीवापुरका, भुवानिया, भुवालका, भूकरेडीवाला, भूड़वाले, भूता, भूतो, भूकरकेवाला, भूतिया, भूतल्या, भूषणवाला, भैरूदिया, भौकड़वाला, भौतका, भौजनगरवाला, भौजिका, भोजराजका, भोलूसरिया।

मऊवाले, मकारीवाला, मगलूणिया, मंगोड़ीवाले, मंडरायलवाले, मंगालीवाले, मंडावावाल, मंडलावाले; मंडेलिया, मजठावाले, मदुपुरिया, मथुरावाले, ममेरीवाले। मदोरीवाले, मलियानावाले, मलसीसरवाले, मलाखावाले,मरीदिया, महारामण्डावाले, मसकरा, महमिया, महलवाला, म्हारेवाले, महाटिया, महासरवाले, महाखरिया मन्डोटिया, महीपाल, माउंडिया, मबरिया, मांगड़ीवाला, माजरिया, मांगलिक मांडोलिया, मावावाले, मातुनहेलिया, माधोपुरिया, मावोगढिया, मांजिका, मानमलक मानपुरिया, मावड़िया, मानसिंगका, मालनी, मालपुरावाले, मारफतिया, मित्रपुरावाले मिलका, मिडा,मिचनाबादवाले,मिठड़ीवाले,मिहाड़िया, मिठया, मितसका, मुकन्दराढिय मुकटवाले, मुकीन, मुजफ्फरपुरवाले, मुडवाला, मुबारकपुरवाले, मुता, मुनका,मुनीम मुरोदिया, मुरारका, मुसरीवाले, मुसद्दी, मुस्कानी, मुंशी, मुंशीमहलवाले, मुहालक मूंगेवाले, मुंडोसीवाला, मंगोलिया, मेडवाले, मेड़त्या, मेतोसी, मेलखेडावाले, मेहणसरिय

pdfelement
Remove Watermark Now

मेहता, मेहदीवाले, मेदावाले, मेमिया, मोड़ा, मोडिया, मोठका, मोटारापावाले, मोदी, मोदाणी, मोतीवाल, मोतिन, मोर, मोरड़ा, मोहनका, मोहरोंवाले, महनसरिया।

रड़कवाले, रतनगढ़िया, रतेरिया, रसोवासिया, राईवाला, राजगढ़िया, राजवंशी, राजपुरिया राजारामका, राणियावाले, रातड़िया, राऊवाले, रातूसरिया, रायगठिया, रौटा, रानासरिया, रामका, रामूका, रामरायका, रामगढ़िया, रायका, रायपुरवाले, रावल, रावलवासिया, रानीवाला, गिरिणीवाले, रिणका, रिवाड़ीवाला, रींगासिया, रीवांवाले, रूइया, रूहाटिया, रूंगटा, रूपदासका, रूपचंदजीका, रूपावाले, रेखान, रेडियोवाले, रेवडीवाले, रेशमवाले, रोटीवाले, रोहतकवाले, रोहतगी।

लकड़ीवाले, लखी, लखूड़ी, लडिया, लड़ीवाले, लट्ठया, लच्छूकाल्हाला, लश्करी, लाठ, लाडसरिया, लालगढ़िया, लालाणी, लालावाले, लावा, लाहनवाले लिहिला, लसकरणसरिया, लुहारीवाला, लूँडिया, लेवईवाले, लीढ़ा, लोठ, लोया, लोयलका, लोया,लोहिया, लौटिया, लुहारूका।

वटवार, वधानिया, वार्ष्णेय, वैदिक, वैरवाना, वैद्य, वैश्य।

शरीफ, शस्त्रवरा, शाह, शालवाले, शाल्डित्य, शिक्करिया, शिवांडवाले, शेखावाटिया, शेरपुरवाले, शोभासरिया, शोरावाले।

सकतिया, संगा, संघी, संघाई, सक्ताणी, सतनालीवाले, सफफड़, समालकिया, सेतुरामजीका, समरायवाले, समालिया, समोदवाले, संदरीवाले, सबलका, सनवाड़वाला, समथरवाले, समस्तीपुरवाला, सफाड़िया, संघोलिया, सरायवाला, सराफ, सरिया, सलमेवाले, सवाईका, सहारिया, सराबगी, सलामपुरिया, सांखू, सांगरेवाला, सांजी, साठेवा, सांधी, सांब, सांगानेरिया, सांवड़िया, सांवरिया, सांवलका, सामोरिया, साह, साहा, साहू, साहेवाला, साहूवाले, सामोदवाले, सारत, साल्हावासिया, सिंधिया, सिंधाड़ावाले, सिंधवी, सिंधिया, सिगनोदिया, सिंथानया, सिराहावाले, सितानी, सिंघनीदिया, सिंघणची, सिंधानिया, सिरोहीवाले, सिद्धमुखवाले, सिवोटिया, सींघई, सीग्तिया, सीपरिया, सींवणवाले, सीरया, सीलोनीवाले, सीसाहाला, सुचजाका, सुगल, उतेरशाही, सुगन्धी, सुपारीवाला, सुरेका, सुलतानिया, सुलतानवाला, सुतवाला, सुजगढ़िया, सूरतगढ़िया, सुईवाला, सुराशाही, सेक्सरिया, सेखसरिया, सेकड़ा, सेठ, सेनावाले, सेरड़ावाले सेलूवाले, सैदपुरिया, सोनावाले, सोरोरीवाला, सोढानी, सोमादिया, सौंथलिया, सोदागर, स्यामरिया, स्याल।

हटुका, हटवा, हवेलिया, हमीरखासिया, हरभजनका, हरलालजीका, हलवासिया, हलवाई, हरसोरालावाले, हठीरामका, हरनामवाले, हालाण, हालना, हाजीपुरवाले, हाथीदांतवाले, हांसीहांसीवाले, हिन्डोरियावाले, हिम्मतसिंगका, हिसारिया, हीराखानवाले, हुण्डीवाले, हुण्डेवाले, हैदरावादी, हरलालका।

(श्रीयुत बावूराम गुप्त, लक्ष्मणगढ़ (सीकर) के सौजन्य से प्राप्त)

अग्रवालों के गोत्र—प्रवर-शाखा-सूत्र

गोत्र संख्या	मुनि नाम	प्रचलित गोत्र	शुद्ध रूप	वेद	शाखा	सूत्र	प्रवर
१.	गर्ग	गर्ग	गर्ग	यजुर्वेद	माध्यन्दनी	कात्यायन	३
२.	गोभिल	गोयल	गोभिल	,,	,,	,,	,,
३.	गौतम	गोयन	गौतम	,,	,,	,,	,,
४.	मैत्रेय	मित्तल	मैत्रेय	,,	,,	,,	,,
५.	जैमिनी	जिन्दल	जैमिनी	,,	,,	,,	,,
६.	शैंगल (शांडिल्य)	सिंगल	शांडिल्य	सामवेद	कौथमी	गोभिल	,,
७.	वात्स्य	बांसल	वात्सल्य	,,	,,	,,	,,
८.	उरु (और्व)	ऐरन	उरु	यजुर्वेद	माध्यन्दनी	कात्यायन	,,
९.	कौशिक	कंसल	कौशिक	सामदेव	,,	,,	,,

pdfelement
Remove Watermark Now

१०.	कश्यप	कुच्छल	काश्यप	सामवेद	कौसथमी	गोभिल	"
११.	तांड्य	तिंगल	ताड्य	यजुर्वेद	माध्यन्दनी	कात्यायन	"
१२.	मांडव्य	मंगल	माण्डव्य	ऋग्वेद	शाकिल	आश्विलायन	"
१३.	वशिष्ठ	बिंदल	वशिष्ठ	यजुर्वेद	माध्यन्दनी	कात्यायन	"
१४.	धौम्य	धारण	धौम्य	"	"	"	"
१५.	मौद्गल्य (मधुकुल)	मधुकुल	मुद्गल	ऋग्वेद	शाकिल	आश्विलायन	"
१६.	तैत्तिरि	तायल	तैत्तिरेय	यजुर्वेद	माध्यन्दनी	कात्यायन	"
१७.	नागेन्द्र	नांगल	नगेन्द्र	सामवेद	कौसथमी	गोभिल	"
१८.	भारद्वाज	भंदल	भारद्वाज	"	"	"	"

अग्रोहा का उत्थान-पतन और पुनरोत्थान

अग्रवालों का यह दृढ़ मत है कि उनका निकास अग्रोहा से है। यह बात उसी प्रकार सत्य है जैसे अग्रवालों के गोत्र। जिस प्रकार वैश्य अग्रवाल अपने गोत्रों को याद रखते आए हैं वैसे ही अपने निकास-स्थान की याद उन्हें है। यह परिपाटी वंशानुगत चली आ रही है। इसके लिए न किसी पूर्व उल्लेख की आवश्यकता है, न किसी इतिहास के प्रमाण की, यह स्वतः प्रमाण है।

अग्रवालों का मूल निवास स्थान अग्रोहा जिला हिसार में देहली से ११३ मील दूर है। इसके भग्नावशेष वर्तमान अग्रोहा ग्राम के पास ६५० एकड़ भूमि में ८७ फीट तक ऊँचे टीले के रूप में विद्यमान हैं और टीलों से नीचे पश्चिम की ओर ३१० एकड़ भूमि में विशाल अग्रोदक के (कच्चे बाघ के) चिह्न विद्यमान हैं जिसे आज लखी तालाब के नाम से सम्बोधित किया जाता है और जिसमें अच्छी खेती होती है।

अग्रोहा की प्राचीनता

अग्रोहा गणराज्य के सम्बन्ध में अब तक उपलब्ध सबसे प्राचीन प्रमाण महाभारत के वन पर्व में मिलता है जिसका उल्लेख हम पहले भी कर चुके हैं :

भद्रान् रोहितकांश्चैव अग्रोयान् मालवान् अपि।
गणान् सर्वान् विनिर्जित्य नीतिकृत प्रहसन्निव॥

(महाभारत, वन पर्व, २५४-२०)

यह कर्ण-विजय का वर्णन है। कौरवराज दुर्योधन के समय कर्ण ने सारे भारत—उत्तर, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम—के राज्यों को परास्त करके भद्र, रोहितक, आग्रेय तथा मालव गणराज्यों को जीता। इस श्लोक में वर्णित विजय विवरण से स्पष्ट है कि रोहितक तथा मालव गणराज्यों के बीच 'अग्रगण' स्थित था और यही वह क्षेत्र है जहाँ वर्तमान अग्रोहा स्थित है।

कर्ण ने अग्रोहा को जीता। यह काल महाभारत युद्ध से लगभग १४ वर्ष पहले का है। नकुल ने भी इससे पूर्व यात्रा की थी, जिसका वर्णन महाभारत में विद्यमान है। इ

विजय यात्रा में नकुल ने दशार्ण गणराज्य (रोहतक, महेम, सिरमा, मरुभूमि) को जीता था। इसका वर्णन महाभारत सभापर्व में इस प्रकार उपलब्ध है :—

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धन धान्यवत् ।
कार्तिकेयस्य दयितं रोहीतक मुपाद्रवत् ॥
तत्र युद्धम् महच्चासीच्छूरैर्मत्त मयूरकै ।
मरुभूमि स कात्स्न्येन तथैव बहुधान्यकम् ॥
शैरीषकं महेत्थं च वशे चक्रे महाद्युतिः ।
आक्रोशं चैव राजर्षि तेन युद्धमभून्महत् ॥
तान् दशार्णान् स जित्वा च प्रतस्थे पाण्डुनन्दनः ।
(सभापर्व, ३५।४।६)

इस श्लोक में नकुल-विजय का वर्णन है। इन्द्रप्रस्थ से निकलकर नकुल ने रोहतक, मरुभूमि, सिरसा और महेत्थ महेम) आदि को जीता। इस दशार्ण को जीतकर वह शिवियों और त्रिगर्तों की ओर चला अर्थात् वर्तमान पंजाब के दक्षिण में पहुँचा।

अग्रोहा की प्राचीनता सम्बन्धी कुछ तथ्य

अग्रगण संस्थापक महाराजा अग्रसेन की इन्द्र से शत्रुता हो गई थी, ऐसा महालक्ष्मी व्रत कथा में उल्लेख है। विचारणीय यह है कि यह इन्द्र कौन है ?

देवराज इन्द्र का आयुर्वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है और इन्होंने देवासुर संग्राम में भाग लिया था। वे त्रेता के आरम्भ में कश्यप के घर अदिति की कोख से जन्मे। उन्होंने (इन्द्र ने) त्रेता के अन्त में आयुर्वेदोपदेश किया, अतः आज से ५०८२ वर्ष पहले की इनकी उपस्थिति प्रमाणित है। इन्द्र दीर्घजीवी देवता थे।

द्वापर के अन्त में कुछ ऐसे ऐतिहासिक पुरुष हैं जिनका महालक्ष्मी व्रत कथा (अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्) में उल्लेख है और वे सभी महाराजा अग्रसेन के समय में भी रहे हैं अतः उनके प्रमाणों से भी महाराजा अग्रसेन और अग्रोहा एक तथ्य हैं। कर्ण, वीर अर्जुन, इन्द्र, नारद, महालक्ष्मी के नाम उल्लेखनीय हैं जिनका महाराजा अग्रसेन के इतिहास से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अब हम उन ऐतिहासिक विशिष्ट जनों के सम्बन्ध में महाभारत के कुछ उद्धरणों द्वारा विचार करेंगे।

भीमः प्रहरतां श्रेष्ठो वायु पुत्रो महाबलः ।
धनंजयश्चेन्द्र सुतो न हन्यातां तु कं रणे ॥३४॥
(उद्योग पर्व)

योद्धाओं में श्रेष्ठ महाबली भीम वायु के पुत्र हैं। अर्जुन भी इन्द्र के पुत्र हैं। ये दोनों मिलकर युद्ध में किसे नहीं मार डालेंगे, यह बात कन्व ने दुर्योधन को कही थी।

वीर अर्जुन इन्द्र पुत्र नाम से प्रसिद्ध है और अर्जुन ने इन्द्र से ही अस्त्र-शस्त्र प्राप्त किये थे अतः महाभारत काल तक इन्द्र की उपस्थिति स्पष्ट है।

महाभारत के एक और प्रसंग से भी इन्द्र की उपस्थिति द्वापर के अन्त तक (युद्ध तक) प्रमाणित है जैसा कि अर्जुन ने युधिष्ठिर को राज्य ग्रहण करने के लिए समझाते हुए कहा है :—

इन्द्रो वै ब्राह्मणः पुत्रः क्षत्रियः कर्मणाभवत् ।
ज्ञातीनां पापवृत्तीनां जघान नवतीर्नव ॥१॥
(शान्ति पर्व अध्याय २२, श्लोक ११)

अर्जुन ने युधिष्ठिर को कहा :—

'देखिये, इन्द्र ब्राह्मण के पुत्र हैं, किन्तु कर्म से क्षत्रिय हो गये हैं। उन्होंने पाप में प्रवृत्त हुए अपने भाई-बन्धुओं (दैत्यों) में से ८१० व्यक्तियों को मार डाला।

अग्रवंश पुराण के अनुसार नारद ने बीच में पड़कर महाराजा अग्रसेन और देवराज इन्द्र का समझौता कराया। नारद भी महाभारत युद्ध तक जीवित थे इसका प्रमाण भी महाभारत में इस प्रकार मिलता है :—

प्रत्यक्ष कर्मा सर्वस्य नारदोऽयं महामुनिः ।
एष वक्ष्यति वै पृष्ठो यथा वृतं नरोत्तम ॥
(महाभारत शान्ति पर्व, अ० ३०-४२)

हे युधिष्ठिर ! यह वही नारद है जिसके साथ स्वर्णष्ठीवी की घटना घटी थी। (कृष्ण ने युधिष्ठिर को कहा)

महाराजा अग्रसेन पर लक्ष्मी की कृपा थी और लक्ष्मी ने महाराजा अग्रसेन को वरदान दिया था। इस सम्बन्ध में महाभारत में एक प्रसंग से स्पष्ट है कि लक्ष्मी इन्द्र के छोटे भाई विष्णु की पत्नी थी और महाभारत काल तक लक्ष्मी तथा विष्णु की उपस्थिति भी सिद्ध है :—

आविक्षितः पार्थिवोऽसौ मरुतो
वृद्धयाशक्रंयोऽजयद् देवराजम् ।
यज्ञे यस्य श्रीः स्वयं संनिविष्टा
यस्मिन् भाण्डं काञ्चनं सर्वमसीत् ॥१३॥
(शान्ति पर्व, अ० २० श्लोक १३)

अविक्षित के पुत्र सुप्रिसिद्ध महाराज मरुत ने अपनी समृद्धि के द्वारा देवराज इन्द्र को भी पराजित कर दिया था, उनके यज्ञ में लक्ष्मीदेवी स्वयं पधारी थीं। उस यज्ञ के उपयोग में आए हुए सभी पात्र सोने के बने हुए थे।

कलि काल के प्रथम दिन राजा परीक्षित को राजगद्दी देकर युधिष्ठिर अपने पाँचों भाइयों को लेकर हिमालय की ओर चले गये। अतः यह स्वाभाविक है कि अब

pdfelement
Remove Watermark Now

पाण्डव-राज्य उतना मजबूत न रह गया था। नागों ने उसे अच्छा अवसर जानकर पाण्डवों के राज्य को हड़पना चाहा और अग्रोहा को भी स्वतन्त्र कराना चाहा अतः महाभारत युद्ध के पश्चात् नागों ने उत्तरी भारत पर आक्रमण करके पाण्डवों के पुत्र परीक्षित को मार डाला। जन्मेजय ने अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए नागों का मुकाबला किया, उन्हें परास्त किया तथा उनका सर्वनाश कर दिया। इस नाग-संहार में आस्तीक मुनि ने तक्षक नाग की रक्षा की। इस प्रकार यह क्रमबद्ध विवरण स्वाभाविक प्रतीत होता है और अग्रसेन के समय में इन्द्र, अर्जुन, नारद, लक्ष्मी आदि सभी विद्यमान थे, ऐसा स्पष्ट जान पड़ता है।

राजा परीक्षित ने कलयुग के प्रथम दिन ही राज्य संभाला और ६० वर्ष तक राज्य किया। नागों ने इनका वध कर दिया। परीक्षत के पुत्र राजा जन्मेजय ने ८४-८५ वर्ष तक राज्य किया। वह समय (६०+८४)=१४४ वर्ष बनता है।

'अग्रवाल वंशानुकीर्तिनम्' के अनुसार अग्रसेन ने लक्ष्मी के आदेश से अति वृद्धावस्था में कलिकाल संवत् १०८ में राज्य त्याग किया और अपने पुत्र विभु को राज्य देकर वन में तपस्या के लिए चले गये। अग्रसेन के राज-त्याग का समय राजा जन्मेजय के नाग वधयज्ञ के पश्चात् स्पष्ट प्रतीत होता है। हो सकता है कि नागों की शक्ति क्षीण होने पर आग्रेयगण भी कमजोर पड़ गया हो और अग्रसेन ने अपने श्वसुराल पक्ष के विनाश के शोक में ही राज्य से विरक्त होकर तपस्या का मार्ग ग्रहण किया हो।

भूमिगत प्रमाण

१९३८ की खुदाई में अग्रोहा गण की मुद्रायें प्राप्त हुई हैं उनसे भी आग्रेय जनपद का प्रमाण मिलता है और कमरों की दीवारें आज भी दिखाई देती हैं। दक्षिण दिशा की ओर टीलों के अन्त में बहुत ऊंचाई पर दीवान नानूमल के किले की दीवारें बिल्कुल टूटी पड़ी हैं।

विद्वानों के मत

स्व० डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने अपनी मृत्यु के कुछ ही समय पूर्व मई १९६६ में हमें लिखा था कि—

'सौभाग्य से अग्रवाल जाति के प्राचीन मूल स्थान अग्रोहा का सुनिश्चित पता लग गया है। इसका पुराना नाम अग्रोदक था और यह अग्र जनपद की राजधानी थी। यह एक संघ राज्य था। उसके शासक चुने हुये अधिपत और शासन सभा के सदस्य प्रतिनिधि होते थे। प्रतिनिधित्व का अधिकार १८ मुख्य कुटुम्बों में बंटा था। वे ही मिलकर शासन चलाते थे, ऐसी किंवदन्ती सुनने में आती रही है। उन १८ कुलों के गोत्र ही अग्रवाल जाति के १८ गोत्र हैं।"

डा० सत्यकेतु विद्यालंकार के लेखानुसार श्री राजर्स ने अग्रोहा के सम्बन्ध में निम्नांकित विवरण दिया है :—

'यह खेड़ा गाँव से आधे मील की दूरी पर सिरसा जाने वाली सड़क के किनारे दिखाई देता है। इसका घेरा ६५० एकड़ भूमि में फैला हुआ है। बरसात के कारण खेड़े में अनेक दरारें पड़ गई हैं अतः इनमें अनेक प्राचीन इमारतों की नींव व थड़े नजर आने लगे हैं। बड़ी-बड़ी ईंटें जिन पर कारीगरी का काम किया गया है, मूर्तियों के टुकड़े, मनके, मालायें तथा सिक्के इस स्थान से उपलब्ध होते हैं। सन् १८८९ ई० में इस स्थान की खुदाई का काम प्रारम्भ किया गया था परन्तु उसे जारी नहीं रखा जा सका। जो थोड़ी खुदाई की गई थी, उससे भी मूर्तियों के टुकड़े और पक्की मिट्टी की बनी हुई बहुत-सी प्रतिमायें प्राप्त हुई थीं। इसमें सन्देह नहीं कि इन खण्डहरों की खुदाई से प्राचीनकाल की बहुत-सी महत्वपूर्ण वस्तुयें प्राप्त होंगी। अग्रवाल वैश्य अग्रोहा को अपना निकास स्थान (Home Land) मानते हैं। कहा जाता है कि यह स्थान प्राचीन समय में बड़ा समृद्धशाली तथा विस्तृत था। आजकल इस स्थान की खुदाई करने पर प्रतिबन्ध हैं।"

डा० सत्यकेतु जी विद्यालंकार ने दिनांक ३ जुलाई १९७६ की एक बैठक में बताया कि अग्रोहा की खुदाई में जो दूसरा सिक्का मिला है उस पर लिखा है "आग्रेय जनपदस्य परिषद" जो समाजवाद एवं गणतन्त्र का प्रबल प्रमाण है।

३० अप्रैल, १९६७ को हमारे (श्री निरंजनलाल गौतम, श्री मुरारीलाल अग्रवाल तथा श्री दुलीचन्द शशि) यात्री दल ने अग्रोहा यात्रा का वर्णन इस प्रकार किया है :—

"रात्रि के अन्तिम पहर में, जब कि चन्द्रमा का प्रकाश अग्रोहा के खण्डहरों को चमका रहा था, हमारा दल अग्रोहा के खण्डहरों के दर्शन हेतु बढ़ चला। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते जाते थे हमारी उत्सुकता और जिज्ञासा बढ़ती जा रही थी। जैसे-जैसे दिन का प्रकाश बढ़ रहा था हमें भूमि में दबी दीवारों, सड़कों, मार्गों के चिह्न यत्र-तत्र-सर्वत्र दिखाई देने लगे थे। वर्षा ने ऊँचे खण्डहरों को जहाँ-तहाँ से काट दिया है। मिट्टी में दबी ईंटों की दीवारें स्पष्ट रूप से दीख पड़ती हैं। खण्डहरों के ऊपर मिट्टी के टूटे बर्तनों के टुकड़े तो सर्वत्र ही बिखरे पड़े हैं, जिससे इस किले की विशाल आबादी का आभास होता है। किले की ईंटों का आकार १२×९×२ इंच है। ईंटें पुराने युग की ककइया ईंटों की भाँति पतली हैं। इससे इस किले की प्राचीनता की कल्पना की जा सकती है। इन ईंटों की प्राचीनता की पुष्टि खण्डहरों के अन्तिम छोर पर उत्तर दिशा में बने पटियाला के दीवान श्री नानूमल जी अग्रवाल द्वारा निर्मित किले की टूटी दीवारों में लगी ईंटों से भली-भाँति हो जाती है जिसमें ४००-५०० वर्ष पूर्व सर्वत्र प्रचलित छोटी ककइया ईंटों का भी उपयोग हुआ है। इससे स्पष्ट है कि महाराजा अग्रसेन का किला बहुत प्राचीन संस्कृति का द्योतक है। हमें अग्रोहा के खण्डहरों में ऊपर मिलने वाली ईंटों से एक बात और सोचने का अवसर मिलता है कि ईसा से ३२६ वर्ष पूर्व सिकन्दर के समय से अग्रोहा पर विदेशी आक्रमण हुए थे और तब से, कितनी ही बार

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रोहा का पुर्ननिर्माण हुआ, इसका, इन खण्डहरों पर समय-समय पर जो निर्माण कार्य होता रहा, समय-समय पर उसमें प्रयुक्त भवन-निर्माण सामग्री तथा भिन्न-भिन्न प्रकार की मिलने वाली ईंटों से, भली-भाँति ज्ञान होता है।

अग्रोहा के खण्डहर हिसार, सिरसा रोड के किनारे-किनारे दक्षिण से उत्तर की ओर ६५० एकड़ में फैले ऊँचे-नीचे टीलों के रूप में दीख पड़ते हैं। इन टीलों की सर्वाधिक ऊँचाई ८७ फीट उत्तर दिशा में है जिससे प्राचीन दुर्ग के मुख्य भाग की कल्पना सहज की जा सकती है। इसी भाग में १९३८ ई० में सरकार की ओर से खुदाई भी हुई थी जिसमें भूगर्भ स्थित कमरों, तथा तहखानों की दीवारों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

अग्रोहा दुर्ग के ऊपर सती की दो मढ़ियाँ बनी हुई हैं। सती की तीसरी मढ़ी दुर्ग से पश्चिम में नीची भूमि में बनी हुई है। ये मढ़ियाँ उन सतियों के स्मारक हैं जिन्होंने विदेशी आक्रमणों के समय अपनी आहुतियाँ दी थीं।

उत्तर दिशा में वर्तमान खण्डहरों से कुछ हट कर सती शीला का समाधि-स्थल भी दृष्टिगोचर होता है।

मुख्य दुर्ग से पश्चिम दिशा में दुर्ग के नीचे एक जलाशय (बाँध) दिखाई देता है जो लगभग ३१० एकड़ विस्तार में फैला हुआ है। दुर्ग से लगे बहुत दूर तक बाँध के चिह्न भली-भाँति स्पष्ट हैं। आजकल इस बाँध में जल नहीं है अपितु ट्रैक्टर द्वारा खेती होती है। इस बाँध का निर्माण महाराजा अग्रसेन ने ही कराया था और इसका नाम अग्रोदक था। यह बाँध आगे चलकर सेठ हरभजन शाह के समय में लखी तालाब के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इस सन्दर्भ में स्थानीय जनों ने एक रोचक कहानी सुनाई और ऐसा ही वर्णन अन्यत्र भी मिलता है :—

"सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् महेम के सेठ श्री हरभजन शाह ने अग्रोहा को पुनः बसाने का संकल्प किया। जो लोग अग्रोहा में जाकर बसना चाहते थे उन्हें वे परलोक में लौटाने के वचन पर ऋण देते थे। एक दिन एक लखी बनजारा भी हरभजन शाह के पास पहुँचा और परलोक में लौटाने के वचन पर ऋण लिया। जब वह ऋण लेकर अग्रोहा की ओर चला तो मार्ग में उसे विचार सूझा कि उसने परलोक में लौटाने के वचन पर ऋण लेकर उचित नहीं किया अतः वह लौटकर सेठ हरभजन शाह के पास ऋण का रुपया लौटाने पहुँचा परन्तु शाह ने रुपये वापस लेने से इन्कार कर दिया। इस पर लखी बनजारे ने अग्रोहा में एक तालाब बनवाया और उस तालाब में पानी लेने वालों से सेठ हरभजन शाह के नाम से कर लेना शुरू कर दिया। जब हरभजन शाह को लखी बनजारे की चतुराई का पता लगा तो उन्होंने लखी बनजारे को दिया ऋण भरपाया करके तालाब सर्वसाधारण के लिए खोल दिया। तब से उस तालाब को लखी का तालाब कहने लगे हैं। विदित होता है कि लखी बनजारे ने सूखे अग्रोदक के अन्तर्गत ही नये तालाब का निर्माण कराया था, क्योंकि अग्रोदक (अग्र के बाँध) के

अतिरिक्त किसी अन्य तालाब के चिह्न कहीं विद्यमान नहीं हैं।

आजकल प्राचीन अग्रोहा के पास ही एक छोटा अग्रोहा गाँव आबाद है। गाँव में लगभग ६०० जाट, २५० राजपूत, ५०० हरिजन जाटव, ४०० पंजाबी, १०० मित्तल गोत्रीय अग्रवालों की आबादी है। गाँव में (अग्रोहा खण्डहरों के पास ही) एक हाई स्कूल है, जिसमें अग्रोहा तथा आसपास के कुलेरी, नदड़ा, खासा और भौंडा गाँवों से आने वाले बालक-बालिकायें शिक्षा प्राप्त करते हैं। अग्रोहा में बसे १०० अग्रवालों के १५ परिवार हैं, जो सभी मित्तल गोत्र के हैं और पीढ़ी से अग्रोहा में ही रह रहे हैं। इनकी मुख्य आजीविका के साधन खेती, ग्रामीण दुकानदारी और नैपाल, सिक्किम, श्रीगंगानगर, दार्जिलिंग और कलकत्ता में नौकरी तथा व्यापार हैं। अग्रोहा के अग्रवालों के पास लगभग १५० एकड़ खेती की भूमि है और आधे परिवार के लोग बाहर व्यापार तथा नौकरी के लिए जाते-आते रहते हैं। अग्रोहा की ग्राम पंचायत के सरपंच श्री दुर्गाप्रसाद जी अग्रवाल हैं जो लगन के कार्यकर्त्ता हैं।" (खेद है अब उनका स्वर्गवास हो गया है)।

हमें स्वामी ब्रह्मानन्द जी के सुपुत्र श्री मनुदत्त शर्मा जी से भी भेंट करने का अवसर प्राप्त हुआ जो अग्रोहा के ही निवासी हैं और आजकल हिसार में ज्ञानोदय के सम्पादक हैं। श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी का अग्रोहा के साथ विशेष सम्बन्ध रहा है। इन्होंने बड़े प्रयत्न से सन् १९०८ ई० में एक कुएं का निर्माण कराया था। अग्रोहा में पानी बहुत गहराई पर मिलता है अतः जल-कष्ट निवारण का उनका यह कार्य बहुत सराहनीय है। इनकी प्रेरणा पर ही इस कुएं को विश्वेशरलाल हलवासिया ट्रस्ट द्वारा पक्का बनवा दिया गया और एक प्याऊ भी लगवा दी गई जिसका व्यय अभी तक हलवासिया ट्रस्ट से आता है। इस कुएं से लगी हुई अग्रवाल धर्मशाला और अग्रसेन मन्दिर का निर्माण सेठ रामजी दास बाजोरिया, कलकत्ता निवासी ने स्वयं अग्रोहा में रहकर अपनी देख-रेख में विक्रम सम्वत् १९९५ में कराया और उन्होंने ही इस मन्दिर में महाराजा अग्रसेन की विशाल संगमरमर की बैठी मूर्ति स्थापित कराई।

धर्मशाला से लगी गोशाला में ९० गायें हैं जिनसे प्रतिदिन ६ मन दूध प्राप्त होता है। गोशाला के ध्येय की पूर्ति हेतु एक आटा चक्की भी लगी हुई है। इन सब संस्थाओं का प्रबन्ध स्थानीय अग्रवालों के द्वारा होता है।

प्राचीन अग्रोहा के खण्डहरों के पास सती की मढ़ी पर प्रतिवर्ष बच्चों के बाल उतरवाने और मनौती के लिए दूर-दूर से अग्रवाल बन्धु अग्रोहा पहुँचते हैं।

अग्रोहा की सीमायें ११ मील दूर राजस्थान से मिलती हैं अतः यह क्षेत्र राजस्थान के समान मरुधर है, राजस्थान जैसी बालू है, गहराई पर पानी मिलता है, अतः यह बहुत स्वाभाविक है कि विदेशी आक्रमणों के साथ अग्रोहा के अधिकांश अग्रवाल राजस्थान में जा बसे थे। अग्रोहा के पास दो मील की दूरी पर बसे कुलेरी (कुलारी) गाँव की विद्यमानता उन अग्रवालों की याद दिलाती हैं जिनके पूर्वज गोकुलचन्द को, शत्रु

pdfelement
Remove Watermark Now

से मिलकर अग्रोहा की पराजय दिलाने के कारण, अग्रवाल सतियों ने शाप दिया था कि उनका कुल कुलारि (कुल का शत्रु) कहाएगा और अग्रवालों द्वारा बहिष्कृत रहेगा।

विदेशी यात्रियों के यात्रा वर्णन

भारतवर्ष में बाहर से आने वाले कई यात्री हैं, जिन्होंने अग्रोहा के सम्बन्ध में समय-समय पर प्रकाश डाला है तथा जिनके आगमन काल से बहुत पूर्व ही यह नगर उजड़ चुका था।

सन् १३२५ ई० में फारसी यात्री इबनवतूता ने अपनी भारत-यात्रा पर लिखा है कि जब वह दिल्ली से ११०-११५ मील दूर गया तो उसे एक शहर सड़क के ऊपर मिला जो देखने में बड़ा मालूम होता था और जान पड़ता था कि वह हिन्दुस्तान की राजधानी है किन्तु वहाँ कोई रहता न था। दीवारों पर गोली के निशान मालूम पड़ते थे तथा सड़कों पर मनुष्यों की लाशों को कुत्ते तथा गिद्ध खा रहे थे।

सन् १३५१ से १३८८ ईस्वी के बीच बादशाह फिरोजशाह तुगलक ने दिल्ली के साथ हिसार को भी अपनी राजधानी बनाया। उसने अपने किले और महल में जो पत्थर लगवाये वे अग्रोहा के खण्डहरों से ही मंगवाकर लगवाए गये थे।

सन् १५५६ से १६०५ के बीच सम्राट् अकबर के समय में अग्रोहा मुगल सेना का केन्द्र था।

सन् १७८१ में फ्रांस देश के वर्नियर नामक यात्री ने अग्रोहा के प्राचीन वैभव का वर्णन किया है और लिखा है कि—'अब यह उजड़ चुका हैं।'

इसी प्रकार यूरोप के प्रसिद्ध अंग्रेज लेखक रेनेल ने भी १८वीं शताब्दी के अन्त में एक भूगोल लिखा है। इसमें दिये गए भारतवर्ष के नक्शे में अग्रोहा भी अंकित किया है। उपर्युक्त तीनों यात्रियों ने अग्रोहा की प्राचीनता को महत्त्व देते हुए ही इसका वर्णन किया है।

राज-पत्रों के प्रकरण

हिसार जिले के गजेटियर में अग्रोहा सम्बन्धी निम्नांकित उल्लेख मिलता है :—

'हिसार से उत्तर पश्चिम में लगभग १३ मील की दूरी पर देहली-सिरसा रोड पर अग्रोहा स्थित है। इसमें सन्देह नहीं कि किसी समय यह गाँव बड़ा आबाद तथा समृद्ध नगर था। कहा जाता है कि अग्रवाल वैश्य जाति के संस्थापक राजा अग्रसेन ने इस नगर की स्थापना की थी। उक्त राजा अग्रसेन का समय २००० वर्ष से भी अधिक पुराना है। गाँव के समीप ही, एक पुराने नगर का खेड़ा है, जिसके नीचे ही किसी नष्ट हुए विशाल नगर के ध्वंसावशेष पड़े हैं। खेड़े के ऊपर जो किला है वह ईंटों का बना हुआ

है। कहते हैं कि यह किला राजा अग्रसेन ने बनवाया था। सन् १८८९ में इन खण्डहरों की खुदाई हुई थी जिसमें मूर्तियों के बहुत से टुकड़े तथा अनेक प्रतिमाएँ उपलब्ध हुई थीं। सब आकार की छोटी-बड़ी ईंटें तथा सिक्के भी वहाँ मिलते हैं। एक जगह पर किसी बड़े पक्के मकान की दीवार भी निकली है। खेड़े के समीप ही एक विस्तृत नीची जमीन है, जहाँ आजकल बहुत बढ़िया फसल होती है, अवश्य ही यहाँ पुराने जमाने का एक तालाब था। अगर इन प्राचीन खण्डहरों पर दृष्टिपात करें तो राजा अग्रसेन का किला इनके मुकाबले में एक नये जमाने की चीज मालूम होती है—यद्यपि उसका निर्माण भी ईस्वी सन् के प्रारम्भ होने से पहले हुआ था।'

गीतों में अग्रोहा

भाटों के गीतों में अग्रोहा ही अग्रवालों का आदि निकास स्थान है।

प्राचीन साहित्य में अग्रोहा

संस्कृत साहित्य के वैयाकरण पाणिनी ने अपने सुप्रसिद्ध व्याकरण अष्टाध्यायी ग्रन्थ में गोत्रप्रत्यय प्रकरण में 'अग्र और उसके विविध रूप आग्रि, आग्रेय और आग्रायण का दो स्थानों पर उल्लेख किया है।

आग्रेय जनपद की मुद्रायें

सन् १९३८ में पंजाब सरकार ने अग्रोहा के विशाल भूखण्ड की खुदाई का कार्य आरम्भ किया था जिसमें ईसा की दूसरी शताब्दी पूर्व (आज से २१८२ वर्ष से अधिक पुरानी) मुद्रायें प्राप्त हुई जिन पर ब्राह्मी लिपि में 'अगोद के अगाच जनपदस' लिखा है। इसका अर्थ है 'अगाच' (नामक) जनपद के अगोदक नामक (राजधानी) की (मुद्रा)। 'अगाच' शब्द संस्कृत के 'अगोदक' (आग्रेय) का अपभ्रंश है। अतः ये मुद्रायें 'अग्र' या अगोदक गणराज्य की मुद्रायें हैं।

इन मुद्राओं के प्राप्त होने से निम्नांकित बातें स्पष्ट हो जाती हैं—हिसार गजेटियर के लेख का यह उल्लेख सत्य सिद्ध हो जाता है—कि अग्रोहा लगभग २००० वर्ष पूर्व एक विशाल एवं समृद्ध नगर था।

जब सिकन्दर ईसा से ३२६ वर्ष पूर्व पंजाब विजय करके दक्षिण की ओर के मार्ग से लौट रहा था तो उसकी मुठभेट शिवी एवं अगलसोई जातियों से हुई। कुछ लोगों का विचार है कि अगलसोई अग्रोहा निवासी ही थे। किन्तु विचारणीय यह है कि अग्रोहा व्यास नदी से लगभग २०० मील दूर है और सिकन्दर व्यास नदी को पार न करके उसके किनारे-किनारे दक्षिण की ओर बढ़ता गया और मार्ग में उसका अगलसोई कबीले से युद्ध हुआ जिसमें अगलसोई जाति को अपार जन बल की क्षति पहुँची। इसी का प्रभाव अग्रोहा पर पड़ा होगा। वैसे सिकन्दर अग्रोहा पर आक्रमण नहीं कर सका था।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रोहा का पतन

सन् ३२६ ई० पू० सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया। राजघराने से अनबन के कारण सेनापति गोकुल चन्द और उसका मित्र रतनचन्द सिकन्दर से मिल गये और अग्रोहा पर आक्रमण कराने की योजना बनाई किन्तु सिकन्दर अग्रोहा पर आक्रमण न कर सका। हाँ, युद्ध के भय से बहुत से लोग अग्रोहा छोड़कर सिरसा, हिसार, महेम आदि स्थानों पर जाकर रहने लगे।

अग्रोहा सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् कमजोर पड़ गया था अतः अन्य छोटे पड़ोसियों के साथ मिलकर पुनः संगठित हुआ और 'अगाच्च मित्र पदा' गणराज्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। 'अगाच्च मित्र पदा' के प्रमुख भाग इस प्रकार थे :—

१. हिसार	२. हांसी	३. तोशाम
४. सिरसा	५. नारनौल	६. रोहतक
७. पानीपत	८. जींद	९. कैथल
१०. मेरठ	११. दिल्ली	१२. सहारनपुर
१३. जगाधरी	१४. विद्योनगर	१५. नाभर
१६. अमृतसर	१७. अलवर	१८. उदेपुर (शेखावटी)

सन् १२० में अग्रोहा कुशाण वंश के अधीन हो गया। इसी काल में महेम के सेठ हरभजन शाह ने अग्रोहा में अपनी मण्डी बसाई और लोगों को ऋण देकर अग्रोहा में बसने के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार अग्रोहा एक बार फिर आबाद हो गया।

सन् ७०१ ई० में अग्रोहा के शिवानन्द तथा धर्मसेन की प्रेरणा पर धामनगर के तोमर राजा समरजीत ने अग्रोहा पर आक्रमण किया और इसे बहुत हानि पहुँचाई। तोमर राजा समरजीत के भय से छुटकारा पाने के लिए सन् ७१२ ई० में सिरसा के रतनसेन (गोकल चन्द के वंशज) मुहम्मद अब्दुलविन कासिम से मिल गये और अग्रोहा की सेना हार गई, जिससे नगर को बड़ी हानि उठानी पड़ी और १२०० सतियों ने प्राण दे दिये।

कुछ समय पश्चात् चौहानों ने तोमरों को परास्त कर देहली पर अधिकार जमा लिया और अग्रोहा चौहानों के अधिकार में आ गया। इस प्रकार तोमर और चौहानों के आक्रमणों से तंग आकर बहुत से परिवार अग्रोहा छोड़कर राजस्थान तथा अन्य स्थानों पर चले गये। सन् ११३४ में बिजनौर जिले में मण्डावर नामक स्थान को अग्रवालों ने पुनः बसाया और वहीं रहने लगे। वहाँ अग्रवालों का बनाया हुआ एक किला अभी तक मौजूद है। इस कस्बे में अग्रवालों की बड़ी संख्या है। परन्तु फिर भी कुछ लोग अग्रोहा में ही रहे।

१०वीं शताब्दी में मुसलमानों के आक्रमण आरम्भ हुए। सन् १०३७ में महमूद गजनवी के पुत्र मसूद गजनवी ने हाँसी पर आक्रमण कर दिया। अग्रोहा हाँसी से

बिल्कुल पास है किन्तु वहाँ एक मजबूत किला बना था अतः अग्रोहा गजनवी के आक्रमण से बच गया।

सन् ११९१ ई० में शाहबुद्दीन गौरी ने अग्रोहा पर आक्रमण करके इसे ११९५ में उजाड़ दिया और फारसी यात्री ईबनबतूता के लेखानुसार १२०० ई० में यह नगर उजाड़ पड़ा था।

१७०१ ई० में जोधपुर राज्य के चम्पावत राजपूत पुनः अग्रोहा में आकर बस गये किन्तु आसपास के ग्रामीणों ने उन्हें तंग किया अतः उन्होंने पटियाला राज्य में इसकी शिकायत की। उन दिनों पटियाला राज्य में नानूमल अग्रवाल दीवान थे। १७७४ ई० में उन्होंने अग्रोहा में एक किला बनवा दिया और उन लोगों की रक्षा की।

१८५७ में अंग्रेजों ने इस शहर को तोपों से उड़ाकर पूर्ण रूप से नष्ट कर दिया। आज इस किले की टूटी दीवार और ६५० एकड़ में पुराने खण्डहर तथा सतियों की छतरियाँ देखी जा सकती हैं।

अग्रोहा के पुनरोत्थान के नए प्रयत्न

१९०८ ई० में स्वामी ब्रह्मानन्द जी के प्रयत्न से अग्रोहा में एक कुएँ का निर्माण हुआ जिसे श्री विश्वेशर लाल हलवासिया ट्रस्ट द्वारा पक्का बनवा दिया गया और एक प्याऊ भी स्थापित हो गई। इस कुएँ और प्याऊ के पास ही सेठ रामजीदास बाजोरिया, कलकत्ता निवासी ने एक मन्दिर और धर्मशाला का निर्माण करा दिया है साथ ही एक गौशाला भी बनवा दी गई है।

अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा, दिल्ली के तत्वाधान में सन् १९५० में अग्रोहा को पुनः बसाने के विचार से अग्रोहा में भारत के सभी भागों से आए हजारों अग्रवालों का सम्मेलन सेठ कमल नयन बजाज की अध्यक्षक्षता में हुआ और इसके आगे भी प्रति वर्ष सम्मेलन होते रहे हैं। किन्तु अग्रोहा अभी तक नहीं बस सका। अब पुनः अग्रोहा बसाने की एक नई लहर चली है। स्थान-स्थान से अग्रवाल सामूहिक रूप से अग्रोहा पहुँचने लगे हैं और इसे पुनः बसाने की योजनाएँ बनती रहती हैं, अतः इसका भविष्य उज्ज्वल है। २७ सितम्बर, १९७० को अग्रोहा दर्शन के लिए मथुरा से ६० अग्रवालों का एक दल बस द्वारा अग्रोहा गया था, जिसका नेतृत्व श्री मुरारी लाल जी अग्रवाल ने किया था और ऐतिहासिक मार्गदर्शन इस इतिहास के लेखक (वैद्य निरंजन लाल गौतम) ने स्वयं किया था। इस यात्रा का आयोजन भी अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा, देहली की प्रेरणा पर हुआ था और इस दल का देहली स्वागत सत्कार इसी महासभा द्वारा किया गया था।

अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा (पंजीकृत) कई वर्षों से अग्रोहा में प्र वर्ष अग्रसेन, जयन्ती उत्सव आयोजन करती रही जिसमें दूर-दूर से अग्रवाल ब अग्रोहा पहुँचते रहे हैं।

अग्रवालों की जन्मभूमि अग्रोहा का पुनः निर्माण कराने की दिशा में श्री मास्

pdfelement
Remove Watermark Now

लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल, तत्कालीन महामंत्री—अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा (पंजीकृत)—के सद्प्रयत्नों से श्री अग्रसेन इंजीनियरिंग एण्ड टैकनीकल कालेज सोसाइटी की स्थापना हुई। उसकी ओर से ४०० बीघे (चार लाख वर्ग गज) भूमि क्रय की गई। कालेज निर्माण की दिशा में प्रयत्न होता रहा और उसी भूमि पर अग्रोहा तीर्थ-यात्रा हेतु जाने वाले अग्रवालों के निवास के लिए पुराने थेह की तलहटी में ही सड़क के किनारे कुछ इमारतें बनबनबाई गईं। पानी के लिए नल लगवाया गया। अब सरकार की ओर से भी अग्रोहा के लिए मीठे पानी की टंकी बन चुकी है। अब पानी की और भी सुविधा हो गई है।

अग्रोहा गाँव में बिजली पहुँच चुकी है। थेह के पास ही हाई स्कूल का भवन है जिसमें बिजली पहुँच गई है और हाईस्कूल के पास ही अग्रसेन इंजीनियरिंग एण्ड टैकनीकल कालेज सोसायटी की ओर से बनाई गई इमारत भी है।

अग्रसेन इंजीनियरिंग एण्ड टैकनीकल कालेज सोसायटी की योजना थी कि अग्रोहा में एक अग्रवाल मंडी, अग्रवाल नगर तथा महाराजा अग्रसेन जी का एक विशाल मंदिर और धर्मशाला का भी निर्माण कराया जाय। किन्तु जब अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन, नई दिल्ली द्वारा अग्रोहा को तीर्थ बनाने की योजना पूर्ण करने के लिये अग्रोहा विकास ट्रस्ट गठित हो गया तो अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा की एक इकाई श्री अग्रसेन इंजीनियरिंग एण्ड टैकनीकल कालेज सोसाइटी ने अग्रोहा विकास ट्रस्ट को इस कार्य हेतु २३ एकड़ भूमि दान कर दी और अग्रोहा निर्माण कार्य में सहयोग देना आरम्भ कर दिया।

अग्रोहा विकास ट्रस्ट के उस समय के संयोजक सेठ तिलकराज अग्रवाल के संयोजकत्व में २२ कमरों की धर्मशाला बनी तथा अग्रसेन मन्दिर का निर्माण-कार्य चल रहा है।

हरियाणा सरकार भी अग्रोहा में एक अनाज मंडी की स्थापना करने की योजना बना रही है और एक अच्छा क्रय-विक्रय केन्द्र बनाकर आस-पास के गाँवों को लाभ पहुँचाना चाहती है, अग्रोहा गाँव में स्टेट बैंक की शाखा खुल चुकी है और नहर का पानी भी खेतों को उपलब्ध हो गया है। अतः अब आशा करनी चाहिये कि अग्रोहा निकट भविष्य में ही अपना पूर्व गौरव प्राप्त कर लेगा।

pdfelement

८

अग्रवाल वैश्य जाति का विस्तार

अग्रवाल वैश्य जाति का परिचय

भारत में अग्रवाल वैश्य जाति का एक विशिष्ट स्थान है। धन, वैभव और व्यापार के क्षेत्र में यह भारत की प्रमुख जाति मानी जाती है। वैश्यों का यह वर्ग महाराजा अग्रसेन को अपना पूर्वज मानता है। उन्होंने अग्रोदक (अग्रोहा) नगर बसाया और आग्रेय गणराज्य की स्थापना की। १९३८ ई० में अग्रोहा की खुदाई से जो राज-मुद्रायें प्राप्त हुई हैं उनसे विदित होता है कि आग्रेय नामक जनपद ईसा से दो शताब्दी पूर्व (अब से २१८२ वर्ष पूर्व) तक विद्यमान था। इस आग्रेय जनपद के निवासी वैश्य, अग्रोदक निवासी, अग्रोतकान्वय वणिक नाम से प्रसिद्ध थे।

अग्रवाल वैश्यों का उद्भव स्थान अग्रोहा ही था, इसके प्रमाण में हिसार को लिया जा सकता है, जहाँ से अग्रोहा केवल १३ मील दूर है और जहाँ हिसार की कुल आबादी की १० प्रतिशत से अधिक संख्या अग्रवालों की है। जैसे-जैसे हम हिसार से अन्य स्थानों—सिरसा, हाँसी, करनाल, मुजफ्फर नगर, सहारनपुर, दिल्ली, बुलन्दशहर, मथुरा, आगरा की ओर बढ़ते हैं अग्रवालों की आबादी १० प्रतिशत से घटते हुए ६ प्रतिशत तथा अन्त में ४ प्रतिशत तक रह जाती है। यह एक ऐसा तथ्य है जिसे दृष्टि से ओझल नहीं किया जा सकता।

महाराजा अग्रसेन अग्रोहा के राजा थे या नहीं, महाराजा अग्रसेन अग्रवालों के वंशकर्ता थे या नहीं, इस पर विद्वानों में मतभेद हो सकता है किन्तु इस बात से सभी एकमत हैं कि आज से लगभग २१८२ वर्ष पूर्व आग्रेय जनपद था और इस जनपद में वैश्यों की आबादी सबसे अधिक थी। एक कहावत के अनुसार अग्रोहा में एक लाख वैश्यों के घर थे। ऐसी अवस्था में इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि इस जनपद का कोई-न-कोई संस्थापक या संगठनकर्ता अवश्य रहा होगा। जैसा कि हम प्रारम्भ में ही बता चुके हैं, डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने अपनी 'अग्रवाल जाति का विकास' पुस्तक में महाराजा अग्रसेन को काल्पनिक व्यक्ति सिद्ध करने में दो बातों पर विशेष बल दिया है :—

Remove Watermark Now

(१) महाराजा अग्रसेन का नाम किसी पुराण की वंशावलियों में नहीं आता।

(२) १४वीं शताब्दी तक के लेखों में कहीं पर अग्रसेन का नाम नहीं मिलता।

इन दोनों शंकाओं का समाधान हमारे इस कथन में समन्वित है कि आग्रेय जनपद ऐतिहासिक प्रमाणों तथा डा० श्री परमेश्वरी लाल गुप्त द्वारा प्रस्तुत प्रमाणों से सिद्ध है अतः इस जनपद का संस्थापक और वैश्यों का संगठनकर्ता कोई असाधारण पुरुष था और वह उनके नाम से ही आग्रेय जनपद की स्थापना हुई थी। रही पुराणों में दी गई वंशावलियों में महाराजा अग्रसेन का नाम न मिलने की शंका, इसका समाधान हमारी सम्मति में तो यही है कि गणराज्य की स्थापना महाभारत काल में उस समय हुई जब १८ प्रमुख पुराणों की रचना पूरी हो चुकी थी और महाराजा अग्रसेन द्वापर काल में कलयुग आरम्भ होने से लगभग ८५ वर्ष पूर्व जन्मे अतः उनका नाम प्रमुख पुराणों में न आना स्वाभाविक है। रही साम्प्रदायिक पुराणों की बात, उनकी रचना तो १५वीं शताब्दी के आस-पास हुई थी।

अन्य लेखों से प्रमाणित है कि सं० ११८९ वि० में भी 'अग्रोतकान्वय' शब्द प्रचलित था जिसका अर्थ 'अग्रोहा कुल के' है। इसमें 'अग्र' शब्द का उल्लेख प्रमाणित है और यही 'अग्र' महाराजा अग्रसेन नाम से प्रसिद्ध हुए।

अब मतभेद केवल इतना रह जाता है कि वैश्यों के आग्रेय जनपद के संस्थापक का नाम अग्रसेन है या नहीं। यदि हम आग्रेय नाम को ध्यान से देखें तो हमारी यह शंका भी मिट जाती है। आग्रेय का अर्थ 'अग्रका' स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए। 'अग्र' शब्द स्वयं अग्रसेन शब्द का बोधक है। अतः निःसंकोच महाराजा अग्रसेन को आग्रेय वैश्य जनपद का संस्थापक और अग्रवाल वैश्यों का पूर्वज एवं संगठनकर्ता माना जा सकता है।

महाराजा अग्रसेन अग्रवाल वैश्यों के पूर्वज तथा संगठनकर्ता थे इसका प्रमाण स्वयं वह किंवदन्ती है जिसके अनुसार अग्रोहा में एक लाख वैश्यों के घर थे, महाराजा अग्रसेन की १८ रानियाँ, ५४ पुत्र तथा १८ कन्यायें थीं। इसका सीधा अर्थ यह है कि वर्तमान अग्रवाल वैश्यों में महाराजा अग्रसेन के निज परिवार की सन्तानें तथा अन्य १७ गोत्रीय वैश्यों की सन्तानें सम्मिलित हैं। अतः अग्रोहा पतन के पश्चात् जो वैश्य अग्रोहा से अन्यत्र जाकर बसे वे सब अग्रोहा के नाम से अपने-आपको 'अग्रोतकान्वय वणिक', 'अग्रोदक निवासिना वणिक' या 'अग्रोतकान्वय' के साथ गोत्र लगाकर अपना परिचय देते थे।

इस सन्दर्भ में एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि जब अग्रोहा वैश्यों का जनपद था और अग्रोहा में वैश्यों के एक लाख घर थे तो इतनी विशाल संख्या वाले जनपद में नाई, धींवर, कुम्भकार, स्वर्णकार, चर्मकार, मेहतर आदि भी रहे होंगे और जब अग्रोहा पर विदेशी हमले हुए तो अपनी रक्षा हेतु वे वैश्येतर जातियाँ भी अग्रोहा से बाहर जाकर बसी होंगी और अग्रोतकान्वय कहकर अपना परिचय देती होंगी; क्योंकि

जो भी अग्रोहा से बाहर जाकर बसा वह अग्रोदकान्वय है। परन्तु 'अग्रोहा' से बाहर जाकर बसने वाले वैश्यों का वैश्येतर जातियों से एक बड़ा भेद यह रहा है कि वे अग्रोदकान्वय शब्द से पीछे या तो वैश्य शब्द लिखते हैं या फिर इसके आगे सम्बन्धित व्यक्ति का गोत्र रहता है जैसे 'अग्रोतकान्वय वणिक', 'अग्रोतकान्वय गोयल गोत्री के कुटुम्ब में' आदि इससे सिद्ध है कि अग्रोतकान्वय शब्द का प्रयोग अग्रोहावासियों के लिए होता था और अग्रोहा की अन्य जातियों से अपने-आपको भिन्न जताने के लिए ही अग्रोतकान्वय से पहले या अन्त में 'वैश्य' तथा गोत्र का नाम लिखना आवश्यक समझा जाता था। अब जितने भी शिलालेख या पुस्तकें मिली हैं उन सबमें इसी परिपाटी को देखा जा सकता है। अतः उपरिलिखित विवरण से दो बातें स्पष्ट हो जाती हैं :—

१. अग्रवाल वैश्यों में गोत्र का प्रचलन अग्रोहा में भी था और अग्रोहा छोड़ने के पश्चात् भी उन्हें गोत्रों की याद रही।

२. वर्तमान अग्रवाल वैश्य महाराजा अग्रसेन तथा आग्रेय जनपद के वैश्यों के वंशज हैं।

अग्रवालों के विविध वर्ग

१. विदेशी आक्रमणों के समय जो आग्रेय निवासी राजघराने से बदला लेने की भावना से शत्रु से मिल गये तथा अग्रोहा की पराजय से बहुत से अग्रवाल मारे गए एवं बहुत-सी स्त्रियाँ सती हुईं, सतियों ने उन लोगों को श्राप दिया और उन्हें कुलारि (कुल का शत्रु) कहा जाने लगा। यही शब्द आगे चलकर कलार शब्द में बदल गया और यह वर्ग अपने व्यवहार और व्यापार के कारण अग्रवालों से अलग हो गया।

२. सन् ११९५ में अग्रोहा-पतन के पश्चात् अग्रवालों का एक बड़ा भाग राजस्थान की ओर चला गया जो अपने-आपको मारवाड़ी अग्रवाल नाम से सम्बोधित करने लगा।

३. जो लोग अग्रोहा के आसपास हिसार, हांसी, रोहतक, करनाल, महेम आदि स्थानों पर जा बसे, अपने-आपको अग्रवाल वैश्य कहने लगे। राजस्थान से बाहर बसे इन अग्रवालों को ही 'देशवासी' अग्रवालों की संज्ञा दी गई। नाम-भेद के अतिरिक्त इन दोनों में (मारवाड़ी तथा देशवासी अग्रवालों) में कोई भेद नहीं है। यही कारण है कि इन दोनों वर्गों में खान-पान प्रचलित है और अब परस्पर में विवाह सम्बध भी होने लगे हैं।

किन्तु देशवासी या अग्रवाल वैश्यों में परस्पर भेदभाव है। जो अग्रवाल वैश्य हिसार, रोहतक आदि हरियाणा राज्य में बसे हैं उनमें कोई भेदभाव नहीं है परन्तु देहली तथा उत्तर प्रदेश में बसे अग्रवालों में स्थान-भेद, वंश-भेद, रक्त-भेद आदि कारणों से कई भेद हैं और संगठन की दृष्टि से ये भेद हानिकारक हैं; इसीलिए इन भेदों को

pdfelement
Remove Watermark Now

मिटाने का प्रयत्न १९२१ ई० से लगातार चल रहा है। हम इसकी चर्चा आगे करेंगे।

४. अग्रोहा-पतन के पश्चात् जो अग्रवाल जहाँ जाकर बसे वे वहीं के हो रहे। ४००-५०० वर्षों के मुस्लिम शासन काल में किन्हीं कारणों जब ये लोग अपना नवीन स्थान छोड़कर जहाँ-जहाँ जाकर पुनः बसे वे अपने-आपको नवीन स्थान के नाम से पुकारने लगे। जैसे—

१. महेम से चले अग्रवाल महेमिये अग्रवाल कहलाए।

२. लोहागढ़ से चले अग्रवाल लोहिये कहलाए।

३. मथुरा से चलकर अगरपुर (वर्तमान अलैदादपुर) में जा बसे अग्रवाल मथुरिया अग्रवाल कहलाए।

४. इसी प्रकार बागड़ी, जाँगले, गुजराती, सहरालिये, अवधी, मागधी, मालवी आदि नामों से अग्रवालों के कई प्रमुख स्थानीय भेद हैं।

रक्त-भेद से अग्रवाल वर्ग

(१) रक्त की शुद्धता के आधार पर भी अग्रवालों के कई भेद हो गये। आज से १०० वर्ष पूर्व विवाह-सम्बन्धों में जाति-भेद का बहुत महत्व था। जो भी अपनी जाति को त्याग कर या उसकी मर्यादा को भंग करके किसी दूसरी जाति में विवाह कर लेते थे, वे जाति-च्युत हो जाते थे। यह सब रक्त की शुद्धता बनाये रखने की दृष्टि से किया जाता था। रक्त शुद्धता की इस लहर का प्रभाव अग्रवालों पर भी पड़ा। जो अग्रवाल अपनी जाति में ही विवाह सम्बन्ध करते थे और जाति के रक्त की शुद्धता बनाये रहे, वे बीसा अग्रवाल कहलाये।

बीसा अग्रवाल शब्द के सम्बन्ध में यह विचार भी अपना वजन रखता है कि जब अग्रोहा पर विदेशियों के आक्रमण की सम्भावना हुई तो अग्रोहा के चारों ओर घिरे परकोटा में प्रवेश के नियम कड़े कर दिये गये और अग्रोहा के विश्वासपात्र धनी लोगों को ही बीसा-पत्र (प्रवेश आज्ञा) दिए गए। अतः अग्रोहा-पतन के बाद बीसाधारी अग्रोहा निवासियों के समूह को बीसा अग्रवाल की संज्ञा दी गई, रक्त-शुद्धि से इस शब्द का कोई सम्बन्ध नहीं है।

जो सुधारवादी तथा संगठन-प्रेमी, जाति-बन्धनों को तोड़कर दूसरे वर्गों में विवाह कर बैठे उन्हें बीसा अग्रवालों से भिन्न समझा जाने लगा। अतः देशवासी बीसा अग्रवालेतर अग्रवालों के प्रमुख भेद हैं :—

(१) कदीमी अग्रवाल

(२) दस्सा अग्रवाल

(३) गुडाकू अग्रवाल या हालके अग्रवाल

कदीमी अग्रवालों की आबादी खुर्जा, बुलन्दशहर तथा अलीगढ़ में बहुत अधिक है।

हाल के अग्रवाल (गुडाकू) भिन्न-भिन्न नामों से मेरठ, फुजफ्फरनगर, बुलन्दशहर तथा डिवाई में पाये जाते हैं। विविध स्थानों पर इस वर्ग को गाटे, गुडाकू, गिदोडिया, दिलबालिया नाम से पुकारा जाता है।

गुडाकू अग्रवाल अपने-आपको राजवंशी अग्रवाल भी कहते हैं किन्तु इनका सम्बन्ध जानसठ के राजा रतनचन्द के वंशज राजा की बिरादरी, राजाशाही, या राजवंशी अग्रवालों से नहीं है। ऐसा लगता है कि यह वही वर्ग है जिसका उल्लेख राजा रतनचन्द के वंशज राजवंशी अग्रवालों के वर्णन के प्रसंग में आहार (बुलन्दशहर) से पाये गये विक्रम सम्वत् ९४३ के पाषाण लेख में पाये जाने वाले 'राज्य क्षत्रयान्वय वणिक' से है।

दस्सा अग्रवालों की मान्यता है कि महाराजा अग्रसेन के पुत्रों से विवाहित दशानन की कन्या से उत्पन्न सन्तान दस्सा और विशानन की कन्या से उत्पन्न सन्तान बीसा अग्रवाल हुई। कुछ लोगों ने महाराजा अग्रसेन की नागपत्नी से उत्पन्न सन्तान को दस्सा माना है। यदि इस मान्यता को सम्पुष्ट किया जाये तो इससे रक्त भेद की पुष्टि ही होती है। यदि रक्त भेद के कारण दस्सों की उत्पत्ति हुई होती तो इनकी गणना वर्ण शंकर जातियों में होती किन्तु ऐसा नहीं है।

बीसा और बीसाएतर अग्रवालों में पारस्परिक भेदभाव का कारण श्री सत्यकेतु जी विद्यालंकार ने अपने 'अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास' पुस्तक में रक्त की शुद्धि और अशुद्धि माना है और डा० श्री परमेश्वरीलाल गुप्त ने अपनी 'अग्रवाल जाति का विकास' पुस्तक में जाति बहिष्कृत लोगों के समूह को दस्सा माना है। हमें इन दोनों ही मान्यताओं से थोड़ा मतभेद है। हमारी मान्यता तो यह है कि मुस्लिम आक्रमण काल में लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर भागते थे और प्रायः यह पलायन सामूहिक रूप से होता था। जो वर्ग अपना स्थान छोड़कर दूसरे स्थानों पर जाता था वह निर्धन या सामान्य वर्ग होता था। धनी वर्ग तो अपने वैभव के बल पर बच जाता था, आक्रमण-कारियों का साथ तथा धन देकर अपने स्थान पर जमा रहता था। एक स्थान से दूसरे स्थानों पर जाकर बसने वाले व्यक्तियों का यातायात और आर्थिक कठिनाइयों के कारण पूर्व स्थानों से सम्बन्ध कट जाता था। जब वे परस्पर विवाह सम्बन्ध करते थे, उन्हें अपनी बदलती परिस्थितियों में पुरानी परम्पराओं को छोड़ना भी पड़ता था। धनी अग्रवालों की दृष्टि में यह अपराध था। कुछ समय पश्चात् ऐसे वर्गों के छोटे-छोटे समूह बन गए और अग्रवालों की मूल शाखा से इनका सम्बन्ध कट गया। कालान्तर में अग्रवालों ने इन्हें अपने से भिन्न संज्ञा दे दी किन्तु वे अपने आप को अग्रवाल ही मान रहे। दस्सा और बीसा के भेदभाव का मुख्य कारण यही है।

दूसरा कारण यह भी रहा प्रतीत होता है कि अग्रवालों के सुधारवादी आन्दोलन कर्ताओं से असहमति प्रकट करने के लिए कट्टरपंथी लोगों ने सुधारवादी अग्रवालों को अपने से हेय माना और यह भेदभाव बढ़ गया।

pdfelement
Remove Watermark Now

कदीमी अग्रवालों की मान्यता है कि वे दस्सा अग्रवालों से भिन्न हैं। वे अपने को विशुद्ध अग्रवाल मानते हैं। इनकी दृष्टि में बीसा और दस्सा दोनों ही हेय हैं। इनकी मान्यता है कि इनके पूर्वज एक युद्ध में लड़ने गए। जब वे युद्ध से लौटे तो अग्रोहावासी देश छोड़कर अन्यत्र चले गये थे। अतः युद्ध से लौटे लोग अपने पूर्व स्थान पर ही डटे रहे और कदीमी अग्रवाल कहलाये।

एक किंवदन्ती यह भी है कि दशानन की कन्या से सन्तान पहले हुई और विशानन की कन्या से बाद में हुई। अतः दशानन की कन्या की सन्तान होने के कारण वे पहले के अर्थात् कदीमी अग्रवाल हैं।

परन्तु उपर्युक्त दूसरी मान्यता का कोई आधार नहीं है। हमारी सम्मति में जो वैश्य महाराजा अग्रसेन के निजी परिवार से भिन्न अग्रोहा में रहने वाले वैश्य थे, (एक लाख वैश्य परिवार) कदीमी अग्रवाल उन्हीं वैश्यों की सन्तान हैं। अतः वे आग्रेय जनपद के कदीमी अग्रवाल कहलाने के अधिकारी हैं।

श्री परमेश्वरीलाल जी गुप्त ने जाति बहिष्कार के आधार पर दस्सा जातियों का उदय बताया है, किन्तु उसमें एक यह आपत्ति है कि जो लोग जाति च्युत या बहिष्कृत होते थे उन्हें 'छिके हुए' या 'छिकेल' कहते थे, 'दस्सा' नहीं कहते थे। फिर जाति बहिष्कृत लोग कुछ समय के पश्चात् जाति दण्ड देकर जाति में पुनः वापस भी हो जाते थे। साथ ही दस्से अग्रवालों का उत्तर प्रदेश में एक समूह रहा है न कि एक-एक व्यक्ति। अतः इन्हें छिके अग्रवालों का समूह कैसे मानें? ऐसी अवस्था में जाति बहिष्कृत लोगों को दस्सा कहना भी न्याय संगत नहीं लगता। हमारी तो यह मान्यता है कि मुस्लिम काल में निर्धन, साधारण स्थिति के तथा देश भक्त अग्रवालों को मुस्लिम शासकों तथा स्वयं अग्रवालों के हाथों नाना प्रकार के कष्ट उठाने पड़े हैं और उन्हीं कष्टों में से हीन भावना के द्योतक शब्दों से इन देश-भक्त अग्रवालों को सम्बोधित किया गया। जब इन वर्गों ने अपने अस्तित्व को पहिचाना तो अपने गौण शब्द कदीमी, दस्सा आदि नामों को अपनी जातीय सभाओं के प्रस्तावों द्वारा छोड़कर विशुद्ध अग्रवाल नाम स्वीकार कर लिया और अब इन संगठनों को 'वैश्य अग्रवाल' नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस सम्बन्ध में 'वैश्य संगठन' स्तम्भ में हम अधिक प्रकाश डालेंगे।

६. अग्रवालों में एक महत्वपूर्ण वर्ग और भी है जो 'राजशाही' अग्रवाल कहलाता है। जानसठ (मुजफ्फर नगर) के राजा रतनचन्द इस वर्ग के जन्मदाता हैं। मुगल वंश के बादशाह फर्रुखसियर के समय सैयद बन्धु मुगल राज्य के प्रसिद्ध सेनापति थे। ये सैयद बन्धु भी जानसठ के रहने वाले थे अतः राजा रतनचन्द तथा सैयद बन्धुओं में घनिष्ठ प्रीति थी। सैयद बन्धुओं की सहायता से राजा रतनचन्द का मुगल साम्राज्य में बहुत सम्मान बढ़ा। राजा रतनचन्द ने अग्रवालों में भी बहुत से सुधार किये किन्तु अन्य अग्रवालों को वे पसन्द न आये। जब राजा रतनचन्द ने देखा कि उनके साथ वे न चल सकेंगे तो उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ एक नई बिरादरी बना ली

जो आगे चलकर राजा की बिरादरी या राजाशाही अग्रवाल नाम से प्रसिद्ध हुई। इनकी अधिकांश आबादी मुजफ्फरनगर तथा इसके आस-पास जानसठ, मेरठ, बिजनौर, नजीबाबाद में पाई जाती है। इस वर्ग के लोग कुशल प्रबन्धक, व्यवस्थापक एवं चतुर शासक होने के कारण नौकरियों की ओर जाना पसन्द करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि दो सौ वर्ष पूर्व अग्रवालों में यह एक नया वर्ग उत्पन्न हुआ।

लखनऊ के संग्रहालय में उपलब्ध बुलन्दशहर जिला अन्तर्गत आहार नामक स्थान से प्राप्त महाराजा भोज प्रतिहार के समय का एक शिलालेख है जिसमें 'राजक्षत्रयान्वय वणिक' का परिचय दिया है जो माधुरी वर्ष ४, सं० १, पृष्ठ ५८, ५९, ६० तथा ६१ में प्रकाशित हुआ है।

स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल और श्री गोपालदत्त पन्त शास्त्री ने इस शब्द को राजाशाही वैश्य लिखा है। यदि यह मान्यता सिद्ध हो जाय तो राजाशाही वैश्य अग्रवालों पर श्री परमेश्वरीलाल गुप्त के निम्नांकित दो प्रश्न समाप्त हो जाते हैं कि :—

१. राजवंशी राजा रतनचन्द के समूह से विकसित समाज नहीं है; क्योंकि वे १७॥ या १८ गोत्र बताते हैं।

२. या राजवंशियों के १७॥ गोत्र नहीं हैं।

अग्रवालों के उपर्युक्त भेदों पर यदि हम गम्भीरता से विचार करें तो ये भेद-भाव दो सौ, तीन सौ वर्षों से पहले के नहीं हैं। अग्रोहा का सम्पूर्ण पतन १२वीं शताब्दी (११९५ में शहाबुद्दीन गौरी के आक्रमण के समय) में हुआ और अग्रोहा निवासी अग्रोहा छोड़कर छिन्न-भिन्न हो गए। वे जहाँ-जहाँ जाकर बसे अपने को अग्रोतकान्वय (अग्रोहा कुल के) वैश्य कहते और उनमें कोई भेद-भाव न था। किन्तु मुस्लिम आक्रमणों के कारण जब वे अपने नये स्थानों को छोड़कर अन्यत्र जाकर बसे तो उनमें स्थान के नाम से परिस्थितिवश, जाति बन्धनों को तोड़कर विवाह-सम्बन्ध करने के फलस्वरूप, कई भेद हो गए और इन वर्ग भेदों की चरम सीमा हमें मुगलकाल में ही देखने को मिलती है।

७. यही वह काल है जबकि अग्रवाल वैश्यों में राजनीतिक दृष्टि से भी भेदभाव उत्पन्न हुआ। जो अग्रवाल वैश्य मुगलों का साथ देते थे उन्हें मुगल दरबार में सम्मान और सम्पत्ति मिलती थी किन्तु जो देशभक्त अग्रवाल वैश्य मुगलों से टक्कर लेते रहे, उन्हें देश निकाला दिया गया, उन्हें अपशब्दों से सम्बोधित कर अपमानित किया गया और नाना प्रकार के कष्ट पहुँचाए गए। ऐसे देशभक्त अग्रवालों में से एक वर्ग बिहार के माहुरी वैश्य हैं। मुसलमानों द्वारा सताए जाने पर कुछ लोग मथुरा से चलकर पहले राजस्थान फिर बिहार में जाकर बसे। मुगलों ने इन देशभक्त अग्रवाल वैश्यों को अपमानित करने के लिए माहुर (विष की गाँठ) नाम दिया और कालान्तर में ये लोग अपना नाम भूल गए। वे अब अपने आपको माहुरी वैश्य कहते हैं किन्तु आज भी वे अपना निकास मथुरा बताते हैं, मथुरासनी देवी की पूजा करते हैं, विवाह के समय मथुरा की मिट्टी और आम्र वृक्ष की डाली विवाह मंडप में रखते हैं।

pdfelement
Remove Watermark Now

ऐसे ही देशभक्त अग्रवाल वैश्यों की एक शाखा जिसे मुगलों ने अपमानित करने के लिए माहुर (विष की गाँठ) नाम दिया, वे माहौर नाम से ग्वालियर, आगरा, अलीगढ़, एटा, फर्रुखाबाद आदि स्थानों पर बिखर गये और यह वर्ग अब अपने-आपको माहौर तथा माथुर वैश्य कहता है। दूसरा वर्ग अलवर के आस-पास बस गया और महावर नाम से प्रसिद्ध है।

अग्रवालों का यह राजनीतिक भेद उसी प्रकार है जैसे कि मुसलमानों ने भारत के आर्य लोगों को हिन्दू (काफिर, चोर आदि) नाम देकर अपमानित किया और फिर यही 'हिन्दू' नाम आज सर्वत्र प्रचलित हो गया है। हम अपने कथन की सत्यता के प्रमाण में वैश्यों की चार प्रमुख शाखाओं की गोत्र सूची प्रस्तुत करते हैं जो आज भी इन वैश्यों की मूल शाखा को प्रकट करती है। गोत्रों की समानता इस सत्यता का एक प्रबल आधार है जिससे सिद्ध होता है कि मुगल काल में मुगलों द्वारा अपमानित देशभक्त वैश्य उतने ही अच्छे अग्रवाल हैं जितने कोई और :—

वैश्यों के गोत्रों में समानता का चित्र

	अग्रवाल	महावर	माहुर या माहौर	माथुर
१.	गर्ग	गर्गस	गाँगिल	गिरगस
२.	गोयल	गोयलस	गोयल	गोयलस
३.	बंसल	बाच्छलस	बांसिल	बांसलस
४.	सिंहल	सिंगलस	सांगलस	सांगलस
५.	मंगल	मांडलस	मांडिल	मांडलस
६.	बिन्दल	बिन्दलस	बान्दिल	बांदलस
७.	कुच्छल	कुचलस	कौछिल	कोछलस

उपर्युक्त सात गोत्रों में समानता का जो चित्र दिया गया है उससे स्पष्ट है कि मुगलकाल तक ये चारों वर्ग एक थे और सभी अग्रवाल थे।

मुगलकाल में मुसलमान शासकों द्वारा देशभक्त अग्रवालों को माहुर (विष की गाँठ) अर्थात् परम शत्रु कहा गया और कालान्तर में 'हिन्दू' शब्द की भांति माहुर या माहौर नाम वैश्यों के इस वर्ग के साथ लग गया।

प्रसन्नता की बात यह है कि अग्रवालों के भेदभाव अब मिटते जा रहे हैं और सुधार की जो लहर सन् १९२१ से चली उसके फलस्वरूप स्थान भेद के कारण उत्पन्न अग्रवालों में व्याप्त वर्ग भेद मिट रहा है। लोहिया, महमिये तथा मथुरिया अग्रवाल भी अपने गौण स्थानीय नामों को छोड़कर केवल 'अग्रवाल' शब्द अपना चुके हैं।

८. धर्म भेद के आधार पर भी अग्रवालों के तीन प्रमुख भेद हैं :—

(१) वैष्णव (२) शैव (३) जैन। इनके अतिरिक्त आर्यसमाजी और सिख अग्रवाल भी हैं परन्तु वैष्णव, शैव, जैन और आर्यसमाजी अग्रवालों में कोई उल्लेखनीय भेद नहीं है। अग्रवालों का यह वर्ग जो जैन धर्म को मानता है, अब भी अग्रवालों के

साथ विवाह सम्बन्ध करता है। जैन अग्रवालों और वैश्य अग्रवालों के विवाह देहली और पंजाब में तो साधारण बात है। खान-पान की दृष्टि से भी इनमें कोई भेदभाव नहीं है।

स्थान भेद से अग्रवाल वर्ग

मरवाड़ी अग्रवाल—अग्रवाल वैश्यों का जो वर्ग अग्रोहा छोड़कर राजस्थान के शेखावाटी और मारवाड़ में जाकर बसा वह आगे चलकर मारवाड़ी अग्रवाल कहलाया। यह वर्ग सिकन्दर के आक्रमण काल (ई० ३२६ वर्ष पूर्व) से लेकर मुसलमानों के आक्रमण सन् ११९४-९५ तक समय-समय पर अग्रोहा छोड़कर मारवाड़ में जाकर बसा और जब ये लोग १८३५ से १८६० तक मारवाड़ छोड़कर भारत के विभिन्न भागों में जाकर बसे, तो वे अपने आपको मारवाड़ी अग्रवाल कहने लगे। बहुत समय तक इनका बेटी व्यवहार केवल अपने वर्ग में ही होता था, किन्तु अब कुछ विवाह अन्य अग्रवालों में भी होने लगे हैं।

गुजराती अग्रवाल—जो वैश्य अग्रोहा ध्वंस होने पर अग्रोहा से चलकर गुजरात की ओर गये, मालवा में आगर नामक स्थान बसाकर रहने लगे। आगे चलकर ये लोग आगर को अपनी जन्मभूमि मानने लगे और गुजराती अग्रवाल के नाम से प्रसिद्ध हुए।

मथरिया अग्रवाल—सन् १३०२ में अलाउद्दीन खिलजी के साथ हुई मुठभेड़ में मथुरा में बसे अग्रवालों का एक दल परास्त होकर अलीगढ़ जिले में फैल गया और काली नदी के तट पर अगरपुर नगर बसाया। मथुरा छोड़कर अगरपुर जा बसने पर यह वर्ग मथुरिया अग्रवाल नाम से प्रसिद्ध हुआ। अगरपुर (वर्तमान अलैदादपुर) में बसने पर इस वर्ग का मुख्य व्यवसाय जमींदारा तथा साहूकारा था। सन् १६०० के आस-पास काली नदी की बाढ़ में अगरपुर समूल नष्ट हो गया और यह वर्ग दतावली, बरला, जलाली, छर्रा, बिजौली आदि कस्बों में चला गया। इस वर्ग में सन् १८८० से ही आर्यसमाज का अच्छा प्रचार रहा है।

वरण वाल—वैश्यों का यह वर्ग भी अपने को अग्रवाल की शाखा मानता है। इनका कहना है कि वरणवाल (वर्तमान बुलन्दशहर) से निकलने से स्थान भेद के कारण इनकी अलग शाखा बन गई। उनके पूर्वज महाराजा अग्रसेन थे।

महेमिया (मलेच्छभक्ष) अग्रवाल—अग्रोहा छोड़कर बहुत से अग्रवाल महेम में आकर बस गये थे किन्तु मुस्लमानों ने वहाँ भी अग्रवाल व्यापारियों पर अत्याचार आरम्भ कर दिये अतः लोग अमृतसर के पास बटाला में चले आए। रास्ते में इनके काफिले को म्लेच्छों ने घेर लिया किन्तु इन्होंने बड़ी बहादुरी से म्लेच्छों का आक्रमण परास्त कर दिया और फिर म्लेच्छों के आक्रमणों से बचने के लिए इस दल ने मलेच्छों के वेष में ही अपनी यात्रा आरम्भ की। जब यह दल बटाला पहुँचा तो वहाँ के लोग इस दल को महेमिये अग्रवाल (म्लेच्छभक्ष) कहने लगे। किन्तु जो अग्रवाल मेहम छोड़कर भारत के अन्य भागों में जा बसे थे वे महेमिये कहलाते हैं।

pdfelement
Remove Watermark Now

मागधी अग्रवाल—मगध (बिहार) में डाल्टन गंज पलामू, गया आदि जिलों में बसे अग्रबाल अपने आपको मागधी अग्रवाल कहते हैं। इनकी अपनी अखिल भारतीय मागधी अग्रवाल सभा है।

मालवीय अग्रवाल—मध्य प्रदेश में विदिशा और आस पास बसे अग्रवाल अपने आपको मालवीय अग्रवाल कहते हैं। इनकी भी अपनी पृथक् सभा है।

अग्रहारी या अगरहारी वैश्य—बिहार, वाराणसी तथा मध्य प्रदेश में इस वर्ग की आबादी है। यह वर्ग अपना निवास स्थान आगरा तथा अग्रोहा को ही बताता है। इस सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि महोपाध्याय डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के लेखानुसार अलवर से प्राप्त अकबर कालीन (सं० १६६४ वि० माघ वदि १३ शनिवार के) एक लेखानुसार आगरा का पुराना नाम अग्रपुर है तथा मध्यकालीन जैन काव्यों में आगरा का नाम उग्रसेनपुर है। अतः अग्रहारी जाति का निकास आगरा रहा हो तो आश्चर्य नहीं। वैसे इस वर्ग के 'अग्रहारी मित्र', प्रयाग के विद्वान सम्पादक श्री भवानी प्रसाद गुप्त के विचार से महाराजा अग्रसेन के पुत्र हरि की सन्तान ही अग्रहारी वैश्य हैं। किन्तु गोत्रों की समानता के कारण यह जाति अग्रवालों की एक शाखा है और बिहार के वर्तमान माहुरी वैश्य भी इसी वर्ग की शाखा हैं।

गहोई वैश्य अग्रवाल—यह जाति बुन्देलखण्ड में विशेष रूप से पाई जाती है। उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जिले में इन वैश्यों की बड़ी संख्या है। इस वर्ग के १२ गोत्र अग्रवालों से मिलते हैं। इस वर्ग का विकास भी अग्रवालों की भाँति वैशालक वंश से हुआ है। अतः यह वर्ग अग्रवालों का अभिन्न अंग है।

बहत्तरिया वैश्य—यह वर्ग भी अपने आपको अग्रवालों का अंग मानता है। कहा जाता है कि विदेशी आक्रमण के समय अग्रोहा के जिन ७२ परिवारों ने शत्रुओं का साथ दिया और अग्रोहा के साथ विश्वासघात किया वे परिवार विश्वासघात के अपराध के कारण अग्रवालों से अलग कर दिये गये। चन्द्रराज भंडारी ने इनकी सन्तान को कुलारि बताया है।

व्यवसाय भेद से अग्रवाल

महाजन—जो वैश्य लेन-देन या साहूकारे का काम करते हैं वे मारवाड़, हरियाना, उत्तर प्रदेश तथा देश के अन्य भागों में भी महाजन के नाम से पुकारे जाते हैं। महाजन शब्द बड़े व्यापारियों (अग्रवाल का द्योतक) को कहा जाता है। मारवाड़ में महाजन अग्रवालों का विशेषण है किन्तु पंजाब में अपने गौरव के कारण महाजन नामक पृथक जाति है जिसमें अग्रवालों के समान ही गोत्र प्रचलित हैं और ये लोग अपने आपको अग्रवालों की ही एक शाखा मानते हैं।

केसरबानी (कत्रबानी)—इन वैश्यों की संख्या बिहार राज्य में बहुत अधिक है। इनके गोत्र अग्रवालों से मिलते हैं। बिहार में केसर का व्यापार करने के कारण ही इसजाति का नाम केसरवानी पड़ा है और यह अलग जाति बन गई है अन्यथा यह जाति अग्रवालों का ही एक वर्ग है।

निचौंधिया वैश्य अग्रवाल (मोदी अग्रवाल)

बिहार राज्यान्तर्गत छोटानागपुर की पहाड़ी उपत्यकाओं में बसे हजारी बाग जिले के बन प्रान्त में रहने वाले अग्रवालों का एक वर्ग अपने आपको निचौंधिया वैश्य अग्रवाल या मोदी अग्रवाल नाम से पुकारता है। इनके पूर्वज १०० वर्ष से भी अधिक समय हुआ नारनौल के निचौंध ग्राम से चल कर छोटा नागपुर में रामगढ़ (हजारी बाग) राज्य में आये और राज्य के व्यापार को संभालने के कारण मोदी पदवी से विभूषित हुये। ये साढ़े सत्रह गोत्रों और महाराजा अग्रसेन को मानते हैं। इनका रहन-सहन स्थानीय साधारण भेद के अतिरिक्त अग्रवालों से मिलता है। "मोदी अग्रवाल समाज" नाम से हजारी बाग में एक समाज संगठन है। सम्प्रति श्री मुरलीधर जी इस सभा के प्राण हैं।

सभी वर्गों के १८ गोत्र कैसे ?

हमने ऊपर अग्रवालों के जितने भी वर्गों का वर्णन किया है उनमें से प्रायः सभी अपने १८ गोत्र ही बताते हैं किन्तु जब हम इन वर्गों की उत्पत्ति पर विचार करते हैं तो सभी वर्गों में १८ गोत्रों का प्रचलन असम्भव जान पड़ता है। जो वर्ग अग्रोहा छोड़ने के पश्चात नये स्थानों पर जाकर बसे या परिस्थितियों के कारण नये नाम से पुकारे जाने लगे तो यह आवश्यक नहीं कि सभी गोत्रों के अग्रवाल एक ही वर्ग में सम्मिलित हुए हों। कई वर्गों में तो आज भी ७-८ गोत्रों से अधिक के परिवार नहीं हैं। यहीं तक नहीं आज भी सभी स्थानों, नगरों या गाँवों में सभी गोत्रों के अग्रवाल एक स्थान पर नहीं मिलते। तब हरेक वर्ग में सभी गोत्रों का प्रचलन कुछ अनौखी बात जान पड़ती है।

फिर सभी वर्गों में सभी १८ गोत्रों के प्रचलन का कारण क्या हो सकता है? हमारी सम्मति में तो इसका एक ही कारण है कि अग्रवालों में १८ गोत्र मान्य हैं और बीसा अग्रवालों ने उन्हीं वर्गों को मान्यता प्रदान की जिनके १८ गोत्र हैं अतः इस भय से कि कोई वर्ग बीसा अग्रवालों की मान्यता से वंचित न रहे, सभी ने अपने १८ गोत्रों की घोषणा की। आज भी यदि इन वर्गों में १८ गोत्रीय परिवार खोजे जायें तो यदि असम्भव नही तो कठिन अवश्य है। अतः ऐसे सभी वर्गों को आस्वस्थ करना चाहिए कि यदि किसी वर्ग में केवल ७-८ गोत्र ही प्रचलित हैं तो यह बात स्वीकार करने में कोई भय या लज्जा अनुभव करने की आवश्यकता नहीं। न इसमें किसी प्रकार की हीनभावना आनी चाहिए।

pdfelement
Remove Watermark Now

९

मुगलकाल के कुशल अग्रवाल प्रशासक एवं घराने

बनारस का राय परिवार

राय रामप्रताप, बनारस

मुगल सम्राट अकबर के राजकाल में प्रतिभाशाली व्यक्तियों को उचित स्थान मिला। ऐसे ही प्रतिभाशाली व्यक्तियों में अग्रवाल जाति के राय रामप्रताप जी बनारस निवासी हुए हैं। आप अपनी प्रतिभा और योग्यता के बल पर अकबर के जनाने महल के दरोगा नियुक्त हुए थे और अकबर ने इनकी सेवाओं से प्रभावित होकर इनको 'राय' का खिताब प्रदान किया था जो आज भी इनके वंश में पूर्ववत् चला आता है। राय रामप्रताप को 'आली खानदान' का भी सम्मान दिया गया था और शाही मौहरांकित नौलखा हार भी भेंट किया गया था जो आज भी इनके खानदान में सुरक्षित है। लगभग सम्पूर्ण राय परिवार मुगल दरवार की सेवा में रत रहा और अपार धन, वैभव और ऊँचे-ऊँचे पदों से सम्मानित होता रहा।

राय इन्द्रमल

बनारस के राय परिवार के राय इन्द्रमल ने मुगल सम्राट शाहजहाँ के समय में, दीवान का महत्वपूर्ण पद प्राप्त किया और इन्हें राज्य से "राजा" का खिताब मिला।

राय ख्यालीराम

राय इन्द्रमल के पौत्र राय ख्यालीराम का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके समय में मुगल राज्य निर्बल हो चला था और ब्रिटिश राज्य का विस्तार होने लगा था, बंगाल ब्रिटिश शासन में आ चुका था और बिहार की ओर ब्रिटिश शासन बढ़ रहा था। ऐसे समय में राय ख्यालीराम मुगल सम्राट शाह आलम के वकील थे

और बिहार प्रान्त के नायब दीवान सूबा भी थे। शाह आलम इन्हें इतना मानता था कि उनके गुप्त कार्य राय ख्यालीराम द्वारा ही सम्पन्न होते थे। इन्हीं के प्रयत्न से शाह आलम और अंग्रेजों की सन्धि हुई और राय ख्यालीराम बिहार के डिप्टी गवर्नर बने। लार्ड क्लाइव ने इन्हें 'राजा बहादुर' की पदवी से सम्मानित किया था और इन्हें बिहार राज्य की मालगुजारी बसूली का ठेका १९ लाख रुपये में दे दिया था। राजा ख्यालीराम के सुप्रबन्ध से अंग्रेज कर्मचारियों की लूट-खसोट तथा अत्याचार समाप्त हो गए और प्रजा ने सुख की साँस ली। इस प्रकार बिहार का राज्य प्रबन्ध कुशलतापूर्वक शान्ति से होने लगा।

जब राय ख्यालीराम ने अंग्रेजों का साथ देना आरम्भ किया तो मुगल सम्राट ने इनकी इलाहाबाद जिलान्तर्गत महगाँव परगना की जागीर जब्त कर ली, जिसे लार्ड क्लाइव ने सम्राट शाह आलम को विवश करके पुनः वापस कराई।

राय ख्यालीराम ने बिहार में अद्भुत शक्ति प्राप्त की थी। वे स्वभाव से बड़े दयालु और धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। इनके जीवन काल में एक बार एक मुसलमान यात्री अपने बच्चों के साथ फारस से भारत आया और आजिमाबाद में आकर ठहरा। राय ख्यालीराम भी उन दिनों आजिमाबाद में ही रहते थे। वह मुसाफिर रात को अचानक बीमार पड़ा और प्रातःकाल अपने चार बच्चों को अनाथ छोड़कर स्वर्ग सिधारा। उस समय के राजनियम के अनुसार मुसाफिर का सब सामान राज्य कर्मचारियों ने अपने कब्जे में कर लिया और चार बच्चे निराश्रय हो गए। जब यह दुखःद समाचार राय ख्यालीराम तक पहुँचा तो वे तत्काल उन चारों बच्चों को अपने घर ले आए और उनका पालन-पोषण अपने बच्चों की तरह किया। उनकी पढ़ाई के लिए एक मुसलमान मौलवी रखा गया। ऐसे उदार हृदय के धनी थे राय ख्यालीराम।

राय बालगोविन्द

राय ख्यालीराम के पुत्र राय बालगोविन्द ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल में खूब चमके। सन् १७७७ ई. में वारेन हेस्टिंग्स ने इन्हें बलिया और टाँडा परगने की जागीर भेंट की। सन् १७९२ ई. नें इस जागीर के बदले में इन्हें ४०००) मासिक की पेंशन मिलने लगी। इनकी मृत्यु सन् १८१० ई. में हुई।

राय पटनीमल

राय बालगोविन्द के दो पुत्र थे--(१) राय पटनीमल, (२) राय बंशीधर इनमें से राय पटनीमल ने बड़ी ख्याति प्राप्त की। राय पटनीमल का जन्म सन् १७१ ई० में हुआ था। इन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेवा स्वीकार की और सन् १८० ई० में मेजर जनरल बेलेस्ली के समय अवध के नवाब और ग्वालियर के महारा सिंधिया की अंग्रेजों के साथ हुई सन्धि में राय पटनीमल ने मुख्य भूमिका अदा की बादशाह अकबर द्वितीय ने इनकी सेवा से प्रभावित होकर इन्हें 'राजा' की पदवी

pdfelement
Remove Watermark Now

प्रदान की तथा गोहट के महाराज ने अतर परगने में एक जागीर भेंट की। राय पटनीमल ने अवध के नवाब और अंग्रेजों के बीच पारस्परिक झगड़ों को मिटाने में बड़ा योगदान किया। इन झगड़ों को निपटाने के लिए लार्ड काउले की अध्यक्षता में बने कमीशन के भी आप दीवान नियुक्त किए गये थे।

आगे चलकर राय पटनीमल ने राजकाज छोड़ दिया और धार्मिक जीवन व्यतीत करने लगे। इन्होंने अपने जीवनकाल में अनेक मंदिर, जलाशय, धर्मशाला बनवाए और मथुरा, हरिद्वार, गया तथा ज्वालामुखी आदि के महत्वपूर्ण धार्मिक स्थानों का जीर्णोद्धार कराया, जिनसे उनका धर्म-प्रेम आज भी झलकता है।

राय पटनीमल ने मथुरा में कई लाख रुपये की लागत से शिवताल का निर्माण सन् १८०७ ई० में (सं० १८६४ ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी दिन शुक्रवार को) कराया था। मथुरा में राय पटनीमल का निवास स्थान, अचलेश्वरम, दीर्घ विष्णु तथा वीरभद्र के मंदिर इनके नाम को आज भी अजर-अमर किए हुए हैं। मथुरा में कृष्ण जन्मभूमि का स्थान भी इन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से क्रय किया और आजकल उसी स्थान पर कृष्ण जन्मभूमि के विशाल भवनों का निर्माण-कार्य हुआ है। सन् १८२९ ई० में राय पटनीमल ने बनारस जिले में नोबतपुर के पास कर्मनाशा नदी पर पत्थर का एक सुदृढ़ एवं सुन्दर बाँध बंधवाया था और इसके उपलक्ष्य में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की ओर से लार्ड विलियम बैंटिंग ने इन्हें 'राजा बहादुर' की पदवी प्रदान की थी। राजा पटनीमल ने दिल्ली, मथुरा और बनारस में ऐसे अनेकों स्मारक छोड़े हैं जो आज भी इनकी धर्मप्रियता की याद दिलाते हैं।

राय पटनीमल के पश्चात् इनके पुत्र राय श्रीकृष्ण और राय रामकृष्ण ने भी अंग्रेजों की निरन्तर सेवा की। सन् १८५७ ई० के स्वतन्त्रता आन्दोलन के दमन में इसी वंश के राय नारायण दास ने अंग्रेजों का साथ दिया और फलस्वरूप इनका परिवार आज तक वैभवशाली है।

देहली का खजांची परिवार

७. लाला राजाराम, दिल्ली

जैसा कि हम बता चुके हैं अग्रवाल वैश्य जाति के कुछ प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने मुगल सम्राट अकबर के समय अच्छा यश, धन, वैभव प्राप्त किया। ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्तियों में से ही लाला राजाराम का नाम उल्लेनीय है। उन्होंने सम्राट अकबर के दरबार में बड़ा नाम कमाया। मुगल राज्य की ओर से सहारनपुर में एक मंडी बनाने का कार्य लाला राजाराम को सौंपा गया जिसे उन्होंने बड़ी योग्यता से पूरा किया। अतः पारितोषिक के रूप में इन्हें गोलरा में एक जागीर भेंट की गई थी। इनके प्रभाव के कारण इनके परिवार ने व्यापार में बड़ी उन्नति की।

जब अंग्रेजों ने दिल्ली पर अपना शासन स्थापित किया तो लाला राजाराम के वंशजों के हाथ में लेन-देन का कारोबार सबसे बढ़ा-चढ़ा था अतः सन् १८२५ ई०

में लाला शालिगराम को ब्रिटिश सरकार ने खजांची के महत्वपूर्ण पद पर नियुक्त किया। सन् १८५७ में अंग्रेजों की मदद करने के उपलक्ष्य में लाला सालिगराम को बजीर पुर ग्राम जागीर में मिला। इस प्रकार देहली का खजांची परिवार अभी तक प्रसिद्ध है।

दिल्ली का तोपखाने वालों का परिवार

दिल्ली के तोपखाने वालों के पूर्वज सबसे पहले कश्मीर में दीवान थे। उन्हें बहुत सम्मान प्राप्त हुआ था और इनका प्रभाव बढ़ा भी था, किन्तु किन्हीं कारणों से वे कश्मीर से चले आये। इनके परिवार के हट्टीराम जींद के दीवान रहे। इनके पुत्र लाला डूंगरमल जी तथा लाला नरसिंह जी ने भी जींद में दीवान के पद पर कार्य किया। दीवान नरसिंह के पुत्र जयसिंह भी जींद के दीवान बने। दीवान जयसिंह देहली आ गये और मुगल सम्राट शाह आलम के यहाँ तोपखाने के अफसर नियुक्त हुए। इनके पश्चात् भी तोपखाने का महकमा इनके वंश क्रमानुसार सन् १८५७ तक चलता रहा, अतः इनके परिवार को तोपखाने वालों के नाम से आज तक सम्बोधित किया जाता है।

मुगल सम्राट की ओर से इनके परिवार को "राजा" की पदवी भी प्रदान की गई थी।

सन् १८५७ में इस परिवार के राजा दीनानाथ जी मुगलों के तोपखाने के अफसर थे, किन्तु इन्होंने अंग्रेजों का साथ दिया और उनकी बड़ी मदद की अतः ब्रिटिश सरकार की ओर से इन्हें बड़े इनाम और सम्मान दिये गये।

देहली का गुड़ वालों का परिवार

अहमद शाह अब्दाली ने दिल्ली पर पहला आक्रमण सन् १७४८ में किया और सन् १७६५ तक उसने कई बार आक्रमण किये, अतः दिल्ली की दशा उस समय बड़ी अस्तव्यस्त थी। उन्हीं दिनों गुड़ वालों के परिवार में ला० राधाकिशन ने अपनी सूझबूझ से बड़ा नाम कमाया। वे बड़े प्रभावशाली और प्रतापी व्यक्ति थे। उन्होंने अपने कारोबार को बहुत उन्नत किया।

यह परिवार गुड़ के व्यापार के कारण नहीं, अपितु गुड़ बाँटने के कारण 'गुड़वाला' नाम से प्रसिद्ध हुआ। जब कोई इनके यहाँ आता तो इस परिवार के पूर्वज गुड़ की डेली खिलाकर आने वाले का मुँह मीठा करते थे। जिन दिनों सड़कें बहुत कच्ची थीं और यातायात के साधन बैलगाड़ियाँ थीं तब इस परिवार की ओर से स्थान-स्थान पर बने पड़ावों पर, थके हुए बैलों को गुड़ की भेलियाँ बाँटी जाती थीं। यह परिवार गुड़ बाँटने को एक पुण्य का कार्य समझता था।

गुड़वालों के परिवार में अपार धन-सम्पत्ति का भण्डार था। प्रारम्भ से ही इस परिवार का मुख्य व्यवसाय साहूकारा था। यह परिवार इतना धनी था कि इसे 'भारत का धन कुबेर' कहा जा सकता है किन्तु फिर भी इस परिवार के पूर्वज अपने-

pdfelement
Remove Watermark Now

आपको धन का चौकीदार ही समझते थे। गरीबों को ऋण देने में इतने उदार थे कि उन दिनों भी सौ दो सौ रुपया बिना जमानत के ही ऋण दे देते और कह देते कि जब तुम्हारे पास हो तो दे जाना।

बड़ी-बड़ी रकमों का ऋण जमानत पर दिया जाता था। बहुत से राजे-महाराजे इनसे ऋण लेते थे। इनमें से मुगल बादशाह, शाहजहाँ और अन्तिम मुगल बादशाह जफर तथा ईस्ट इंडिया कम्पनी का नाम ऋण लेने वालों में विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

इस परिवार को छः घोड़ों की 'बग्घी की सवारी' और 'हाथी नशीनी' का अधिकार मुगल सल्तनत की ओर से था।

मुगल बादशाह किसी के घर नहीं जाते थे, किन्तु गुड़ वालों के परिवार में होने वाले जश्नों (नाच-गानों) में सम्मिलित होते थे और इस परिवार की ओर से बादशाह को थैली भेंट की जाती थी।

अन्तिम मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर ने जब अंग्रेजों से एक लाख रुपया मासिक की पेंशन स्वीकार कर ली तो सेठ रामजीदास गुड़ वालों ने उनसे कहा कि आप अंग्रेजों के गुलाम बन गए हैं, यह आपको शोभा नहीं देता। आप अब भी यह ऐलान कर दें कि हकूमत मेरी है, मैं आपकी धन और तलवार दोनों से सहायता करूँगा। बादशाह जफर ने सेठ रामजीदास गुड़ वालों की बात मान ली और सेठ जी ने सेना भरती करने के लिए कई करोड़ रुपये दिये। किन्तु वजीर लोग अंग्रेजों से मिल गए थे अतः उन्होंने सब रुपया खा-पीकर बराबर कर दिया। बहादुरशाह ने रुपये की और माँग की, तो उन्होंने दूसरी बार भी कई करोड़ रुपये दिए, किन्तु परिणाम कुछ न निकला।

अतः तीसरी बार माँगने पर सेठ जी ने रुपया देने से इन्कार कर दिया। इस पर बहादुरशाह जफर ने सन् १८५६ ई० में 'हिन्दुस्तान की सल्तनत' को सेठ रामजीदास गुड़ वालों के यहाँ गिरवी रखकर फौज भरती करने के लिए ऋण लिया, किन्तु देश के दुर्भाग्य से मुगलों के वजीर और बनावटी सेना अंग्रेजों से मिल गई, अतः सन् १८५७ ई० का स्वतन्त्रता संग्राम असफल रहा।

बहादुरशाह जफर को गिरफ्तार करके रंगून भेज दिया गया, सेठ रामजीदास गुड़वालों को बहादुरशाह का साथ देने के कारण गिरफ्तार कर लिय गया। उनका अरबों रुपये का खजाना लूट लिया गया और उन्हें मुकद्दमा चलाने के पश्चात् फाँसी पर लटका दिया गया।

सेठ रामजीदास गुड़वालों के सन्दर्भ में "दी ट्राइल आफ बहादुरशाह" पुस्तक में इस परिवार का उल्लेख मिलता है।

सेठ रामजीदास गुड़ वालों के पुत्र महाराज नारायण दास गुड़ वाले उन दिनों यात्रा पर गए थे। जब वे लौटकर देहली आए तो उनके लौटने का समाचार जासूसों ने अंग्रेजों को दिया और उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया। जब अंग्रेजों ने उनसे पूछा

कि आपके साथ कैसा बर्ताव किया जाये तो उन्होंने निर्भीकता से उत्तर दिया कि— "जैसा मेरे पिताजी के साथ व्यवहार किया गया है।" किन्तु अंग्रेजों ने इनके साथ मित्रता का व्यवहार करना अपने हित में समझा और इन्हें "महाराजा" का खिताब दिया तथा आनरेरी गजिस्ट्रेट बनाया। आप बहुत दिनों तक म्युनिसिपल कमेटी के सदस्य रहे। प्रायः अंग्रेज इनसे बहुत सी बातों में सलाह लिया करते थे।

मुगल काल में लालकिले के दरबारे आम में बादशाह तख्त पर बैठते थे और उसके नीचे ही गद्दी पर गुड़ वाले के सेठ को प्रमुख स्थान दिया जाता था। इन्हें 'मुजरा तथा सलाम' से मुस्तिसना (मुक्त) किया हुआ था। राजकीय मोहर और अर्शफियों पर एक ओर बादशाह का नाम और दूसरी ओर गुड़ वाले सेठ का नाम अंकित रहता था।

गुड़ वालों के परिवार की यह विशेषता रही है कि वह गरीबों की जरूरत रफा करने के लिए उनकी बनाई हुई चीजें अपने यहाँ खरीद लिया करते थे और उन्हें बेच कर उसका मुनाफा उन्हीं को वापस कर देते थे।

आप अग्रवाल बिरादरी के गरीब परिवारों में मुफ्त अनाज की बोरियाँ और उसमें छिपाकर रुपये की पोटली भिजवा दिया करते थे और उस गरीब परिवार को यह पता ही न लगता था कि यह अनाज और धन कहाँ से आया। महाराजा नारायणदास जी गुड़ वालों के पुत्र राय बहादुर धर्म सुधाकर सेठ श्रीकृष्ण गुड़ वालों का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन्होंने देहली क्लोथ मिल की स्थापना की और पैंतीस वर्ष तक (सन् १९१३ ई० तक) म्युनिसिपल कमेटी, देहली के वायस चेयरमेन रहे।

सन् १९११ में एक सरकारी ठेके में लाला सत्यनारायण जी के पिता राय बहादुर धर्म सुधाकर सेठ श्रीकृष्ण को लगभग पचास करोड़ रुपये से अधिक का घाटा हुआ और उस समय से यह भारत का धन कुबेर परिवार अपनी विशेष स्थिति कायम न रख सका।

गुड़वालों की वर्तमान पीढ़ी में अग्रवाल जाति के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता स्व० ला० सत्यनारायण गुड़वाले का नाम उल्लेखनीय है। आपका जन्म सन् १८९६ में राय बहादुर धर्म सुधाकर सेठ श्रीकृष्ण गुड़ वालों के घर में हुआ था। देहली की प्रायः सभी सामाजिक गतिविधियों तथा शैक्षणिक संस्थाओं के साथ आपका जीवन पर्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। आप अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा, देहली के अन्तरं सदस्य रहे।

देहली में गुड़ वालों की धर्मशाला आज भी इनके परिवार का कीर्तिस्तम्भ है

इस परिवार को समय-समय पर लक्ष्मीपति, ताजरुल मुल्क, दानवीर, जगत सेठ तथा भारत का धन कुबेर, (Roths child of India) महाराजा, राजाबहादु आदि की पदवियों से विभूषित किया गया।

pdfelement
Remove Watermark Now

लाला हरसुखराय जी,

सन् १७६१—१८०२ ई० तक मुगल सम्राट आलमगीर दिल्ली की गद्दी पर राज्य करता था। यह बहुत कमजोर था, अतः इसने सन् १७६४ ई० में बंगाल, बिहार उड़ीसा की दीवानी अंग्रेजों को सौंप दी। उस समय की परिवर्तित परिस्थिति के अनुसार देहली के लाला हरसुखराय जी जैन ने ब्रिटिश सरकार की मदद की अतः उनकी उन्नति में चार चांद लग गये। वे बड़े प्रतापी और प्रभावशाली व्यक्ति माने जाने लगे दिल्ली का प्रसिद्ध जैन मन्दिर आठ लाख रुपये की लागत से लाला हरसुखराय जी ने ही बनवाया था।

लाला हरसुखराय जैन के पुत्र लाला सुगनचन्द को अंग्रेजों का साथ देने के कारण तीन गाँव जागीर में मिले थे।

सन् १८५७ ई० में गदर (प्रथम स्वतंत्रता संग्राम) में इसी वंश के लाला गिरधारी लाल ने अंग्रेजों का साथ दिया अतः इनके परिवार का बड़ा उत्कर्ष हुआ।

लाला सीताराम

मुगल शासनकाल में दिल्ली के अग्रवाल लाला सीताराम बड़े प्रतापी व्यक्ति हुए हैं। दिल्ली का बाजार सीताराम उन्हीं का बसाया हुआ है। लाला सीताराम जी चरखी दादरी (महेन्द्रगढ़) निवासी थे। इनके माता-पिता बहुत ही साधारण स्थिति के वैश्य थे अतः इनके पुरोहित ने इन्हें सलाह दी कि वे देहली जायें, वहाँ उनकी उन्नति होगी। शुभ मुहूर्त के दिन नवयुवक सीताराम देहली की ओर चले किन्तु मार्ग में उन्हें एक सर्प फन उठाए दिखाई दिया और वे पीछे हटकर चरखीदादरी की ओर मुड़ लिए। मार्ग में उनके पुरोहित जी मिले और उनके पूछने पर उन्होंने लौटने का सब वृत्तांत कह सुनाया। इस पर पुरोहित जी बहुत नाराज होकर कहने लगे कि अब भी लौट जा, तेरे भाग्य में राज्य था किन्तु अब भी यदि तू देहली चला गया तो वजीर अवश्य बनेगा। यह सुन-कर नवयुवक सीताराम देहली की ओर चल पड़े। देहली पहुँच कर उन्होंने एक हलवाई की दुकान पर नौकरी की। वे हिसाब-किताब में बहुत चतुर थे। कुछ ही समय में उनकी इस चतुराई की खबर मुगल दरबार तक पहुँची और उन्हें दरबार में स्थान पाने में सफलता मिल गयी। राज-दरबार में इनका भाग्य चेता और एक दिन वे वजीर बन गए तथा अपार धन और यश अर्जित किया।

इनकी माताजी अंधी थीं। एक दिन उन्होंने उनसे कहा कि बेटा मैंने एक लाख रुपये नहीं देखे। लाला सीताराम ने उनके सामने एक लाख रुपये का ढेर लगा दिया किन्तु आँखों से लाचार वह उस ढेर को देख कैसे सकती थी? अतः उस ढेर पर हाथ फेरकर टटोला और आदेश दिया कि रुपये थैली में भर दो। इस पर लाला सीताराम ने आदेश दिया कि माताजी जब आपने इस धन राशि पर अपना हाथ फेर दिया तो अब यह तो दान में ही दिया जायेगा और अपने कुल पुरोहित को वह राशि दान कर दी

किन्तु उन्होंने दान देकर पुरोहित जी को यह भी कह दिया कि आपको इतनी बड़ी धन राशि दान देने वाला न मिलेगा।

इस पर पुरोहित जी क्रुद्ध होकर बोले कि तुम्हें इस धन का अभिमान है तो तुम्हें मेरे जैसा त्यागी भी न मिलेगा और यह कहकर पुरोहितजी ने एक लाख रुपये लेने से इन्कार कर दिया।

तब लाला सीताराम जी के सम्मुख बड़ी समस्या उत्पन्न हुई कि दान किये हुए धन का क्या किया जाए। अन्त में उन्होंने जनता का जल-कष्ट मिटाने के उद्देश्य से चरखी-दादरी में एक विशाल तालाब बनवाया जिस पर उस समय एक लाख रुपये व्यय हुए थे। वह तालाब अब भी सुरक्षित है।

हमें यह विवरण चरखीदादरी के श्री पं० दुलीचन्द वत्स ने लिख कर भेजा था अतः हमने इस विवरण की प्रामाणिकता जानने के लिए चरखीदादरी जाकर श्री वत्स जी से भेंट की और स्थानीय वृद्धजनों से भी इसकी प्रामाणिकता सम्पुष्ट की तथा लाला सीताराम जी का तालाब भी देखा जो इंजीनियरिंग की उत्कृष्ट मिसाल है।

जानसठ (मुजफ्फर नगर) के राजा रतनचन्द जी

राजशाही (राजवंशी) अग्रवालों के प्रवर्तक राजा रतनचन्द जी का कुछ वर्णन राजशाही वैश्य अग्रवाल के परिचय में भी आ चुका है।

लगभग २५५ वर्ष पूर्व राजशाही अग्रवाल वैश्य वंश प्रवर्तक राजा रतनचन्द का मौजा मुकल्लम मीरापुर, तहसील जानसठ (मुजफ्फर नगर) में निवास था। राजा रतनचन्द सैयद बन्धुओं के दीवान थे। वे राजा साहब को मित्रवत मानते थे और बड़ा सम्मान करते थे।

सन् १७१२ ई० में मुगल सम्राट् बहादुर शाह प्रथम (जहाँदाराशाह) के विरुद्ध फर्रुखसियर ने विद्रोह कर दिया। जामसठ के सैयद बन्धुओं ने भर्रुखसियर का साथ दिया और वह सन् १७१३ ई० में दिल्ली की गद्दी पर बैठा अतः सैयद बन्धुओं का (सैयद अब्दुल्ला खाँ तथा सैयद हुसैनअली खाँ) मुगल शासन में बड़ा प्रभाव जम गया। धीरे-धीरे इनका प्रभाव इतना बढ़ा कि वे मुगल राज्य के कर्त्ता धर्ता बन गए, जिसे चाहते राजगद्दी पर बिठाते जिसे चाहते उतार देते। अतः इन्हें राजाओं का भाग्यविधाता (King Maker) कहा जाने लगा।

जानसठ के निवासी राजा रतनचन्द की सैयद बन्धुओं के साथ घनिष्ठ मित्रत होने के कारण सैयद बन्धुओं ने राजा रतनचन्द को देहली बुला लिया। सैयद बन्धु राज रतनचन्द को बहुत मानते थे अतः उनके साथ राजा रतनचन्द की भी उन्नति होत गई और आगे चलकर वे भी मुगल राज्य के भाग्य विधाताओं में से हो गये।

कुतुब-उल-मुल्क सैयद अब्दुल्ला खाँ फर्रुखसियर का वजीर (प्रधान मन्त्री बना। वह भोग-विलास में मस्त रहता था। अतः राज्यकाज राजा रतनचन्द पर अ

pdfelement
Remove Watermark Now

पड़ा। रतनचन्द को मुगल बादशाह की ओर से 'राजा' का खिताब दिया गया और साथ ही उन्हें राज दरबार में दो हजारी का दर्जा भी मिला।

राजा रतनचन्द का उस समय मुगल शासन में इतना प्रभाव था कि जब बन्दा वैरागी के कत्ल के बाद सिक्खों का कत्लेआम होने लगा तो उन्होंने कत्लेआम के विरुद्ध आवाज उठाई और वजीर अब्दुल्ला खाँ पर अपने प्रभाव से अनेक सिक्खों को मुक्त कराया।

फर्रुखसियर के समय में हिन्दुओं पर जजिया कर फिर लगा दिया गया था। इससे राजा रतनचन्द बहुत असन्तुष्ट हुए और उनके प्रयत्न स्वरूप सन् १७१९ ई० में जजिया कर उठा लिया गया।

राजा रतनचन्द जिसे चाहते राज्य में नियुक्त कराते और जिसे चाहते उसे अलग करवा देते या नियुक्त होने से रुकवा देते थे। रतनचन्द की हैसियत मुसलमानों की नजरों में हेमू की भाँति थी। राजा रतनचन्द ने अपने प्रभाव से मुगल शासन में कई बड़े परिवर्तन किए। इनके प्रयत्न से राजपदाधिकारियों को निश्चित वेतन देने की परिपाटी चालू की गई और अधिक से अधिक राज कर वसूल करने के काम को ठेके पर दिया जाने लगा।

राजा रतनचन्द सैयद बन्धुओं के सच्चे मित्र थे। एक ओर राजा रतनचन्द सैयद बन्धुओं की उनके शत्रुओं से रक्षा करते रहे, उन्हें समय-समय पर सावधान करते रहे और दूसरी ओर दोनों भाइयों में प्रेम बनाए रहे जिससे वे आपस में नहीं लड़ें, ऐसा प्रयत्न करते थे। वास्तव में सैयद बन्धुओं का सूत्र संचालन राजा रतनचन्द के हाथ में था। राजा रतनचन्द सैयद बन्धुओं के दीवान बनकर सारे मुगल राज्य का संचालन करते थे।

राजा रतनचन्द केवल कुशल शासक ही न थे वरन् कुशल सेना संचालक भी थे। सं० १७२० में मुगल बादशाह मुहम्मदशाह रंगीला के शासनकाल में इलाहाबाद के सूबेदार गिरधर बहादुर ने विद्रोह कर दिया। सूबेदार गिरधर बहादुर को बहुत से मुगल पदाधिकारी सहयोग दे रहे थे अतः यह विद्रोह बड़ा भयंकर रूप धारण कर गया। उधर बादशाह मुहम्मदशाह रंगीला रंगरेलियों में डूबा हुआ था। वजीर सैयद अब्दुल्ला खाँ स्वयं ऐशोआराम में मस्त था। अतः इस विद्रोह के दमन करने के लिए राजा रतनचन्द को भेजा गया। राजा रतनचन्द ने एक बड़ी सेना तैयार की और प्रसिद्ध मुगल सेनापति मुहम्मदखाँ बंगश और हैदरअली खाँ को राजा रतनचन्द के आधीन भेजा गया। राजा रतनचन्द ने अपनी कुशल नीति से सूबेदार गिरधर बहादुर को अपने वश में कर लिया। उसे इलाहाबाद से हटाकर अवध का सूबेदार बनाया गया और इस प्रकार सूबेदार गिरधर बहादुर विद्रोह का मार्ग छोड़कर मुगल राज्य के पक्ष में हो गया। यह सब राजा रतनचन्द की कुशलता का ही फल था।

जब राजा रतनचन्द इलाहाबाद का विद्रोह दबाकर लौटे तो उनका भव्य स्वागत हुआ। उन्हें दो हजारी से पाँच हजारी का दर्जा दिया गया और मुगल दरबार

के सबसे प्रमुख दरबारियों में गिने जाने लगे। इसके अतिरिक्त बहुमूल्य उपहारों की तो गणना ही न थी।

मुगल बादशाह मुहम्मदशाह के शासनकाल में ही सैयद बन्धुओं के शत्रुओं की संख्या बहुत बढ़ गई थी अतः उनका पतन हो गया। इनके साथ ही राजा रतनचन्द का भाग्य अस्त हो गया किन्तु अन्तिम समय तक राजा रतनचन्द ने सैयद बन्धुओं का साथ न छोड़ा। सैयद अब्दुल्ला खाँ के स्थान पर नये वजीर मुहम्मद खाँ नियुक्त हुए। उनकी आज्ञा से राजा रतनचन्द को गिरफ्तार कर लिया गया और उनसे सैयद बन्धुओं के खजाने का भेद जानना चाहा। उन्हें बहुत कष्ट दिया और अन्त में उन्हें प्राण दण्ड दे दिया गया।

निःसन्देह मुगल शासन काल में जिन हिन्दुओं को उच्चपद मिले उनमें राजा रतनचन्द का स्थान सर्वोपरि था।

राजा रतनचन्द ने जहाँ हिन्दू मात्र की भलाई के लिए कार्य किए वहाँ अग्रवालों में भी सुधार के कार्यों द्वारा एक नया जीवन डालने का यत्न किया। उन्होंने अग्रवालों की बिखरी कड़ियों को एकत्र करने तथा जैनियों को भी अपने अन्दर मिलाने का प्रयत्न किया और कुछ अंशों में सफलता भी पाई। उन्होंने अग्रवालों में सुधार कार्य भी आरम्भ किए जिसके फलस्वरूप रंडी व हिजड़ों का नाचना, दहेज माँगना, दहेज दिखाना आदि पर प्रतिबन्ध लगवाया, अग्रवालों से ऊँच-नीच का भेद मिटाने का यत्न किया, बेरोजगारों को बड़ी तादाद में नौकरियाँ दिलाई। इस वर्ग के बहुत से लोगों को पीढ़ी दर पीढ़ी पटवारी के पद पर पाया गया है।

राजा रतनचन्द के इन सुधार आन्दोलनों को अग्रवालों ने शंका की दृष्टि से देखा और उन्हें अग्रवालों से भिन्न वर्ग का समझा। जब राजा साहब ने देखा कि इनके साथ चलना कठिन है तो उन्होंने अपने साथियों को साथ लेकर 'राज शाही' नाम से संगठन बना लिया जो आजकल राजवंशी अग्रवाल नाम से प्रसिद्ध है।

ऐसा प्रतीत होता है कि राजा रतनचन्द ने अग्रवालों में सुधार कार्य हेतु एक ऐसा दल बनाने का निश्चय किया था जो उनके कार्य को आगे बढ़ा सकता।

वर्तमान पीढ़ी में प्रसिद्ध प्रशासक श्री धर्मवीर जी, प्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० आत्मा राम जी तथा सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर जी इसी वर्ग के हैं।

लाला अमीचन्द

भारतीय इतिहास में लाला अमीचन्द का नाम बड़े कलुषित रूप में अंकित किया गया है किन्तु १७वीं शताब्दी का पूरा इतिहास ही छल, कपट, भ्रातृद्रोह एवं देश द्रोह का रहा है अतः देशद्रोह का दोष केवल अमीचन्द पर ही नहीं लगाया जा सकता। लाला अमीचन्द और उनके परिवार का वंश परिचय देने से हमारा अभिप्रायः उस समय की गतिविधियों के साथ अग्रवालों के प्रभावशाली व्यक्तियों के संघर्ष का लेखा जोखा लेना मात्र है। हम उन प्रतिभाशाली अग्रवालों के चरित्र सम्बन्धी गुण-दोष क

pdfelement
Remove Watermark Now

निर्णय पाठकों पर ही छोड़ना पसंद करेंगे। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि भारतवर्ष में मुगल और अंग्रेज दोनों ही विदेशी थे अतः एक से छुटकारा पाने के लिए दूसरे का सहारा लेना कहाँ तक अनुचित है, इस सम्बन्ध में अपनी बुद्धि और रुचि के अनुसार पाठक अपनी राय बनायें।

अतः हम यहाँ बिना अपनी राय बनाए ला० अमीचन्द (कुछ इतिहासकारों ने इन्हें शायद उमाचन्द भी लिखा है) और उनके परिवार का परिचय देते हैं। हमें यह लिखते हुए हर्ष हो रहा है कि जहाँ ला० अमीचन्द के नाम को इतिहासकारों ने कलुषित रूप में अंकित किया है, उसी वंश में वाराणसी के हिन्दी के जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का भी जन्म हुआ था जिन्होंने इतिहासकारों द्वारा चित्रित अपने परिवार के कलुषित चित्रण को अपने देश प्रेम तथा भाषा प्रेम से सदैव के लिए धो दिया और अग्रवाल जाति का प्रथम इतिहास अग्रवालों की उत्पत्ति लिखा।

लाला अमीचन्द के पूर्वज देहली के निवासी थे और उनके परिवार का मुगल बादशाह से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था। सन् १६०० के आसपास इस परिवार के बड़े प्रसिद्ध पुरुष राय बालकृष्ण हुए। सन् १६३८ में मुगल बादशाह शाहजहाँ के पुत्र शाहशुजा बंगाल के सूबेदार होकर देहली से गए। राय बालकृष्ण का परिवार भी शाहशुजा के साथ ही बंगाल चला गया और राजमहल में बस गया। बंगाल में मुगल राज्य की राजधानी राजमहल से बदल कर मूर्शिदाबाद चली गई तो इनका परिवार भी मुर्शिदाबाद ही चला गया। आज भी इस परिवार के महलों के खण्डहर राजमहल तथा मुर्शिदाबाद में देखे जा सकते हैं। राय बालकृष्ण के पुत्र लक्ष्मीराम और उनके पुत्र गिरधारीलाल हुए। लाला गिरधारीलाल के परिवार में सबसे प्रसिद्ध लाला अमीचन्द का जन्म हुआ।

सन् १६३६ ई० शाहजहाँ की लड़की बीमार पड़ी। अंग्रेज डाक्टर वाटसन इसका इलाज करने में सफल हो गए अतः शाहजहाँ ने अंग्रेजों को बंगाल में बिना महसूल दिये व्यापार करने की आज्ञा दे दी और बालासूर तथा हुगली में व्यापारिक कोठियाँ बनाने की भी अंग्रेजों को आज्ञा मिल गई।

सन् १६९० में अंग्रेजों ने कलकत्ता की नींव डाली और फोर्ट विलियम दुर्ग बनाया।

अंग्रेजों के व्यापार को बढ़ता देख, उनके साथ मिलकर व्यापार में अधिक लाभ कमाने की आशा से लाला अमीचन्द कलकत्ता आकर बस गए। वे अत्यन्त चतुर एवं चाणाक्ष व्यापारी थे। इन्होंने कलकत्ता में विशाल पुरी का निर्माण कराया और उसे अनेक प्रकार से पुष्प और वृक्षों से सुशोभित किया। इनका सिंहद्वार सशस्त्र सैनिकों से भरा रहता था। अतः वहाँ के लोग उन्हें केवल व्यापारी ही नहीं, राजा मानने लगे थे। इनके नौ पुत्र थे जिनमें से तीन को राजा का पद मिला था और एक को राय बहादुर की पदवी प्राप्त हुई थी।

अंग्रेज लोग बंगाल से अपरिचित थे। ला० अमीचन्द बड़े चतुर और वैभवशाली व्यापारी थे जिनकी ख्याति सर्वत्र फैल चुकी थी। अतः अंग्रेजों ने इनके साथ मिलकर उनके सहयोग से गाँव-गाँव में अगाऊ धन बाँटकर कपास तथा कपड़ा क्रय करना आरम्भ किया। ला० अमीचन्द का बंगाल के नवाब के दरबार में तो वंशानुगत सम्मान था ही अतः इनके माध्यम से अंग्रेजों ने नवाब से विशेष सुविधायें प्राप्त कर लीं।

बंगाल के इतिहास में वह समय षड्यन्त्र, हत्या, छलकपट, विश्वासघात और लूट-खसोट का था। ला० अमीचन्द भी समय के अनुसार इन सब प्रकार के वातावरण में ढल चुके थे। वे अंग्रेजों के मित्र भी थे और मन में परस्पर स्पर्धा और चिढ़ भी थी। सन् १७५६ में बंगाल के नये नवाब सिराजुद्दौला गद्दी पर बैठे। वह अंग्रेजों का कट्टर शत्रु था अतः उसने कलकत्ता पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेजों ने इस आक्रमण में ला० अमीचन्द का हाथ समझा और उन्हें गिरफ्तार कर लिया तथा इनके भवन पर आक्रमण कर दिया। अमीचन्द के सैनिकों ने अंग्रेजों का डटकर सामना किया किन्तु जब ला० अमीचन्द के स्वामिभक्त राजपूत सेनापति जगन्नाथ सिंह ने देखा कि उसके सैनिक एक-एक करके मरते जा रहे हैं और ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सिपाही ला० अमीचन्द के अन्तःपुर में प्रवेश करना चाहते हैं तो उसने यह विचार करके कि उसके स्वामी की कुल-वधुओं पर परपुरुष की छाया न पड़े और उनका शरीर यवनों के स्पर्श से कलंकित न हो, प्राचीन परम्परानुगत एक विशाल चिता जला दी और स्वामी के परिवार की १३ कुलवधुओं का सिर काटकर चिता में डाल दिया। इस प्रकार सिंहद्वार तक का भवन भाग चिता की लपटों से भस्मसात् हो गया।

उधर नवाबी सेना ने कलकत्ता पर अपना अधिकार कर लिया। सब अंग्रेज पकड़े गये। नवाब के दरबार में राजा अमीचन्द भी लाए गए। नवाब ने उनके साथ आदरपूर्वक व्यवहार किया। तत्पश्चात् 'कालकोठरी' नामक इतिहास की प्रसिद्ध घटना घटी। हौलवेल ने इस घटना का दोष ला० अमीचन्द पर लगाया कि इन्होंने ही अंग्रेजों से अपने प्रति किए गए दुर्व्यवहार का बदला लेने के लिए अंग्रेजों की दुर्गति की थी।

इस घटना के पश्चात् भी अमीचन्द ने अंग्रेजों के साथ मेल बनाए रखा और सिराजुद्दौला को गद्दी से उतार कर मीर जाफर को गद्दी पर बैठने का एक भयंकर षड्यन्त्र रचा गया। लार्ड क्लाइव, मानिकचन्द, रायदुर्लभ, महतावराय, सेठ रूपचन्द, जगत सेठ, मीर जाफर आदि व्यक्ति इसमें शामिल हुए। सिराजुद्दौला के स्थान पर मीर जाफर को नवाब बनाना तय हुआ और ला० अमीचन्द को ३० लाख रुपया देना निश्चित हुआ। लाला अमीचन्द की सहायता से अंग्रेज सिराजुद्दौला को राजगद्दी से उतारने और मीर जाफर को गद्दी पर बैठाने में सफल हो गए। मीर जाफर ने लूट का माल अन्य षड्यन्त्रकारियों में बाँट दिया किन्तु ला० अमीचन्द को कुछ न मिला और जब उन्हें लार्ड क्लाइव द्वारा जाली संधिपत्र की बात मालूम हुई तो उन्हें बहुत दुःख हुआ। अतः उनका अन्तिम समय दुःख और निराशा में बीता।

pdfelement
Remove Watermark Now

इस प्रकार हम देखते हैं कि उस समय के बड़े व्यक्ति इस प्रकार के षड्यन्त्रों को सामान्य बात समझते थे और ला० अमीचन्द भी उसी कोटि के व्यक्ति थे। वे प्रभावशाली, कुशल, नीतिज्ञ और चतुर व्यापारी होते हुए भी अपनी शक्तियों का इससे अच्छा उपयोग न कर सके।

ला० अमीचन्द की मृत्यु सन् १७५८ में हुई। उनके पुत्र फतेहचन्द थे। उनका विवाह बनारस (वाराणसी) के प्रसिद्ध नगरसेठ गोकुल चन्द की कन्या के साथ हुआ था। नगरसेठ गोकुलचन्द के पूर्वजों ने बनारस के अन्य नगरसेठों तथा सरकार का साथ देकर काशी के राजवंश को काशी का राज्य दिलाने में योग दिया था अतः वे राज्य के महाजन नियुक्त हुए थे और उन्हें प्रतिष्ठापूर्ण 'नौपति' की पदवी प्रदान की गई थी। किन्तु एक कन्या ही इनकी एकमात्र सन्तान थी।

ला० अमीचन्द जी की मृत्यु के पश्चात् ला० फतेहचन्द बनारस ही चले आए और नगरसेठ गोकुलचन्द के उत्तराधिकारी के रूप में रहने लगे। इसी कुल में आगे चल कर हिन्दी-जगत् के महान् साहित्यकार और वर्तमान हिन्दी के जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जन्म हुआ। ऐसे उच्चकोटि के प्रभावशाली लेखक तथा कवि को पाकर अग्रवाल जाति अपने आपको गौरवान्वित समझती है।

चौधरी चोखेराज, मेरठ

मेरठ के प्रसिद्ध कानूनगो परिवार का ५०० वर्ष का इतिहास सिलसिलेवार आज भी प्रो० श्री मधुसूदन जी, मौहल्ल कानूगोयान, मेरठ के पास उपलब्ध है जिनसे हमने ३-८-१९६७ को भेंट की थी और यह जानकारी प्राप्त की थी। इस परिवार के पूर्व-पुरुष ला० चोखेराज जी चौधरी थे। इनकी मुगल सम्राट औरंगजेब के दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा की और औरंगजेब ने ही इन्हें कानूनगो का खिताब भी अता किया था। इस सम्मान की घोषणा शाही फरमान द्वारा सन् १६५८ में की गई थी। चौधरी चोखेराज के पूर्वज बादशाह जहाँगीर के शासनकाल में 'जब्तुलअनामिस' का खिताब पहले ही प्राप्त कर चुके थे।

औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् भी इस परिवार का सम्बन्ध मुगल दरबार से बना रहा। चौधरी चोखेराज की कई पीढ़ी के पश्चात् ला० दलपतराय जी को बादशाह शाह आलम के दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई थी।

सन् १७७६ में शाह आलम ने इनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर शाही फरमान द्वारा इनके परिवार को औरंगजेब द्वारा प्रदत्त कानूनगो के खिताब को अनुमोदित किया और यह खिताब वंश-परम्परा के लिए सुरक्षित कर दिया गया।

इसी कुल में मेरठ के प्रसिद्ध परिवार पत्थर वाला, लाला वाला, बांकेराम वाला, वृषभान वाला (ब्रगभान वाला) आदि नामों से जाने जाते हैं। यह पूरा परिवार अन्त तक अंग्रेजों का विरोधी रहा। सर का खिताब पाने वाले स्व० सर सीताराम पंडित भी वर्तमान पीढ़ी में इसी वंश के थे जिन्होंने जाति और देश की अच्छी

सेवा की और देश को स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर वे पाकिस्तान में भारत के प्रथम हाई कमिश्नर नियुक्त किए गए थे। आप संस्कृत के भी विद्वान् थे।

शाह गोविन्दचन्द

देहली के प्रसिद्ध व्यापारी लाला भगवान दास तथा लाला ताराचन्द के परिवार में शाह गोविन्द चन्द का जन्म हुआ था। नादिरशाह द्वारा देहली की लूट के समय इस परिवार को पर्याप्त हानि उठानी पड़ी और इनकी चल सम्पत्ति नादिरशाह के हाथ लग गई। अतः यह परिवार फर्रुखाबाद में जा बसा और वहीं अपनी स्थिति पुनः संभाली।

इसी परिवार के ला० रामलाल फर्रुखाबाद से लखनऊ चले गए और अपनी प्रतिभा के बल पर नवाबों के दरबार में प्रतिष्ठा प्राप्त की। आगे चलकर उस युग के लाला गोविन्द राम हुए जो अवध के दरबार में राज्य जौहरी नियुक्त हुए थे। अवध का प्रसिद्ध मयूर सिंहासन लाला गोविन्द राम द्वारा बनवाया गया था। नवाब ने इनसे प्रसन्न होकर इन्हें खिल्लत और शाह का खिताब प्रदान किया था। यही खिताब इनके वंश में अभी तक चला आता है।

नशीपुर का राजवंश

बंगाल राज की भूतपूर्व नशीपुर रियासत के राजा अग्रवाल जाति के हैं। इस राज्य के संस्थापक महाराजा देवीसिंह थे। इनके पूर्वज बीजापुर के राजा तरवा थे। इस कुल में ऐसे अनेक प्रभावशाली एवं प्रतिभाशाली व्यक्ति हुए जिन्हें मुगल बादशाहों ने बड़े उत्तरदायित्व पूर्ण पदों पर नियुक्त किया था। इसी कुल के ला० शम्भूनाथ जी सहारनपुर से मेरठ तक के सारे इलाके के नाजिम रहे। इस वंश के बा० बद्रीदास ने शामली की लड़ाई में कर्नल वर्न का वीरतापूर्वक मुकाबला किया। इन्हें ईस्ट इंडिया कम्पनी से २० हजार रुपया मासिक वेतन मिलता था।

महाराजा देवीसिंह ने प्लासी युद्ध में लार्ड क्लाइव की बड़ी सहायता की अतः बंगाल पर अंग्रेजों का कब्जा होने पर इन्हें पूर्वी बंगाल तथा उड़ीसा की दीवानी का पद दिया गया था। लार्ड कार्नवालिस ने इन्हें 'महाराजा बहादुर' की पदवी प्रदान की थी। अंग्रेजों का लगातार साथ देने के कारण बंगाल में इनके कुल की गणना विशिष्ट कुलों में की जाती थी।

मिर्जामल गुरुमुखराय पोद्दार

महाराणा रणजीतसिंह के राज्य में मिर्जामल गुरुमुखराय पोद्दार का विशेष मान था। वे बड़ी सूझबूझ वाले विशेष व्यक्तित्व के धनी थे। श्री पोद्दार जी की गणना रणजीत सिंह के विश्वासपात्र दरबारियों में थी अतः उन्हें राज्य की ओर से सदैव सम्मान प्राप्त होता रहा। इनके साहित्य प्रेम को देखते हुये महाराजा की ओर से

pdfelement
Remove Watermark Now

उन्हें फिरदौसीकृत शाहनामा भेंट में प्राप्त हुआ था और मोतियों के हार से सम्मानित किये गये थे।

श्री पोद्दार जी का बीकानेर नरेश के साथ भी घनिष्ठ सम्बन्ध था और समय-समय पर बीकानेर नरेश को आर्थिक सहायता देते रहते थे। आपने चूरू के विद्रोही ठाकुर से नगर की रक्षा की और उजड़े नगर को सं० १८७८ में पुनः आबाद कराया। अतः महाराजा बीकानेर ने उनकी सेवाओं से प्रभावित होकर इनके परिवार के साथ सदैव मित्र भाव बनाये रखा। राज्य की ओर से इन्हें नगाड़ा निशान प्रदान किया गया था और इनके व्यापार एवं साहूकारे को राज्य का संरक्षण भी प्राप्त रहा।

आप अपना यशस्वी जीवन बिताते हुये सं० १९०५ वि० में स्वर्ग वासी हुये। आज भी चूरू में पोद्दार परिवार का बड़ा सम्मान है।

वीर सेनापति एवं कुशल प्रशासक

पटियाला के दीवान नानू मल अग्रवाल

अग्रोहातीर्थ की यात्रा पर जाने वाले यात्रियों को प्राचीन अग्रोहा गणराज्य के खण्डहरों के ऊपर उत्तर दिशा में एक छोटे से किले के भग्नावशेष दिखाई देते हैं। इस किले का सम्बन्ध पटियाला के दीवान नानू मल जी अग्रवाल से है। उन्होंने अग्रोहा में बसे नागरिकों की रक्षार्थ इस किले का निर्माण सन् १७७१ में कराया था। दीवान नानूमल जी अग्रवाल सुनाम ग्राम के निवासी थे और अपने काल के उद्भट सेनानी, रण-कौशल के अनुभवी सेनापति एवं प्रशासक थे जिनकी विदेशी इतिहासकार ग्रीफिथ ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उनकी हवेली, बैठक, मन्दिर आदि छत्ता नानूमल, पटियाला में अभी तक विद्यमान हैं।

दीवान श्री नानूमल अपनी योग्यता से पटियाला राज्य के दीवान-पद पर आसीन हुए और कुछ समय तक तो वे पटियाला राज्य के सर्वेसर्वा रहे। पटियाला राज्य का इतिहास इस बात का साक्षी है कि पटियाला नरेश अमर सिंह के काल में (१७६५ से १७८१ तक) तथा इसके पश्चात् भी पटियाला राज्य के उत्कर्ष में उनका विशेष योगदान था। उन्होंने अनेक लड़ाइयाँ लड़ीं, पटियाला राज्य को भीतरी और बाहरी षड्यन्त्रों से बचाया। इसकी रक्षा के लिए तोपखाना तैयार कराया और सरदार अमर सिंह की मृत्यु के पश्चात् राज्य को विपत्तियों से बचाया।

उन्हीं दीवान नानूमल ने महाराजा अग्रसेन के पुराने किले के ध्वंसावशेष पर सन् १७७१ में नए किले का निर्माण कराया था।

★

१०

वैश्य जाति के आध्यात्मिक पुरुष

(१) महात्मा समाधि

वैश्य जाति ने जहाँ भलंद, वात्सप्रि एवं माँकिल जैसे मन्त्र दृष्टा ऋषियों को जन्म दिया है वहाँ इसी जाति में जन्मे अनेक आध्यात्मिक ज्ञान से भरपूर महानात्माओं ने देश का गौरव बढ़ाया है। हम यहाँ ऐसे ही कुछ महात्माओं का परिचय प्रस्तुत करते हैं।

हमें ये विवरण प्रो० श्री हंसराज जी चण्डीगढ़ तथा श्रीमान मुसद्दी लाल जी कोट पूतली के सौजन्य से प्राप्त हुए थे।

वैश्यों की पुरानी शाखा में वैश्यकुलोद्भव महात्मा समाधि की ख्याति सर्वविदित है। जो वैश्य बन्धु दुर्गा सप्तशती का पाठ करते हैं वे अपने पूर्वज महात्मा समाधि की ख्याति से भली-भाँति परिचित हैं। दुर्गा सप्तशती के प्रथम अध्याय श्लोक २१ से २६ में महात्मा समाधि का वर्णन उनके अपने शब्दों में ही इस प्रकार है :—

समाधिः नाम वैश्यो अहम् उत्पन्नो धनिनां कुले
पुत्र दारैः निरस्तः च, धनलोभाद् असाधु असाधुभि
विहीनः च धनैः दारैः, पुत्रैः आदाय मे धनम्
वनम् अध्यागतः दुःखी, निरूरस्तः च आप्त बन्धुभिः
सो अहम् न वेद्मि पुत्राणाँ, कुशला कुशलात्मिकाम्
प्रवृत्ति स्वजनानां च, दाराणाँ च अत्र संस्थितः
किं नु तेषाँ गृहे क्षेमम अक्षेम किं नु सांप्रतम् कथं
ते किं नु सद् वृत्ताः दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः।

(दुर्गा सप्तशती अध्याय १ श्लोक २१ से २६)

अर्थात्—मेरा नाम समाधि है। मैं वैश्य हूँ। धनियों के कुल में मेरा जन्म हुआ है। धन के लोभ से दुष्ट पुत्रों और स्त्री ने मुझे घर से निकाल दिया है। स्त्री और पुत्रों ने मेरा धन छीन लिया। विश्वस्त बन्धुओं ने मुझे घर से निकाल दिया। मैं धन से रहित हो दुःखी होकर वन में आ गया। अब यहाँ रहते हुए मुझे स्त्री, रिश्तेदारों और पुत्रों

pdfelement
Remove Watermark Now

की कुशल-अकुशल का कुछ ज्ञान नहीं। क्या मेरे पुत्र अब सदाचारी हैं अथवा दुराचारी हैं ? अब उसका क्या हाल है ?

उपर्युक्त उद्‌गार समाधि के मोहमाया में फँसे रहने के कारण ही थे। अतः उन्होंने लगातार तीन वर्ष तक भगवती देवी की आराधना की और वरदान में आत्म ज्ञान की ही याचना की जो उन्हें इन शब्दों में प्राप्त हो गया :—

वैश्यवर्य त्वया यः च वरः अस्मत्त अभिवांछितः
तं प्रयच्छामि संसिद्धयै, तव ज्ञानं भविष्यति।

(दुर्गा सप्तशती, अध्याय १३, श्लोक २४-२५)

"हे श्रेष्ठ वैश्य ! तुमने जो हमसे वर माँगा है वह तुम्हें प्रदान करती हूँ। तुम्हें आत्म-ज्ञान प्राप्त होगा और तुम्हारी संसिद्धि होगी।"

अब माया मोह के पाश में आबद्ध श्रेष्ठी समाधि महात्मा समाधि बन चुके थे और अमरत्व के अधिकारी भी।

वैश्य जाति के इतिहास में महात्मा समाधि का त्याग अनुकरणीय है। यदि वे चाहते तो देवी भगवती से अपने खोए हुए धन, वैभव, स्त्री, पुत्र तथा पौत्रों की पुनः प्राप्ति के लिए भी याचना कर सकते थे—जिस प्रकार उन्हीं के साथ राज्य च्युत राजा सुरथ—सुरथ ने भगवती से अपने खोये हुए राज्य की प्राप्ति का वरदान माँगा किन्तु वैश्य जाति की विशेषता के अनुसार उन्होंने त्याग का ही मार्ग अपनाया जिससे न केवल वे स्वयं भवसागर से तर गए और अमरत्व को प्राप्त हुए अपितु वैश्य जाति की ख्याति को चार चाँद भी लगा गए।

किन्तु वैश्य समाज ने अपने पूर्वज के प्रति क्या श्रद्धा अर्पित की ऐसा कोई उदाहरण सम्मुख नहीं आया। दुर्गा सप्तशती का पाठ करने वाले वैश्य भली-भाँति जानते हैं कि जो वैश्य समाधि के चरित्र का पाठ करता है उसके परिवार में सुख-समृद्धि निवास करती है किन्तु अपने स्वार्थ साधन के अतिरिक्त अपने पूर्वज के प्रति श्रद्धा-सुमन चढ़ाने की बात उन्हें नहीं सूझी।

वैश्य समाज ने अनेक देवी-देवताओं के देवालय, बड़े-बड़े भवन और धर्मस्थान बनाकर महान् कीर्ति अर्जित की है किन्तु उसने अपने कुल के महात्मा समाधि का कोई स्मारक बनाने की दिशा में आज तक सोचा भी नहीं है। अधिकांश वैश्य तो महात्मा समाधि के नाम से भी अपरिचित हैं। क्या वैश्य समाज इस दिशा में अपना कर्तव्य पालन कर अपने पूर्वज महात्मा के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करेगा ?

(२) संत पलटूदस

ये बहुत ही फक्कड़ स्वभाव के संत थे। भगवन्नाम में इनकी निष्ठा उच्च कोटि की थी। इनके गुरु गोविन्द जी थे। इनका परिचय निम्न भजन से मिलता है :—

नगला जलालपुर जनम भयो है, बसे अवध के खोर।
कहै पलटू प्रसाद हो, भयो जगत में सोर॥

सहर जलालपुर मूंड मुड़ाया, अवध तुड़ाकर धनिया।
सहज करैं ब्यौपार घर में पलटू निर्गुन बनियाँ।

इसके अनुसार नगला जलालपुर (फैजाबाद) में वैश्य के घर में इनका जन्म हुआ। अयोध्या में देह त्याग की। अयोध्या में उनकी समाधि अब भी है।

(३) संत धर्मदास महाराज

इनका पूरा नाम धनी धर्मदास है। वे बान्धवगढ़ नगर के बहुत सम्पन्न व्यवसायी थे। इनके पिता का नाम मनमहेश और माता लक्षणावती थी। जन्मकाल सम्वत् १४५२ के आसपास है।

बाल्यकाल से ही इनकी रुचि धर्म व अध्यात्म में थी। इनके यहाँ घर पर सदैव धार्मिक लोगों का, साधु-संतों का समागम होता रहता था। साधु सेवा के लिए इनका घर विख्यात था। ये पहले वैष्णव थे तत्पश्चात् कबीर साहेब की शरणागति में आए।

इनका हृदय भगवद् भक्ति में बेताब रहने लगा। शुद्ध, सात्विक, सरल हृदय में सद्‌गुरु का समावेश स्वतः हो जाता है। इनको गुरु तलाश नहीं करना पड़ा प्रत्युत गुरु ने इनको तलाश किया और गुरु भी कबीर साहेब।

मथुरा में धर्मदास को सर्वप्रथम कबीर साहेब ने सम्वत् १५१५ वि० में दर्शन दिए पुनः काशी में। तब से धर्मदास जी ने अपनी पत्नी और पुत्र चूड़ामणि के साथ कबीर साहेब की शरण ली और अपनी सम्पूर्ण सम्पदा लगभग ५६ करोड़ की दीन-हीन प्राणियों में बाँट दी और गुरु की चरण सेवा में रहने लगे।

कबीर साहेब के महाप्रयाण के उपरान्त धर्मदास जी ही उनकी गद्दी के अधिकारी बने। कबीर साहेब ने आपको ४२ वंश का आशीर्वाद दिया था। आज भी कबीर पंथ की सबसे बड़ी गद्दी धामा खेड़ा पर चौदहवें वंश के श्री १०८ श्री गृन्ध मुनिनाम साहेब वर्तमान हैं जो धर्मदास जी की वंश परंपरा के हैं।

कबीर पंथ विश्व का सर्वमान्य पंथ है। सद्‌गुरु का सर्वोच्च पद कबीर साहेब को ही प्राप्त है क्योंकि वे ही चार दाग से रहित माने गए हैं।

ऐसे अवतारी महापुरुष कबीर साहेब के प्रथम—प्रमुख शिष्य गद्दी के उत्तराधिकारी श्री १०८ श्री धर्मदास जी महाराज हैं। आपकी अतुल भक्ति के समक्ष सारा समाज नतमस्तक है। इनकी वाणी का एक पाठ :—

हम सतनाम के बैपारी॥
कोइ-कोइ लादे कांसा पीतल, कोइ-कोइ लौंग सुपारी।
हम तो लादो नाम धनी को, पूरन खेप हमारी॥
पूंजी न टूटै, नफा चौगुना, बनिज किया हम भारी।
हाट जगाती रोक न सकि है, निर्भय गैल हमारी॥
मोती बूंद घर ही में उपजै, सुकिरत भरत कोठारी।
नाथ पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी॥

pdfelement
Remove Watermark Now

(४) क्षेमराज कृष्णदास जी

वैकटेश्वर समाचार के जन्मदाता पुण्यात्मा सेठ खेमराज श्री कृष्णदास उन महापुरुषों में से एक थे जो क्रियात्मक रूप से संसार के सम्मुख पवित्र जीवन का उदाहरण रख गए हैं और जिनका मानव चरित्र आलोकस्तम्भ की भाँति भूले-भटकों को सुमार्ग बता रहा है।

बीकानेर राज्य के अन्तर्गत चूरू नामक नगर में, सेठ जी का जन्म अग्रवाल वैश्य कुल में हुआ था। घर की आर्थिक स्थिति से बाध्य होकर छोटी अवस्था में ही घर से निकल गए। रतलाम में दलाली का काम अपनाया। परन्तु इस कार्य से वे संतुष्ट न रहे, एक साधु से प्रोत्साहन पाकर धार्मिक पुस्तकों की बिक्री-कार्य शुरू कर दिया। उनकी रुचि भी इस ओर ही थी। इनका बड़ा भाई श्री गंगाविष्णु भी इनके साथ था। कुछ दिनों बाद दोनों भाई बम्बई चले गए और पुस्तकों का रोजगार करने लगे। धीरे-धीरे वे इस व्यवसाय में बढ़ते गए और भारत विख्यात पत्रकार, पुस्तक-विक्रेता, प्रेस के संचालन कर्ता और सम्माननीय व्यक्तियों में आपका स्थान बन गया।

आपका जीवन बहुत सादा था। आप धर्मानुरागी आस्तिक, गौब्राह्मणभक्त और परोपकारी थे। उन्हें अभिमान या क्रोध नाम को भी नहीं था। आपके घर से खाली हाथ कोई नहीं लौटा। उन्हें तीर्थ-यात्रा से बड़ा प्रेम था। एक बार ढाई-तीन सौ साधुओं को लेकर श्री बदरी नारायण की यात्रा को चले गये। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि भगवान के भोग में विदेशी खाँड काम में लाई जाती है तो उन्हें बड़ा दुख हुआ और उन्होंने तीन सौ बोरे खाँड के गंगा जी में फिकवा दिये और उनके स्थान पर स्वदेशी खाँड मंदिर में रखवा दी।

आपने जी भर कर धन पैदा किया और जी भर कर ही सत्कार्यों में लगाया। सबसे बढ़ कर उन्होंने जो उपकार किया वह है वेद-शास्त्र, पुराण-इतिहास आदि ग्रन्थों का सुलभ प्रचार और श्री वेंकटेश्वर समाचार का प्रकाशन। आप धर्म पालन में आदर्श और सच्चे आस्तिक हिन्दू थे, सदाचार के जीते-जागते आदर्श थे। दया आप में कूट-कूट कर भरी थी। जीव मात्र का कष्ट असह्य था उन्हें।

सेठ जी का स्वर्गवास श्रावण शुक्ला पूर्णिमा सं० १९७७ विक्रमी को हुआ। आपने अपने पीछे दो पुत्र और दो पुत्री छोड़ी थीं। सेठ जी के दोनों ही सुयोग्य पुत्र रावसाहब सेठ रंगनाथ जी तथा सेठ श्री निवास जी विनयावतार, दानवीर अपने पूज्य पिता जी के सुयश का अवलम्बन करने वाले रहे हैं।

(५) संत कवि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, बनारस

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य के जन्मदाता थे, यह सभी जानते हैं। हमने उनकी गणना अग्रवालों के सप्त ऋषियों में की है और उनका जीवन-परिचय दिया है। किन्तु बहुत कम लोग जानते हैं कि वे एक सन्त कवि भी थे।

काशी के पण्डितों ने एक प्रशंसापत्र हस्ताक्षर करके आपको दिया, उसमें लिखा था—

सब सज्जन के मान को कारण इक हरिचन्द।
जिमि स्वभाव दिन रैन तै कारण नित हरिचन्द।

आप बल्लभ सम्प्रदाय के वैष्णव और परम भक्त थे। श्री कृष्ण आपके आराध्य देव व सर्वस्व थे। वे अपने बारे में कहते थे—

सखा प्यारे श्याम के, गुलाम राधा रानी के

हरिश्चन्द्र जी अपने आप से कहते हैं—

रसने ! रटु सुन्दर हरिनाम।
मंगल करन, हरन सब असगुण, कर कल्पतरु काम॥
तू तौ मधुर सलोनो चाहत, प्राकृत स्वाद मुदाम।
'हरिचन्द' नहिं पान करत क्यों, कृष्ण-अमृत अभिराम॥

सन् १८८५ ई० में अन्तिम समय भी राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द से धनानन्द का सवैया पढ़वा कर सुना—

तुम कौन सी पाटी पढ़े हो लला···

(६) चरण दास

इन्होंने नारायण के भजन, स्मरण, ध्यान और गुणानुवाद में एक ग्रंथ 'चरण दास सागर' बनाया है और 'स्वरोदय' नामकी एक पुस्तक भी, जिसका स्वाध्याय बड़े-बड़े ज्ञानी, ध्यानी, योगी, जती लोग करते हैं। ये डेहरा ग्राम रियासत अलवर के रहने वाले मुरलीधर वैश्य के पुत्र थे। विक्रम सं० १७६० में जन्मे थे। इनका नाम पहले रणजीत था। कुछ बड़े होकर माता के साथ नाना के घर दिल्ली गए। दिल्ली में एक दिन कोई महात्मा मिल गए। इन्होंने उनके पैर पकड़ लिए और कहा, "प्रभो मुझ अपङ्ग को पार लगाओ, मैंने आपके चरणों की शरण ली है।"

महात्मा इनको कन्धे पर रखकर कुछ दूर ले गए और चरण दास नाम रखकर अपना परिचय दिया और राममन्त्र का उपदेश दिया। गुरु उपदेश के प्रभाव से चरण दास जी कुछ दिन बाद बड़े महात्मा हुए। इनके अनेक शिष्य हुए हैं जिनकी परम्परा दिल्ली, लखनऊ, बाँदा आदि नगरों में अब तक चलती है। इनके मतानुगामी फकीर चरण दासी कहलाते हैं। दिल्ली में ही वि० स० १८३९ में इनका देहान्त हुआ जहाँ इनका शरीर अग्नि देव की सौंपा गया था वहाँ इनकी समाधि बनी हुई है और उस पर हर बसंत पंचमी को मेला लगता है।

pdfelement
Remove Watermark Now

(७) सहजोबाई

ये महात्मा चरण दास जी की शिष्या थीं। इनके पिता का नाम हरिप्रसाद था। दिल्ली के परीक्षत पुरी में रहती थीं। कविता करने में निपुण थीं। आजन्म ब्रह्मचारिणी रहीं। इनका समय अनुमान से सं० १७४० वि० से सं० १८२० वि० तक है। इनके द्वारा रचति ग्रंथ कई हैं जैसे—सहजो बाई शब्द (योग), सोलह तिथि निर्णय और सहज प्रकाश। भगवन्नाम को ये अमूल्य धन-पारस कहती हैं।

पारस नाम अनमोल है, धनवंते घर होय।
परख नहीं कंगाल कूँ, सहजो डारै खोय॥

नाम स्मरण गुप्त रूप से करने के ये पक्ष में हैं :—

राम-नाम यों लीजिये, जानै सुमिरनहार।
सहजो कै कर्तार ही, जानै ना संसार॥
जागत में सुमिरन करै, सोवत में लौ लाय।
सहजो इकरस ही रहै, तार टूटि नहिं जाय॥

(८) संत सुन्दर दास

दौसा (जयपुर) निवासी सेठ परमानन्द जी की धर्मपत्नी सती के गर्भ से संत सुन्दर दास जी ने चैत्र शुक्ला ९ सं० १६५३ वि० को जन्म धारण किया। जन्म धारण इसलिए लिखा है कि ये स्वेच्छा से ही सती के गर्भ में आए थे। इन्होंने पूर्व जन्म में सती जब कुमारी थी तब भूल से वरदान दे दिया जबकि सती के भाग्य में पुत्र नहीं था। यह बात इन्हें इनके गुरु दादू दयाल जी महाराज ने बतलाई और इस बार भी दादू दयाल जी इनको ग्यारह वर्ष की अवस्था में काशी अपने साथ ले गए। वहीं इन्होंने विद्याध्ययन किया। वे गोस्वामी तुलसीदास जी के संसर्ग में अस्सीघाट पर रहे। इन्होंने तीर्थाटन बहुत किया। बारह वर्ष तक गुफा में रहकर योगाभ्यास किया।

संत सुन्दर दास जी ने लगभग ४२ ग्रंथ बनाए हैं। इनकी रचनाएं आध्यात्मिक दृष्टि से उच्च श्रेणी की हैं। सुन्दर दास जी की मान्यता आज भी सारे देश में है। राजस्थान में विशेष तौर पर है। आपकी गणना परम संतों में की जाती है। इनकी वाणी का नमूना—

पेट ते बाहर होत ही बालक आइ के मात-पयोधर पीनो।
मोह भयो दिन-ही-दिन और,तरुण भयो तिय के रस भीनो॥
पुत्र-प्रपुत्र बध्यौ परिवार सौं, ऐसे हि भाँति गयो पन तीनो।
सुन्दर राम को नाम बिसारि कै, आपहि आपकूँ बंधन कीनो॥

pdfelement

११

अग्रवाल वैश्यों के सप्त ऋषि

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र

अग्रसेन वंश के इन्दु, अग्रवाल-कुल-भूषण एवं हिन्दी के अमर साहित्यकार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र चहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति थे। उन्होंने राष्ट्र भाषा हिन्दी का अपनी रचनाओं से भण्डार भरा। उपलब्ध जानकारी के आधार पर अग्रवाल समा में भारतेन्दु बाबू पहले लेखक हैं जिन्होंने भारती मां हिन्दी की सेवा की।

इनका जन्म वाराणसी के सम्पन्न वैश्य-परिवार में सन् १८५० में हुआ था इनके जन्म-काल के समय देश में राजनीतिक तथा सामाजिक परिवर्तन हो रहे थे :—

१. सन् १८५७ की जन-क्रान्ति के समय भारतेन्दु जी की आयु सात वर्ष व थी अतः उन पर राष्ट्रीय चेतना का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था।

Remove Watermark Now

२. यही वह काल है जब स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म को संशोधित करने का आन्दोलन चलाया हुआ था।

३. उसी समय देश में ब्रह्म समाज भी अपना सामाजिक क्षेत्र बना चुका था।

४. सनातन धर्म के नेता पं० अम्बिकादत्त जी व्यास तथा पं० श्रद्धाराम जी, सनातन धर्म में आवश्यक संशोधन कर देश में बढ़ रही आर्य समाज की सामाजिक क्रान्ति को रोकने का असफल प्रयत्न कर रहे थे।

५. इसी युग में 'इण्डियन नेशनल कांग्रेस' का जन्म हुआ था।

६. स्वामी विवेकानन्द ब्रह्म-प्राप्ति के विधान को जनता के सम्मुख रख कर अपना दार्शनिक दृष्टिकोण अभिव्यक्त कर रहे थे।

७. ब्लेवेस्की तथा अल्काट ने भारतवर्ष में थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना की थी।

८. अंग्रेजों के शासन-काल में लूट-खसोट और शोषण जारी था। भारतवासी पराधीनता की बेड़ियाँ काटने हेतु छटपटा रहे थे और अंग्रेजों की दासता से मुक्ति पाने के उपाय सोचे जा रहे थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि देश में हो रहे राजनीतिक और सामाजिक उथल-पुथल तथा दार्शनिक और धार्मिक चिन्तन के प्रभाव से भारतेन्दु जी प्रभावित हुए बिना न रहे होंगे।

यद्यपि भारतेन्दु जी का जन्म ऐसे कुल में हुआ था जिनके पूर्वज अंग्रेजों से साँठ-गाँठ कर बंगाल के नवाब सुजाउद्दौला का सफाया करा चुके थे और वह स्वयं भी लार्ड क्लाइव की धूर्तता का शिकार बन चुके थे तथापि भारतेन्दु जी ने कुल का कलंक धोकर अपने-आप को राष्ट्रीय विचारधारा से ओत-प्रोत कर दिया था।

एक ओर भारतेन्दु जी के परिवार के बनारस के राज-परिवार के साथ घरेलू सम्बन्ध थे और राजा साहब उन्हें बबुआ कह कर पुकारते थे तथा उन्हें पुत्रवत् प्यार करते थे, दूसरी ओर जिस समय वे अपनी राष्ट्रीय कविताओं द्वारा जनमानस को झकझोरते थे तो अंग्रेज शासक चौकन्ने हो उठते थे— तब उन पर दबाव डाला जाता था कि वे अंग्रेज शासन के विरुद्ध लिखना बन्द कर दें। यद्यपि बाबू जी ने ऐसा कोई दबाव कभी स्वीकार नहीं किया—तथापि वे कभी-कभी अंग्रेजों की अच्छाइयों का गुणगान कर दिया करते थे और अंग्रेजों को यह सोचने का अवसर मिल जाता था कि बाबू हरिश्चन्द्र राष्ट्रप्रेमी तो हैं किन्तु विद्रोही नहीं। अतः उन्हें अंग्रेजों ने 'भारतेन्दु' की उपाधि प्रदान की। इसी कारण कुछ लोगों को बाबूजी की राष्ट्रीय भावना में अंग्रेज-प्रेम का दर्शन भ्रमित कर देता है। किन्तु सत्य यह है कि उन पर इस उपाधि का कोई प्रभाव नहीं पड़ा और अपनी कविताओं तथा नाटकों द्वारा स्वतन्त्रता का शंखनाद करते हुए अपने आपको समाज और राष्ट्र के सच्चे प्रेमी और उद्धारक के रूप में सिद्ध कर दिया।

उन्होंने अपने सक्रिय जीवन और साहित्य साधना द्वारा जो अमिट प्रभाव जनता पर छोड़ा; उससे उनकी राष्ट्रीयता में कोई सन्देह नहीं रह जाता।

वैसे तो भारतेन्दु जी ने हिन्दी-संसार को इतना साहित्य दिया है कि जब तक विश्व में हिंन्दी रहेगी तब तक वे अमर रहेंगे, किन्तु यदि समय की गति से हिन्दी भाषा में किसी प्रकार का परिवर्तन आ जाए तो उनका कृष्ण-प्रेम ओत-प्रोत साहित्य ऐसा है, जो अनूदित होकर उन्हें चिरकाल तक अमर बनाए रहेगा।

बाबूजी हिन्दी साहित्य के जन्मदाता माने जाते हैं किन्तु उन्होंने कृष्ण-प्रेम के गीत ब्रज भाषा में ही लिखे और गाए हैं। उनके उदार चरित, त्याग और करुणापूर्ण हृदय का उनके गीत-साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

आधुनिक युग की खड़ी बोली के गद्य के वर्तमान स्वरूप का श्रेय तो भारतेन्दु जी को है ही, वे संगीत और नाट्य कला में भी पारंगत थे तथा युग की आवश्यकतानुकूल गीत साहित्य लिखकर स्वयं को गीतकार भी सिद्ध कर दिया है। युग की आवश्यकतानुसार नाटक और नाट्य मंच को नया रूप प्रदान कर अपूर्व क्षमता प्रदर्शित की है। वे हिन्दी के सफल पत्रकार थे और हिन्दी निबन्ध पर उनका अधिकार था। वे हिन्दी के साथ अंग्रेजी के भी विद्वान थे।

भारतेन्दु जी ने पाँच वर्ष की आयु से ही कविता की रचना आरम्भ कर दी थी और उस समय से आज तक उनकी-सी प्रतिभा वाला व्यक्ति सम्भवतः इस देश में उत्पन्न नहीं हुआ। उन्होंने साहित्य-साधना में और भारतीयता की रक्षा तथा दीन-दुखियों के दुख-निवारण के लिए अपनी विपुल धन-सम्पत्ति अपने प्रेमी मित्रों, साहित्यकारों, समाज के लिए उपयोगी व्यक्तियों और दीन-दुखियों पर न्योछावर कर दी।

इस प्रकार भारतेन्दु जी को धन-सम्पत्ति लुटाते देख बनारस के महाराजा ने एक दिन उनसे कहा, "बबुआ, अपने पुरखाओं की गाढ़ी कमाई को ऐसे क्यों नष्ट कर रहे हो" तो उनका उत्तर था कि मेरे पुरखाओं ने रुपयों की ईंटें खड़ी कर दीं, मैं बेचकर रुपए बना रहा हूँ ताकि वह धनराशि दीन-दुखियों के काम आ सके।

इसी प्रसंग में एक दिन उनके एक मित्र ने उनसे पूछा कि आप अपने पुरखाओं द्वारा संचित धन-सम्पत्ति को क्यों लुटा रहे हो तो उनका उत्तर था कि धन-सम्पत्ति की शोभा त्याग में है और मैं इसे देश के उपयोगी अंगों में बाँटकर उसकी सार्थकता सिद्ध कर रहा हूँ। इस लक्ष्मी ने मेरे पुरखाओं को खा लिया है किन्तु वे इसे न खा सके। चले गए और अब लक्ष्मी उनको खाकर सुरक्षित बैठी है। अब मैं इससे अपने पुरखा के प्रति किए गए अत्याचार का बदला चुका रहा हूँ। मैं इसे योग्य व्यक्तियों खिलाकर इसे समाप्त कर देना चाहता हूँ।

भारतेन्दु जी प्रतिदिन अपने सेवक के साथ घूमने जाया करते थे। एक दि उन्होंने जाड़े से ठिठुरते हुए एक व्यक्ति को पटरी पर पड़ा पाया। उसे देखकर बाबू

pdfelement
Remove Watermark Now

इतने द्रवित हुए कि उन्होंने अपना बहुमूल्य दुशाला सेवक के रोकने पर भी उस व्यक्ति को उढ़ा दिया और अपने सेवक को समझाया कि तुम्हारे रजाई लेकर लौटने में तो विलम्ब होता और यदि इस बीच में जाड़े से इस दीन-दुखी की मृत्यु हो जाती तो इस कीमती दुशाले का क्या महत्व रह जाता।

बाबूजी अपने मित्रों के साथ संभाषण कला में इतने प्रवीण थे कि उनके पास आने वाले मित्र तीन-तीन, चार-चार घण्टे तक मन्त्र-मुग्ध होकर उनकी वाक्पटुता और सप्रसंग वार्ता का आनन्द लूटते रहते थे।

उनके पास आने वाले मित्रों तथा गुणी जनों का ताँता लगा रहता था और वे नाना प्रकार से उनकी सहायता किया करते थे। एक दिन उनके परम स्नेही मित्र उनसे मिलने आए। उस दिन भारतेन्दु जी एक आकर्षक अंगूठी पहने हुए थे और उनके वक्षस्थल पर एक मूल्यवान तथा मनोहर हार शोभायमान था। आगन्तुक मित्र ने इन आकर्षक आभूषणों की बड़ी प्रशंसा की किन्तु इस विषय पर आपने कोई वार्ता नहीं की और उन मित्र को अन्य वार्तालाप में ऐसा फंसाया कि वे उनकी वाणी का रसास्वादन ही करते रहे और आभूषणों की बात भूल गए। जब वे चलने के लिए विदा लेने लगे तो उन्होंने अपने मित्र को वे दोनों आभूषण यह कहकर पहना दिए कि इनकी शोभा इनके प्रशंसक के पास रहने में ही है। आगन्तुक मित्र ने बार-बार उन आभूषणों को लौटाना चाहा किन्तु भारतेन्दु जी ने उन्हें यह कहकर चुप कर दिया कि क्या आप मेरे इस छोटे से आग्रह को भी स्वीकार न करेंगे।

भारतेन्दु जी युग-बोधक व्यक्ति थे। उन्होंने सन् १८५५ से १८८५ तक साहित्य सृजन किया किन्तु उनका साहित्य काल १८९५ तक माना जाता है। आपने अपने स्वल्प जीवन काल में छोटे-बड़े १७५ ग्रन्थों की रचना की जिनमें से सत्य हरिश्चन्द्र, चन्द्रावली, भारत दुर्दशा, वैदकी हिंसा हिंसा न भवति, नील देवी, अन्धेर नगरी तथा गंगा गरिमा आदि कविता ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं।

आपने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की 'कविवचन सुधा' मासिक और साप्ताहिक पत्रिकायें प्रकाशित कीं जो आगे चलकर 'हरिश्चन्द्रिका' नाम से प्रसिद्ध हुई।

इतने बड़े साहित्यकार और समाज सुधारक होते हुए भी वे अपने वैश्य वंश को नहीं भूले अपितु अपनी जाति माता के प्रति अपना कर्तव्य निभाया। उनके अवतरण से पूर्व अग्रवाल जाति अपने वंश, इतिहास और अपने नाम को भूल गई थी। यह बात भारतेन्दु जी को बहुत अखरी। उन्होंने प्राचीन ग्रन्थों का गहन अध्ययन कर अग्रवाल जाति को उसके प्राचीन इतिहास की झाँकी कराई। उन्हीं के प्रयत्न से 'अग्रवैश्यवंशानुकीर्तन' हस्तलिखित ग्रन्थ उपलब्ध हुआ। उन्होंने 'अग्रवालों की उत्पत्ति' नामक इतिहास सन् १८७१ में लिखा। साथ ही अग्रवालों की उत्पत्ति विषयक लेख भी लिखे और आपने सर्वप्रथम वैश्य जाति में विस्मृत 'अग्रवाल' शब्द प्रचलित किया। इस सद् प्रयत्न के लिए अग्रवाल जाति भारतेन्दु जी की सदैव ऋणी रहेगी।

जिस प्रकार जगत् गुरु स्वामी शंकराचार्य ३२ वर्ष की स्वल्पायु में ही अपने अवतरण का उद्देश्य पूरा कर इस संसार से विदा हो गए, उसी प्रकार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य का अपार भण्डार भरकर, देशोन्नति में अपना महान योगदान करके तथा अग्रवाल जाति को समाज में उसका पूर्व गौरवप्रद स्थान निर्धारित करके केवल ३५ वर्ष की युवावस्था में माघ कृष्णा ६ सम्वत् १९४२ (सन् १८८५) को इस असार ससार से स्वर्गवासी हुए और युग-युग के लिए अपनी अमर गाथा भारत-भूमि पर छोड़ गए।

भारत सरकार ने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के सम्मान हेतु उनकी स्मृति में ९ सितम्बर, १९७६ को भव्य डाक टिकट प्रचारित किया है।

लाला लाजपत राय

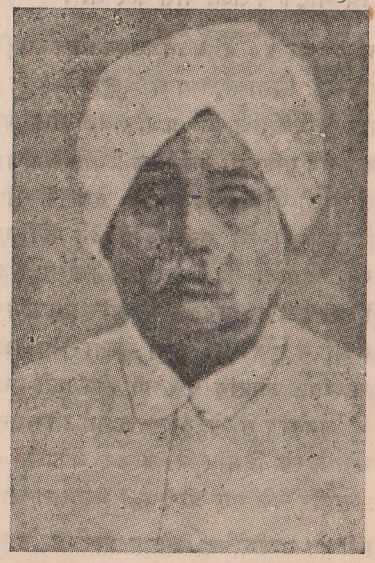

महापुरुषों का जन्म देश की विषम परिस्थितियों में हुआ करता है और जाति, समाज तथा देश को उन विषम परिस्थितियों में से निकाल ले जाने में ही उनकी महानता सर्वसाधारण पर प्रकट होती है। यहाँ हम जिस महापुरुष का दिग्दर्शन करायेंगे, उनके जन्म काल से केवल सात वर्ष पहले सन् १८५७ में ही भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (गदर) हो चुका था और देश के दुर्भाग्य से देशवासियों को आगामी सौ वर्ष के लिए परतन्त्र बना दिया गया था। अंग्रेज़ों का सर्वत्र आतंक छा गया था। भारतवासी १८५७ की हार से मर्मान्तक पीड़ा अनुभव कर रहे थे। देश के सभी क्रान्तिकारी नेता

pdfelement
Remove Watermark Now

और साहसी युवक चुन-चुन कर फाँसी पर लटकाए जा चुके थे। अतः अंग्रेजों के विरुद्ध जबान हिलाने का भी साहस किसी में दिखाई न देता था। सामाजिक दृष्टि से भी ईसाइयों तथा मुसलमानों का दबाव हिन्दू समाज पर बढ़ता जा रहा था।

देश की ऐसी विषम परिस्थितियों में सन् १८६५ की २८ जनवरी को हमारे परम श्रद्धेय ला० लाजपत राय का भारत की पवित्र भूमि पर अवतरण हुआ। लाला जी के पिता श्री मुन्शी राधाकृष्ण जी गर्ग जगराँव जिला लुधियाना के साधारण अग्रवाल परिवार के थे। लालाजी का जन्म उनके नाना श्री हुकम सिंह के गाँव ढुढिके (फिरोजपुर) में हुआ था। लालाजी के पिता एक अध्यापक थे। अतः उनके साथ रहकर वे विद्याध्ययन करते रहे और मिडिल पास होने पर १३ साल की आयु में ही आपका विवाह कर दिया गया। प्रारम्भ से ही लालाजी बड़े प्रतिभाशाली छात्र थे। अतः आपको सरकारी छात्रवृत्ति भी मिलने लगी। किन्तु दुर्भाग्य से हाई स्कूल पास करने से पहले ही आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। फिर भी आपने अपनी पढ़ाई चालू रखी और पितृ वियोग को सहन करते हुए सन् १८८० में कलकत्ता तथा पंजाब विश्वविद्यालयों से एक साथ मैट्रिक परीक्षा पास कर ली।

जब लालाजी सन् १८८१ ई० में गवर्नमेंट कालेज लाहौर में उच्च शिक्षा के लिए पहुँचे तो वहाँ पं० गुरु दत्त विद्धार्थी तथा ला० हंसराज जी आपके सहपाठी बने। उस समय देश में एक ओर आर्यसमाज का प्रचार बड़ी तीव्र गति से चल रहा था तो दूसरी ओर देश का नवयुवक वर्ग पश्चिमी वैज्ञानिक प्रगति से प्रभावित होकर नास्तिकता की ओर बढ़ रहा था। लालाजी के दिल-दिमाग में देश के प्रति लगन व तड़प थी। अतः ऐसे नाजुक समय में नवयुवकों को सही दिशा देने के लिए पं० गुरुदत्त विद्यार्थी ने "फ्री डीवेटिंग" क्लब की स्थापना की। क्लब के उत्साही सदस्यों में लालाजी भी एक थे। सन् १८८२ में ही लालाजी पं० गुरुदत्त जी और हंसराज जी के साथ आर्यसमाज के सदस्य बने। इसी साल आपने एफ० ए० तथा मुख्तारी परीक्षायें पास कर लीं अतः लाहौर छोड़कर अपने पितृ स्थान जगरांव चले गए और वहीं मुख्तारगीरी आरम्भ कर दी। कुछ समय पश्चात् वे जगरांव से रोहतक चले गए और सन् १८८५ में रोहतक से ही प्लीडरशिप परीक्षा पास करके हिसार में जाकर वकालत आरम्भ कर दी। सन् १८८६ में वे वहाँ से पुनः लाहौर चले गए और वहाँ वकालत आरम्भ कर दी।

अभी तक लालाजी का सार्वजनिक जीवन प्रारम्भ न हुआ था। शिक्षा और आजीविका के उपार्जन में ही उनका अब तक का समय व्यतीत हुआ था। अब स्थायी रूप से लाहौर में रहने के कारण उनकी सेवा भावना को अनुकूल वातावरण मिला और शिक्षा काल के तर्क, शास्त्रार्थ और भाषण शैली को निखार मिला। वास्तव में लालाजी के शिक्षा काल में उनके भाषण और तर्कों को जो भी सुनता वह यही कहा करता था कि यह बालक एक दिन देशरत्न बनेगा। उसी बालप्रतिभा ने अनुकूल वातावरण प्राप्त कर लालाजी को वास्तव में देशरत्न बना दिया।

लालाजी के विद्याध्ययन काल में ही महर्षि दयानन्द का प्रचार-कार्य आरम्भ

हो चुका था। लाहौर में सबसे पहले सन् १८८७ में आर्यसमाज की स्थापना हुई और लाहौर आर्यसमाज की गतिविधियों का केन्द्र-स्थल बन गया। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं लालाजी सन् १८८२ में आर्यसमाज के सदस्य बन चुके थे। अतः अब वे समाज-सुधारक के रूप में आर्यसमाज के कार्यों में बड़-चढ़कर भाग लेने लगे।

सन् १८८३ में महर्षि दयानन्द का निधन हो गया। अतः उनकी स्मृति में ला० साँईदास ने डी० ए० वी० कालेज की स्थापना की और महात्मा हंसराज ने कालेज के लिए अपना जीवन दान कर दिया। इस कार्य के लिए लाला लाजपत राय भी आगे आए और गाँव-गाँव में व्याख्यान देकर कालेज के लिए धन संग्रह के कार्य में जुट गए। इस प्रकार लाला जी के अथक प्रयत्नों ने डी० ए० वी० कालेज को समुन्नत कर दिया। वे वर्षों तक इस कालेज की प्रबन्ध समिति के मन्त्री रहे।

यह बात निश्चित है कि पुराने समय के प्रायः सभी आर्यसमाजी देशभक्त थे जिन्होंने भारत को स्वतन्त्र कराने के लिए हर प्रकार के बलिदान दिए। लाला जी ने भी एक आर्यसमाजी होने के नाते राजनीति में भाग लेने के लिए पहली बार सन् १८८८ ई० में कांग्रेस में प्रवेश किया और सन् १८९४ में कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन में सम्मिलित होकर पहली बार हिन्दुस्तानी में भाषण दिया। आपने अपनी भाषण कला से सभी को प्रभावित कर लिया, उस समय इनकी आयु केवल २९ साल की थी।

देश के दुर्भाग्य से सन् १८९६ तथा १८९९ में बिहार और राजस्थान में भयंकर अकाल पड़े और कांगड़ा में भूकम्प आया। इन सभी अवसरों पर लाला जी ने मानवता के नाते दुखी जनों की जैसी सेवा की उसकी अंग्रेजों ने भी भूरि-भूरि प्रशंसा की थी।

आपने सन् १९०१ में भारतीय दुर्भिक्ष आयोग के सम्मुख साक्षी प्रस्तुत की। सन् १९०४ में 'पंजाबी' साप्ताहिक की स्थापना की। इन्हीं दिनों बंग-भंग विरोध प्रचार की जागृति बंगाल से पंजाब तक फैल गई थी। लाला जी ने उस समय पंजाब में उस आन्दोलन का नेतृत्व संभाला। इस कार्य में सरदार अजीत सिंह (सरदार भगतसिंह के चाचा) तथा श्री रामचन्द्र मनचन्दा उनके सहयोगी थे। आपने स्थान-स्थान पर भाषणों द्वारा बंग भंग का विरोध किया, जनता में जागृति उत्पन्न की। इस प्रकार उस आन्दोलन को सफल बनाने के लिए 'बाल-पाल-लाल' तीन शक्तियाँ एक हो गई थीं।

सन् १९०५ में लाला जी की श्री गोखले जी से सर्व प्रथम भेंट हुई। इसी वर्ष इंग्लैंड पार्लियमेंट का अधिवेशन होने वाला था अतः उसके सम्मुख भारत का पक्ष प्रस्तुत करने के लिए कांग्रेस की ओर से एक शिष्ट मंडल इंग्लैंड भेजने का निश्च हुआ। अब तक लाला जी अपनी योग्यता, भाषण-शक्ति और सेवा-भावना से कांग्रेस अपना विशिष्ट स्थान बना चुके थे। अतः शिष्ट मण्डल में लाला लाजपत राय त श्री गोखले जी को भेजने जा निश्चय हुआ। इंग्लैंड पहुँच कर लाला जी तथा गो जी ने वहाँ ४० भाषण दिए किन्तु भारतीय स्वतन्त्रता का मार्ग प्रशस्त न हो सका, वे अमेरिका होते हुए इसी साल स्वदेश लौट आए और देशवासियों को स्पष्ट रू

pdfelement
Remove Watermark Now

बता दिया कि स्वतन्त्रता माँगने से नहीं मिलेगी अपितु इसके लिए अपने पैरों पर खड़े होकर त्याग और बलिदान करना होगा। इसके बिना कोई जाति जीवित नहीं रह सकती।

स्वदेश लौटकर लाला जी पूरी शक्ति से देश के कार्य में जुट गए और विदेशी माल के बाईकाट आन्दोलन को विशेष दिशा प्रदान की अतः सरकार ने शक्ति भर दमन-चक्र चलाया। फलतः लाला जी को बन्दी बनाकर रंगून भेज दिया गया और वहाँ मांडले की जेल में रखा गया। इसके विरोध स्वरूप भारत में आन्दोलन और जोर पकड़ गया अतः सरकार ने कुछ ही मास पश्चात् लाला जी को जेल से मुक्त करके स्वदेश बुला लिया। सन् १९०७ में लाला जी ने सूरत अधिवेशन में भाग लिया।

प्रारम्भ से ही लाला जी को श्री बालगंगाधर तिलक की नीति ने बहुत प्रभावित किया था अतः तिलक की सम्पूर्ण स्वराज्य की माँग, उग्रवादिता एवं हिन्दुत्व की भावना को लाला जी ने हृदयंगम कर लिया था। वे तिलक जी के विशिष्ट प्रिय जनों में से थे। सन् १९०५ के इंग्लैंड तथा अमेरिका प्रवास का सम्पूर्ण व्यय लाला जी को तिलक जी से ही प्राप्त हुआ था। जब कांग्रेस में दो दल बन गए तो लाला जी ने तिलक जी का ही साथ दिया।

१९०८ में देश के नवयुवकों ने बम बना डाले और दो अंग्रेज अफसरों को बम से उड़ा दिया। परिणाम-स्वरूप सरकार ने दमन-चक्र तेज कर दिया। इस चपेट में लोकामान्य तिलक भी आ गए और वे गिरफ्तार कर लिए गए। अतः लाला जी भारत की स्वतन्त्रता का पक्ष प्रस्तुत करने हेतु दूसरी बार इंग्लैंड गए और वहाँ के पत्रों में भारत विषयक लेख लिखे। वे सन् १९०९ में स्वदेश लौटे।

सन् १९०९ में देश के मुसलमानों तथा ईसाइयों ने हिन्दू समाज पर विविध प्रकार से आक्रमण आरम्भ कर दिए और हिन्दुओं के धर्म-परिवर्तन द्वारा समाज को हानि पहुँचाने का आन्दोलन आरम्भ कर दिया अतः लाला जी ने पंजाब में हिन्दू महासभा की स्थापना की तथा स्थान-स्थान पर हिन्दू बच्चों और अबलाओं की रक्षा हेतु अनाथालय, विधवाश्रम तथा विद्यालय खोलकर आततायियों से हिन्दू समाज की रक्षा की।

सन् १९११ में आपने पंजाब शिक्षा संघ की स्थापना की और इसी वर्ष उन्हें कांग्रेस शिष्ट मण्डल ने पुनः विदेशों में भेजा।

सन् १९१२ में कांग्रेस का अधिवेशन बांकीपुर में हुआ। लाला जी ने उस अधिवेशन में दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों का प्रबल समर्थन किया। उसी साल आपने मालवीय जी के स्वतन्त्र कांग्रेस दल में प्रविष्ट होकर बड़ी द्रुत गति से संगठन कार्य आरम्भ किया। मालवीय जी तथा लाला जी के सम्मिलित प्रयास और प्रभाव से स्वतन्त्र कांग्रेस पार्टी को चुनावों में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। आप उसी समय केन्द्रीय असेंबम्ली के सदस्य निर्वाचित हुए।

सन् १९२५ में लाला जी ने अंग्रेजी में एक साप्ताहिक 'दी पीपुल' की स्थापना

लाहौर म्युनिसिपल कमेटी के चेयरमैन निर्वाचित हुए और अपने स्वर्गीय पिता जी की स्मृति में जगरांव हाई स्कूल की स्थापना की।

सन् १९१२-१३ में श्री गोखले जी की अपील पर दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की सहायतार्थ लाला जी ने २५ हजार रुपए संग्रह करके भिजवाए।

सन् १९१४ में चौथी बार लाला जी इंग्लैंड गए। उन दिनों विदेशों में आर्य-समाज के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम फैला हुआ था और यह एक विद्रोही संगठन माना जाता था। अतः लाला जी ने अंग्रेजी में 'दी आर्य समाज' नामक ३४० पृष्ठ के ग्रन्थ की रचना की जिसकी भूमिका इंग्लैंड के प्रसिद्ध साहित्यकार सिडनी वेब ने लिखी। इस पुस्तक के प्रकाशन से विदेशों में जहाँ आर्य समाज का प्रचार हुआ, वहाँ आर्य समाज का सच्चा स्वरूप विदेश की जनता के सम्मुख आया।

सन् १९१४ में विश्व-युद्ध छिड़ जाने के कारण लालाजी को भारत लौटने की अनुमति नहीं मिली, अतः वे उसी वर्ष अमेरिका चले गए और वहाँ रहकर कई पुस्तकों की रचना की जिनमें से प्रमुख निम्नांकित हैं :—

१. यंग इण्डिया,
२. यूनाइटेड स्टेट आफ अमेरिका,
३. ए हिन्दूज इम्प्रैशन्स एण्ड स्टडी,
४. इग्लैंड्स डैट टु इण्डिया,
५. पोलिटिकल फ्यूचर आफ इण्डिया,
६. प्राब्लम्स आफ नेशनल एज्जूकेशन फौर इण्डिया

सन् १९१७ में इण्डियन होम रूल की स्थापना की।

सन् १९१९ में इण्डियन इन्फारमेशन ब्यूरो की स्थापना की किन्तु उसी साल आप अमेरिका से जापान होकर सन् १९२० में स्वदेश लौट आए और कांग्रेस के कलकत्ता में हुए अधिवेशन की अध्यक्षता की, अ० भा० ट्रेड यूनियन कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता की तथा अ० भा० कालेज स्टूडेंट्स कांग्रेस, नागपुर की अध्यक्षता की।

सन् १९२१ में आपने लोक सेवक मण्डल की स्थापना की और बड़े जोश के साथ देशव्यापी असहयोग आन्दोलन में भाग लेने लगे। अतः आपको बन्दी बना दिया गया और १८ मास का कारावास तथा ५००) अर्थ दण्ड की सजा दी गई।

सन् १९२३ में आप जेल से मुक्त किए गए और तभी पंजाब प्रान्तीय कांफ्रेंस की अध्यक्षता की। उसी साल आपने अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति दान करके सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया पीपुल्स सोसाइटी तथा अपनी माता जी के नाम पर गुलाबदेवी धर्मार्थ औषधालय चालू किया।

उन्हीं दिनों भारत भर में भयंकर हिन्दू-मुस्लिम दंगे आरम्भ हो गए और कांग्रेस में दो दल बन गए। एक दल के नेता थे महामना मदनमोहन मालवीय तथा दूसरे दल के नेता पण्डित मोती लाल नेहरू। सन् १९२४ में आप पं० मोती लाल जी के स्वराज्य दल में सम्मिलित हो गए किन्तु उनसे मतभेद होने के कारण आपने की तथा हिन्दू महासभा के कलकत्ता अधिवेशन के सभापति निर्वाचित हुए।

pdfelement
Remove Watermark Now

सन् १९२६ में भारतीय श्रमिकों के प्रतिनिधि बनकर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के आठवें जनेवा अधिवेशन में सम्मिलित हुए तथा इंग्लैंड व फ्रांस की यात्रा की।

सन् १९२७ में स्वास्थ्य लाभ के लिए योरुप में प्रवास किया तथा 'दी पीपुल' में एक लेख प्रकाशित करके स्वतन्त्र भारत का संविधान तैयार करने हेतु १०० विद्वानों के सम्मेलन का सुझाव दिया।

सन् १९२८ में साइमन कमीशन के आगमन का विरोध करने के लिए ऐतिहासिक भाषण दिया तथा ३० अक्टूबर को साइमन कमीशन के लाहौर आगमन पर कांग्रेस की प्रेरणा से उसका घोर बहिष्कार किया, दफा १४४ तोड़कर एक जलूस निकाला गया, अतः एक अंग्रेज पुलिसमैन की लाठियों से आपके सीने पर गहरी चोट पहुँची। फलस्वरूप १७ नवम्बर, १९२८ को भारत का वह कर्मठ सुपुत्र, जनता की आँखों का तारा सदैव के लिए देशवासियों से विदा लेकर प्रभु की गोद में जा बैठा।

लाला जी समय-समय पर अग्रवाल सभाओं में भी जाया करते थे और प्रोत्साहन देते थे। स्यालकोट की अग्रवाल सभा से उनका विशेष लगाव था।

जगन्नाथ दास रत्नाकर

भारतेन्दु बा० हरिचन्द्र के समकालीन साहित्यकारों में सुकवि श्री जगन्नाथदास रत्नाकर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपके ऊपर भारतेन्दु जी के

साहित्यिक वातावरण का विशेष प्रभाव पड़ा था। उसी वातावरण के कारण तथा साहित्य मण्डली के सम्पर्क में रहने से वे सुकवि बने।

श्री रत्नाकर जी का जन्म एक प्रतिभाशाली काशी के अग्रवाल वैश्य परिवार में सन् १८६६ में हुआ था। श्री रत्नाकर जी के पिता श्री पुरुषोत्तमदास फारसी के प्रकाण्ड पंडित थे। कहा जाता है कि उन्हें सम्पूर्ण कुरान कंठस्थ थी। वे भारतेन्दु जी के मित्र भी थे अतः श्री रत्नाकर जी को भारतेन्दु जी का पुत्रवत् प्रेम प्राप्त था। श्री रत्नाकर जी के पूर्वज बादशाहों के यहाँ उच्च पदों पर कार्य करने के कारण फारसी के विद्वान रहे थे और उनके घराने में फारसी का वातावरण था। उसी फारसीमय वातावरण में पल कर श्री रत्नाकर जी ने बी० ए० की परीक्षा के लिए फारसी का अध्ययन किया और उसी में ही कविता करने लगे। किन्तु जैसे-जैसे वे श्री भारतेन्दु जी के सम्पर्क में आए उनके आशीर्वाद से हिन्दी में कविता करने लगे, यद्यपि प्रारम्भ में ये कविताएँ तुकबन्दी मात्र थीं। प्रारम्भिक काल में आप 'जकी' उपनाम से रचनाएँ किया करते थे। वे भगवान कृष्ण के अनन्य भक्त और श्रद्धालु उपासक भी थे अतः उनका रुझान ब्रज भाषा की ओर होना स्वाभाविक था, साथ ही ब्रज भाषा के लालित्य एवं माधुर्य से प्रभावित होकर भी आप ब्रज भाषा में कवितायें रचने लगे।

आपने अनेक प्राचीन ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया अतः आप प्राचीन साहित्य के मर्मज्ञ माने जाते थे। आपकी धार्मिक प्रवृत्ति ही आपको प्राकृतिक स्थलों तक ले गई और लोक जीवन के साथ घुल-मिल जाने के कारण आप एक सफल कवि बन सके।

श्री रत्नाकर जी जहाँ सुकवि थे, उनका कण्ठ भी बहुत मधुर था। तबला, सितार और वायलिन बजाने में आप बड़े निपुण थे। अतः जब वे कवि गोष्ठियों में अपना कविता पाठ करते थे तो आपके कण्ठ से ईश्वर-भक्ति की वाणी प्रस्फुटित होकर विद्वत् मण्डली को ब्रह्मानन्द में विभोर कर देती थी और श्रोतागण इस असार संसार की झझटों को कुछ समय के लिए तो एकदम भूल जाते थे।

आपने नवोदित खड़ी बोली का मोह छोड़कर डूबती हुई ब्रज भाषा का पल्ला पकड़ा और अपनी धार्मिक भावना, प्रतिभा एवं कलात्मक ज्ञान से ब्रज भाषा को डूबने से बचा लिया तथा इसी पुण्य लाभ के फलस्वरूप वे आधुनिक युग में ब्रज भाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं।

श्री रत्नाकर जी की प्रतिभा जब निखार पर आई तो आप अपने युग के प्रसिद्ध साहित्य कार श्री देवकी नन्दन खत्री के सहयोग से एक 'साहित्य सुधा निधि' नामक पत्रिका का सम्पादन करने लगे। आगे चल कर 'माधुरी' नामक पत्रिका का सम्पादन करने लगे। सन् १९०० में 'सरस्वती' का सम्पादन आरम्भ किया। इस प्रकार श्री रत्नाकर जी की प्रतिभा का क्रमिक विकास दृष्टिगोचर होता है।

सन् १९०२ तक श्री रत्नाकर जी की साहित्यिक प्रतिभा का विकास हो चुका

pdfelement
Remove Watermark Now

था। अतः उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर अयोध्या-नरेश महाराजा सर प्रताप नारायणसिंह के० सी० आई० ने उन्हें अपना निजी सचिव बनाया और आगे चल कर आप उनके चीफ सेक्रेटरी हो गए। किन्तु इससे इनका साहित्यिक कार्य रुक गया। कुछ दिनों के पश्चात् महाराज का स्वर्गवास हो गया, अतः आप अयोध्या-नरेश की मृत्यु के पश्चात् महारानी साहिबा जगदम्बा देवी के प्राइवेट सेक्रेटरी नियुक्त हुए और उनकी प्रेरणा से 'गंगा लहरी' नामक ग्रन्थ की रचना की। महारानी जी ने इस रचना पर प्रसन्न होकर आपको २०००) का पारितोषिक प्रदान किया। आपने वह पुरस्कार राशि नागरी प्रचारिणी सभा को यह कह कर भेंट कर दी कि इस राशि के ब्याज से प्रति तीसरे वर्ष ब्रज भाषा के सर्वोत्तम काव्य ग्रन्थ पर पारितोषिक दिया जाया करे।

आपने अनेकों कवि सम्मेलनों का सभापति पद सुशोभित किया।

आपको प्राकृत भाषा का अच्छा ज्ञान था अतः आप प्राचीन शिला लेखों के पढ़ने तथा शोध कार्यों में बड़ी रुचि लेते थे।

श्री रत्नाकर जी की प्रमुख रचनायें निम्नांकित हैं—

१. कंठाभरण,	२. हमीर हठ,	३. गंगा लहरी,
४. हिंडोला,	५. हरिश्चन्द्र,	६. गंगावतरण,
७. उद्धव शतक,	८. कल काशी,	९. शृंगारलहरी,
१०. बिहारी रत्नाकर,	११. गजेन्द्र मोक्ष,	१२. वीर अभिमन्यु

आपकी पुस्तक कल काशी हाई स्कूल परीक्षा के तथा उद्धव शतक हिन्दी विशारद के पाठ्यक्रम में पढ़ाई जाती हैं। आपको गंगावतरण काव्य पर भारतीय एकेडमी से ५००) पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

जो आया है सो जायगा कहावत के अनुसार सुकवि जी का स्वर्गवास सन् १९३२ में हुआ। नागरी प्रचारिणी सभा ने आपकी स्मृति में आपकी समस्त रचनाओं का रत्नाकर शीर्षक से एक सुन्दर संग्रह प्रकाशित किया है।

श्री रत्नाकर जी अग्रवाल जाति के गौरव पूर्ण इतिहास के एक पात्र थे।

डा० भगवानदास

प्राचीन मनीषियों की शृंखला में डा० भगवान दास का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। उनके गुणों और विद्वत्ता से प्रभावित होकर भारत सरकार ने उन्हें 'भारत रत्न' की उपाधि से अलंकृत किया था।

डा० भगवान दास का जन्म सन् १८६९ में काशी के प्रतिष्ठित अग्रवाल परिवार में हुआ था। 'होनहार विरवान के होत चीकने पात' की कहावत डा० भगवानदास पर भली भाँति चरितार्थ होती है। वे अपने बाल्यकाल से ही एक प्रतिभाशाली बालक थे। यह विशेष उल्लेखनीय है कि धनाड्य परिवार में जन्म लेने पर उनकी रुचि विद्याध्ययन की ओर थी परिणाम स्वरूप उन्होंने १८ साल की स्वल्पायु में ही एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात वे तहसीलदार और फिर कलैक्टर के पद पर कार्य करते रहे। किन्तु नौकरी में उनका मन नहीं रमा अतः सन् १९०८ में नौकरी से त्याग पत्र देकर समाज सेवा के कार्य में जुट गए। वास्तव में तो उनमें समाज-सेवा के भाव तथा संस्कार सन् १८८४ में ही जागृत हो चुके थे जब कि वे डा० एनीबेसेन्ट के संपर्क में आए और थियासोफिकल सोसायटी के कर्मठ सदस्य बने।

आपने जन सेवा के कार्य का शुभारम्भ सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की स्थापना करके किया। इस कार्य में आपको अपने सभी सहयोगियों का सहयोग प्राप्त हुआ।

सन् १९२१ में आप राष्ट्रीय शिक्षण संस्था, काशी विद्यापीठ के कुलपति निर्वाचित हुए।

pdfelement
Remove Watermark Now

सन् १९२३ में वे काशी नगर पालिका के अध्यक्ष पद पर आरूढ़ हुए।

वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भी अध्यक्ष रहे।

हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी तथा प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा उन्हें मानद 'डी० लिट०' की उपाधि से विभूषित किया गया।

भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने उनकी सार्वजनिक सेवाओं के उपलक्ष्य में सम्मान प्रकट करने हेतु उन्हें भारत के सर्वोच्च अलंकार 'भारत रत्न' से अलंकृत किया।

डा० भगवान दास बड़े प्रभावशाली व्यक्ति थे, अतः हुतात्मा गणेश शंकर विद्यार्थी की मृत्यु पर कांग्रेस कमेटी द्वारा नियुक्त छः सदस्यीय समिति के आप अध्यक्ष नियुक्त हुए।

सन् १९३५ में आप भारतीय विधायिका के सर्व सम्मति से सदस्य निर्वाचित हुए।

आप बहुत समय तक अपनी लेखनी की शक्ति से ही देश-सेवा का कार्य करते रहे किन्तु सन् १९३१ से देशव्यापी असहयोग आन्दोलन में सक्रिय रूप से खुल कर भाग लेने लगे, अतः वे गिरफ्तार कर के कारावास भेज दिए गए।

डा० भगवान दास राष्ट्रीय व्यक्ति थे किन्तु हिन्दुत्व की भावना भी उनमें विद्यमान थी जिसकी झलक निम्नांकित तीन घटनाओं से मिलती है—

१. सन् १९४८ में महात्मा गान्धी जी की मृत्यु के पश्चात् जब राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर भारत सरकार ने प्रतिबन्ध लगाया तो उन्होंने इसकी कड़ी आलोचना की।

२. जब देहली में कांग्रेसी मन्त्री-मण्डल की हत्या करने का षड्यंत्र रचा गया तो किस प्रकार राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के एक स्वयं सेवक द्वारा विफल किया गया, इस घटना को उजागर करने का श्रेय डा० भगवान दास को ही है।

वे शिक्षा मन्त्री मौलाना अबुल कलाम आजाद की शिक्षा नीति से सदैव असंतुष्ट रहे। अतः उन्होंने इस सम्बन्ध में पं० जवाहर लाल नेहरू तथा पं० गोविन्द वल्लभ पन्त जी को पत्र लिखे थे।

जैसा कि इससे पूर्व इंगित कर चुके हैं, डा० भगवान दास, मनु, याज्ञवलक्य, कपिल, कणाद, अरविन्द, रामकृष्ण परमहंस और डा० एनीबेसेन्ट की दार्शनिक विचार धारा के प्रमुख प्रवक्ता, चिन्तक तथा कर्मठ सदस्य रहे अतः अपनी विचारधारा को और अधिक प्रस्फुटित तथा प्रसारित करने के लिए संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी में कई ग्रन्थों की रचना की जिन में से प्रमुख निम्न प्रकार हैं—

१. पुरुषार्थ, २. समन्वय, ३. दी साइंस आफ इमोशंस आदि।

विधि के विधानानुसार अपनी आयु के ८९ वर्ष पूरे करके १८ सितम्बर १९५८ को काशी में डा० भगवान दास का स्वर्गवास हुआ।

अग्रवाल वैश्य जाति को संगठित करने के लिए उनकी विचारधारा थी कि सभी वैश्यों को विशाल अग्रवाल वैश्य जाति में आत्मसात कर लेना चाहिए।

बाबू गुलाबराय

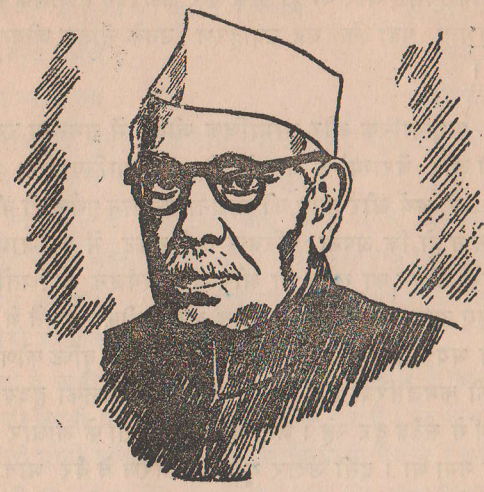

भारत में काशी, प्रयाग तथा आगरा ऐसे महानगर हैं जहाँ के तीन महर्षि अपनी गुण-गरिमा के कारण सर्व प्रिय "बाबू जी" नाम से विख्यात हुए हैं। काशी के साहित्य जनों के 'बाबू जी" थे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, प्रयाग के 'बाबू जी' थे राजर्षि पुरुषोत्तम दास टन्डन और आगरा के साहित्य समाज में 'बाबू जी' के नाम से स्व० डा० गुलाब राय जी सुविख्यात थे।

बाबू जी का जन्म एक सम्भ्रान्त अग्रवाल वैश्य कुल में हुआ था, सन् १८८८ ई० की बसन्त पंचमी से एक दिन पूर्व। उनके पिता श्री बा० भवानी प्रसाद जी इटावा में मुन्सरिम थे, अत्यन्त धार्मिक विचार के महापुरुष। उनके विषय में प्रसिद्ध था कि वे दफ्तर का कामकाज करते समय भी राम नाम का जाप किया करते थे। माता गौमती देवी सूर और तुलसी के पदों में डूबी रहती थी। ऐसे संस्कारों में पले हुए बालक के लिए स्वाभाविक ही था कि वह दर्शन और साहित्य की ओर अग्रसर हो।

एम० ए० पास करके बा० गुलाब राय जी सर्वप्रथम आध्यात्मिक रूप में कर्म-क्षेत्र में उतरे किन्तु उनके जीवन की विकास दिशा छतरपुर राज्य में जाने पर निश्चित हुई। विद्वान और आध्यात्मिक वृत्ति के धनी महाराज छतरपुर ने उन्हें अपना प्राइवेट सैक्रेटरी नियुक्त किया। वहाँ कुछ समय तक न्यायाधीश के पद पर भी रहे। रिसायत के इन महत्त्वपूर्ण पदों पर रहते हुए भी आपने अपने जीवन में नितांत सादगी और ईमान

pdfelement
Remove Watermark Now

दारी बरती। यह सब उनके बचपन के संस्कारों के कारण ही सम्भव हो सका। इस सन्दर्भ में उनके बचपन की एक घटना विशेष रूप से उल्लेखनीय है। एक बार जब वे बालक ही थे तो उनके पिताजी मैनपुरी से बिना टिकिट रेलगाडी में बैठ गए, क्योंकि गाड़ी छूट रही थी। आगरा स्टेशन पर भी किसी ने टिकिट नहीं माँगे। बाहर आकर उन्होंने मैनपुरी के डेढ़ टिकिट लिए और यों ही फाड़ कर फेंक दिए। बालक गुलाबराय पर इस घटना का ऐसा प्रभाव पड़ा कि यह उदाहरण उनके नैतिक जीवन के लिए अक्षुण्य सम्बल बना रहा।

बाबू जी पारिवारिक और सामाजिक जीवन में समन्वय रखते थे। कबीर के कथनानुसार 'गृही और वैराग्य' के आदर्श को अपने पारिवारिक जीवन में उन्होंने उतारा। उन्होंने धर्म, अर्थ और काम की साधना सन्तुलन पूर्वक ही की। उनकी राय में धर्म में इतना लीन न हो कि अपना परिवार अर्थ संकट में पड़ जाए। त्याग के साथ अर्थ का भाग उनके जीवन का लक्ष्य था और अपने स्वजन आश्रितों की सुख सुविधा का ध्यान रखते हुए आनन्द से जीवन व्यतीत करना ठीक समझते थे। उनके परिवार जनों में प्रीति का भय था, भय की प्रीति नहीं। वे दूसरे के दृष्टि कोण को अधिक महत्व देते थे। दूसरों की कमजोरियों एवं न्यूनताओं के प्रति उनका हृदय उदार रहा और वे पर-छिद्रान्वेषण से सदैव दूर रहे। अतः वे सहनशीलता के आधार थे और स्वार्थ तो उन्हें छू तक नहीं गया था। इसी उदार वृत्ति के कारण वे वैर भाव से सदा बचे रहे। उनके गुणों से प्रभावित होकर ही एक बार श्री कमलापति त्रिपाठी (भूतपूर्व केन्द्रीय रेल मन्त्री) ने बाबू जी का अभिनन्दन करते हुए बाबू जी को 'अजात शत्रु' (जिसका शत्रु पैदा ही न हुआ हो) कहा था।

परम विद्वान महाराज छतरपुर का पुस्तकालय साहित्य और दर्शन की अनुपम निधि था। अपने अठारह वर्ष के रियासती जीवन में बाबू जी ने दर्शन और साहित्य का गहन अध्ययन किया।

महाराज छतरपुर के स्वर्गवासी हो जाने पर बाबू जी पेंशन लेकर आगरा चले आए। वैसे तो छतरपुर में रहते हुए ही आप निम्नांकित गम्भीर और स्थायी महत्व के ग्रन्थों की रचना कर चुके थे—

१. शान्ति धर्म, २. कर्त्तव्य शास्त्र, ३. तर्क शास्त्र (तीन भाग) ४. पाश्चात्य दर्शन का इतिहास और, ५. फिर निराशा क्यों।

किन्तु अब तक की रचनायें स्वान्तः सुखाय ही थीं। आगरा आकर साहित्य-सेवा उनकी जीविका का साधन भी बन गई। परिणाम स्वरूप तब वे नियमित रूप से लिखने लगे। साहित्य रत्न भंडार के स्वामी श्री महेन्द्र जी ने सन् १९३५-३६ में जब 'साहित्य सन्देश' नामक उच्च कोटि का आलोचनात्मक मासिक पत्र निकाला तो इन्होंने बाबू जी को उसके सम्पादन का भार सौंपा। पत्रिका के सम्पादक रूप में आप

समन्वयवादी आलोचक प्रसिद्ध हो गए। साथ ही में उन्होंने अनेक नए लेखकों को साहित्य-साधना के मार्ग पर चलने को प्रेरित किया।

आगरा में आकर बाबू जी ने निबन्ध और आलोचना के क्षेत्र में निम्नाँकित महत्वपूर्ण कृतियाँ प्रदान कीं—

१. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	२. नाट्य विमर्श
३. प्रबन्ध प्रभाकर	४. सिद्धान्त और अध्ययन
५. काव्य के रूप	६. हिन्दी काव्य विमर्श।

पं० रामचन्द्र शुक्ल तथा बा० श्याम सुन्दर दास के पश्चात् आलोचना के क्षेत्र में बाबू जी को सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई।

उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त बाबू जी ने अपने निबन्धों के संग्रह ग्रन्थों द्वारा भी हिन्दी साहित्य की अद्भुत सेवा की है। उनके निबन्ध संग्रह ग्रन्थ निम्न प्रकार हैं—

१. मन की बातें, २. कुछ उथले कुछ गहरे, ३. जीवन रश्मियाँ
४. मेरी असफलतायें।

वैसे तो ये सभी निबन्ध संग्रह उच्च कोटि के ग्रन्थ हैं किन्तु 'मेरी असफलतायें' ग्रन्थ में बाबू जी अपनी प्रतिभा के चरम विकास पर हैं। यह ग्रन्थ अपनी प्रतिपाद्य और प्रतिपादित शैली दोनों दृष्टियों से विश्व साहित्य की बेजोड़ रचना हैं।

बाबू जी पी० एच० डी० तथा डी० लिट० के विद्यार्थियों के लिए अनुसंधान-निर्देशक ही नहीं, अपितु पथ प्रदर्शक भी थे। कितने ही लोगों का अर्थ संकट निवारण कर उन्हें शोध कार्य के लिए प्रोत्साहित किया। उनमें कई शिष्य आज हिन्दी के स्तम्भ हैं।

परिश्रम, स्वाभिमान तथा आडम्बर-विहीनता की त्रिवेणी बाबू जी के जीवन में बहती रहती थी। क्रोध पर उन्होंने पूर्ण विजय प्राप्त कर ली थी। यद्यपि वे यशाकांक्षी थे तथापि इसके लिए हथकण्डे अपनाना उन्हें प्रिय न था। काम से नाम हो जाए तो ठीक, अन्यथा साधारण जीवन व्यतीत करना ही श्रेयस्कर मानते थे।

बाबू जी इतने महान साहित्यकार होकर भी अपने व्यस्त जीवन में से समय निकाल कर अपनी अग्रवाल वैश्य जाति की सेवा करना न भूले। वे वर्षों तक अग्रवाल सभा के प्रधान रहे।

सन् १९४३ में देहली में हुए अग्रसेन जयन्ती महोत्सव में सम्मिलित हुए।
आपने अखिल भारतीय वैश्य महासभा के वार्षिक अधिवेशन सन् १९४४ में भी भाग लिया।

एक बार जब उनसे प्रश्न किया गया कि आजकल के युग में जब चारों ओर जाति पाँति के बन्धनों से मुक्ति प्राप्त करने की पुकार सुनाई पड़ती है फिर उन बन्धनों को दृढ़ता प्रदान करने वाली जातीय सभाओं की क्या सार्थकता है तो उनका सीधा साधा उत्तर था कि जातीय सभायें यदि परस्पर द्वेष उत्पन्न करें तो वे निन्दनीय हैं और यदि वे पारस्परिक प्रेम-भाव बढ़ाने में योग दें तो सराहनीय और रक्षणीय हैं।

pdfelement
Remove Watermark Now

सभा के कार्यकर्ताओं को सलाह देते हुए बाबू जी ने एक लेख में लिखा है कि जाति के भाइयों के सुधार के लिए जो उपाय किए जायें उनमें शासन की गन्ध न आना चाहिए। जो कुछ किया जाए प्रेम, सेवा और सद्भाव से किया जाए। समाज सुधारक का पहला उत्तरदायित्व है कि वह पहले अपना सुधार करें।

सभा के अधिकारियों के लिए बाबू जी की सलाह थी कि उन्हें यह देखना चाहिए कि उन्होंने दूसरों की कहाँ तक सहायता की है। गरीब और पिछड़े हमारे तिरस्कार के पात्र नहीं, पूजा और आदर के विषय हैं।

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी की तरह बाबू जी ने भी हिन्दी का साहित्य-भंडार भरने के साथ-साथ अग्रवाल वैश्य जाति की सेवा में जीवन पर्यन्त अग्रवाल वैश्य पत्र-पत्रिकाओं में ओजपूर्ण एवं स्थायी महत्व के अनेक लेख लिखे जिनमें से कुछ लेखों के शीर्षक इस प्रकार हैं :—

१. समाज सुधारक का उत्तरदायित्व।
२. महा लक्ष्मी का कैसे स्वागत करें।
३. आत्मोन्नति के साधन।
४. होली का नव वर्ष।
५. राष्ट्र निर्माण में वैश्यों का कर्त्तव्य।
६. रीति रिवाज का अध्ययन।
७. समाज के प्रति हमारा कर्त्तव्य।

इनमें से अन्तिम लेख बाबू जी ने महाराजा अग्रसेन जयन्ती सन् १९६३ के लिए लिखा था।

हम देखते हैं कि जहाँ भारतेन्दु बाबू जी ने वैश्य जाति को 'अग्रवाल' नाम तथा 'अग्रवालों की उत्पत्ति' पुस्तक लिख कर जाति के सुदृढ़ आधार का निर्माण किया, बाबू गुलाबराय जी ने उसी आधार पर निर्मित विशाल भवन को अपनी लेखनी के चमत्कार से चार चाँद लगा दिये।

बाबू जी के प्रखर पाण्डित्य से प्रभावित हो कर आगरा विश्वविद्यालय ने सन् १९५७ में उन्हें 'डॉक्टर आफ लिटरेचर' की मानद पदवी प्रदान कर उनकी सुयश-वृद्धि की थी।

सन् १९६३ की बैसाखी के दिन उत्तर प्रदेश में हाई स्कूल तथा इन्टरमीजिएट की परीक्षायें चल रही थीं और दोनों परीक्षाओं में "बाबू गुलाब राय के व्यक्तित्व और कृत्तित्व" विषय पर प्रश्न थे। जिस समय हजारों विद्यार्थी बाबू जी के जीवन पर लेख लिख रहे थे, उसी समय महर्षि गुलाब राय महाप्रयाण यात्रा पर प्रस्थान कर चुके थे।

सेठ जमना लाल बजाज

महात्मा गांधी के अनन्य सहयोगी, भारतीय संस्कृति के महान उपासक तथा अग्रवाल वैश्य समाज के संगठन-कर्ता सेठ जमना लाल बजाज का स्थान राष्ट्रीय नेताओं में अग्रणीय है। जिस प्रकार लाला लाजपत राय ने अग्रवाल जाति में जन्म लेकर न केवल अपनी जाति का सम्मान बढ़ाया और अपने त्याग, बलिदान और सेवा भाव द्वारा समस्त भारत की जनता को भी लाभ पहुँचाया, उसी प्रकार सेठ जमना लाल बजाज ने सन् १९१८ ई० में अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की स्थापना करके (सन् १९३० में इसी का नाम अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा हो गया) अपनी अग्रवाल जाति को संगठित कर तथा उसे एक मंच पर ला खड़ा किया और अपनी राष्ट्रीय सेवाओं द्वारा इतना ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया कि महात्मा गांधी ने उन्हें अपना पुत्रवत् स्नेह प्रदान किया।

बालक जमना लाल का जन्म पूर्व जयपुर रियासत के अन्तर्गत सीकर ठिकाने के काशी के वास ग्राम में सन् १८८९ की ४ नवम्बर को साधारण अग्रवाल परिवार में हुआ था। उनके पिता जी ने उन्हें बाल्यकाल में ही वर्धा के सुप्रसिद्ध और धनाड्य सेठ बच्छराज जी की गोद दे दिया था। अपने शान्त स्वभाव और कुशाग्र बुद्धि से

pdfelement
Remove Watermark Now

बालक जमना लाल ने अपने पोषक पिता को ऐसा प्रभावित किया कि उन्होंने जमना लाल को बाल्यावस्था में ही अपना कारोवार सम्भाल दिया।

सन् १८९६ की १ फरवरी से बालक जमना लाल की शिक्षा प्रारम्भ हुई और हिन्दी, मराठी तथा गुजराती का काम चलाऊ ज्ञान प्राप्त होने पर सन् १९०० में उनकी पढ़ाई समाप्त हो गई। शिक्षा के लिए इतना कम समय मिलने पर भी उन्होंने इतनी योग्यता प्राप्त कर ली थी कि वे साहित्यकारों के लेखों, नेताओं के भाषणों, वक्तव्यों तथा पारस्परिक पत्र व्यवहार में शब्दों की पकड़, आलोचना तथा बात की गहराई तक पहुंचने की क्षमता, द्वारा बुद्धि जीवियों एवं विधि विशेषज्ञों को भी चकित कर देते थे।

वर्धा और नागपुर के सरकारी क्षेत्रों में सेठ बच्छराज की बड़ी प्रतिष्ठा थी। राज्य के बड़े से बड़े अधिकारी उनके यहाँ आते रहते थे अतः सभी क्षेत्रीय अधिकारियों पर सेठ जी की धाक थी। सेठ जमना लाल बजाज का भी सरकारी क्षेत्र के अधिकारी वर्ग में बड़ा सम्मान था। वे सरकार द्वारा आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किए गए थे। सन् १९२० तक वे अंग्रेज सरकार के भक्त थे और उन्हें राय बहादुरी की पदवी भी मिली हुई थी। किन्तु वे स्वाभिमान और देश प्रेम की भावना से भी ओतप्रोत थे अतः राज कर्मचारियों के रौब और खुशामद पसन्दी से उन्हें घृणा थी, साथ ही व्यापार में जुआ और चोरी से भी वे नफरत करते थे।

सेठ जी बचपन से ही परोपकारी वृत्ति के थे। जब वे बालक थे तो उन्हें जेब खर्च के लिए प्रतिदिन आठ आना से एक रुपया तक पिता जी से मिलता था। उस जेब-खर्च से सौ रुपए बचाकर बालक जमना लाल ने पूना से प्रकाशित होने वाले 'केसरी पत्र' को दान रूप में भेजे थे। यह उनके बाल्यकाल का सर्व प्रथम दान था। आगे चलकर तो उनकी यह दृढ़ धारणा बन गई थी कि विधाता ने धन परोपकार के लिए ही दिया है और मनुष्य को उसका संरक्षक बनाया है। इसी भावना से प्रेरित होकर सेठ जी ने अनेक संस्थाओं को दान दिये यथा—

१. गान्धी सेवा सघ, २. तिलक स्वराज्य फंड, ३. सत्याग्रह आश्रम ४. हिन्दू विश्व विद्यालय शिक्षा मण्डल, ५. अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा तथा राजस्थान के सभी खादी भंडार विशेष कर गोविन्दगढ़ का खादी भंडार।

सेठ जी द्वारा दी गई कुल सहायता राशि का योग २३ लाख ८३ हजार ५ सौ रुपए तक पहुँच गया था।

सन् १९०६ में जब वे १७ वर्ष के थे तो उनके पिता सेठ बच्छराज ने क्रोध में कह दिया कि तुम्हें मेरे धन से प्यार है मुझसे नहीं, तुम अपने जन्मदाता पिता के घर लौट जाओ। जमना लाल जी स्वाभिमानी तो थे ही, स्टाम्प पेपर पर लिखकर कि मेरा इस सम्पत्ति पर कोई हक नहीं है, वहाँ से चल दिए और कह गए कि मैं गोद का लिया हुआ पुत्र था तब आपने ऐसा कह दिया, इसमें आपका कोई दोष नहीं है, दोष मेरे गोद देने वाले पिता का है। किन्तु कुछ दिनों में पिता पुत्र का पुनः मेल हो गया।

सन् १९०६ में अ० भा० राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन पितामह दादा भाई नौरोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में हुआ। उस अधिवेशन में सेठ जमना लाल बजाज ने भाग लिया था। यहीं से उनके राजनीतिक जीवन का प्रारम्भ समझना चाहिए।

सन् १९१४ में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक जब विलायत जा रहे थे तो एक अंग्रेज डी. एस. पी. ने बातों ही बातों में कहा कि यह जहाज डूब जाए तो अच्छा है। यह सुनकर सेठ जी को बहुत दुख हुआ और वे तभी से अंग्रेजों से घृणा करने लगे तथा आपके मन में देश को स्वतन्त्र कराने की भावना जागृत हो गई। तभी से आपने देश के राजनीतिक नेताओं से सम्पर्क स्थापित करना आरम्भ कर दिया।

सन् १९१५ में अखिल भारतीय नेशनल कांग्रेस का अधिवेशन बम्बई में हुआ। लार्ड सिंहा अधिवेशन के अध्यक्ष बने। उसी अधिवेशन में महात्मा गांधी जी दक्षिण अफ्रीका के भारतवासियों के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव स्वीकार कराना चाहते थे। इस कार्य के लिए उन्हें दूर-दूर ठहरे प्रतिनिधियों से सम्पर्क स्थापित करना आवश्यक था अतः महात्मा जी की सुविधा के लिए सेठ जमना लाल बजाज ने तत्काल एक मोटर गाड़ी खरीद दी।

सन् १९१८ से पहले सेठ जमनालाल जी मारवाडी सेठों की पोषाक में रहा करते थे। वे कानों में जंजीरदार मुरकी (कुण्डल), हाथों में सोने के कड़े, कमर में सोने की तगड़ी, दोनों हाथों की उंगलियों में अंगूठियाँ और सिर पर जरीदार कढ़ी हुई गोल टोपी पहनते थे। किन्तु आगे चलकर उनके जीवन में एकदम सादगी आ गई।

सन् १९१८ में सेठ जमना लाल ने मारवाड़ी अग्रवालों में फैली हुई कुरीतियों को दूर करने तथा अग्रवाल वैश्यों का संगठन करने के लिए अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की स्थापना की। सन् १९१९ में इस महासभा का प्रथम अधिवेशन वर्धा में हुआ। इससे प्रकट है कि इतने बड़े सेठ तथा राष्ट्रीय नेता होकर भी उन्होंने अपनी अग्रवाल वैश्य जाति को भुलाया न था। सेठ जी द्वारा संस्थापित अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा आगे चलकर १९३० ई० में अ० भा० अग्रवाल महासभा के नाम से प्रसिद्ध हुई और इसके द्वार सभी अग्रवालों के लिए खोल दिए गए। सन् १९२६ में इस महासभा का अधिवेशन दिल्ली में हुआ था और सेठ जमनालाल जी बजाज को उस अधिवेशन का सभापति बनाया गया था। सेठ जी की यह दृढ़ भावना थी कि अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा के माध्यम से समस्त वैश्य जाति को संगठित किया जाए और आवश्यक सुधार आन्दोलन द्वारा जागृति उत्पन्न की जाए।

सन् १९२० में सेठ जी ने अंग्रेजों का दिया हुआ राय बहादुरी का अलंकार त्याग दिया और अंग्रेजों से अपने सम्बन्ध विच्छेद करके पूरी तरह राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने लगे।

महात्मा गान्धी के सभी रचनात्मक कार्यों का श्रेय सेठ जी की प्रखर बुद्धि प्रतिभा, संगठन-क्षमता एवं तन्मयता को ही था, इस बात को महात्मा गांधी ने स्वय

pdfelement
Remove Watermark Now

स्वीकार किया था। वे कहा करते थे कि जमनालाल की तरह तन, मन, धन से अन्य कोई भी मेरी गतिविधियों में आत्मविभोर नहीं हुआ।

सन् १९२३ की १३ अप्रैल को नागपुर में राष्ट्रीय झण्डे के अपमान को लेकर आन्दोलन खड़ा हो गया। सेठ जमनालाल बजाज ने घोषणा कर दी कि राष्ट्रीय ध्वज का अपमान सहन नहीं किया जाएगा। अतः १७ जून को सेठ जी २२० सत्याग्रहियों के साथ बन्दी बना लिए गए और उन्हें डेढ़ वर्ष का कारावास तथा तीन हजार रुपए अर्थ दन्ड दिया गया। यद्यपि जेल में उन्हें विशेष स्थान दिया गया था तदपि उन्होंने वह सुविधा स्वीकार नहीं की। जब पुलिस तीन हजार रुपए जुर्माने की राशि वसूल करने हेतु उनके बंगले पर पहुँची तो वह उनकी एक मोटर एक बग्घी और रुपयों की एक पेटी उठा ले गई। जब पुलिस ने मोटर बग्घी को नीलाम किया तो उसका कोई खरीदार न मिला। इससे सेठ जी की लोकप्रियता तथा प्रभाव ही कल्पना की जा सकती है।

सन् १९२४-२५ में गांधी जी द्वारा संचालित हरिजन आन्दोलन में वे सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। उन्होंने हरिजनों के लिए कुएँ, धर्मशालायें और मन्दिर खुलवाए तथा अपने यहाँ हरिजनों को नौकरी भी दी। उन्होंने पूज्य बापू जी तथा ठक्कर बापा के साथ देश में हरिजन आन्दोलन को प्रगति देने के लिए प्रचार यात्रायें कीं। हरिजनों के साथ सेठ जी का लगाव देखकर अग्रवाल, माहेश्वरी तथा ब्राह्मणों के पंचों ने उनका जाति बहिष्कार कर दिया किन्तु वे इससे विचलित नहीं हुए।

१९३० में सेठ जी नमक आन्दोलन सत्याग्रह में दूसरी बार बन्दी बनाए गए।

सन् १९३१ में सेठ जी की प्रेरणा से जयपुर में प्रजा मंडल की स्थापना हुई और अन्य रियासतों में भी प्रजा मंडलों द्वारा सत्याग्रह आरम्भ हो गया।

सन् १९३२ में जयपुर रियासत में सत्याग्रह करने के फलस्वरूप सेठ जी जयपुर कारावास में छः मास तक बन्द रहे।

जिन दिनों जयपुर नरेश तथा राव राजा सीकर के मध्य मत भेद हो जाने से तनाव अधिक बढ़ गया तो सेठ जी ने बीच में पड़कर दोनों में समझौता करवा दिया।

जब उदयपुर राज्यान्तर्गत बिजोल्या सत्याग्रह को लेकर तनाव अधिक बढ़ गया तो सेठ जी ने बीकानेर नरेश के सहयोग से राजा और प्रजा में समझौता कराया।

सेठ जी ने राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार में बड़ा योग दिया। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा आप ही की प्रेरणा का फल है।

सेठ जी अपने जीवन काल में अनेक संस्थाओं के अध्यक्ष, संरक्षक, डायरेक्टर, खजाँची, स्वागताध्यक्ष आदि पदों पर आसीन रहे और नैशनल कांग्रेस के तो आजीवन कोषाध्यक्ष रहे।

सेठ जी और महात्मा गांधी जी में इतनी आत्मीयता बढ़ गई थी कि उन्होंने महात्मा जी को अपना आध्यात्मिक पिता मान लिया था और महात्मा जी भी उन्हें अपना सबसे सुयोग्य पुत्र मानते थे।

११ फरवरी सन् १९४२ को महात्मा गांधी तथा सेठ घनश्याम दास बिड़ला को वर्धा में तार मिला कि सेठ जमना लाल जी को उल्टी हुई हैं और अचेत पड़े हैं। गांधी जी और बिड़ला जी तत्काल वर्धा पहुँचे किन्तु बंगले में घुसते ही डाक्टर ने बापू जी को सूचना दी कि जमना लाल तो चले गए। इस दुखद समाचार से बापू जी को गहरी वेदना पहुँची किन्तु वे सचेष्ट होकर सेठ जी के परिवार को ढाढस बंधाने लगे।

सेठ जी की मृत्यु पर उनकी धर्मपत्नी श्रीमती जानकी देवी ने सती होने की इच्छा प्रकट की किन्तु गांधी जी के समझाने पर उन्होंने अपना विचार त्याग दिया।

सेठ जी ने अपने जीवन के अन्तिम काल में गौ सेवा का कार्य अपने हाथ में लिया था जिसे श्रीमती जानकी देवी ने संभाला और उनका राजनीतिक कार्य उनके सुपुत्र श्री कमल नयन बजाज के सुदृढ़ हाथों में बहुत समय तक रहा।

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल

युग-युग से भारतीय विश्वविद्यालयों से ऐसी विभूतियाँ उपलब्ध होती आई हैं जिन पर कोई भी जाति, समाज और देश गर्व अनुभव कर सकता है। जिस प्रकार प्राचीन युग में तक्षशिला विश्वविद्यालय ने कुमार लब्ध जैसे प्रकाण्ड पण्डित संसार को प्रदान किए, वैसे ही आधुनिक भारत में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने डाक्टर वासुदेव

pdfelement
Remove Watermark Now

शरण अग्रवाल जैसे उद्भट विद्वान् इस देश को दिए। जिस प्रकार प्राचीन काल में पूर्व दिशा में अश्व घोष, पश्चिम दिशा में नागार्जुन, उत्तर दिशा में कुमार सम्भव तथा दक्षिण दिशा में देव के समान मनीषी विश्व के आकर्षण केन्द्र बने हुए थे, उसी प्रकार महा पं० राहुल सांकृत्यायन, महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, महादेव शास्त्री तथा डा० वासुदेव शरण अग्रवाल जैसे अद्वितीय विद्वान वर्तमान काल की महान् उपलब्धि हैं।

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का जन्म सन् १९०४ में मेरठ जिलान्तर्गत खेड़ा नामक ग्राम में हुआ था। अभी वे छः वर्ष के ही थे कि उनकी माता जी का स्वर्गवास हो गया अतः उनका लालन-पालन उनकी दादी जी ने किया।

श्री अग्रवाल जी की प्रारम्भिक शिक्षा उनके गाँव की पाठशाला में हुई। सन् १९१२ में वे अपने पिता जी के साथ लखनऊ चले गए जहाँ उनकी उच्च शिक्षा की व्यवस्था की गई। उन्होंने लखनऊ से प्राचीन इतिहास विषय में एम० ए० सन् १९२९ में किया। उनके इतिहास के गुरु भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार डा० राधा कुमुद मुखर्जी थे। उन्हीं की प्रेरणा और प्रोत्साहन पर आपने चौदह वर्ष तक पाणिनी अष्टाध्यायी पर अनुसंधान कार्य किया और सन् १९४१ में अपना प्रसिद्ध शोध ग्रन्थ "इन्डिया एज नोन टू पाणिनी" पूरा किया और उन्हें पी-एच० डी० उपाधि से विभूषित किया गया। आगे चलकर जब इस ग्रन्थ का परिवर्धित संस्करण प्रकाशित हुआ तो सन् १९४६ में उन्हें 'डी० लिट०' की उपाधि प्राप्त हुई। जब यह ग्रन्थ पहली बार प्रकाशित हुआ तो संसार भर में संस्कृत और भारतीय विद्याओं के विद्वानों में डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का नाम बड़े सम्मान के साथ फैल गया। आपने इसी ग्रन्थ को हिन्दी भाषा में 'पाणिनी-कालीन भारतवर्ष' के नाम से प्रकाशित किया।

डा० वासुदेव शरण जी साहित्य, रामायण, महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थों के एक प्रामाणिक लब्ध प्रतिष्ठित अधिकारी विद्वान माने जाते हैं। उन्होंने 'भारत सावित्री' नामक ग्रन्थ में महाभारत के २ लाख ४ हजार श्लोकों पर अपूर्व व्याख्या लिखी है। यह आठ सौ पृष्ठों का महान् ग्रन्थ तीन खण्डों में पूर्ण हुआ है।

वे वेद विद्या को सृष्टि विद्या मानते थे अतः उन्होंने अपनी इस मान्यता को पुष्ट करने के लिए दीर्घ तमस ऋषि के अस्थवाभीय सूत्र की व्याख्या लिखी और उनकी ख्याति ऋषि परम्परा की शृंखला में होने लगी।

श्री अग्रवाल जी कला प्रेमी विद्वान भी थे। अतः उनकी 'इण्डियन आर्ट' नामक पुस्तक का कला-जगत् में विशेष मान है। उन्होंने संस्कृत साहित्य की सहायता से कला और पुरातत्व विषयों के हजारों शब्दों का पुनरुद्धार किया।

सन् १९३८ में उनकी नियुक्ति मथुरा पुरातत्व संग्रहालय में अध्यक्ष पद पर हुई। वहाँ रहकर उन्होंने भारतीय कला मूर्ति शास्त्र का विधिवत् अध्ययन पूर्ण किया।

सन् १९४० में उनकी नियुक्ति लखनऊ के पुरातत्व संग्रहालय में अध्यक्ष पद

पर हुई, वहाँ सन् १९४६ तक रहे। तत्पश्चात् वे नई दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए।

सन् १९५२ के अन्त में उनकी नियुक्ति हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी के कला विभाग में अध्यक्ष पद पर हुई और वे जीवन पर्यन्त वहीं कार्यरत रहे।

डा० अग्रवाल को काशी नागरी प्रचारिणी सभा तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग में बड़ा सम्मान प्राप्त था।

वे अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन के भी अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे।

वे संस्कृत और अंग्रेजी के प्रकांड विद्वान होते हुए भी अपनी मातृभाषा हिन्दी को नहीं भूले। जहाँ अंग्रेजी में उनके रचित वैदिक सूक्तों की व्याख्या का विशेष स्थान है, हिन्दी भाषा में भी उनकी विरचित 'पद्मावत टीका' हिन्दी जगत् में प्रमाणिक मानी जाती है।

उनका समस्त जीवन शास्त्रों, पुराणों, गौरव ग्रन्थों, दर्शन और इतिहास आदि ग्रन्थों के मंथन में व्यतीत हुआ अतः विश्व ख्याति से विभूषित डा० अग्रवाल ने अपनी अग्रवाल वैश्य जाति के इतिहास पर भी सश्रम अनुसंधान किया और उनका शोध कार्य अग्रवाल जाति के इतिहास की आधार शिला मानी गई।

साहित्य, कला और प्राचीन विद्या के शोध-कार्यों में डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने अपना शरीर घुला दिया किन्तु उनका उत्साह अन्त तक क्षीण नहीं हुआ। वे लम्बे समय तक रुग्ण रहकर २७ जुलाई, १९६६ को अपने जीवन के ६२ वर्ष पूरे कर इस संसार से विदा हुए। उनकी साधना युग-युग तक उनके नाम को अजर अमर बनाये रखेगी।

pdfelement
Remove Watermark Now

१२

सती-प्रथा, एक अध्ययन

भारतवर्ष में पति के शव के साथ पत्नी के चितारोहण करने अर्थात् सती होने की प्रथा अत्यंत प्राचीन-काल से ही प्रचलित थी। इसका एक मुख्य कारण यह लगता है कि आर्यों के प्रथम तीन वर्णों में पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी, अतः पत्नी से पहले पति का मरना उसके लिए महान् अनर्थकारी बन जाता था। इसीलिए वैधव्य को नारी के लिए सबसे बड़ा भय और महान् संकट कहा गया है।

घर और समाज दोनों में विधवा की स्थिति प्रायः बड़ी उपेक्षित एवं तिरस्कृत होती थी। इसलिए विधवा कहलाने एवं वैधव्य का दुखद जीवन बिताने की अपेक्षा वह पति के शव के साथ उसकी चिता में जल जाना अच्छा समझती थी। इसी भावना में वानरराज बाली के वीर-गति प्राप्त करने पर उसकी रानी तारा पुत्रवती होने पर भी सती होना चाहती थी। वह कहती है—

"अंगद के समान सौ पुत्र एक ओर तथा मरे होने पर भी इस वीरवर स्वामी का आलिंगन करके सती होना, दूसरी ओर। इन दोनों में से अपने वीर पति के शरीर का आलिंगन करके सती होना ही मुझे श्रेष्ठ जान पड़ता है। युद्ध में शत्रु से जूझ कर मरे हुए अपने वीर स्वामी द्वारा सेवित चिता की शय्या पर शयन करना ही मेरे लिए सर्वथा योग्य है। पति-विहीन नारी भले ही पुत्रवती एवं धन-धान्य से समृद्ध हो, किन्तु लोग उसे विधवा ही कहते हैं।"

महाभारत-काल में पति के शव के साथ पत्नी के चितारोहण को धार्मिक स्वरूप मिलने लगा था और पत्नी की प्रज्ज्वलित चिता में प्रवेश करने वाली नारी को 'वीर-पत्नी' कहलाने का गौरव भी प्राप्त होने लगा था। इसलिए राजा पाण्डु की मृत्यु पर उनकी ज्येष्ठ रानी कुन्ती अपने पति के शव के साथ चिता में भस्म होकर धर्म का ज्येष्ठ फल एवं वीर-पत्नी कहलाने का गौरव प्राप्त करना चाहती थी।

लेकिन साथ ही यह भावना भी प्रबल थी कि पति के शव के साथ चिता में प्रवेश करने वाली पत्नी स्वर्ग में अपने पति के साथ पुनः मिल जाती है एवं उसके साथ

आनन्द उपभोग कर सकती है, इसलिए पाण्डु की छोटी रानी माद्री ने कुन्ती से प्रार्थना की—"चूंकि मैं अपने पति के साथ होने वाले काम-भोग से तृप्त नहीं हुई हूँ और राजा भी मेरे प्रति ही आसक्त होकर एवं मुझसे समागम करके मृत्यु को प्राप्त हुए हैं, अतः मुझे भी परलोक में पहुँच कर उनकी काम-वासना की निवृत्ति करनी चाहिए।" इस पर कुन्ती ने माद्री को सती होने की आज्ञा देते हुए कहा कि हे विशाललोचने, तुझे आज ही स्वर्ग में पति का समागम प्राप्त हो (भर्त्रा सह विशालाक्षि क्षिप्रमद्यैव भामिनि) और इस प्रकार कुन्ती की आज्ञा प्राप्त होने पर माद्री चिता पर रखे हुए पाण्डु के शव के साथ स्वयं भी जा बैठी एवं उनका विधिवत् दाह-संस्कार किया गया।

महाभारत के मौसल पर्व (अध्याय ७ में भी वसुदेव की मृत्यु पर उनकी चार पत्नियों—देवकी, भद्रा, रोहिणी तथा मदिरा का पति की चिता में भस्म होकर पति-लोक को जाने का उल्लेख है। इसी पर्व से यह भी ज्ञात है कि यद्यपि श्रीकृष्ण का दाह-संस्कार अर्जुन ने द्वारका में ही किया, लेकिन उस समय उनकी कोई रानी सती नहीं हुई। बाद में अर्जुन जब अंधक एवं वृष्णि वंशी वीरों की पत्नियों आदि को लेकर (राह में लुटता हुआ) इन्द्रप्रस्थ पहुँचा तो वहाँ श्रीकृष्ण की पांच पत्नियों—रुक्मिणी, गान्धारी, शैव्या, हेमवती तथा जाम्बवती ने अग्नि में प्रवेश किया एवं श्री कृष्ण की पत्नी सत्यभामा आदि अन्य स्त्रियां तपस्या करने हेतु वन में चली गईं। इसी प्रकार अक्रूर की स्त्रियां भी तपस्या करने के लिए वन में चली गईं।

पुराणों एवं अन्य परवर्ती धर्मग्रंथों में तो पति की मृत्यु पर पत्नी के सती होने के अनेक उदाहरण मिलते हैं, जैसे—पृथ्वी के प्रथम राजा पृथु की मृत्यु पर उसकी रानी अर्चि सती हुई। बलराम की मृत्यु पर उसकी पत्नी रेवती सती हुई। दिष्टवंशीय राजा दम की माँ इन्द्रसेना अपते पति नरिष्यन्त की मृत्यु पर सती हुई। परशुराम की माता रेणुका अपने पति जमदग्नि की मृत्यु पर एवं जड़भरत की माता अपने पति की मृत्यु पर सती हुई। कायस्थ जाति में उत्पन्न मित्र नामक गृहस्थ (जिसका बेटा चित्रगुप्त नाम से यम के यहाँ लेखक बना) की मृत्यु पर उसकी पत्नी सती हुई। यहाँ तक कि दैत्यों और राक्षसों की स्त्रियों के सती होने के भी उल्लेख मिलते हैं, यथा जलंधर दैत्य की पत्नी वृन्दा अपने पति की मृत्यु पर सती हुई एवं अहिरावण की मृत्यु पर उसकी पत्नी ने अग्नि में देह-त्याग किया।

लगता है कि इस काल में ऐसी मान्यता चल पड़ी थी कि नारी-धर्म का निर्वाह करने हेतु पति की मृत्यु होने पर पत्नी का सती होना अनिवार्य था, जैसा कि शतरुद्र-संहिता के आधार पर प्रचलित एक कथा से आभासित होता है, जो संक्षेप में यों है—महानंदा नामक एक वैश्या परम शिवभक्त थी। एक बार शिवजी उसकी परीक्षा ले हेतु एक वैश्य के रूप में इसके पास आये। वैश्य से रत्न-कंकण एवं रत्नमय लिं लेकर वैश्या ने तीन दिनों तक पत्नी-रूप में उसके पास रहना स्वीकार किया। लेकि एक रात को आग लग जाने के कारण वह रत्नमय लिंग जल गया जिससे दुखी होक वैश्य प्राण देने को उद्यत हो गया। इस पर महानंदा भी उसके साथ सती होने

pdfelement
Remove Watermark Now

तत्पर हो गई, क्योंकि शर्त के अनुसार तीन दिनों के लिए वह उसकी पत्नी थी और पत्नी-धर्म का निर्वाह करने हेतु उसका सती होना आवश्यक था। लेकिन महानंदा की कर्तव्य भावना देख कर शिवजी उसके सामने अपने असली रूप में प्रकट हो गये। शिव के इस अवतार को वैश्येश्वर कहते हैं।

इतिहास-काल में भी सती-प्रथा के उदाहरण पर्याप्त पहले से मिलने लगते हैं। गुप्त सम्वत् १९१ (सन् ५१०-११ई०) के एरण प्रस्तर-स्तंभ-लेख से ज्ञात है कि भानुगुप्त का सामंत गोपराज युद्ध में लड़ कर स्वर्गगामी हुआ एवं उसकी भक्ति-भाव-युक्ता, अनुरक्ता प्रिया तथा सुन्दरी पत्नी पूर्ण घनिष्ठता पूर्वक चिता पर उसकी अनुगामिनी बनी।

बाण के हर्षचरित से ज्ञात है कि महाराजा प्रभाकर वर्द्धन के बचने की आशा न देख कर उसकी पटरानी यज्ञोवती उसके मरने से पूर्व एवं शेष रानियाँ उसके मरने पर सती हुईं।

राजस्थान (छोटी खाटू) से प्राप्त संवत् ७४३, ७४५ व ७४९ के प्राचीन स्तंभ लेख बहुत करके सती होने वाली स्त्रियों के ही हैं जिनमें 'उपगता' शब्द का प्रयोग हुआ है। घटियाला का संवत् ९४७ (सन् ८९० ई०) का स्मारक लेख अपने वीर पति राणुक की मृत्यु पर उसकी पत्नी सम्पल्ल देवी के सती होने का उल्लेख करता है। लोहारी (जिला भीलवाड़ा) से प्राप्त कृष्ण पाषाण-स्तंभ (उदयपुर संग्रहालय, सं० ६१) सं० १२३६ आषाढ़ वदी १२ का है जिस पर वागड्य सलखण की मृत्यु पर होने वाली ९ सतियों के नाम उत्कीर्ण हैं।

ग्राम पल्लू (बीकानेर संभाग) से प्राप्त सं० १०१६ (सन् ९५९ ई०) का सती स्मारक गोवर्द्धन के रूप में है जिसमें पति-पत्नी दोनों एक शिवलिंग के अगल-बगल खड़े हैं। एक तरफ गणपति का अंकन भी है। कोलायत से प्राप्त सन् ११९६ के साभिलेख सती-स्मारक में भी पति-पत्नी दोनों खड़े हैं।

राजस्थान से प्राप्त सन् ८४२ ई० का शिलालेख चौहानराजा चण्ड-महासेन की माता के सती होने का उल्लेख करता है। राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में गढ़, अलवर से प्राप्त स्मारक (नं० L २००) वि० सं० १२३९, (सन् ११८२ ई०) का है जिसके लेख से ज्ञात होता है कि रानी केलच्चदेवी अपने पति राजा पृथ्वीदेव की मृत्यु पर सती हुई थी। संगमरमर की बनी इस देवली में राजा-रानी दोनों साथ-साथ खड़े हैं और वस्त्राभूषण से अलंकृत हैं। राजा के मस्तक पर वैष्णव तिलक लगा है एवं रानी के मस्तक पर गोल बिन्दी है। यह बिन्दी सोहाग की सूचक है, क्योंकि ऐसी मान्यता रही है कि पति के साथ सती होने वाली स्त्री अखण्ड सौभाग्यवती होती है। बीकानेर क्षेत्र के एक गाँव बेरासर से प्राप्त संवत् ११६१ की एक देवली में अंकित 'सुहागु राषसण' पाठ से भी यही ध्वनित होता है कि वह स्त्री सुहाग के रक्षणार्थ अर्थात् अखण्ड सौभाग्यवती बनी रहने के लिए सती हुई है।

यद्यपि समय और स्थान-भेद आदि कारणों से सती-स्मारकों के अंकन में पर्याप्त विविधता पाई जाती है तथापि मध्ययुगीन राजस्थान के सती-स्मारकों में सशस्त्र घुड़सवार के अंकनवाली विधा ही मुख्यरूप से दिखलाई पड़ती है। चूँकि राजस्थान में तब अधिकतर देवलियाँ युद्ध क्षेत्र में वीरगति प्राप्त करने वालों की होती थीं, इसलिए देवली में सशस्त्र घुड़सवार के रूप में उस स्वर्ग-गामी वीर का अंकन किया जाता था। उस पर सती होने वाली स्त्री या स्त्रियों को घुड़सवार के सामने अंकित किया जाता था जो प्रायः हाथ जोड़े खड़ी होती थीं। ऊपरी हिस्से में बहुधा सूरज व चाँद भी दिखलाये जाते थे और नीचे के हिस्से में लेख होता था, जिसमें तिथि, वार, वर्ष, मरने वाले का नाम एवं सती होने वाली स्त्री का नाम आदि रहते थे। इस प्रकार की देवलियों का प्रचार खूब बढ़ा और स्वाभाविक मृत्यु से मरने वालों व उन पर सती होने वाली स्त्रियों के स्मारक भी इसी रूप में बनाये जाने लगे।

प्राचीन सती-स्मारकों में पति के शव के साथ जलने वाली स्त्रियों के लिए प्रायः अग्नि-प्रवेश, चितारोहण, अनुगमन और सहगमन करना जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता था। लेकिन गाँव हुडेरा (चूरू) से प्राप्त राठौड़ नरहरिदास की संवत् १३०९, वैसाख सुदि १ की देवली में पोहड़ किसना का सत चढ़ना (सती होना) पाठ अंकित है। फिर तो इनके लिए सती व महासती शब्दों का प्रयोग प्रचुर होने लगा, जैसे गाँव पड़िहारा (चूरू) में संसारचंद बीदावत की सं० १५८६, सावन वदि १० की देवली में—

"श्री संसारचंद बीदावत राठड़ सतीया सहित देवलोक पहुता" अंकित है एवं चंगोई में वनमाली दास की देवली में 'महासती' पाठ है—

"कुमार श्री वनमालीदास जी झूझार तस्य भार्ज्या महासती भटियाणी महा-सती कछवाही भरता सहित देवलोके गमणं।"

यों तो महमूद गजनवी के आक्रमणों के साथ ११वीं शती से ही सती-प्रथा की व्यापकता बढ़ने लगी थी, लेकिन दिल्ली में मुस्लिम शासन की स्थापना के बाद तो इसका प्रसार बढ़ता ही गया, क्योंकि दिल्ली के सुल्तानों ने अपनी सल्तनत की सीमाओं को बढ़ाने के लिए समय-समय पर अनेक हिन्दू राज्यों पर आक्रमण किये, जिसके फलस्वरूप अनगिनत लोग मारे जाते रहे और इस कारण सती होने वाली स्त्रियों की संख्या भी बढ़ती गई।

तन्जीर निवासी इब्नेबत्तूता १४वीं शताब्दी की सती-प्रथा पर विश्वसनीय प्रकाश डालता है। वह लिखता है—

"जब मैं शेख के पास से लौटा तो मैंने देखा कि लोग हमारे शिविर की तरफ से भागे चले आते हैं और उनमें हमारे कुछ साथी भी हैं। मेरे पूछने पर उन्होंने बताया कि एक हिन्दू काफिर की मृत्यु हो गई है और उसको जलाने के लिए अग्नि तैयार की गई है। उसकी पत्नी भी अपने आप को जला देगी। जब वे जलाये जा चुके तो मेरे

pdfelement
Remove Watermark Now

साथी लौट आये। उन्होंने मुझसे कहा कि स्त्री मृतक शरीर से लिपट गई थी और उसी के साथ जल गई।"

"इसके अतिरिक्त मैं देखा करता था कि एक हिन्दू स्त्री बहुमूल्य वस्त्र धारण किये घोड़े पर जाया करती थी। उसके पीछे हिन्दू और मुसलमान होते थे और आगे-आगे नक्कारे तथा नौबत बजती जाती थी। ब्राह्मण जो कि हिन्दुओं के नेता होते हैं, उनके साथ होते थे। सुल्तान के राज्य में विधवा को जलाने के लिए सुल्तान से आज्ञा लेनी पड़ती है। सुल्तान की आज्ञा के उपरान्त ही उसे जलाया जा सकता है।" एक आँखों देखी घटना का वर्णन उसने यों किया है—

"कुछ समय पश्चात् मैं एक नगर में था, जिसके अधिकतर निवासी हिन्दू थे। वह नगर अम्जेरी (मालवा) कहलाता था। वहाँ के निवासी काफिर थे, किन्तु वहाँ का अमीर (अधिकारी) सामिरा जाति का मुसलमान था। नगर के निकट कुछ विद्रोही काफिर रहते थे·····युद्ध में ७ काफिर मारे गये। इनमें से तीन के पत्नियाँ थीं। तीनों विधवाओं ने अपने आप को जला डालने का निश्चय कर लिया।"

"जब उन्होंने अपने आप को जलाने का निश्चय कर लिया तो वे गाती-बजाती रहीं और नाना प्रकार के खाने-पीने तथा समारोह में व्यस्त रहीं। ऐसा ज्ञात होता था कि वे संसार से विदा हो रही हैं। प्रत्येक स्थान की स्त्रियाँ उनके साथ समारोह में उपस्थित थीं। चौथे दिन प्रत्येक की सवारी के लिए घोड़े लाये गये। स्त्रियों ने बहुमूल्य वस्त्र धारण किये और सुगंधि लगाई। प्रत्येक के दाहिने हाथ में एक नारियल था जिससे वे खेलती जाती थीं और बायें हाथ में एक दर्पण था जिसमें वे अपना मुख देखती जाती थीं। उन्हें ब्राह्मण तथा उनके संबंधी घेरे हुए थे। उनके आगे-आगे लोग नक्कारे, तुरही तथा बिगुल बजाये जाते थे। काफिरों में से प्रत्येक उनसे कहता था कि मेरी दण्डवत मेरे पिता, भाई, माता अथवा मित्र को पहुँचा देना। वे उनसे हाँ कहती थीं और मुस्कराती थीं।"

"मैं अपने मित्रों के साथ उन लोगों के जलाये जाने का दृश्य देखने के लिए चल दिया। तीन मील यात्रा करके हम एक अंधेरे स्थान पर पहुँचे, जहाँ अधिक जल तथा वृक्षों की छाया थी। बीच में चार गुम्बद थे। प्रत्येक गुम्बद में पत्थर की एक-एक मूर्ति थी। इसके बीच में जल का एक सरोवर था। वृक्षों की छाया के कारण उस पर धूप न पड़ती थी। जब स्त्रियाँ उन गुम्बदों के निकट पहुँची तो हौज में उतर कर उन्होंने स्नान किया और डुबकियाँ लगाईं। अपने वस्त्र तथा आभूषण उतार कर दान कर दिये और उनके स्थान पर मोटी साड़ी धारण की। सरोवर के नीचे एक स्थान पर अग्नि प्रज्ज्वलित की गई। जब उस पर सरसों का तेल डाला गया तो उसमें लपटें उठने लगीं। लगभग १५ (पन्द्रह) आदमियों के हाथों में लकड़ी के बंधे हुए गट्ठे थे। दस आदमी बड़े-बड़े बाँस लिए हुए थे। ढोल तथा तुरही बजाने वाले विधवाओं के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। आदमियों ने आग के सामने एक रजाई लगा दी थी जिससे स्त्रियाँ अग्नि से भयभीत न हों। मैंने देखा कि एक स्त्री रजाई तक आई और उसे जोर से आदमियों

ने हाथों से खींच लिया और मुस्कराकर उनसे फारसी भाषा में कहा—"मा रा मी तरसानी अज आतिश। मन मी नादम ऊ आतिश अस्त, रिहा कुनी मारा।' अर्थात्—"मुझे आग से डराते हो? मैं जानती हूँ की कि वह आग है, मुझे जाने दो।"

"इसके उपरान्त उसने अग्नि के सामने हाथ जोड़े और अपने आप को उसमें गिरा दिया। तुरन्त नक्कारे, तुरही तथा बिगुल बजने लगे। आदमियों ने उसके ऊपर लकड़ियाँ फेंक दीं। कुछ लोगों ने लकड़ी के बड़े-बड़े कुन्दे उस पर डाल दिये जिससे वह हिल न सके। लोगों ने चिल्लाना प्रारंभ कर दिया और उच्च स्वर से कोलाहल करने लगे।"

"मैं यह दृश्य देख कर मूर्छित हो गया और घोड़े से गिरने को था कि मुझे मेरे मित्रों ने संभाल लिया और मेरा मुख जल से प्रक्षालित करवाया। मैं वहाँ से लौट आया।" (यह घटना सन् १३४२ की है)

आगे चल कर तो सती-प्रथा का इतना जोर बढ़ा कि यह प्रथा हिन्दू समाज के हर वर्ग में व्याप्त हो गई। इसका पुष्ट प्रमाण स्थान-स्थान से प्राप्त अनगिनत सती-स्मारकों (देवलियों) से मिल जाता है। डा० एल० पी० तैस्सितोरी ने सन् १९१८ ई० के केवल तीन महीनों में भू० पू० बीकानेर राज्य से ५०० से भी अधिक शिलालेखादि खोज निकाले थे, जिनमें से अधिकांश देवलियाँ ही थीं।

सती-प्रथा के इस प्रकार तेजी से बढ़ने का एक कारण तो धार्मिक दृष्टिकोण कहा जा सकता है। पराशर स्मृति में सती-प्रथा का जोरदार समर्थन किया गया है—

जो स्त्री भर्ता का अनुगमन करती है (सती हो जाती है), वह स्त्री मनुष्य शरीर के साढ़े तीन करोड़ लोमों की संख्या के अनुसार साढ़े तीन करोड़ वर्षों तक स्वर्ग में निवास करती है। जैसे सपेरा मंत्र आदि के सामर्थ्य से सर्प को बलपूर्वक बिल में से खींच लेता है, इसी प्रकार (सती) स्त्री अपने (नरक में पड़े हुए) पति का उद्धार करके उसके साथ आनन्द करती है—

तिस्रः कोट्योर्द्धकोटी च यानि लोमानि मानुषे।
तावत्कालं वसेत्स्वर्गं भर्तारं यानुगच्छति ॥ ३२ ॥
व्यालग्राही यथा व्यालं बलादुद्धरते बिलात्।
एवं स्त्री पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते ॥ ३३ ॥

इसका दूसरा कारण समाज में व्याप्त वह भावना थी कि पति के पीछे होने वाली सती स्वर्ग में उससे पुनः संयोग कर लेती है। मध्य-युगीन सती-स्मारकों में यह भावना खूब मुखरित हुई है। मध्य-युगीन साहित्य में भी यह भावना पुरजोर परिलक्षित होती है। जब राठौड़ रतनसिंह की रानियाँ व खवास सती होकर स्वर्ग पहुँचीं तो उस समय आकाशवाणी हुई, "महाराज रतनसिंह! बधाई, बधाई अग्नि स्नान कर सतियाँ भी आ गई है।" ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र तथा उपस्थित देव-समूह ने देवांगनाओं से कहा "महासतियों के स्वागत हेतु उनकी अगवानी करो। धवल मंगल गीत गाते हुए पुष्प-

pdfelement
Remove Watermark Now

वर्षा कर उनका स्वागत करो।" तदनुसार सावित्री, पार्वती और लक्ष्मी उनकी अगवानी में प्रस्तुत हो, गीत-गानादि से उनका अभिनंदन करती हुई उन्हें सुन्दर स्वर्णमय महलों में ले गईं। मांगलिक गीत गाये गये और हर्षोल्लास हुआ। नया-नया स्नेह और भी बढ़ गया। शूरवीर रतनसिंह महलों में सतियों से जा मिला।

इसी संदर्भ में जोधपुर के राव मालदेव की भटियानी रानी उमादे (जो रूठी रानी के नाम से प्रसिद्ध है) का संक्षिप्त उल्लेख कर देना भी समीचीन होगा। राव मालदेव का विवाह जैसलमेर के रावल लूणकरण की कन्या उमादे के साथ सन् १५३६ ई० में हुआ था। सुहागरात को पति की शय्या पर जाने से पूर्व ही घटनावश वह पति से रूठ गई और जन्म भर न मनी। लेकिन अपने पति की मृत्यु (सन् १५६२ ई०) होने पर वह सती हो गई।

बारहठ आसाजी ने स्वर्ग में उन दोनों पति-पत्नी के मिलन का रूपक इस प्रकार बाँधा है—

सझ सोलै सिणगार, सतब्रत अंग अंग साहे।
अरक बार मुख ऊग, नीर गंगाजल नाहे।
चीर पहर अस चढे केस वेणी सिर खुल्ले।
देती परदक्खणा, हंसगत राणी हल्ले।
सुर भुवन पैस पहुंता सरग, साम तणौ मन रंजियौ।
रूमणो मालदे राव सूं, भटियाणी इम भंजियौ॥

अर्थात् सोलहों शृंगार करके सती के व्रत को अंग-अंग में लिये हुए जिसके मुख से मानो बारह सूर्य उगे हैं, ऐसी उमादे ने गंगाजल से स्नान किया। चीर पहन, घोड़े पर सवार हो, बाल और चोटी खुली रख प्रदक्षिणा दे, हंस की चाल से चल कर रानी स्वर्ग में पहुँची। स्वामी का मन प्रसन्न हुआ। इस प्रकार उमादे ने राव मालदेव से अपना रूठना दूर किया।

मध्ययुगीन चारण कवियों आदि ने सती होने वाली स्त्रियों की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है एवं सती होने के प्रसंग को उन्होंने खूब उभारा है। "सती होने वाली स्त्री या स्त्रियों के दर्शन करने हेतु देवता भी अन्तरिक्ष में आ घिरते हैं एवं उनका यशोगान करते हैं।" इस प्रकार के आकर्षक वर्णनों से भी सती-प्रथा के प्रसार को प्रोत्साहन मिला।

सती होने का एक यह भी कारण था कि सती होने को सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी थी एवं घर व समाज में विधवा की स्थिति बड़ी विषम थी। इब्नेबत्तूता लिखता है—

"पति की मृत्यु के उपरान्त पत्नी का अपने आप को जला डालना बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य समझा जाता है। जब कोई विधवा अपने आप को जला डालती है तो

उसके घर वालों का सम्मान बढ़ जाता है और वह पति-भक्ति के लिए प्रसिद्ध हो जाती है। जो विधवा अपने आप को नहीं जलाती, उसे मोटे वस्त्र धारण करने पड़ते हैं और वह बड़ा दुखी जीवन व्यतीत करती है। पति-भक्ति के अभाव के कारण लोग उससे घृणा करने लगते हैं। बाल-विवाह एवं बहु-विवाह प्रथा भी सतियों की संख्या-वृद्धि में सहायक थी।

परम्परागत विश्वास और मान्यताएँ भी इसका एक कारण थी। बर्नियर लिखता है कि सती होने का कारण रीति और विश्वास है। माताएँ इन्हें बचपन से ही यह शिक्षा देती हैं कि अपने पति के साथ सती हो जाना प्रशंसा और पुण्य का काम है और पतिव्रता स्त्रियाँ सदा सती हो जाती हैं। सती होने में सहयोग देना भी श्लाघ्य समझा जाता था।

फ्रांस निवासी डॉ० फ्रेंक्वीएस बर्नियर ने सती होने की कुछ आँखों देखी घटनाओं का रोमांचक वर्णन किया है। उस समय सती-प्रथा पूरे जोरों पर थी। वह लिखता है, "स्त्रियों के सती हो जाने के भयंकर दृश्य मैंने इतनी बार देखे हैं कि अब फिर देखने की इच्छा बिल्कुल नहीं है और जब मैं उन दृश्यों का ध्यान करता हूँ तो अब भी मुझे बहुत भय मालूम होता है। तो भी मैं उनमें से कुछ घटनाओं का वर्णन करूँगा। पर मैं उनके उस उत्साह की जिससे वे इस भयानक कृत्य के लिए उद्यत होती थीं, इनका पूरा हाल देखने से ही विदित हो सकती है।"

जब मैं अहमदाबाद से आगरे की ओर जा रहा था तो एक दिन साथियों सहित आराम करने के लिए छाँह में गया। मैंने सुना कि एक स्त्री अभी अपने मृत पति के साथ सती होना चाहती है। मैं उसी समय दौड़ता हुआ वहाँ पहुँचा। देखा कि एक बड़ा गढा खोदा हुआ है जिसमें बहुत सी लकड़ियाँ चुनी हुई हैं। लकड़ियों के ऊपर एक मृतक देह पड़ी हुई है जिसके पास एक सुन्दरी लकड़ियों के उसी ढेर पर बैठी है। चारों ओर से चार-पाँच ब्राह्मण उस चिता में आग दे रहे थे। पाँच अधेड़ स्त्रियाँ जो अच्छे-अच्छे वस्त्र पहने थीं, एक दूसरी का हाथ पकड़ कर चिता के चारों ओर नाच रही थीं और उन्हें देखने के लिए स्त्री-पुरुषों की भीड़ लगी थी। इस समय चिता में आग अच्छी तरह जल रही थी क्योंकि उस पर बहुत सा तेल और घी डाल दिया गया था। मैंने देखा कि आग उस स्त्री के कपड़ों तक जिनमें सुगन्धित तेल, चन्दन, कस्तूरी आदि मिले हुए थे, भली-भाँति पहुँच गई। मैंने यह सब देखा, पर मुझे उस स्त्री में किसी प्रकार के दुःख या कष्ट के चिह्न नहीं दिखाई दिये। उसने बड़े जोर से 'पाँच का उच्चारण किया जिसका अर्थ पुनर्जन्म के मानने वालों के कथनानुसार यह होत कि अबकी पाँचवीं बार यह स्त्री इसी पति के साथ सती हुई है और अब केव बार सती होनी शेष है।"

"लेकिन इतने ही से इसकी समाप्ति नहीं हुई। मैंने अनुमान किया कि स्त्रियाँ यों ही नाच गा रही हैं, पर मुझे यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि जब

pdfelement
Remove Watermark Now

से एक स्त्री के कपड़ों तक आग पहुँची तो वह भी उसी जलती चिता में कूद पड़ी और इसी तरह जब दूसरी के कपड़ों में आग लगी तो वह भी उसी में कूद पड़ी। बाकी तीनों स्त्रियाँ बिना किसी प्रकार के भय के फिर इसी तरह एक दूसरी का हाथ पकड़ कर नाचने लगीं और अन्त में उन्होंने ने पहली दोनों स्त्रियों का अनुकरण करते हुए उस चिता में अपने प्राण दे दिये। मैं इसका कुछ मतलब न समझ सका, पर मुझे शीघ्र ही मालूम हो गया कि ये पाँचों दासियाँ थीं और जब उन्होंने देखा कि उनकी स्वामिनी अपने पति के बीमार होने से बहुत दुःखित व चिंतित है एवं वह पति के साथ सती होगी तब उन्होंने भी उसके साथ सती होने का निश्चय कर लिया।"

एक अन्य घटना का वर्णन करते हुए वह लिखता है—

"सूरत से फारस की ओर जाते हुए मैंने एक अधेड़ सुन्दरी को सती होते देखा था। उस समय वहाँ पेरिस के मान्शियर चार्डिन तथा कई अंगरेज व डच उपस्थित थे। उस स्त्री की गंभीरता और प्रसन्नता जो उस समय उसके मुख पर झलक रही थी, विचित्रता से स्नान करना और संबंधियों से बात करना, हम लोगों की ओर देखना, अपनी कुटी पर दृष्टिपात करना जो घास-फूस और छोटी-छोटी लकड़ियों से चिता पर बनी हुई थी, अपने पति का सिर गोद में रख कर चिता पर बैठना, अपने हाथों से एक मशाल द्वारा चिता में आग लगाना, चारों ओर से ब्राह्मणों का उस चिता को जलाना आदि-आदि बातें ऐसी थीं कि जिनका पूरा वर्णन करना मेरे लिए सर्वथा असंभव है।"

इस समय तक मृतक व्यक्ति की विधवा को बलात् सती कर देने की प्रवृत्ति भी चल पड़ी थी। बर्नियर ने कुछ ऐसी सतियों का भी उल्लेख किया है—

"मैंने कुछ ऐसी स्त्रियों को भी देखा है जो चिता और अग्नि को देखते ही भयभीत हो जाती हैं। और जो कदाचित् अवसर पाकर भाग भी जाती हैं। वे ब्राह्मण जो उस समय बड़े-बड़े लट्ठ लिए उनके पास खड़े होते हैं केवल उन्हें उत्तेजित ही नहीं करते वरन् कभी-कभी चिता में ढकेल भी देते हैं। मैंने स्वयं देखा है कि एक बार ब्राह्मणों ने एक स्त्री को जो चिता से पाँच-छह कदम दूर से ही हिचकने लगी थी, चिता में ढकेल दिया और एक बार जब एक स्त्री के कपड़े तक आग लगी एवं उसने भागना चाहा तो इन ब्राह्मणों ने उसे लंबे-लंबे बाँसों की सहायता से चिता में ढकेल दिया।"

"मुझे याद है कि लाहौर में मैंने एक बहुत ही सुन्दर लड़की को जलते देखा। उसकी अवस्था बारह वर्ष से अधिक होगी। वह लड़की चिता के निकट लाई गई तो भय के कारण अध-मरी सी मालूम होने लगी। वह काँपती और बिलख-बिलख कर रोती थी। इतने में तीन-चार ब्राह्मण जिनके साथ एक बुढ़िया भी थी और जो उस लड़की को गोद में लिये हुए थी, आये और उसे चिता पर बैठा दिया। उसके हाथ और पैर बाँध दिये और उसे जीवित ही जला दिया।"

"मैंने प्रायः ऐसी सुन्दर स्त्रियों को देखा है जो ब्राह्मणों के हाथ से बच कर निकल जाती हैं और उन नीच जाति के लोगों में मिल जाती हैं, जो यह जान कर कि

सती होने वाली स्त्री सुन्दर है एवं उसके साथ अधिक संबंधी नहीं होंगे, तो उस स्थान पर बड़ी संख्या में एकत्रित हो जाते हैं। जो स्त्रियाँ चिता को देख कर डर के मारे भाग जाती हैं, वे अपने जाति वालों से मिलने या उनके साथ रहने की आशा कभी नहीं कर सकतीं, क्योंकि वे लोग उसे बहुत बदनाम कर देते हैं एवं उसके इस अनुचित कार्य से अपने धर्म की अप्रतिष्ठा समझते हैं।"

उन दिनों पति के शव के साथ स्त्री का जल मरना ही सतीत्व की कसौटी बन गई थी। इसलिए यदा-कदा कुलटा स्त्रियाँ भी अपने को सती-साध्वी सिद्ध करने हेतु ऐसा आयोजन कर लेती थीं। बर्नियर ने अपने समय की एक ऐसी ही बहु-चर्चित घटना का उल्लेख किया है, यद्यपि वह स्वयं उस समय वहाँ उपस्थित नहीं था। घटना संक्षेप में यों है—

"एक स्त्री का अपने पड़ोसी मुसलमान युवक के साथ जो दर्जी था, अनुचित प्रेम हो गया। स्त्री ने उस युवक के साथ अन्यत्र भाग जाने की आशा पर अपने पति को जहर दे दिया और फिर उसके पास गई। लेकिन उसने भागने से इन्कार कर दिया। इस पर उसने घर आकर अपने पति के अचानक मर जाने का हाल अपने संबंधियों से कहा और पति के पीछे सती होने की दृढ़ इच्छा प्रकट की। सती होने की पूरी तैयारी कर दी गई। जब चिता प्रज्ज्वलित हो गई तो वह पास खड़े अपने सभी संबंधियों से गले मिल कर अंतिम विदा लेने लगी। उपस्थित लोगों में वह दर्जी भी था। उसे देखते ही वह क्रोध से आग बबूला हो गई। उससे गले मिलने के बदले उसने उसका गला जोर से पकड़ा और उसे चिता में घसीट ले गई और दोनों जल कर राख हो गये।

यद्यपि राजा की मृत्यु के पश्चात् उसकी स्त्रियों के सती होने की प्रथा पुरानी थी, लेकिन १७वीं शताब्दी आते-आते तो लौकिक प्रतिष्ठा और प्रदर्शन की प्रवृत्ति भी इसके साथ जुड़ गई। किस राजा की मृत्यु के पीछे कितनी स्त्रियाँ सती हुईं, इस बात को महत्त्व दिया जाने लगा एवं राजाओं के दाह-स्थान पर विशाल छत्रियाँ बनने लगीं। राजाओं की विवाहिता रानियों के अतिरिक्त उनकी पड़दायतें, पासवानें, खवासें एवं खवासों की सहेलियाँ आदि भी बड़ी संख्या में सती होने लगीं।

'वीर-विनोद' के अनुसार मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह (प्रथम) की मृत्यु (वि० सं०, १६७६) होने पर उनके शव के साथ १० रानियाँ, ९ खवास एवं ८ सहेलियाँ सती हुईं। जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंह (प्रथम) की जमरूद में मृत्यु होने पर जमरूद में ८ खवास सती हुईं एवं उनके मरने की खबर जोधपुर आने पर एक रानी एवं २० खवास जोधपुर में सती हुईं। इनके उत्तराधिकारी महाराजा अजीतसिंह की मृत्यु पर इनके शव के साथ जलने वाली रानियों, खवासों, लौंडियों व नाजिरों आदि की संख्या ६६ थी।

नैणसी की ख्यात के अनुसार बीकानेर महाराजा कर्णसिंह की मृत्यु (संवत् १७२६) पर ८ रानियाँ एवं १० खवास व पातुरियाँ सती हुईं जिसकी पुष्टि देवीकुण

pdfelement
Remove Watermark Now

(बीकानेर) पर स्थित महाराजा की साभिलेख देवली से भी होती है। नैणसी के अनुसार ही बीकानेर के महाराजा जोरावर सिंह की मृत्यु पर २ रानियाँ, १ खवास, १२ पातुरियाँ, २ खालसा, १ बडारण, १ सहेली रानी की, २ सहेलियाँ पातुरियों की एवं १ रसोईदारिन ब्राह्मणी राही इस प्रकार कुल २२ स्त्रियाँ सती हुईं।

राजाओं एवं सामन्तों की तरह ही सती-प्रथा पूरे हिन्दू समाज में व्याप्त हो गई। यहाँ तक कि जिन जातियों में पुनर्विवाह धड़ल्ले से होते थे, वे जातियाँ भी इसके प्रभाव से अछूती न रहीं। न केवल राजस्थान बल्कि इसके निकटवर्ती प्रदेश मध्य भारत एवं गुजरात-कच्छ व सौराष्ट्र आदि में भी सती-प्रथा पूरे जोरों पर थी।

यद्यपि आंगिरस ने ब्राह्मण-विधवा के सती होने का पूर्ण निषेध किया है एवं ब्राह्मण-विधवा के सती होने को आत्मघात ही माना है, तथापि ब्राह्मण-विधवाओं के सती होने का उदाहरण प्राचीन काल से ही मिलते हैं। रिपोर्ट मर्दुमशुमारी, मारवाड़ में पाली के पल्लीवाल ब्राह्मणों की स्त्रियों का बहुत बड़ी संख्या में सती होना लिखा है। डा० तैस्सितोरी ने कोलायत व झझ्झु (बीकानेर) आदि गाँवों में पल्लीवाल ब्राह्मणों की बहुत-सी देवलिवाँ देखी थीं। नैणसी ने बीकानेर में ब्राह्मणी राही के सती होने का उल्लेख किया है।

ब्राह्मण-सतियों के अनेक स्मारक राजस्थान से बाहर भी विभिन्न स्थानों से मिले हैं। सकर्रा (गुना) के वि० सं० १४०० के सती-स्तंभ में एक ब्राह्मण जमींदार की सती का उल्लेख है। गाँव ठकुराई (मन्दसौर) के स्तंभ-लेख में अर्जुन नामक ब्राह्मण की इन्द्रदेवी नामक पत्नी के सती होने का उल्लेख है।

इसी प्रकार वैश्यों में भी अनेक सतियाँ समय-समय पर होती रही हैं जिनके स्मारक अनेक स्थानों पर हैं। भारत में सबसे बड़ा ज्ञात सती-मंदिर झूंझुनूं में है जो अग्रवाल वैश्यों की सतियों का है। माहेश्वरी वैश्यों में भी सती-प्रथा प्रचलित रही है। माहेश्वरी मड़दा सती का एक स्मारक-लेख चूरू में है, जो विक्रम संवत् १७४७ का है। बीकानेर से मोदी, माहेश्वरी, अग्रवाल, दर्जी एवं सुनार आदि जातियों के स्मारक मिले हैं। मारवाड़ से भी विभिन्न जाति की सतियों के स्मारक मिले हैं। चूरू जिले से ही अनेक जातियों के सती-स्मारक प्राप्त हैं। ग्वालियर से अहीर, चमार, लुहार, सुनार, चौधरी एवं कायस्थ आदि जातियों के स्मारक मिले हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सती-प्रथा हिन्दुओं की अनेकानेक जातियों में प्रचलित थी। हाँ, राजपूतों में यह प्रथा सर्वाधिक थी।

और तो और, हिन्दुओं को धर्म-परिवर्तन द्वारा मुसलमान बनाये जाने के शताब्दियों बाद भी उनमें कहीं-कहीं सती-प्रथा की भावना बरकरार दिखलाई पड़ती है। ऐसा एक उदाहरण 'जहाँगीर नामा' से ज्ञात है। संवत् १६७७ में काश्मीर से लौटते हुए बादशाह जहाँगीर का मुकाम राजोर में हुआ। वह कहता है कि—

"यहाँ के लोग प्राचीन समय में हिन्दू थे। यहाँ के जमीदारों को राजा कहते

थे। सुलतान फीरोज ने उनको मुसलमान किया, तो भी वे राजा कहलाते हैं। मुसलमान होने से पहले की कुरीतियाँ अब भी इनमें प्रचलित हैं। जैसे हिन्दुओं की औरतों में से कोई-कोई अपने पति के साथ जीती जल जाती हैं, वैसे ही ये भी जीती स्त्री को मरे पति के साथ कब्र में गाड़ देते हैं। सुना है कि इन दिनों एक दस-ग्यारह साल की लड़की जीती ही पति के साथ कब्र में डाल दी गई।"

जैन धर्म के अनुसार तो सती होना आत्मघात करना ही है, लेकिन हिन्दुओं की देखा-देखी अहिंसा को परम धर्म मानने वाले जैनों में भी सती-प्रथा प्रचलित हो गई थी। हिन्दुओं की तरह उनमें भी यह भावना व्याप्त हो गई थी कि सती होने वाली स्त्री देवलोक में पुनः अपने पति से जा मिलती है। उनकी यह भावना जैन सतियों के स्मारक-लेखों में मुखर है। केवल बीकानेर नगर से ही अब तक जैन धर्मावलम्बी ओसवाल सतियों के २८ स्मारक-लेख मिल चुके हैं। जिनमें से प्रथम संवत् १५५७ का एवं अंतिम संवत् १८६६ का है।

यों तो प्रायः सती होने वाली स्त्री पति के शव के साथ ही सती होती थी, लेकिन पति की मृत्यु कहीं दूर होने पर सती होने वाली स्त्री अपने पति की पगड़ी आदि के साथ सती हो जाती थी। उदाहरण के लिए नागौर के राव अमरसिंह के आगरा मे मारे जाने (२५ जुलाई, १६४४ ई०) पर उनकी दो रानियाँ तो उनके शव के साथ आगरा में सती हुईं, तीन रानियां बाद में नागौर मे एवं एक उदयपुर में सती हुई।

कभी-कभी कोई स्त्री अपने पति की मृत्यु पर तत्काल ही सती न होती थी, लेकिन वर्षों बाद हो जाती थी। कविराज श्यामलदास आँखों देखी एक ऐसी घटना का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि विक्रम सं० १९०७ (मन् १८५० ई०) में उदयपुर जनानी ड्योढी की एक दासी जिसका पति ११ वर्ष पहले मर गया था, एक दिन दोपहर के वक्त सोते हुए उठ खड़ी हुई और बोली कि मेरे जलाने की तैयारी करो, मेरे पति ने मुझे बुलाया है। इस पर उसके पड़ोसियों वगैरह ने इकट्ठा होकर उसे मना किया और कहा कि तुझे स्वप्न आया है। तब उसने सती होने के सबूत में आग के दहकते हुए अंगारों को दोनों हाथों में लेकर लोगों के सामने मसल डाला और कहा कि मुझको किसी तरह की जलन या तकलीफ मालूम नहीं होती। इसके बाद महाराणा (उदयपुर) की तरफ से कुछ बंदोबस्त होकर वह औरत जला दी गई।

कभी-कभी सती होने वाली स्त्री सती होने से पूर्व दोषी व्यक्ति को शाप भी दे देती थी। महाभारत से ज्ञात है कि सती होने से पूर्व आङ्गिरसी ब्राह्मणी ने कल्माषपाद को शाप दिया था। शाप देने की यह परम्परा (सीमित रूप में) मध्ययुग में भी प्रचलित थी;—

सतियाँ का सराप सूँ थांकी गादी जावैली ऊत

सती होने से पूर्व नेतूजी अपनी भावज को शाप देती हैं—

आंख्यां सूं आंधा व्हीजो पगां सूं पांगला मांथे सवा हाथ के सींग।
बड़ा घरां जलम धारज्यो, थांनै परणवा कोई नीं आवैला वींद॥

pdfelement
Remove Watermark Now

यों तो स्त्रियाँ प्रायः अपने पति की मृत्यु पर ही सती होती थीं कभी-कभी अन्य कारणों से भी हो जाती थीं, जैसे स्कन्दपुराण के अनुसार शिवजी की प्रथम पत्नी सती ने अपने पिता दक्ष प्रजापति द्वारा शिवजी का अपमान करने पर यज्ञ की अग्नि में अपने को होम दिया था। भावनगर (गुजरात राज्य) जिले के अमृत गाँव में एक स्त्री अपने पति की नामर्दी के कारण सती हुई एवं माँडल गाँव में एक स्त्री अपने पति के वचन भंग करने के कारण सती हुई।

पति की मृत्यु पर तो स्त्रियाँ सती होती थीं, यदा-कदा पुत्र की मृत्यु से दुःखित माताएँ भी सती हो जाती थीं। पति पर सती होने वाली स्त्री को 'महासती' एवं पुत्र पर सती होने वाली को माँ-सती कहा जाता था। पुत्र पर सती होने से संबंधित उदाहरण प्राचीन धार्मिक ग्रंथों से भी मिलते हैं एवं मध्ययुगीन स्मारक-लेखों आदि से भी। बीकानेर से जैन माता सतियों के दो लेख संवत् १५५७ एवं संवत् १८६६ के मिले हैं। गाँव गनोड़ा (चूरू) में खेमोलाई ताल पर एक देवली माँ-सती की है जिसमें एक औरत एक बालक के सिर पर हाथ रखे खड़ी है। नीचे लेख है—

"संवत् १७७५ मिती फागण वदी १२ चौधराणी पेमा जात गोदारा बेटै लार सती हुई।"

माँ-सती की एक अन्य देवली गाँव भालेरी (चूरू) में भी है जो पल्ली-वाल ब्राह्मणों की बतलाई जाती है। सिगोड़ियों की बारी, जोधपुर में आसाढ़ वदी २, सं० १९०० का एक स्मारक है जिसके अनुसार जोशी विजेराम की पत्नी सुवेद अपने पुत्र हरिराम की मृत्यु पर सती हुई।

कच्छ के राव लखपतजी की माँ मलुक बाई मातृ भाव से पुत्र के पीछे सती हुई एवं झालावाड़ के मूली गाँव को बसाने वाले लखधीरजी की माँ अपने छोटे बेटे मुँजाजी की मृत्यु पर सती हुई। सेसई (शिवपुरी, ग्वालियर) से प्राप्त गुप्त लिपि के अभिलेख में कुछ ब्राह्मण युवकों के युद्ध में मारे जाने पर उनकी माता के सती होने का उल्लेख है।

पुत्र ही नहीं, पौत्र व अन्य प्रियजनों की मृत्यु पर सती हो जाने के उदाहरण भी मिले हैं। डा० महेन्द्र भानावत ने बीकानेर के एक सती-स्मारक का चित्र 'धर्मयुग' (११-१७ नवम्बर, १९७९) में प्रकाशित करवाया है जिसके अनुसार संवत् १८६७ में श्रीनाथजी व्यास की पत्नी अपने इकलौते पोते पर सती हुई थी। कच्छ में बाई जीवा अपने भतीजे के पीछे एवं बाई कामले अपने पौत्र के पीछे सती हुई। धर्म के माने हुए भाई पर उसकी धर्म बहिन के सती होने के उदाहरण भी मिले हैं। ऐसा एक पालिया उदाहरण चारण आई कुँवर का उपलब्ध है।

विवाहित स्त्रियों के ही नहीं कुमारी कन्याओं के सती होने के उदाहरण भी प्राचीन काल में वाल्मीकि रामायण से मिलता है कि जब ब्रह्म-ऋषि की तपस्यारत कुमारी कन्या के साथ रावण ने बलात्कार करना चाहा तो उसने प्रज्वलित अग्नि में अपने को होम कर अपने शील की रक्षा की थी। गाँव बुहाणा (शेखावाटी) में अग्रवाल

वैश्यों की तीन कुमारी कन्याएँ सती हुई थीं जिनका सती-मंदिर कुछ समय पूर्व ही चूरू में भी बना है। कच्छ-गुजरात-सौराष्ट्र में तो कुँआरी सतियों के अनेक समाधि-मंदिर हैं।

यदि सती होने वाली स्त्री की संतान बहुत छोटी होती थी तो वह कभी-कभी सती नहीं भी होती थी और जीवित रह कर उनका पालन-पोषण करती थी। उदाहरण के लिए सोमेश्वर की मृत्यु होने पर उसकी पत्नी कर्पूर देवी बालक पृथ्वीराज (तृतीय) एवं हरिराज के लिए जीवित रही थी।

लेकिन गर्भवती स्त्री का सती होना सर्वथा वर्जित था। पद्मपुराण के अनुसार सूर्यवंशी राजा बाहु की मृत्यु के समय उसकी रानी उसकी चिता में भस्म होना चाहती थी, लेकिन उसके गर्भवती होने के कारण और्व भार्गव ने उसे समझा-बुझा कर सती होने से विरत किया और इसी गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक राजा सगर के नाम से विख्यात हुआ।

मध्य युग में भी ऐसे उदाहरण देखने में आते हैं, जैसे जोधपुर के राजा जसवंत सिंह (प्रथम) की मृत्यु के समय (सन् १६७८ ई०) उनकी दो रानियाँ नरूकी एवं जादमन गर्भवती थीं, इसलिए उन्हें सती नहीं होने दिया गया। ऐसा ही एक उदाहरण चूरू के ठाकुर संग्रामसिंह के भाई भोपतसिंह की गर्भवती पत्नी का है। बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह ने चूरू के ठाकुर संग्रामसिंह व उसके भाई भोपतसिंह को छलपूर्वक गाँव सात्यूँ में २३ मई, सन् १७४१ ई० को मरवा डाला था। इस पर दोनों ठाकुरों की ठुकरानियाँ सती होने के लिए सात्यूँ पहुँचीं। संग्रामसिंह की ठुकरानी तो सती हो गई, लेकिन भोपतसिंह की ठकुरानी गर्भवती थी, इसलिए उसे सती नहीं होने दिया गया।

यदि कोई गर्भवती स्त्री सती होना ही चाहती तो पहले अपने उदर से गर्भ को बाहर निकाल कर ही सती होती थी। पौराणिक कथा है कि दधीचि की मृत्यु के समय उसकी स्त्री गर्भवती थी, इसलिए उसने विदारण करके गर्भ को बाहर निकाला और उसके बाद ही सती हुई। बगड़ावत देवनारायण महागाथा में भी एक ऐसा ही प्रसंग है कि नींया की मृत्यु के समय उसकी पत्नी नेतू को सात माह का गर्भ था। सती होने में इसे बाधक जान कर उसने अपना उदर विदारण करके भ्रूण को बाहर निकाला, और इसे बाबा रूपनाथ को सौंप दिया। इसके बाद ही वह सती हुई।

सत्ता

जैसे स्त्रियाँ अपने पति या अन्य प्रिय-जन की मृत्यु पर सती होती थीं, वैसे ही यदा-कदा पुरुष भी प्रज्वलित चिता में प्रवेश कर जाते (सत्ता हो जाते) थे। महाभारत से ज्ञात है कि अपने इकलौते पुत्र यवक्रीत के मारे जाने पर भारद्वाज मुनि रैभ्य मुनि को शाप देकर सत्ता हो गया था।

वाल्मीकि रामायण से ज्ञात है कि राम के वन-गमन एवं पिता की मृत्यु से दुखी होकर शत्रुघ्न ने अग्नि-प्रवेश करना चाहा था। इसी प्रकार बाली की मृत्यु पर ग्लानि अनुभव करके सुग्रीव भी अग्नि-प्रवेश करने को उद्यत हुआ था।

pdfelement
Remove Watermark Now

बाण के अनुसार सम्राट् प्रभाकर वर्धन के बचने की आशा न देखकर उसके एक कुलपुत्र ने सम्राट् के प्रति भक्ति और स्नेह से अभिभूत हो आग में कूद कर प्राण दे दिये थे।

बीकानेर के महाराजा गजसिंह की मृत्यु (१७८९ ई०) पर उसकी कोई स्त्री सती नहीं हुई थी बल्कि दो पुरुष सत्ता हुए थे। इसी प्रकार महाराजा गजसिंह के उत्तराधिकारी महाराजा राजसिंह की मृत्यु (१७८९ ई०) होने पर संग्रामसिंह मंडलावत सत्ता हुआ था। जोधपुर के महाराजा भीमसिंह की मृत्यु पर सती होने वाली स्त्रियों के अतिरिक्त एक पुरुष भी सत्ता हुआ था। जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह की मृत्यु पर स्त्रियों के अतिरिक्त दो नाजर (पुरुष वेश में रहने वाले हिजड़े) भी सत्ता हुए थे।

संवत् १७२७ में कच्छ के बड़ा रतड़िया का चारण वालग भोजा अपनी पत्नी वेणु के पीछे सत्ता हुआ। कच्छ का ही माधवजी कापड़ी अपने गुरु रणमल बापा के पीछे सत्ता हुआ। जूनागढ़ जिले में नगीचाण की आयराणी गौरल के पीछे उसका प्रेमी लाखणसी सत्ता हुआ।

इब्नेबत्तूता (१४वीं शती) के अनुसार यद्यपि सती होना एक प्रशंनीय कार्य समझा जाता था तथापि न तो सती होना अनिवार्य था और न सती होने के लिए किसी को विवश किया जाता था। लेकिन बर्नियर (१७वीं शती) के विवरण से ज्ञात होता है कि कभी-कभी बलात् सती किये जाने की घटनाएँ भी होने लगी थीं। कालान्तर में सती-प्रथा एक रूढ़ि का स्वरूप लेने लगी। सती होने वाली स्त्री की पारिवारिक व आर्थिक समस्याएँ भी इसके साथ जुड़ने लगीं जिससे सती होने के उद्देश्य व कारण में भी परिवर्तन आने लगा।

मुसलमान शासक सती-प्रथा के विरोधी थे, लेकिन हिन्दुओं में सती-प्रथा की प्रबल भावना एवं व्यापकता को देखते हुए, उन्होंने इस पर आंशिक प्रतिबन्ध ही लगाया। इब्नेबत्तूता के अनुसार सुल्तान (मुहम्मद तुगलक) के राज्य में विधवा को जलाने के लिए सुल्तान की आज्ञा लेनी पड़ती थी, उसकी आज्ञा प्राप्त होने के बाद ही उसे जलाया जा सकता था। सम्राट् अकबर भी इस प्रथा को बन्द करने का इच्छुक था, पर चूँकि राजपूत राजा व सरदार उसके साम्राज्य के सुदृढ़ स्तंभ थे, अतः सती-प्रथा के प्रति उनकी भावना को देखते हुए उसने विशेष कड़ाई नहीं बरती। बर्नियर के समय भी मुगल बादशाह की तरफ से सती-प्रथा पर आंशिक रोक थी। वह लिखता है कि मुसलमान शासक बलवे के भय से इस प्रथा का पूर्ण विरोध नहीं करते। मुसलमान हाकिम की आज्ञा पाये बिना कोई स्त्री सती नहीं हो सकती। सती होने की इच्छुक स्त्री को हर प्रकार से समझाया-बुझाया भी जाता है, फिर भी सती होने वाली स्त्रियों की संख्या कम नहीं होती। विशेषतः उन राज्यों की सीमा में सतियाँ अधिक होती हैं, जहाँ मुसलमान हाकिम नहीं होते। लेकिन चूँकि राजस्थान में सभी राज्य प्रायः हिन्दू-राजाओं के थे, अतः यहाँ सती होने में कोई बाधा नहीं थी।

बंगाल में सती-प्रथा का प्रचार सर्वाधिक था। लेकिन इसका मुख्य कारण यह था कि वहाँ दायभाग के अनुसार पत्नी को पति की मृत्यु के पश्चात् संयुक्त पारिवारिक संपत्ति में पूर्ण अधिकार प्राप्त था। इसलिए परिवार वाले यही चाहते थे कि जैसे भी हो, विधवा अपने मृत पति के साथ सती हो जाए। इसमें छल और बल का भी प्रयोग होने लगा था।

सती-प्रथा का अन्त

सन् १८१८ ई० के एक वर्ष में ही बंगाल में ८३९ स्त्रियों के सती होने की सूचनाएँ प्राप्त हुईं और चूँकि कलकत्ता उन दिनों तत्कालीन ब्रिटिश-भारत की राजधानी था, इसलिए अंगरेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी का ध्यान इस ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ। यों तो लार्ड वेलेजली के समय से ही इस प्रथा को रोकने पर विचार हो रहा था, लेकिन विद्रोह की आशंका से सती-प्रथा को रोकने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया।

अन्त में जब लार्ड विलियम बैंटिंग भारत का गवर्नर जनरल बना तो उसने पचास से भी अधिक सैनिक व असैनिक अधिकारियों से इस प्रथा को रोकने से होने वाले संभावित परिणामों की गुप्त रूप से जाँच करवाई। उनकी गुप्त रिपोर्ट से कोई तात्कालिक गंभीर खतरे (विशेषकर सैनिक विप्लव) की संभावना नहीं लगी तो गवर्नर जनरल ने बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स के समर्थन से दिनांक ४ दिसम्बर, १८२९ ई० को ब्रिटिश-भारत में सती-प्रथा को कानून दण्डनीय अपराध घोषित कर दिया।

इसके विरोध में जो प्रतिक्रिया हुई, वह बहुत मामूली थी। समाज के कुछ अग्रणी सुधारवादी लोगों ने तो सती-प्रथा को बंद करने हेतु गवर्नर जनरल को हार्दिक धन्यवाद दिया। हाँ, कुछ प्रतिष्ठित धनिकों ने इसे अपने धार्मिक मामले में हस्तक्षेप माना। उन्होंने कलकत्ता में एक धर्मसभा बनाई, काफी चन्दा एकत्रित किया और एक अंग्रेज न्यायवादी को पैरवी के लिए इंग्लैंड भेजा। लेकिन उसकी सारी दलीलें सुनने के बाद ब्रिटिश मंत्रिमंडल ने सती-प्रथा को बंद करने के कानून की पुष्टि कर दी।

राजस्थान की देशी रियासतों पर इस कानून का कोई असर नहीं हुआ। पर चूँकि राजस्थान के सभी राज्य अंग्रेज सरकार के साथ संधियों में बँध चुके थे, इसलिए सरकार ने इन राज्यों में भी सती-प्रथा बंद करवाने हेतु, संबंधित राज्यों के राजाओं पर दबाव डालना शुरू कर दिया। इसके फलस्वरूप भादों सुदि ३, संवत् १९०३ को जयपुर राज्य की ओर से राज्य के सभी सरदारों, जागीरदारों, भोमियों, जिलेदारों, थानेदारों, तहसीलदारों, ताल्लुकेदारों व राज्य के तमाम कर्मचारियों के नाम एक इश्तिहार जारी किया गया कि राज्य में कोई भी स्त्री सती होने के नाम पर जलने न पाये। यदि किसी के इलाके में ऐसी घटना होगी तो सती होने वाली स्त्री के वारिसों, पड़ोसियों, सती होने में मदद करने वालों एवं उसे सती होने से न रोकने वालों को सजा दी जायेगी।

pdfelement
Remove Watermark Now

यद्यपि बीकानेर राजघराने में तो सन् १८२५ ई० के बाद ही कोई सती नहीं हुई थी, लेकिन राज्य में सती-प्रथा बदस्तूर जारी थी। इसलिए अंग्रेज सरकार का दबाव पड़ते रहने एवं पुनः सर हेनरी लारेंस (ए० जी० जी०) का खरीता मिलने पर बीकानेर के महाराजा सरदारसिंह ने माघ सुदि १३, संवत् १९११ (३० जनवरी, १८५५ ई०) को राज्य के सभी उमरावों, सरदारों, जागीरदारों, आमिलों, तहसीलदारों, जिलेदारों, थानेदारों, कोतवालों, भोमियों, साहूकारों, चौधरियों एवं रअय्यत के नाम इस आशय का इश्तिहार जारी किया कि ऐसा प्रबन्ध किया जाये कि जिससे कोई स्त्री सती न होने पाये और जो सरदार, जागीरदार आदि एवं राज्य के मुलाजिम ऐसा न करेंगे उन्हें नौकरी से हटा कर उस पर जुर्माना किया जाएगा बल्कि कैद व सख्त सजा भी दी जाएगी। इसके साथ ही जो लोग सती होने में या जीवित समाधि लेने में मदद करेंगे, उन्हें भी सख्त सजा व कसूर के मुताबिक कैद होगी।

अन्य रियासतों में भी इश्तिहार जारी किये गये। लेकिन मेवाड़ के महाराणा स्वरूपसिंह ऐसा करने के लिए राजी नहीं हुए। कर्नल राबिनसन के पत्र (१२ जनवरी, सन् १८४८ ई०) के उत्तर में महाराणा ने सती-प्रथा के पक्ष वे अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा कि दूसरे राज्यों से इस राज्य की बात ठेठ से जुदा है। यहाँ तो सती परम्परा से ही होती आ रही हैं, जो अपने पति के उद्धार के लिए होती हैं। यदि साहेब शास्त्र की बात लिखते हैं तो शास्त्र में सती होने को धर्म लिखा है, जिनकी नकलें आप को भेज रहे हैं सो पंडितों से पढवा लेवें। संवत् १९०४, माह सुदि ८।

इस प्रकार यह लिखा-पढ़ी कई वर्षों तक महाराणा व अंग्रेज अधिकारियों के बीच चलती रही। इसी अवधि में खास उदयपुर शहर में एक सती हो गई। इस बात को लेकर सर हेनरी लारेन्स ने सख्त नाराजगी जाहिर करते हुए महाराणा को एक विस्तृत पत्र लिखा जिसमें रियासत से एजेन्टी के उठा लेने की बात भी लिखी और यह भी लिखा कि अब हिन्दुस्तान में मेवाड़ ही एक ऐसी रियासत है जहाँ सती होने की यह बुरी प्रथा बंद नहीं हुई है। इसे बंद करने के लिए हुजूर साहेबान सदर एवं बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स का भी पत्र आया है……। यह पत्र ५ जुलाई सन् १८५६, आषाढ़ सुदि ३ संवत् १९१३ को महाराणा के नाम गया था। इस पर महाराणा ने एक हुक्म जारी किया—

॥ श्रीरामजी ॥

"॥अप्रंच॥ कोई सती वे हे, सो वीका धणी को तो मोह अर वीका घरका की अणबणतसु वा वीके बेटा वा बेट्या परणावा का दुख सु वा करजदारी वा घरमे खरच जादा, वा खावा ने न्ही मीले जीसु वे, सो या बात बेस्माल की होवे हे, जीप्र यो हुक्म ईचा जणा ने स्मसत मेवाड़ का ऊमराव, भाई, बेटा, ठाकुर लोग, कामदार, सासणीक, पटेल, पटवारी, सेणा, भोम्या, गरास्या ओर स्मसत लोग ने, सो फतुर करे जीने तो बीलकुल रोक दो, अर ज्यो वीका घरका की अणबणत सु वा बीका खावंद का मोहसु वा वीके बेटा बेट्याने परणावा का दुखसु वा करजदारी वा घरमे खरच जादा वा खावाने

न्ही मीले जीसु व्हे, जीने आछा स्मजावज्यो, वा स्मजायासु माण लेवे तो ऊपली कलम लखी हे, जी मुजब वीको हक जठे पुगतो व्हेगा, जठा सु कराऐ दीदो जावेगा, अर वा जीवेगा जत्रे रोटी-कपड़ो वीने श्री द्रबार सु मीलेगा, जीसु आछी त्रेह समजावाम्हे पाछ राखो मती, अर फतूर करवा वाली के तगसीर वेगा……यो हुक्म प्रगणा वाला ने सुणाअे दीदो, अर लखाये गयो पको हुवा, सं० १९१३ सा० सुद १२ बुधे।

लेकिन यह हुक्म अपर्याप्त था, इसलिए अंग्रेज अधिकारी भी इससे संतुष्ट न थे। इसी बीच बागोर में एक और स्त्री सती हो गई। इस पर विलियम फ्रेड्रिक ईडन ने महाराजा को एक पत्र २१ जुलाई, सन् १८५९ को लिखा जिसमें बड़ी नाराजगी प्रकट की गई। इसके उत्तर में महाराणा ने भादों वदि १०, संवत् १९१६ को अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए विलियम फ्रेड्रिक ईडन को लिखा कि इस मुल्क में यह रस्म शास्त्र की मर्यादा के अनुकूल ही है। इस विषय में शास्त्रों की नकलों सहित पहले लिखा जा चुका है जो सब आपके दफ्तर में मौजूद ही है। इस राज्य में तो यह परम्परा रामावतार से चली आ रही है जिसका हाल टाड साहब ने भी अपनी किताब में लिखा है। फिर हमने अपनी और से इसे रोकने का प्रयत्न किया ही है। लेकिन तिस पर भी कोई न माने और कोई स्त्री अपने पति के पीछे जाना (सती होना) ही अख्तियार कर ले, तो ऐसी स्थिति में धर्म के सबब लाचारी है। साहेब इसे आत्म-हत्या मानते हैं सो वैसी बात नहीं है। सती तो चारों जुगों में ही होती आई हैं और यह बात अफराद की होती तो आज तक न चलती। सरकार दौलतमदार भी सबको अपना धर्म निबाहने की स्वतंत्रता देती है एवं ऐसी ही बात साम्राज्ञी ने भी अपने इश्तिहार में जाहिर की है जो जनाब गवर्नर जरनल ने हमें भेजा है।

इस पत्र के उत्तर में फ्रेड्रिक ईडन ने दिनांक २२ नवम्बर, सन् १८५९ ई० को एक और कड़ा पत्र महाराणा को लिखा कि साम्राज्ञी के इश्तिहार का वह मतलब कदापि नहीं है जो आपने समझा है। सती होना आत्म-हत्या के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। शास्त्र के अनुसार भी वह आत्म-हत्या ही है क्योंकि सती होने के बाद उसकी नारायणबलि जरूर कराई जाती है और नारायणबलि आत्म-हत्या या आत्म-हत्या से संबंधित मौतों पर कराई जाती है……। लेकिन लगता है कि आपका इरादा इस प्रथा को बंद कराने का कतई नहीं है बल्कि आपकी नजर उसके खिलाफ है……आदि।

अन्त में कई वर्षों की लिख-पढ़ी एवं धमकी भरे दबावों के कारण महाराणा की ओर से सती-प्रथा को बंध करने के लिए एक हुक्म कार्तिक वदि ५, सं० १९१६ को एवं दूसरा हुक्म सावन वदि १, सं० १९१८ को जारी किया गया।

महाराणा स्वरूपसिंह की मृत्यु पर तो उनकी एक खवास ऐजनकुँवर सती हु लेकिन उनके उत्तराधिकारी महाराणा शंभुसिंह की मृत्यु पर कोई सती नहीं हुई औ इस प्रकार सहस्राब्दियों से चलती आ रही सती-प्रथा बंद हुई। यद्यपि सती होने व घटना कभी-कभी आज भी हो जाती हैं लेकिन अब ऐसी घटनाएँ विरल ही होती है

यह विवरण हमें श्री गोविन्दजी अग्रवाल, चुरू के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

pdfelement
Remove Watermark Now

१३

अग्रवालों की सतियाँ

(१) सती शीला

अग्रवाल जाति में सती प्रथा का उसी प्रकार प्रचलन रहा है जैसे राजपूतों में जौहर का। अग्रवालों में प्राप्त विवरण के अनुसार अग्रोहा की सतियों में सती शीला का विशिष्ट स्थान है। उनकी मढ़ी आज भी अग्रोहा दुर्ग के पास ही बनी हुई है।

सेठ तिलकराज अग्रवाल के प्रयत्नों से उसी मढ़ी पर एक विशाल सती मन्दिर का निर्माण कराया गया है। सती शीला अग्रोहा के सेठ हरभजन शाह की पुत्री थी। उनका विवाह महिता जी से हुआ था। उस समय अग्रोहा कुशाण वंश के अधीन था और महिता जी सियालकोट के शासक रिसालू के यहां दीवान थे।

शीला अपने पतिव्रत धर्म एवं सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध थी। अतः रिसालू का मन शीला को पाने के लिए विचलित हो उठा। किन्तु महिता जी के रहते हुए उसकी मनोकामना पूरी होना संभव न थी अतः उसने महिता जी को राज्य कार्य से बाहर रोहतक भेज दिया और शीला पर अपने डोरे डालने चाहे किन्तु वह एक पतिपरायणा स्त्री थी अतः रिसालू का कोई भी प्रयास सफल न हुआ। अन्त में उसने छल-कपट से अपनी अंगूठी शीला के शयनकक्ष में पहुँचा दी। जब महिता जी राज-काज से घर लौटे तो उनकी नजर उस अंगूठी पर पड़ गई और उन्हें शीला के चरित्र पर सन्देह होने लगा। शीला ने बहुत प्रयत्न किया कि श्री महिता जी का सन्देह दूर हो जाये किन्तु यह संभव न हुआ। अतः शीला अपने पिता के घर महेम चली गई। श्री महिता साधु बन कर स्यालकोट से चला गया। एक दिन घूमते हुए वह पुनः अग्रोहा की ओर आया और अर्ध विक्षिप्तावस्था में उसकी मृत्यु हो गई। जब उनकी मृत्यु का समाचार महेम पहुँचा तो शीला अग्रोहा में आयी और सती हो गई।

कहते हैं रिसालू को जब यह दुःखद समाचार मिला तो वह बहुत दुखी हुआ और उसने सती की चिता पर फूल माला चढ़ायी।

सन् ७०१ ई० में अग्रोहा के शिवानन्द तथा धर्मसेन की प्रेरणा पर धामनगर के तोमर राजा समरजीत के भय से छुटकारा पाने के लिए सन ७१२ ई० में सिरसा के रतनसेन, मुहम्मद अब्दुलबिन कासिम से मिल गये और अग्रोहा की सेना हार गई, जिससे इस नगर को बड़ी हानि उठानी पड़ी और बड़ी संख्या में स्त्रियों ने प्राण दिये।

(२) सती राणीमाँ

वैसे तो शेखावाटी में अन्य सतियों की भी पूजा होती है किन्तु झूंझुनू की राणी सती की ख्याति सम्पूर्ण देश में फैली हुई है। राणी सती का नाम नारायणी देवी था। उनका जन्म महेम (डोकवा) निवासी सेठ घुडसा मल के यहाँ हुआ था। वे हिसार के दीवान जाली राम की पुत्र वधू थीं।

श्री जाली राम हिसार के नवाब के दीवान थे। उनका बड़ा प्रभाव था। उनके पुत्र तनधनदास को घुड़सवारी का बड़ा शौक था। उनके पास एक बहुत सुन्दर घोड़ी थी जिसे हिसार के नवाब का पुत्र लेना चाहता था। किन्तु तनधनदास उस घोड़ी को देना नहीं चाहते थे। एक रात्रि को नवाब का पुत्र वेष बदल कर घोड़ी को चुराने के लिए तनधन दास की घुड़साल में आया। घोड़ी उसको देखते ही इस प्रकार हिनहिनाई कि तनधन दास को किसी चोर का सन्देह हुआ अतः वह भाला लेकर घुड़साल में पहुँच गया। नवाव का पुत्र तनधन दास के आने की आहट सुन कर घुड़साल के घास में छिप गया। जब तनधन दास को घुड़साल में कोई और दिखाई न दिया तो उसने अपना भाला घास के ढ़ेर में गड़ा दिया और घोड़ी की ओर बढ़ा ही था कि घास के ढेर से एक चीख आती सुनाई दी। तनधन दास ने जब घास हटाकर देखा तो नवाब के पुत्र की छाती में भाला पार हो चुका था। तनधन दास ने यह समाचार अपने पिता जालीराम को दिया। उन्होंने स्थिति को समझ कर तत्काल रात-रात में अपना सम्पूर्ण परिवार हिसार की सीमा से बाहर पहुँचा दिया और रात-रात में ही झूंझुनू पहुँच गये किन्तु नारायणी देवी उस समय अपने पिता के घर पर ही थी।

एक दिन तनधन दास अपनी पत्नी को लेने के लिए महेम गये। हिसार के नवाब को उनके महेम से लौटने का समाचार मिल गया अतः उसने अपने आदमी छिपा दिये जो तनधन दास पर अचानक टूट पड़े और उसी झड़प में तनधन दास की मृत्यु हो गई। यद्यपि नारायणी देवी ने बीरता के साथ नवाब के लोगों का मुकाबला किया और उन्हें भगा दिया, तदपि उसका सुहाग तो उजड़ चुका था। उसने अपने नौकर राणा की सहायता से चिता का प्रबन्ध किया और उसी स्थान पर अपने पति के साथ सती हो गई। सती होने से पूर्व उन्होंने अपने नौकर राणा को आदेश दिया था कि उनकी भस्मी घोड़ी पर रखकर झूंझुनू ले जाए और जहां यह घोड़ी खड़ी हो जाए उसे वहीं छोड़ कर उनके परिवार को उस घटना का समाचार पहुँचा दिया जाए।

सेवक ने अपनी स्वामिनी नारायणी देवी की आज्ञा का पालन किया। जब झूंझुनू नगर के पास पहुँच कर घोड़ी खड़ी हुई तो उसने दुःखद समाचार जाली राम को पहुँचाया। सारा परिवार शोक सागर में डूब गया। अन्त में जहाँ वह घोड़ी भस्मी लेकर रुकी थी उसी स्थान पर नारायणी देवी और तनधन दास की भस्मी पर एक विशाल मन्दिर का निर्माण किया गया और नारायणी देवी "सती राणी माँ" के नाम से सम्पूर्ण देश में पूजी जाने लगी। आज भी इस रमणीक स्थान पर प्रति वर्ष भाद्रपद मास

pdfelement
Remove Watermark Now

में सती राणी माँ की पूजा के लिए हजारों व्यक्ति एकत्रित होते हैं। श्री जाली राम जी के जालान परिवार बंसल गोत्रीय के सभी सदस्यों को इस मेले में सम्मिलित होना प्रति वर्ष अनिवार्य है; क्योंकि इनकी मान्यता है कि जब तक जालान परिवार के लोग सती राणी माँ की पूजा करते रहेंगे, वे सभी संकटों से बचे रहेंगे।

सती राणी माँ विक्रम सं० १६५२ की मार्गशीर्ष कृष्णा नवमी मंगलवार के दिन सती हुई थीं। श्री जाली राम जी के परिवार में आगे भी १२ सतियाँ और हुई हैं, इनकी मड़ियाँ भी सती राणी माँ के पास ही बनी हैं। अन्तिम सती सीता सं० १८६२ वि० में हुई थी।

राणी सती माँ का मन्दिर विशाल एवं भव्य है। यह झुंझुनू रेलवे स्टेशन से ३ मील की दूरी पर मुख्य नगर से एक ओर है। मन्दिर का मुख्य द्वार दूर से देखा जा सकता है। इसके सामने चौड़ा विस्तृत मैदान है। जिसमें फुलवाड़ी लगी है। इसमें राम निवास बाग तथा मोतीराम बाग की शोभा दर्शनीय है। द्वार के भीतर जाने पर एक चौक मिलता है। उसके चारों ओर यात्रियों के ठहरने के लिए तीन मंजिले भवन हैं। जिनमें ४०० से अधिक कमरे हैं। इसके आगे दूसरे चौक में हनुमान जी तथा शिव जी के मन्दिर, पुस्तकालय तथा वाचनालय भी हैं। तीसरे चौक में सतियों के १३ मंडप दिखाई देते हैं। पहिला मण्डप सती राणी माँ का तथा अन्तिम सती सीता का है। १२ सतियों के नाम हमें श्री पं० देवकीनन्दन जी खेडवाल, फतेहपुर निवासी से प्राप्त हुये। एतदर्थ हम इनके आभारी हैं।

१. श्रीजीवनसती	२. श्री पूरणी सती	३. श्री प्रयागी सती
४. श्री जमना सती	५. ,, टीली सती	६. ,, वाली सती
७. ,, मनावली सती	८. ,, मनोहरी सती	९. ,, महादेवी सती
१०. ,, उन्मेला सती	११. ,, गूजरी सती	१२. ,, सीता सती

(३) धौली सती माँ

धौली सती माँ लगभग ५५० वर्ष पूर्व नारनौद (हिसार) के बिन्दल गोत्रीय परिवारों की सर्व-मान्य सती हुई हैं। इस परिवार के कुल पुरोहित हारीतवाल ब्राह्मण हैं।

लगभग ५५० वर्ष पुरानी बात है। इस परिवार के कान्हा जी एक प्रतापी पुरुष हुये। उनका स्थानीय मुस्लिम शासकों से मनमुटाव हो गया और उसी संघर्ष में इनका नारनौद में स्वर्गवास हुआ। अतः उनकी पत्नी उनके साथ सती हो गई। जिन मुसलमानों ने उन्हें वध किया था वे हरा वस्त्र पहने हुये थे। अतः तभी से बिन्दल परिवार और उनके पुरोहित हरा वस्त्र धारण नहीं करते। तभी से बिंदल गोत्रीय अग्रवाल नारनौद छोड़कर नारनौल चले आये। उस समय सती का मन्दिर नारनौद में बनाया गया था अतः नारनौल के सराफ तथा बिंदल गोत्री नारनौद में सती की आराधना हेतु वहाँ जाया करते थे।

सम्वत १५०८ में सराफ परिवार के लोग नारनौल छोड़ कर फतेहपुर चले आये। इस परिवार के लोग प्रति वर्ष धौली सती माँ की जात के लिये नारनौद जाया करते थे। लगभग ४०० वर्ष पूर्व सराफ परिवार के यात्रियों को डाकुओं ने मार्ग में लूट लिया अतः उन्होंने धौली सती माँ का मन्दिर नारनौद से उठाकर फतेहपुर में स्थापित कर दिया। तभी से अब धौली सती माँ की मान्यता पूर्ववत् फतेहपुर में होती है। अब यहाँ एक विशाल सती मन्दिर बन चुका है।

सराफ परिवार के कुछ लोग २०० वर्ष पूर्व रामगढ़ (शेखावाटी) में भी बस गये। इस परिवार के श्री विश्वम्भर लाल जी सराफ की मान्यता है कि धौली सती माँ के चरणों की कृपा से वे बहुत सुखी हैं क्योंकि वे धौती सती माँ को अपनी आराध्य देवी मानते हैं और उनके परिवार में उनकी पूजा होती है।

नारनौद से चलकर फतेहपुर आने वाले बिन्दल गोत्रियों की ओर से सर्वप्रथम सर्वश्री तुंगमल सरावगी, वस्तीराम खेडवाल, गौरीदत्त भोजका के नाम उल्लेखनीय हैं फिर सराफ, धरण तथा मिश्र आये।

धौली सती माँ का उल्लेख हरिद्वार के श्री मौजी मल पण्डा की सम्वत् १८२५ वि० की बही में भी उपलब्ध है और उसमें एक सराफ परिवार वंशावली इस प्रकार प्राप्त हुई है—

सर्व श्री जाजसाहजी—नोरंग राम जी—साबू राम जी—मालूराम जी—ओडरमल जी—सरदारमल जी—टीकूराम जी—छाजूराम जी—सेवा राम जी—डालू राम जी—लिछमण दास जी—रतन दास जी—माधोदास जी—संकर राम जी—ध्यान दास जी—बाल चन्द जी—रिखीकेस जी—विरजलाल जी—थान सिंह जी—नथमल जी—हीरा नन्द जी—हरकेस राम जी—गोबिन्द राम जी—जुरीमल जी—किसन राम जी—जमुनाधर जी—कन्हैयालाल जी। वर्तमान में इस परिवार केश्री कन्हैयालाल जी के पुत्र (१) श्री मोती राम जी, (२) माणक चन्द जी, (३) श्री हीरा लाल जी, (४) श्री विश्वम्भर लाल जी, (५) श्री श्याम सुन्दर जी, (६) श्री वासुदेव जी हैं।

श्री विश्वम्भर लाल जी का वर्तमान पता है :—

श्री विश्वम्भर लाल सराफ,
१६, रंगनाथन एवेन्यू,
सिलवन लॉज कालोनी, मद्रास ६०००१०

★

pdfelement
Remove Watermark Now

(४) श्री चावो सती जी झूंझनू (राज०)

हिन्दू धर्म में सती-पूजन का विशेष महत्व है। पौराणिक काल से लेकर वर्तमान काल तक अनेक सतियाँ हुई हैं जो अपना-अपना महत्व एवं विशेषता रखती हैं किन्तु श्री चावो सतीजो की महिमा कुछ विशेष है क्योंकि गृहस्थ जीवन का किञ्चित मात्र भी इन्होंने उपभोग नहीं किया। साढे पाँच सौ वर्ष पूर्व बगड़ के एक प्रमुख वैश्य परिवार में वीरवर सूरजमलजी हुए थे। कालान्तर में इसी वंश-परम्परा में तीन सहोदर भ्राता रघुनाथरायजी, भोजराजजी तथा खेतसीदासजी का जन्म हुआ जिनके वंशज बाद में रूंगटा, भोजाण तथा खेतान के नाम से प्रसिद्ध हुए।

बगड़ निवासी श्री सूरजमलजी का विवाह हिसार जिले के एक छोटे से गाँव तिगड़ाना के निवासी कल्लूरामजी महाजन की सुपुत्री चावली से हुआ था जिसका प्यार का नाम "चावो" था। विवाह के बाद दम्पति का मुकलावा भादवा सुदी ६ का निश्चित हुआ था। सूरजमलजी अपने साथियों सहित भादवा सुदी ५ को मुकलावे के लिए ससुराल रवाना हुए। दुर्भाग्य से रास्ते में ही धाड़ी (डाकू) दल से मुठभेड़ हो गई। वीरवर सूरजमल जी ने अपने पराक्रम और शौर्य से धाड़ियों के छक्के छुड़ा दिए और उन्हें भाग जाने के लिए विवश कर दिया—किन्तु इस संघर्ष में सूरजमलजी भी आहत हो गए। इस कारण दूसरे दिन उनका शरीर शान्त हो गया।

उधर तिगडाने में ससुराल वाले उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे किन्तु भावी प्रबल होती है। उसे कौन टाल सकता है। उसी रात्रि को उनकी पत्नी चावो को स्वप्न में वह सारी घटना, जो सूरजमलजी के साथ रास्ते में घटी थी, दिखाई दी और उन्हें आदेश मिला कि वे तत्काल ससुराल पहुँच जावे जिससे कि अन्तिम यात्रा में दोनों साथ-साथ चलकर परलोक में वास करें। चावो जी इस आज्ञा को शिरोधार्य कर ससुराल की ओर चल पड़ीं और शाम होने तक वहाँ पहुँच गई। तब तक लोग सूरजमलजी को दाह-क्रिया के लिए श्मशान ले जा चुके थे। चावोजी भी सीधे वहीं पहुँच गईं और अपने पति का शव गोद में लेकर उनके साथ ही सती हो गईं।

तदन्तर चार शताब्दी पूर्व चावो सतीजी झूंझनू में प्रकट हुई। ऊपर वर्णित श्री खेतसीदासजी को उन्होंने स्वप्न में दर्शन दिए और आदेश दिया कि झूंझनू में भी उनकी स्मृति में एक मन्दिर का निर्माण कराया जावे जिसमें उनकी सेवा, पूजा, अर्चना विधि-विधान से होती रहे। सेठ खेतसीदासजी ने इस स्वप्न को साकार बनाने के निमित्त झूंझनू में एक मन्दिर बनवाया और पानी की सुविधार्थ उसके समीप ही एक कूआ भी बनवाया गया। आज उसी का भव्य रूप मन्दिर के रूप में सबके सम्मुख है।

खेतसीदासजी की संतति खेतान नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने माताजी को वचन दिये कि खेतान लोग झूंझुनू में माताजी की पूजा करेंगे। तभी से खेतान मात्र माताजी के जात जड़ूला करने इसी मन्दिर में आते हैं और श्री चावो सतीजी के आशीर्वाद से सब भक्तों की मनोकामना पूरी होती है एवं उनके सब कष्ट निवारण होते हैं

(५) रामगढ़ (शेखावटी) की अमरी सती दादी

राजस्थान में शेखावटी क्षेत्र वह पावन भूमि है जिसके नगर-नगर में अग्रवाल समाज के अनेक परिवारों की सती माताओं का स्वर्णिम इतिहास सर्वत्र प्रस्फुटित हो रहा है। उदाहरण के लिये इन सौभाग्यशाली नगरों में फतहपुर ऐसा नगर है जिसमें निम्नांकित अग्रवाल परिवारों की सतियों के मन्दिर उनकी पुण्य स्मृति उजागर कर रहे हैं—

१. चमडियाओं की सतियाँ
२. लोहियों की सतियाँ
३. गोयनकाओं की सतियाँ
४. विन्दल गोत्री तथा सर्राफों की सती

इन सतियों में सर्राफों की धौली सती माँ का इतिहास बहुत पुराना है जिसका दिग्दर्शन हमने "अग्रोतकान्वय" ग्रन्थ के इसी अध्याय में किया है। अब धौली सती माँ का एक विशाल सती मन्दिर फतेहपुर में बना है जो भारत में विशिष्ट स्थान रखता है।

इसी प्रकार अग्रवाल समाज के बंसल परिवार की राणी सती माँ का भव्य स्मारक स्वरूप विशाल मन्दिर झूंझुनू में अपना कीर्तिमान स्थापित कर चुका है जहाँ अन्य १२ सतियों की समाधियाँ इस परिसर की महानता है।

राजस्थान के शेखावाटी क्षेत्र की उपर्युक्त सतियों की शृंखला में रामगढ़ के सुप्रसिद्ध चौधरी परिवार की अमरी सती माँ की गाथा चौधरी परिवार के इतिहास में स्वर्णिम पृष्ठ जोड़ती है।

अमरी सती माँ का पूर्व नाम अमरी देवी था। इनका जन्म सम्वत् १८७८ विक्रमी में बिसाऊ (शेखावाटी) के परम पवित्र खेमका परिवार में हुआ था। उनका विवाह सम्वत् १८८९ विक्रमी में रामगढ़ के सुप्रसिद्ध चौधरी परिवार के श्री रामचन्द्र जी चौधरी कन्होई के साथ हुआ था। वे बड़े आस्तिक पुरुष थे और ईश्वर भजन में ही अपना सारा समय लगाते थे तथा श्रीमती अमरी देवी अपने पति की सेवा सुश्रूषा में कोई कसर न रखती थीं। वे अपने पूर्व जन्म के संस्कारों से त्रिकाल दर्शी की स्थिति में पहुँची हुई थीं।

सम्वत् १८९६ विक्रमी के फाल्गुण मास के शुक्ल पक्ष में अस्वस्थ रहते हुये भी श्री रामचन्द्र जी चौधरी ने शिवरात्रि का वृत रखा। उनकी हालत देखकर उनकी त्रिकाल दर्शिनी पत्नी श्रीमती अमरी देवी ने तत्काल भाँप लिया कि अब उनके पतिदेव का भौतिक शरीर नहीं रहेगा क्योंकि वे भूत काल, वर्तमान काल तथा भविष्यत् काल तीनों की बात जानती थीं। उन्हें निश्चय हो गया कि अब अपने पति देव के साथ इस लोक से प्रयाण करने का समय आ गया है। वे उसी समय अपना सौभाग्य सूचक चूड़ा पहनने के लिये मनिहारों के यहाँ गईं। चूड़ा पहनने के पश्चात् जब वे अपने घर आ रही थीं तो नौलावे के कुये के पास लंगड दास महात्मा ने, जो वहीं तपस्या किया करते थे, उनका दर्शन किया और झटपट उठकर उनको दण्डवत प्रणाम किया। लंगडदास महात्मा के सेवकों ने जब महात्मा जी को कहा कि महाराज यह तो पगली है तो महात्मा जी ने

pdfelement
Remove Watermark Now

उन्हें समझाया कि यह पगली नहीं है वरन् सती है। परसों यह अपने पति के साथ सती हो जायेगी। इस का नाम अमरी है अतः यह हमेशा अमर पद पायेगी। तुम लोग अज्ञानी हो इस लिये तुम लोग इन को नहीं पहिचान सकते। यह जमीन से एक बालिश्त ऊपर चल रही है। इनके चेहरे पर ओज है। यह इस लिये मुस्करा रही है कि अब वह शीघ्र ही अपने पतिदेव के साथ संसार का परित्याग कर स्वर्ग को प्रस्थान करेंगी।

इस घटना के बाद फाल्गुण शुक्ला ६, दिन मंगलवार, सम्वत् १८९६ वि० में श्री राम चन्द्र जी का स्वर्गवास हो गया। मैया जी की आयु उस समय १८ वर्ष की थी। उन्होंने १६ शृंगार किये और सब को कह दिया कि वे अपने पति के साथ सती होयेंगी। पहले तो घरवालों ने उनकी बात को यूं ही टाल दिया किन्तु जब उनका पूर्ण हठ देखा तो उनके कुटुम्ब वालों ने नगर के धनीमानी और पंच लोगों को बुलाया और उन्होंने भी मैया को सती होने से रोका किन्तु सती के प्रभाव को कौन जान सकता है। उनको अपने मन्तव्य से रोकने की शक्ति एक साधारण मानव में नहीं हो सकती। फिर भी लोगों ने अज्ञानवश कुछ भूलें कीं। मैया जी को एक कमरे में बन्द कर ताला लगा दिया और कहा कि यदि सती में शक्ति है तो ताला अपने आप खुल जायेगा। ऐसा ही हुआ, ताला अपने आप खुल गया और किवाड़ भी खुल गये तथा सती जी मुसकराती हुई कमरे से बाहर पधारीं। तब सती जी ने एकत्रित जन समूह, धनिकों तथा राजकर्मचारियों को यह चुनौती दी कि तुम सब एक बार नहीं अनेक बार उनकी परीक्षा ले सकते हो। उनके चेहरे पर अपूर्व तेज और वाणी में अद्भुत परिवर्तन देख कर सब लोग स्तम्भित रह गये।

सती जी की आज्ञा से श्री रामचन्द्र जी की बैकुण्ठी बाजार के बीच से चली। हजारों लोग उनके साथ थे। उस समय सती जी का रूप अनूप था। वे पूर्ण रूप से शृंगार किये हुये थीं। शिर के केश स्वर्ण के समान चमक रहे थे और खड़े थे। उनके चेहरे पर चिन्ता की रेखा न थी अपितु वे उपस्थित जन समूह की आँखों में दुख के आँसू देख कर मुस्करा रही थीं।

जब यह जलूस बाजार में पहुँचा तो श्री सेडू राम जी हरितवाल ने हाथ जोड़ कर कहा कि मैया मेरे कोई सन्तान नहीं है। मैया ने एक श्रीफल उनकी ओर फेंक दिया और उनकी कृपा से आज स्व० सेडूमल जी के कुटुम्ब में सैकड़ों व्यक्ति हैं और वे आनन्द पूर्वक रह रहे है।

मैया जी का जुलूस बीकानेरी दरवाजे से निकला। मैया जी ने उछल कर लगभग ३० फीट ऊँचे दरवाजे की दीवार पर अपने हाथ का थापा लगा दिया। अब रामगढ़ के तीन द्वार अपने स्थान से हट चुके हैं किन्तु वह दरवाजा आज भी अपने उसी स्थान पर अडिग खड़ा है।

मैया जी आगे चल कर हनुमान जी के मन्दिर के पास पहुँच कर अपने आप रुक गईं और अपने साथियों को आदेश दिया कि यहीं पर चिता तैयार की जाये। उनके आदेशानुसार वहीं पर चिता तैयार की गई और वे अपने पति के पार्थिव शरीर को

गोद में लेकर सहर्ष उस चिता पर विराज मान हुईं। चिता पर बैठ कर देवी ने अपने पति के छोटे भाई श्री सेवाराम जी को बुलाने की आज्ञा दी ताकि वे चिता में अग्नि लगा दें। उस अपार जन समूह में श्री सेवा राम जी का कहीं पता न लगा। वे कहीं एकांत में बैठे आँसू बहा रहे थे। जब उन्हें खोज कर मैया जी के सामने लाया गया तो मैया जी ने उनसे कहा कि उनकी जो इच्छा हो सो मांग लें। श्री सेवा राम जी स्वभाव से बड़े भोले थे। मैया के तीन बार कहने पर भी श्री सेवा राम जी के मुँह से कोई शब्द नहीं निकला तो मैया ने ही कहा कि यदि वे कढाई कूँचे का काम करेंगे तो उन्हें सदैव आराम के साथ दाल रोटी मिलती रहेगी, उनका कोई काम रुकेगा नहीं। ऐसा कह कर उन्होंने अपने सती वल का स्मरण किया और चिता में से अपने आप ज्वाला प्रकट हो गई। सती जी ने जलती चिता में से अपने लहँगा का नाड़ा निकाल कर बाहर फेंक दिया जो उनके कुटुम्ब वालों के पास अब भी मौजूद है। यदि किसी स्त्री को बच्चा होने में अधिक तकलीफ होती है तो उस नाडे को पानी में भिगो कर उस पानी को पिलाने से बच्चा आराम से हो जाता है और किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता।

जिस मैदान में मैया जी तथा उनके पति का दाह संस्कार हुआ था, आजकल उस स्थान पर एक भव्य मन्दिर बना हुआ है जो "सती दादी का मन्दिर" नाम से सुप्रसिद्ध है। इस मन्दिर के लिये भूमि श्री राधेश्याम जी चौधरी सुपुत्र श्री दुली चन्द जी चौधरी ने दी है और भवन निर्माण श्री चौधरी बाबू लाल जी के प्रयास से हुआ है। यह भवन लगभग दो लाख रुपये की लागत का है।

इस मन्दिर के प्रबन्ध के लिये एक प्रबन्ध समिति है। सती दादी की कृपा से मन्दिर का प्रबन्ध सुचारु रूप से चलता है। प्रतिदिन प्रातः सायं काल सती दादी की पूजा होती है और भोग लगता है।

सती दादी मन्दिर में सैकड़ों स्त्री पुरुष माता का दर्शन करने आते हैं और उनकी मनोकामना पूरी होती है।

सती दादी के मन्दिर पर वर्ष में दो बार-फाल्गुण सुदी छठ को तथा भाद्रपद कृष्णा की अमावस्या को—मेला लगता है।

सती दादी की सातवीं पीढ़ी में सर्वश्री बाबूलाल सीताराम चौधरी, गुदडी बाजार रामगढ़ (शेखावाटी) में सुप्रसिद्ध हैं।

सती दादी का यह विवरण हमने गत वर्ष रामगढ़ जाकर एकत्रित किया था और सती दादी के मन्दिर में जाकर मैया जी भव्य मूर्ति के दर्शन किये थे।

pdfelement
Remove Watermark Now

(५) ढांढण (शेखावटी) की दो सतियाँ

पति की मृत्यु पर अपने पति वियोग में पत्नी के सती होने की अनेक घटनायें होती रही हैं किन्तु बहिनें अपने भाई की मृत्यु होने पर सती हुई हों ऐसी घटना ढांढण की सतियों की ही एक मात्र घटना है जिनकी स्मृति में विशाल सती मन्दिर ढांढण (शेखावाटी) में विद्यमान है। इन दो बहिनों के सती होने का काल निर्णय तो सम्भव नहीं है किन्तु लोक चर्चा के अनुसार यह घटना १५वीं शताब्दी की है।

विभाजन से पूर्व पंजाब प्रान्त में हिसार जिले के सीसवाल ग्राम में बजाज-भरतियों (बांसल गोत्रीय) के पूर्वज रहा करते थे। इनके पूर्वज का नाम बालचन्द जी था। इनकी दो पुत्रियां और दो पुत्र थे। पुत्रों के नाम श्री जोखीराम जी तथा भोलानाथ जी तथा पुत्रियों के नाम टोडा एवं गेला था। चारों भाई-बहिनों में प्रगाढ़ स्नेह था।

श्री भोलानाथ जी नित्यप्रति गायें चराने के लिए जंगल में जाया करते थे। एक दिन श्री भोलानाथ जी का अचानक जंगल में ही देहान्त हो गया। जब यह दुखद समाचार उनकी दोनों बहिनों को मिला तो वे अपने भाई के वियोग को सहन न कर सकीं और उन्होंने सती होने की घोषणा कर दी तथा माता-पिता एवं परिजनों का विरोध असफल सिद्ध हुआ। अतः बड़ी धूम-धाम से गाजे-बाजे के साथ सभी परिजन-पुरजन जंगल में पहुँचे। दोनों बहिनों ने बड़ी श्रद्धापूर्वक अपने भाई की चिता तैयार की और भाई भोलानाथ के शव को गोद में लेकर चिता पर जा बैठीं। उस समय का दृश्य देखने योग्य था। दोनों बहिनों के मुखमण्डलों पर अद्भुत तेज प्रकाशमान हो रहा था। उनके अटल विश्वास एवं तेज के फलस्वरूप चिता स्वयं प्रज्ज्वलित हो उठी। चारों दिशाओं में जय-जयकार की ध्वनि गूंज उठी। श्री भोलानाथ जी के नश्वर शरीर के साथ दोनों के शरीर अग्नि में लुप्त हो गये।

चिता ठंडी होने के पश्चात् उन सतियों की स्मृति को चिरस्थाई बनाने के लिए उस चिता के स्थान पर ही सतियों की मढ़ी का निर्माण करा दिया, जहां अनेक स्त्री-पुरुष प्रतिदिन पूजा तथा आराधना के लिए पहुँचने लगे और श्रद्धालुओं की मनोकामनायें पूरी होने लगीं।

सम्वत् १९०६ वि० में मुसलमानों के आतंक से आतंकित प्रायः सभी बजाज-भरतिया परिवार सीसवाल ग्राम से उठकर फतहपुर (शेखावाटी) में आकर बस गये। फिर भी वे प्रति वर्ष सती की पूजा-अर्चना के लिए सीसवाल जाया करते थे। इस प्रकार प्रति वर्ष मार्ग के कष्टों से छुटकारा पाने के लिए सती जी का मन्दिर सीसवाल से उठाकर फतहपुर में ही स्थापित करने का निश्चय किया गया और सती जी की प्रेरणा से सीसवाल में सती जी के मन्दिर की छः ईंटें लेकर भक्तजन फतहपुर की ओर चल पड़े। ढांढण के जंगल में यात्रियों ने लघुशंका आदि के लिए जाने हेतु उन ईंटों को जंगल में रख दिया और जब वे उन ईंटों को उठाने लगे तो ऐसा चमत्कार हुआ कि ईंटें टस से मस न हुईं। अतः ढांढण ग्राम में ही सती जी का मन्दिर बनवा दिया गया।

तब से आज तक ढांढण में ही सती जी की पूजा- अर्चना के लिए तथा कुल देवी की आराधना के लिए बजाज-भरतिया परिवारों के प्रायः सभी नर-नारी भाद्रपद कृष्णा अमावस्या के दिन ढांढण पहुँचते हैं और दूर-दूर से पधारे हजारों श्रद्धालु जन सती जी को धोक देते हैं एवं अपनी मनोकामनायें पूरी करने के लिए सती जी के मन्दिर में प्रार्थना करते हैं।

बाहर से आने वाले यात्रियों के निवास तथा भोजन आदि की समुचित व्यवस्था मन्दिर की ओर से रहती है।

यह विवरण हमने **राजस्थान की यात्रा के समय** चुरू में श्रीयुत गोविन्द जी बजाज से प्राप्त किया था।

विविध स्थानों पर सतियाँ

(१) सागर की सती

सागर (म० प्र०) जिले के ऐस ग्राम में जो कभी एक विशाल सम्पन्न नगर था, नगर द्वार के दो स्तम्भ खड़े हैं; उन पर पंजों, चरणों और नागों के चिह्न अंकित मिलते हैं। जनश्रुति के अनुसार एक नाग वंशी दीवान किसी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए थे और उनकी पत्नियाँ वहीं सती हुई थीं, उन्हीं की स्मृति में ये चिह्न नगर द्वार के स्तम्भ पर अंकित हैं। ऐसे परिवार में इन चिह्नों का विशेष महत्व है।

(२) बुहाणा (शेखावटी) की सतियां

गाँव बुहाणा (शेखावटी) में अग्रवाल वैश्यों की तीन कुमारी कन्यायें सती हुई थीं जिनका सती मन्दिर कुछ समय पूर्व ही चुरू में भी बना है।

अग्रवाल सतियों के स्थान-स्थान पर अनेकों चिह्न और भी मिलते हैं किन्तु काल की गति ने उन्हें हमारी दृष्टि से ओझल कर दिया है।

pdfelement
Remove Watermark Now

१४

देश निर्माण में अग्रवालों का योगदान

अग्रवाल समाज अपने उदय काल से ही देश-निर्माण के कार्यों में अग्रसर रहा है। वैसे तो यह **"वार्ता शस्त्रोपजीवी"** समाज है किन्तु ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जिसमें इस समाज के मेधावी व्यक्तियों ने अपना योगदान न किया हो। व्यापार तो इस वर्ग का मुख्य कार्य है ही, समाज-सुधार, राजनीति और साहित्यिक क्षेत्र में भी इस समाज का उल्लेखनीय योगदान है। इनके अतिरिक्त भी, इंजीनियरिंग, विज्ञान, कृषि, तथा जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों में इस समाज के बुद्धिजीवियों ने कीर्तिमान स्थापित किये हैं।

स्थान-स्थान पर धर्मार्थ संस्थाओं, अन्न क्षेत्रों, शिक्षा संस्थाओं, स्वास्थ्य केन्द्रों और धर्मशालाओं द्वारा देश के सेवा-कार्यों में इस समाज का अपना विशिष्ट स्थान है।

पंजाब में सर गंगा राम ट्रस्ट की ख्याति सर्व विदित है। इस ट्रस्ट की स्थापना सन् १८६० में ६० लाख रुपये की लागत से की गई थी। इस ट्रस्ट की ओर से धर्मार्थ अस्पताल, हिन्दू छात्र शिक्षा समिति तथा विधवा विवाह सभा की स्थापना की गई जिनके कारण सर्वसाधारण विशेषकर हिन्दू समाज लाभान्वित हुआ।

आगे चलकर राजस्थान के सेठों ने अनेक धर्मार्थ ट्रस्टों की स्थापना की, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं :—

कलकत्ता के ट्रस्ट

१. सेठ पूरनमल सिंघानिया
२. सेठ बशेशरदास मोतीलाल हलवासिया
३. सेठ रामनारायण रुइया
४. सेठ साधूराम तोताराम गोयनका
५. सेठ रामजीदास बाजोरिया
६. सेठ हरीराम गोयनका
७. सेठ रा० ब० सूरजमल शिवप्रसाद तुलस्यान
८. सेठ गुलाबराय शिवबक्सराय बागला
९. सेठ भगवानदास बागला
१०. सेठ मोतीलाल राधाकृष्ण बागला
११. सेठ लक्ष्मीनारायण सूरजमल कानोडिया
१२. सेठ रा० ब० गोरखराय रामप्रताप चमड़िया
१३. सेठ सूरजमल नागरमल

१४. सेठ ताराचन्द घनश्यामदास पोद्दार
१५. सेठ रामचन्द्र नागरमल बाजोरिया
१६. सेठ रामप्रसाद चिमनलाल गनेडीवाल
१७. सेठ सनेहीराम जुहारमल
१८. सेठ जयनारायण लक्ष्मीनारायण पोद्दार
१९. सेठ देवीदत्त हजारीमल दूधवेवाले
२०. सेठ विशुनदयाल हरदयाल सुरेका
२१. सेठ गोवर्धनदास मदनलाल काया
२२. सेठ जयनारायण रामचन्द्र पोद्दार
२३. सेठ नोपचन्द मगनीराम
२४. सेठ लच्छीराम बसन्तलाल नाथानी
२५. सेठ सेढमल दयाचन्द जैन
२६. सेठ रामकुमार शिवचन्दराय पोद्दार
२७. सेठ जानकीदास शिवनारायण

बम्बई के ट्रस्ट

२८. सेठ रामनारायण रुइया
२९. सेठ आनन्दीलाल पोद्दार
३०. सेठ स्वरूपचन्द पृथ्वीराज रूंगटा
३१. सेठ भगवानदास रामचन्द
३२. सेठ हरनन्दराय सूरजमल रुइया
३३. सेठ हीरालाल रामगोपाल गनेडीवाल
३४. सेठ बेनीराम जेसराज
३५. सेठ भगवती प्रसाद खेतान
३६. सेठ लच्छीराम चूडीवाला
३७. सेठ जगन्नाथ विशनलाल
३८. सेठ गुरमुखराय सुखानन्द
३९. सेठ दिलसुखराय सागरमल राजगढ़िया
४०. सेठ चिमनलाल मोतीलाल
४१. सेठ नारायणदास केदारनाथ
४२. सेठ बसंतलाल गोरखराम

विविध स्थानों पर ट्रस्ट

४३. सेठ जुग्गीलाल कमलापत सिंघानियाँ, ट्रस्ट कानपुर
४४. सेठ देवीदत्त सूरजमल खेतान, पडरोना
४५. सेठ रामकृष्ण डालमिया, डेरीआँन सौन
४६. सेठ शाह कुन्दनलाल फुन्दनलाल, वृन्दावन
४७. सेठ सनेहीराम डूगरमल, तिनसुखिया
४८. सेठ बा० शिव प्रसाद गुप्ता, बनारस
४९. सेठ जमनाधर पोद्दार, नागपुर
५०. सेठ मंगनीराम बैजनाथ योयनका, मुंगेर
५१. सेठ प्रताप जी, अमलनेर (खानगांव)
५२. सेठ नन्दराम पोद्दार कंठीवाले, हाथरस
५३. सेठ महानन्दराम पूरनमल गनेडीवाल, हैदराबाद
५४. सेठ राजाबहादुर शिवलाल मोतीलाल हैदराबाद
५५. सेठ जगदीश प्रसाद सरायवाला, हैदराबाद
५६. सेठ रायबहादुरवाला रघुवीरसिंह, दिल्ली
५७. सेठ श्रीराम चैरिटेबल ट्रस्ट, दिल्ली

pdfelement
Remove Watermark Now

५८. सेठ जुगलकिशोर अग्रवाल, दिल्ली
५९. सेठ लक्ष्मीनारायण गाडोदिया ट्रस्ट, दिल्ली
६०. सेठ रामेश्वरदास गुप्ता धर्मार्थ ट्रस्ट, नई दिल्ली

सामाजिक क्षेत्र में अग्रवाल जाति ने समाज की अपूर्व सेवा की है। सन् १९२० ई० में अखिल भारतवर्षीय मारवाडी अग्रवाल जातीय कोष की बम्बई में स्थापना हुई और इससे समाज सुधार तथा सहायता कार्यों में सहायता मिली। अनेक छात्रों को छात्रवत्तियाँ दी गई।

सामाजिक सुधार कार्य

समाज सुधार के कार्यों के लिए सन् १९१८ में सेठ जमना लाल जी बजाज ने अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की स्थापना, वर्धा में की। हम इस महा सभा के अधिवेशनों की चर्चा अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा के इतिहास में करेंगे। यहाँ इतना ही लिखना पर्याप्त है कि इस महासभा ने भारी दबाव और विरोध के रहते हुए भी सन् १९२५ में अग्रवालों के पारस्परिक भेदभाव मिटाने के लिए समस्त अग्रवालों के साथ रोटी-बेटी का पारस्परिक व्यवहार का निर्णय लेकर क्रान्तिकारी परिवर्तन का श्रीगणेश किया। इस समाज सुधार के कार्यक्रम के फलस्वरूप देश में ५०० से अधिक अग्रवाल सभायें संगठित हो गई तथा इसके १४ प्रचारकों ने देशव्यापी चेतना उत्पन्न की, जिसके परिणामस्वरूप वर्मा सहित चौदह प्रान्तों में प्रान्तीय सभायें भी गठित हो गयीं।

सन् १९२६ में महिलाओं के लिए महासभा की सदस्यता खोलने तथा पर्दा प्रथा को समाप्त करने के लिए आवाज उठाई गई जिसके परिणाम स्वरूप महिलाओं के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ चुके हैं।

सन् १९२७ में सेठ केशव देव जी नेवटिया की अध्यक्षता में सर्वप्रथम विधवा विवाह का समर्थन किया गया और भारी विरोध के रहते हुए भी झरिया के सेठ नागरमल लील्हा का विवाह एक विधवा के साथ कराके समाज की रूढ़ीवादी परम्परा को तोडा गया। इसके पश्चात् महासभा के प्रत्येक मंच से विधवा विवाह का समर्थन किया जाता रहा।

समाज सुधार के इस आन्दोलन को समस्त अग्रवालों तक पहुँचाने के लिए सन् १९३० में "अखिल भारतवर्षीय मारवाडी अग्रवाल महासभा" का नाम बदल कर "अ० भा० अग्रवाल महा सभा" कर दिया गया और इस महा सभा के मुख पत्र "मारवाडी अग्रवाल" को नाम भी बदल कर "अग्रवाल" कर दिया गया। इस परिवर्तन के साथ ही देश भर में अग्रवालों में एक नई चेतना उत्पन्न हो गई। परिणाम स्वरूप सन् १९३१ में श्री बा० फकीरचन्द जी एडवोकेट, लाहौर निवासी को महा सभा का अध्यक्ष बनाया गया और देशभर के अग्रवालों ने कलकत्ता अधिवेशन में भाग लिया। इसी प्रचार के

फलस्वरूप आज दिन ९ से अधिक अखिल भारतीय स्तर की अग्रवाल महा सभायें अपने अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सेवा कार्य कर रही हैं और देश में ५०० से अधिक अग्रवाल सभायें समाज सुधार के कार्य में संलग्न हैं।

सम्वत् १९६४ वि० में अग्रोहा में महाराजा अग्रसेन जी की जयन्ती मनाने के लिए एक छोटी-सी सभा का आयोजन किया गया था। आज दिन भारत का ऐसा कोई नगर नहीं है जहाँ अग्रवाल जाति के पूर्वज महाराजा अग्रसेन की जयन्ती धूम धाम से न मनाई जाती हो। अब अग्रोहा पुनर्निर्माण का कार्य भी बड़ी तेजी से हो रहा है और सर्वत्र एक नवीन चेतना का उदय हुआ है।

राजनीतिक क्षेत्र में

बारहवीं शताब्दी में सबल केन्द्रीय शासन के अभाव में तथा आपसी फूट के कारण भारत देश पराधीन हो गया और १२०६ से १८५७ तक मुसलमानों का शासन इस देश में रहा। इस बीच में हिन्दुओं ने दासता से मुक्ति पाने के लिए कोई अवसर हाथ से जाने नहीं दिया। देश को स्वतन्त्र कराने के प्रयत्नों में अग्रवाल समाज के महापुरुषों ने अपना पूरा-पूरा योगदान दिया। भामाशाह का त्याग और हेमचन्दराय (हेमू वक्काल) की वीरता इतिहास के पन्नों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है और नानूमल दीवान जैसे अनेक कुशल प्रबन्धकों ने सराहनीय कार्य से देश को लाभान्वित किया।

सन् १८५७ में अँग्रेजों की दासता से मुक्ति हेतु स्वतन्त्रता संग्राम में अग्रवालों का उल्लेखनीय योगदान रहा। इस प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के कारण देहली के राजाराम गुडवाले को फाँसी पर लटकाया गया तथा हाँसी निवासी श्री हुकम चन्द जैन तथा उनके भतीजे फकीरचन्द जैन को फाँसी दी गई। श्री मा० अमीचन्द जी के बलिदान ने देहली का नाम ऊंचा किया। इसी प्रकार के अनगिनत बलिदानियों ने इस समाज का नाम ऊँचा किया, जिनके नाम अब उपलब्ध नहीं हैं।

सन् १८५७ के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के असफल होने के कारण कुछ समय के लिए देश में किंकर्तव्य विमूढ़ता छा गई। किन्तु स्वतन्त्र होने की इच्छा बलवती रही। वैश्य रत्न राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी के प्रयत्नों से एक नई चेतना का उदय हुआ और महात्मा गान्धी जी ने वर्धा को अपने असहयोग आन्दोलन का केन्द्र बनाया तथा सेठ जमना लाल जी बजाज ने इस आन्दोलन के प्रत्येक आर्थिक मोर्चे को संभाला। वे अपने साधनों से तो पूरी आर्थिक सहायता करते ही थे, अपने प्रभाव से अन्य सेठों से भी आर्थिक सहयोग दिलाते थे। उनकी उपयोगिता इसी बात से सिद्ध है कि वे आजीवन अ० भा० कांग्रेस कमेटी के कोषाध्यक्ष रहे।

अ० भा० कांग्रेस कमेटी के विदेश प्रचार तथा एसेम्बली में अपनी आवाज बुलन्द करने का कार्य पंजाब केसरी लाला लाजपत राय ने संभाला। वे देश में भी प्रभावशाली ढंग से अंग्रेजों के विरुद्ध आन्दोलन करते रहे और घोर यन्त्रणाएँ झेलीं।

pdfelement
Remove Watermark Now

एसेम्बली में श्री श्रीप्रकाश जी, सर सीता राम पण्डित, तथा श्री श्रीमन्नारायण जी, श्री रामेश्वर टांटिया, श्री सीताराम जी सेक्सरिया, श्री बसन्त लाल जी मुरारका, श्री कमल नयन बजाज, श्री ईश्वरदास जालान आदि ने मोर्चा संभाला।

सन् १९२० में अखिल भारतवर्षीय अग्रवाल महा सभा ने दक्षिण में हिन्दी प्रचार के लिए महात्मा गान्धी को ५०,०००/ पचास हजाह रुपये दिये और स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी दो कोड़ रुपये की सहायता दी।

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के आर्थिक मोर्चे को श्री सी० बी० गुप्त ने संभाला, यह भी बड़े गौरव की बात है। वे उत्तर प्रदेश के लौह पुरुष माने जाते थे।

इनके अतिरिक्त देश के अन्य दलों में भी अग्रवालों का योगदान सराहनीय रहा है। संशोपा में डा० राम मनोहर लोहिया, जन संघ में डा० रघुवीर, कम्युनिस्ट पर्टी में श्री रामानन्द जी अग्रवाल, तथा जनता पार्टी में मा० आदित्येन्द्र जी का नेतृत्व अपने-अपने दलों में विशेष स्थान रखता है।

इनके अतिरिक्त सक्रिय राजनीति को प्रभावित करने वाले निम्नाँकित अग्रवालों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—

पंजाब

सर गंगा राम सी० आई० ई०
राइट आनरेबुल सर शादी लाल

हरियाणा

श्रीमती ओम प्रभा जैन
बनारसी दास गुप्त

देहली

सेठ लक्ष्मी नारायण गाडौदिया
ला० देशबन्धु गुप्त
श्री प्यारे लाल ऐडवोकेट
मास्टर अमीचन्द

उत्तर प्रदेश

बा० शिव प्रसाद गुप्त सितारे हिन्द
श्री श्रीप्रकाश जी
श्री सर सीताराम पण्डित
ला० लक्ष्मी नारायण अग्रवाल वकील
श्री प्रयाग नारायण जी वकील
रायबहादुर अभिनन्दन प्रकाश जी रईस
श्री सी० बी० गुप्त,
श्री नवल किशोर जी भरथिया
रायबहादुर कन्हैयालाल जी खांजची
श्री विम्वम्भर नाथ
मेजर जनरल द्वारका प्रसाद गोयल

बंगाल

राजा भूपेन्द्र नारायण सिंह

राजस्थान

सर हरिराम जी गोयनका, के०सी०आई०
सर बद्री दास जी गोयनका सी०आई०ई०
रायबहादुर सेठ रामजीदास बाजोरिया
सेठ दौलत राम रामदेव चौखानी
रायबहादुर सेठ रामदेव चौखानी
सेठ चिमन लाल गनेडीवाल
सेठ जुहारमल खेमका
सेठ गोविन्द दास पित्ती
बा० देवी प्रसाद जी खेतान
सेठ सीताराम पोद्दार
सेठ केशव देव नेवटिया
श्री राम लाल खेमका
श्री पद्मराज जैन
बा० प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका
श्री बसन्त लाल मुरारका
सेठ रामकुमार झूंझुनूवाला
सेठ जगन्नाथ झूंझुनूवाला
सेठ बल्लभ नारायण दानी
चिरंजी लाल गोयनका
सेठ लक्ष्मी नारायण मुरेरिया
सेठ हरीकृष्ण झांझरिया
श्री घनश्याम दास जगनानी
श्री बंशीधर गोयनका
श्री शिव प्रसाद जी सराफ
सेठ रंग लाल जाजोदिया
सेठ जमना दास अडूकिया
बा० दीपचन्द पोद्दार
बा० बैजनाथ केडिया
बा० मोती लाल चांदगोठिया
बा० रामेश्वर केजडीवाल
बा० मोती लाल केजडीवाल

म० प्र०

श्री रामजी दास वैश्य
सेठ गोबिन्ददास

इसी प्रकार हजारों अन्य देशभक्त अग्रवालों ने देश को स्वतन्त्र कराने में अपना-अपना योग दिया जिन्हें आज कोई जानता नहीं और वे इस देश के निर्माण में नींव की ईंट बन कर दृष्टि से ओझल हो गए हैं।

राजस्थान के ऐसे अनेकों स्वतन्त्रता सेनानी हैं जो देश को स्वतन्त्र कराने हेतु जेलों की यातनायें झेलते रहे। इनमें से कुछ के नाम अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के मुख पत्र "मारवाडी अग्रवाल" मासिक पत्रिका में यत्र-तत्र उपलब्ध हैं—

सेठ जमना लाल बजाज
सेठ गोविन्द राम मालपाणी
श्रीमती पार्वती देवी
श्रीमती इन्दुमती गोयनका
श्रीमती भगवान देवी सेक्सरिया
श्री पद्मराज जैन
श्री राम कुमार जी भुवालका
श्री बैजनाथ केडिया
श्री सीता राम सेक्सरिया
श्री वसन्त लाल मुरारका
श्री हीरा लाल लोहिया
श्री मुरलीधर गर्ग
श्री मांगी लाल गाडौदिया

pdfelement
Remove Watermark Now

साहित्यिक क्षेत्र में योगदान करने वाले कुछ विशिष्ट अग्रवालों के नाम

श्री भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र
श्री जगन्नाथ प्रसाद रत्नाकर
श्री बालमुकुन्द गुप्त
श्री हनुमान प्रसाद जी गोयनका
श्री जय दयाल जी गोयन्दका
श्री वृन्दावन दास,
श्री वासुदेव शरण अग्रवाल
डा० श्री शशि भूषण सिंहल, रोहतक
श्री बाबू गुलाब राय
श्री कन्हैया लाल पोद्दार
डा० सत्यकेतु विद्यालंकार
श्री रामकृष्ण दास
श्री श्रीगोपाल नेवटिया
श्रीमती दिनेश नन्दिनी डालमिया
श्री श्याम लाल पार्षद
श्री विष्णु प्रभाकर, देहली

साहित्य प्रकाशक अग्रवाल संस्थान

सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास
गीता प्रेस
सस्ता साहित्य मंडल
ज्ञानपीठ प्रकाशन
वृज साहित्य मंडल

प्रमुख अग्रवाल पत्रकार जिन्हें पत्रकार जगत में पितामह माना जाता है :—

सितारे हिन्द राजा शिव प्रसाद
श्री बालमुकुन्द गुप्त
श्री मूलचन्द अग्रवाल

विविध क्षेत्रों में विख्यात अग्रवाल

विज्ञान क्षेत्र में—डा० आत्माराम जी
हरित कान्ति के क्षेत्र में—डा० ललित प्रसाद अग्रवाल
इंजीनियरिंग क्षेत्र में—सर गंगाराम, राजा ज्वाला प्रसाद, रा० ला० प्रयाग दत्त मेरठ,
पुरातत्व क्षेत्र में—डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, डा० परमेश्वरी लाल जी गुप्त
कला क्षेत्र में—श्री राय कृष्ण दास जी
विधि क्षेत्र में—श्री शशिभूषण अग्रवाल, श्री वी० पी० चौधरी, देहली
न्यायमूर्ति—श्री नन्दलाल जी उटवालिया, उच्चतम न्यायालय,
श्री हरिलाल अग्रवाल, उच्च न्यायालय पटना
एलोपैथिक चिकित्सा शोध (R.N.A.) क्षेत्र में—डा० रामप्रताप सिंहल (केनेडा में)
आयुर्वेद विज्ञान में—श्री सालिगराम जी निघंटुकार
" " अपतन्त्रक रोग के शोध कार्य में—डा० उषा गौतम, शाहदरा,
" " मौलिकि सिद्धान्त में—डा० ज्योतिर्मित्र, बनारस,
कुरान के उद्भट् विद्वान्—मुंशी इन्द्रमणि जी, मुरादाबाद।

इस प्रकार प्रायः सभी क्षेत्रों में अग्रवालों का योगदान सराहनीय रहा है और वे देश निर्माण की परम्परा को निभा रहे हैं।

समाज सेवा में संलग्न अग्रवाल संगठन

(१) अखिल भारतवर्षीय वैश्य महासभा, मेरठ

स्थापना

अ० भा० वैश्य महासभा, मेरठ की स्थापना सन् १८९२ ई० में हुई।

उद्देश्य—१. जाति में सामाजिक क्रांति लाना।
२. संगठन कर भ्रातृ स्नेह बढ़ाना।
३. जाति की आर्थिक दशा सुधारने का प्रयत्न करना।
४. जाति में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

सभा के स्थापना काल में समाज की हालत

इस सभा का जन्म ऐसे समय में हुआ जबकि देश में अज्ञान तथा अविद्या के कारण जाति में अनेक बुराइयाँ फैली हुई थीं, अन्य लोग, वैश्यों को बनिया, बक्काल कहकर पुकारते थे, लड़के-लड़कियों के विवाह छोटी-छोटी आयु में कर दिये जाते थे। अतः १८९२ ई० में सर्वप्रथम प्रस्ताव द्वारा लड़के की विवाह आयु १५ वर्ष और लड़की के लिए कम-से-कम आयु ११ वर्ष कर दी गई और यह प्रस्ताव १८९६ तक लगातार दुहराया गया। १८९६ ई० में विवाह योग्य लड़कों की आयु १६ वर्ष तथा लड़की की आयु १४ वर्ष की गई।

हिन्दी प्रचार

१. सन् १८९६ में सभा ने अपने अजमेर अधिवेशन में प्रस्ताव पास करके ज
को हिन्दी तथा संस्कृत के प्रयोग की ओर प्रेरित किया क्योंकि उस समय सभी अ
कामकाज में उर्दू का प्रयोग करते थे।

२. माता-पिता को प्रेरणा दी गई कि वे अपने बच्चों को अंग्रेजी के साथ हि
और संस्कृत की शिक्षा दिलायें।

pdfelement
Remove Watermark Now

३. हिन्दी-संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी गईं।

४. हिन्दी में पुस्तकें लिखने वाले लेखकों को पारितोषिक दिये गये।

स्त्री शिक्षा का कार्य

१. लड़कियों को शिक्षा दिलाने की प्रेरणा दी गई।

२. अध्यापिकाओं की कमी दूर करने के लिए लड़कियों को स्कूल में पढ़ाने की प्रेरणा दी गई और उन्हें छात्रवृत्तियाँ दी गईं।

कला-कौशल की उन्नति

वैश्य भाइयों को कला-कौशल की उन्नति के लिए व्यापारिक कम्पनियाँ तथा कारखाने खोलने के लिए प्रोत्साहन दिया गया। शिल्प प्रदर्शनियों के आयोजन किए गए। औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए लड़कों को छात्रवृत्तियाँ और कर्ज दिये गये।

समाज सुधार

विवाह पर फिजूल खर्ची रोकने के लिए तथा वेश्या नाच, बाग बहारी, आतिशबाजी, बूटे बखेरी आदि घृणित प्रथाओं को बन्द करने के प्रस्ताव पास किये गये। मृत्यु के समय लम्बा स्यापा, बिरादरी भोज, क्रियाकर्म के समय व्यर्थ सामान-सज्जा देने पर प्रतिबन्ध लगाया गया।

समस्त वैश्यों में प्रीति भाव बढ़ाने के लिए वैश्यमात्र में विवाह सम्बन्ध तथा खान-पान प्रचलित करने पर जोर दिया गया।

जनगणना में

सन् १९०१ से पहले प्रथम जन गणना के समय वैश्यों के लिए बनिया-बक्काल शब्द का प्रयोग किया गया था। इस पर सभा ने सरकार से विरोध प्रदर्शित किया और अन्त में सरकार ने 'वैश्य' शब्द स्वीकार कर लिया।

दहेज प्रथा निवारण

जाति में बढ़ती हुई दहेज की बुराई दूर करने के लिए १९३३ ई० में एक प्रस्ताव द्वारा लड़के-लड़कियों के विवाह पर किसी प्रकार का नकद या दहेज के ठहर-ठहराव को दूर करने का प्रयत्न किया गया। दहेज प्रथा को दूर करने के लिए 'दस्तूरे अमल' तैयार कराया गया।

२. विवाह योग्य लड़के-लड़कियों की सूची तैयार करके अपने "वैश्यहितैषी" पत्र में छापनी आरम्भ की जिससे वैश्य भाइयों को वर कन्या की खोज में सुविधा होने लगी।

स्थायी संस्थाएँ

सभा ने मेरठ में सन् १८९८ में वैश्य अनाथालय की स्थापन की थी। स्व० आनरेबिल रा० ब० सा० रामानुजदयाल जी ने १ लाख रुपये मूल्य की ८ एकड़ भूमि अनाथालय को दान देकर संस्था को जीवन दान दिया। इस भूमि पर २०० अनाथ बालक-बालिकाओं के लिए पृथक्-पृथक् विशाल भवनों का निर्माण कराया गया और शेष भाग किराये पर दिया हुआ है।

बिना भेदभाव के इस अनाथालय में बालक-बालिकाओं का पालन-पोषण होता है। संस्था का दर्जी खाना, बढ़ई खाना तथा बेंड सर्वत्र प्रसिद्ध है। अनाथालय की आय व्यय ६०००० रुपये वार्षिक से अधिक है।

वैश्य बोर्डिंग हाउस, आगरा

आगरा में वैश्य बोर्डिंग हाउस की स्थापना स्वर्गीय रा० ब० लाला बैजनाथ जी तथा स्व० बाबू प्रयाग नारायण जी अग्रवाल, आगरा-निवासी के प्रयासों से हुई। साहु पत्नी लाला गंगाप्रताप ने अपनी कोठी बोर्डिंग हाउस के लिए दान में दे दी। इसमें ३४ कमरे हैं और ५२ छात्रों के निवास का प्रबन्ध है। यह छात्रावास आगरा विश्वविद्यालय से सम्बन्धित है। इसका प्रबन्ध १० सदस्यों की एक समिति के हाथ में है जिसमें ५ प्रतिनिधि अ० भा० वैश्य महासभा के हैं।

३. ललित संस्कृत आदर्श महाविद्यालय, बीसलपुर की स्थापना सन् १९०० ई० में श्री लालताप्रसाद जी गुप्त, श्री जगन्नाथ जी अग्रवाल बीसलपुर निवासी ने सभा के प्रबन्ध में की थी। इसमें शास्त्रों, व्याकरण तथा साहित्य की परीक्षाओं की पढ़ाई की व्यवस्था है। सरकार से विद्यालय को मासिक सहायता मिलती है।

इस विद्यालय का उद्देश्य संस्कृत, निबन्ध, श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास, व्याकरण, साहित्य, दर्शन, ज्योतिष आदि का प्रसार करना है। विद्यालय में हिन्दी अनिवार्य विषय है और अंग्रेजी का भी ज्ञान कराया जाता है। इस विद्यालय का प्रबन्ध अ० भा० वैश्य महासभा, मेरठ की संरक्षणता में स्थानीय ६ व्यक्तियों की प्रबन्ध समिति के हाथ में रहा है।

वैश्य इण्टर कालेज, मेरठ

यह नगर की सबसे पुरानी संस्थाओं में से है। इसकी स्थापना सन् १८९८ ई० में 'वैश्य नाइट स्कूल' के रूप में हुई थी। सन् १९१६ ई० में यह हाईस्कूल बन गया और सरकार द्वारा मान्यता मिल गई। सन् १९५० ई० में यह स्कूल इण्टर कालेज में बदल गया। अब इसमें कक्षा ५ से कक्षा १२ तक शिक्षा दी जाती है। अन्य विषयों के अतिरिक्त सैनिक शिक्षा और कृषि विज्ञान की शिक्षा इस कालेज की विशेषतायें हैं। आजकल इसे एक सेठ जी को सौंप दिया गया है।

pdfelement
Remove Watermark Now

अ० भा० वैश्य महासभा मेरठ के वार्षिकोत्सवों की एक झलक

सं०	सन्	स्थान अधिवेशन	नाम तथा स्थान अध्यक्ष	नाम तथा स्थान स्वागताध्यक्ष
१.	१८९२	मेरठ	श्री ला० दुर्गाप्रसाद जी रईस, फर्रुखाबाद	श्री रा० ब० ला० कृष्णसहायजी रईस, मेरठ
२.	१८९३	लाहौर	,, रा० ब० गंगारामजी सी. आई. ई., लाहौर	रा. ब. ला० गंगारामजी सी. आई. ई., लाहौर
३.	१८९४	सहारनपुर	श्री रा० ब० ला० निहालचन्द जी रईस, मु० नगर	ला० निहालचन्द जी रईस, सहारनपुर
४.	१८९५	मथुरा	आनरेबुल सेठ लक्ष्मणदासजी C. I. E., मथुरा	ऑ० सेठ लक्ष्मणदास जी सी. आई. ई., मथुरा
५.	१८९६	अजमेर	रा० ब० सेठ सुमेरमलजी रईस, अजमेर	सेठ नेमीचन्द जी रईस, अजमेर
६.	१८९७	मेरठ	रा० ब० ला० निहालचन्द जी रईस, मु० नगर	रा० ब० ला० कृष्णसहाय जी रईस, मेरठ
७.	१८९८	देहली	रा० ब० ला० श्री कृष्णदासजी रईस, देहली	रा० ब० ला० गिरधारीलालजी रईस, देहली
८.	१८९९	बरेली	साहू रामरतनदासजी रईस, ठाकुर द्वारा	रा० ब० ला० सोहनलाल जी रईस, देहली
९.	१९००	अलीगढ़	रा० ब० सेठ नत्थीमल जी रईस, खुर्जा	ला० लोकमन दास जी रईस, अलीगढ़
१०.	१९०१	कानपुर	रा० सा० ला० गिरधारीलालजी रईस, देहली	रा० ब० ला० विशम्भरनाथ रईस, कानपुर
११.	१९०३	आगरा	रा० बा० ला० निहालचन्द जो रईस, मु० नगर	ला० श्याम लाल जी रईस, आगरा

pdfelement

१२.	१९०५	बनारस	रा० ब० बा० श्यामलाल जी दीवान किशनगढ़	बा० बालेश्वर प्रसाद जी रईस, बनारस
१३.	१९०६	मुजफ्फरनगर	रा० सा० ला० केदार नाथ जी जज, झंग	रा० ब० ला० निहालचन्द जी रईस, मु० नगर
१४.	१९०७	अम्बाला	ला० चन्दू लाल जी रईस, हिसार	रा० ब० ला० जगदीशप्रसाद जी रईस, मेरठ
१५.	१९०८	मेरठ	रा० सा० ला० मुरलीधर जी वकील, अम्बाला	ला० रामचन्द्र स्वरूप जी रईस, मेरठ
१६.	१९०९	हिसार	रा० बा० ला० कन्हैयालाल जी रईस, कानपुर	ला० चन्दू लाल जी रईस, हिसार
१७.	१९१०	मुरादाबाद	ला० रामचन्द्रस्वरूप जी रईस, मेरठ	साहू ब्रजपालशरण रईस, मुरादाबाद
१८.	१९११	इलाहाबाद	ऑ० ला० सुखबीर सिंह जी रईस, मु० नगर	रा० ब० ला० प्रयाग दास जी जज, इलाहाबाद
१९.	१९१२	फैजाबाद	रा० ला० कन्हैयालालजी इंजीनियर, देहली	साहू धनीराम जी तालुकेदार, फैजाबाद
२०.	१९१३	कलकत्ता	ला० बलदेव सिंह जी रईस, देहरादून	ला० धनुलाल जी रईस, कलकत्ता
२१.	१९१४	दरभंगा	श्री रा० ला० द्वारिका प्रसाद इंजीनियर, नहटौर	श्री साहू झुन्नालाल जी रईस, दरभंगा
२२.	१९१५	देहरादून	आन० राय ला० विशम्भरनाथ जी, कानपुर	आ० बलदेवसिंह जी रईस, देहरादून
२३.	१९१६	देहली	आन० राजा मोतीचन्द जी C. I. E.	ला० प्यारे लाल रईस, देहली
२४.	१९१७	इटावा	राय० ला० ज्वालाप्रसादजी इंजीनियर, अलवर	ला० जयनारायण जी रईस, इटावा
२५.	१९१८	देहली	रा० ब० ला० श्यामसुन्दर लाल जी, अलवर	रा० सा० ला० श्रीरामजी बैरिस्टर, देहली
२६.	१९१९	बुलन्दशहर	रा० सा० चौधरी वृजलाल जी एकाउंटेंट जनरल	कृष्णदयाल जी वकील, बुलन्दशहर
२७.	१९२०	अलवर	आ० ला० सुखबीरसिंह जी रईस, मुजफ्फरनगर	रा० ब० श्याम सुन्दर लाल रईस, अलवर
२८.	१९२१	आजमगढ़	रा० ब० ला० केदारनाथ जी रि० जज, देहली	बा० हर्ष चन्द्र जी रईस, आजमगढ़

Remove Watermark Now

२९.	१९२३	कोटा	बा० मोतीलाल जी M. A. L. L. B. इन्दौर	सेठ रामेश्वरप्रसाद जी झुंझुनवाला, रईस कोटा
३०.	१९२४	बरेली	रा० सा० बा० हरविलास जी शारदा जज, अजमेर	रा० ब० साहू श्याम सुन्दरलाल जी रईस, बरेली
३१.	१९३३	अलीगढ़	राजा ज्वालाप्रसाद जी चीफ इंजीनियर, बिजनौर	रा० ब० सेठ चिरंजीलाल जी बागला चैयरमैन म्यू० बोर्ड, हाथरस
३३.	१९३४	मुजफ्फरनगर	सेठ पद्म राज जैन, कलकत्ता	रा० बा० ला० जगदीश प्रसाद जी रईस, मु० नगर
३३.	१९३५	जयपुर	आ० रा० ब० ला० जगदीशप्रसाद रईस, मु० नगर	मु० प्यारेलालजी पूर्वमेम्बर कौंसिल, जयपुर
३४.	१९३७	देहली	आ० रा० ब० गोबिन्दलाल जी पित्ती मेम्बर कौन्सिल आफ स्टेट, बम्बई	सर सेठ श्रीराम जी रईस, मिल्स आनर, देहली
३५.	१९३८	हरिद्वार	सर पद्मपति जी सिंहानिया, कानपुर	रा० सा० ला० मथुरादासजी रईस, रुड़की
३६.	१९४१	सीतापुर	ऑन० राजा भूपेन्द्रनारायण सिंह जी, कलकत्ता	ला० ईश्वरदास जी वार्ष्णेय, मालिक यू० पी० ग्लास वर्क्स, बहजोई
३७.	१९४४	मेरठ	रा० बा० कैप्टन हीरालाल जी रईस, इन्दौर	रा० बा० सेठ गूजरमल जी मोदी, मोदीनगर मिल ऑनर, मोदीनगर
३८.	१९५६ से १९६६ तक	कानपुर	रा० बा० सेठ गूजरमल जी मोदी, मोदीनगर	श्री शीतलप्रसादजी, अग्रवाल डाइरेक्टर जे० के० कॉटन मिल्स, कानपुर

pdfelement

अ० भा० वैश्य महासभा, मेरठ के मन्त्री तथा उपमन्त्री

१८९२ से १९७६ तक

मुख्य सचिव		सहायक सचिव	
१८९२ से १८९३	श्री बा० गंगाशरण जी रईस जज, हापुड़	१८९२	ला० जयन्तीप्रसाद जी रईस, मेरठ
१८९४ से १९१४	रा० ब० ला० बैजनाथ जी जज, देहली	१८९३ से १८९४	ला० बद्रीप्रसाद जी वकील, फतेहगढ़
१९११ से १९२०	रा० सा० ला० केदारदाथ जी जज, देहली	१८९५ में	ला० ज्योतिप्रसाद जी रईस, जगाधरी
१९२१ से १९२३	रा. ब. ला. श्यामसुन्दरलाल जी रईस, अलवर	१८९६ से १९११	रा. ब. ला. रामानुज दयाल जी रईस, मेरठ
१९२४ से १९२८	ऑ. डा. सर सीताराम जी रईस, मेरठ	१९१२ से १९२२	ऑ. डा. सर सीताराम जी रईस, मेरठ
१९२९ में	रा० ला० प्रयागदत्त जी इन्जीनियर, मेरठ	१९२३ से १९२८	ला० शिवचरण दास जौ मेरठ
१९३० से १९३१	रा. ब. ला. गंगाराम जी रईस, अम्बाला	१९२९ से १९३३	बा. मंशीलाल जी ऐडवोकेट, मेरठ
१९३२ में	राजा ज्वाला प्रसाद जी बिजनौर		
१९३३ से १९४०	रा. ब. ला. आनन्दस्वरूप जी, मु० नगर	१९३३ से १९७६	श्री परशुराम जी, मेरठ
		१९३७ में	श्री रघुवरदयालुजी ऐडवोकेट, मेरठ
			मिश्रीलाल जी, अलीगढ़
१९४१ से १९५० तक	रा० ब० ला० जगदीश प्रसादजी रईस,	१९३८ से १९५०	सेठ रामेश्वरप्रसाद जी, मेरठ
१९६७ से १९७६	रा० व० कु० जगदीशप्रसाद रईस	१९६७ से १९७६	श्री डा० सुरेशचन्द्रजी अग्रवाल, मेरठ
			श्री गंगास्वरूप गुप्त, मेरठ

Remove Watermark Now

वैश्यों की प्रमुख शाखाएँ

(इन्हें एक मंच पर लाना समय की पुकार है)

□

१. मारवाड़ी अग्रवाल	२. देश वासिया (बीसा अग्रवाल)	३. महेमिये अग्रवाल
४. गुजराती अग्रवाल	५. मथुरिया अग्रवाल	६. मागधी अग्रवाल
७. मालवीय अग्रवाल	८. अवधी अग्रवाल	९. कन्नौजिया अग्रवाल
१०. दिलवालिया अग्रवाल	११. ढूसर अग्रवाल	१२. लोहिया अग्रवाल
१३. गिदौड़िया अग्रवाल	१४. कदीमी वैश्य अग्रवाल	१५. दस्सा अग्रवाल
१६. पंजा अग्रवाल	१७. ढइया अग्रवाल	१८. गुडाकू अग्रवाल
१९. बहत्तरिया अग्रवाल	२०. राजवंशी अग्रवाल	२१. निचौधिया अग्रवाल (मोदी अग्रवाल)
२२. जैन अग्रवाल	२३. सिख अग्रवाल	२४. अग्रहारी
२५. गहोई	२६. केसर वानी	२७. माथुर वैश्य
२८. महावर	२९. माहौरे (माहौर)	३०. शिवहरे
३१. गुलहरे	३२. जायसवाल	३३. चूरूवाल
३४. वर्णवाल	३५. खण्डेलवाल	३६. ओसवाल
३७. पुरवाल	३८. पदमावती	३९. पल्लीवाल
४०. टोकेवाल	४१. गोलवाल	४२. गोयलवाल
४३. मीरत वाल	४४. कोल वार	४५. हलवाई वैश्य (यज्ञ सेनी)
४६. मगेड़वाल	४७. महेश्वरी	४८. ढाके महेश्वरी
४९. पोकरे महेश्वरी	५०. डीडो महेश्वरी	५१. रस्तोगी (रौहतगी रुस्तगी)
५२. वाष्णेय (बारह सैनी)	५३. चतुर्श्रेणी (चौसेनी)	५४. गांधारिया
५५. झाकड़े	५६. नीमे	५७. कठूरा
५८. नागर	५९. कुमारतन	६०. वाथम
६१. ओमर (ऊमर)	६२. अयोध्यावासी	६३. सम्मानीय
६४. मध्यदेशीय	६५. रोनियर	६६. हरिद्वारी
६७. चेट्टी	६८. दौसर	६९. शाह
७०. बनौधिया वैश्य।	७१. आर्य वैश्य	७२. श्रीवाल
७३. माहुरी	७४. मोरचतुर्वेदी	७५. नरसिंह पुरी जैन

(२) अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा (पंजीकृत)

स्थापना—देशभक्त श्रेष्ठी जमनालाल बजाज ने देश में अन्य संगठनों के समान १९१८ में वर्धा में अखिल भारतयर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा की नींव डाली।

प्रथम अधिवेशन (सन् १९१९) स्थान वर्धा

इसका प्रथम अधिवेशन वर्धा में सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास जी की प्रधानता में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में मारवाड़ी अग्रवाल समाज को एक सूत्र में बांधने का प्रयत्न किया गया।

द्वितीय अधिवेशन (सन् १९२०) स्थान बम्बई

इस महासभा का दूसरा अधिवेशन सन् १९२० (सं० १९७८ वि०) में बम्बई में सेठ श्री रामलाल जी गनेरीवाल के सभापतित्व में हुआ। इस अधिवेशन में महात्मा गांधी भी पधारे थे और उनकी अपील पर मारवाड़ी अग्रवाल महासभा द्वारा हिन्दी प्रचार के लिए ५० हजार रुपये की थैली भेंट की गई थी। इस अधिवेशन में ९ लाख रुपये से मारवाड़ी अग्रवाल जातीय-कोष की स्थापना की गई। इसी जातीय-कोष से शिक्षा प्रसार में बड़ा महत्वपूर्ण कार्य हुआ है। इसी राशि से माटुंगा बम्बई में एक अग्रवाल नगर का निर्माण किया गया जहां सैंकड़ों अग्रवाल भाई सस्ते किराये पर संगठित रूप से रहते हैं। इस जातीय कोष ने सन् १९२३ से कार्य आरम्भ कर दिया था।

तीसरा अधिवेशन (सन् १९२१) स्थान कलकत्ता

इस महासभा का तीसरा अधिवेशन १९२१ (सं १९७८ वि०) में जयपुर नगर के सेठ नवरंग राय जी खेतान की अध्यक्षता में हुआ। इस अधिवेशन में महासभा ने, अग्रवाल समाज से सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेने की अपील की और "मारवाड़ी अग्रवाल" पत्रिका निकाली गई। इस पत्रिका का प्रथम अंक मारवाड़ी अग्रवाल नाम से सन् १९२१ में निकला। पत्रिका के $\frac{२० \times ३०}{८}$ के ४० पृष्ठ थे और वह श्री परमेश्वरी सहाय जी अग्रवाल बी० ए० एल० एल० बी० के संपादन में आगरा से निकलता रहा। इसका वार्षिक शुल्क २) था। वह पत्रिका १९३० ई० तक चलती रही और उसके कुल ९५ अंक प्रकाशित हुये। सन् १९३० में इस पत्रिका के १४०० सदस्य थे। अब इसका वार्षिक शुल्क ३ रु० कर दिया गया था।

सन् १९३० के माघ मास से इस पत्रिका का नाम महासभा के निश्चयानुसार

pdfelement
Remove Watermark Now

"अग्रवाल" कर दिया गया और इसका प्रकाशन १६० हरीसन रोड, कलकत्ता से श्री मोतीलाल जी लाठ के सम्पादन में होने लगा। तब इसका वार्षिक शुल्क ४ रुपये कर दिया गया था।

सन् १९२१ के कलकत्ता अधिवेशन के लिये स्वागत समिति की ओर से ५०००० अपीलें, बीस हजार निमन्त्रण पत्र, २५००० द्वितीय अधिवेशन द्वारा पारित प्रस्ताव देश के कोने-कोने पर भेजे गये। इससे उस समय होने वाले अधिवेशनों की विशालता का अनुमान सहज ही लग जाता है।

चौथा अधिवेशन (सन् १९२२) स्थान इन्दौर

महासभा का चौथा अधिवेशन २९-३०-३१ मार्च सन् १९२२ में इन्दौर नगर में अमलनेर के श्री प्रताप जी सेठ की अध्यक्षता में हुआ। इस अधिवेशन में महासभा की शाखायें और प्रान्तीय सभायें संगठित करने का निश्चय किया गया। इस अधिवेशन में श्री रामसरन चन्द जी मित्तल (वर्तमान हरियाणा राज्य के भूतपूर्व वित्त मन्त्री) ने स्वयंसेवक के रूप में भाग लिया था और इनका इस महासभा के साथ १९३६ तक सम्बन्ध रहा। श्री हजारी लाल जी जैन इस अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष थे और तत्कालीन इन्दौर राज्य के लीगल रिमेंम्बरेंसर श्री जौहरी लाल जी मित्तल स्वयंसेवकों का प्रबन्ध देखते थे। इस अधिवेशन में तत्कालीन इन्दौर नरेश तुकोजी राव भी पधारे थे। इस अधिवेशन में इन्दौर के रायबहादुर सर सेठ हुकमचन्द जी ने भाषण दिया था उस समय उनके भाषण को इतना महत्व दिया गया था कि सेठ जमनालाल जी बजाज ने इसे श्री गणेश शंकर विद्यार्थी कानपुर के सुप्रसिद्ध पत्र में प्रकाशित कराया था। इस भाषण को तार से कानपुर भेजा गया था जिसे डाकघर तक लेजाने का कार्य, स्वयंसेवक के रूप में, श्री रामसरन चन्द जी मित्तल ने किया था।

पांचवां अधिवेशन (सन् १९२३) स्थान झरिया

महासभा का पांचवां अधिवेशन सन् १९२३ में झरिया नगर में भिवानी के सेठ मेलाराम जी वैश्य के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में अग्रवाल विधवाश्रम की स्थापना तथा अग्रवाल जाति के इतिहास को तैयार करने पर अधिक बल दिया गया। इसी अधिवेशन में एक प्रतिज्ञा पत्र पर अग्रवाल बन्धुओं से हस्ताक्षर कराये गये थे जिसमें प्रतिज्ञा ली गई थी कि १२ वर्ष से कम आयु की कन्या और १६ वर्ष से कम आयु के लड़के के विवाह में भाग न लिया जायेगा। इससे कम आयु की कन्या और लड़कों का विवाह न करने की भी प्रतिज्ञा कराई गई।

झरिया अधिवेशन तक इस महासभा की देश-भर में १५५ अग्रवाल सभायें गठित हो चुकी थीं तथा पंजाब, संयुक्त प्रान्त, विहार, उड़ीसा, बंगाल, आसाम, मध्य-भारत, राजस्थान, मध्यप्रदेश, बरार आदि राज्यों की प्रान्तीय सभायें भी संगठित हो चुकी थी। प्रचार कार्यार्थ महासभा की ओर से तीन सुयोग्य ब्राह्मण प्रचारक महासभा का प्रचार कार्य करते थे।

छठा अधिवेशन (सन् १९२४) स्थान कानपुर

इस सभा का छठा अधिवेशन सन् १९२४ में कानपुर में बम्बई के समाजसेवी सेठ आनन्दीलाल जी पोद्दार की अध्यक्षता में हुआ।

इस अधिवेशन में व्यापार तथा अर्थनीति की ओर विशेष ध्यान दिया गया।

सातवां अधिवेशन (सन् १९२५) स्थान फतहपुर

महासभा का सातवां अधिवेशन सन १९२५ में फतहपुर (जयपुर) में बम्बई के सेठ शिवनारायण जी नेमानी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में भिन्न भिन्न अग्रवालों में परस्पर रोटी-बेटी के सम्बन्ध स्थापित करने सम्बन्धी एक विशेष महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित हुआ।

इस समय तक देश १४ प्रान्तों (वर्मा सहित) में ३१० अग्रवाल सभायें और १४ प्रान्तीय अग्रवाल सभायें विधिवत कार्य करने लगी थी और १४ विद्वान प्रचारक देश भर में प्रचार करते थे। प्रान्तीय सम्मेलनों में दो हजार से सात हजार तक उपस्थिति होती थी।

आठवाँ अधिवेशन (सन् १९२६) स्थान दिल्ली

आठवाँ अधिवेशन सन् १९२६ में दिल्ली नगर में सेठ जमनालाल बजाज के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में पहली बार अग्रवाल महिलाओं को प्रतिनिधि बनने का अधिकार दिया गया।

नवाँ अधिवेशन (सन् १९२७) स्थान कलकत्ता

इस महाभमा का नवाँ अधिवेशन सन् १९२७ में कलकत्ता नगर में बम्बई के सेठ केशव देव जी नेवटिया के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन के सभापति पद से भाषण करते हुए श्री नेवटिया जी ने विधवा विवाह का समर्थन किया। अतः इस प्रश्न पर महासभा में एक संघर्ष आरम्भ हो गया। प्रधान जी से अपने भाषण में से विधवा विवाह का समर्थन सम्बन्धी अंश निकालने की माँग की गई किन्तु सभापति अपने भाषण पर दृढ़ रहे। यतः कलकत्ता में उस समय कोलवार आन्दोलन के कारण वातावरण विषाक्त हो गया था अतः महासभा के इस अधिवेशन में विधवा विवाह के विरोध में प्रस्ताव पास हो गया। इसी अधिवेशन से महासभा में दल बन्दी का श्रीगणेश हुआ और महासभा की नाव एक तूफान में जा पड़ी।

किन्तु कलकत्ता में मारवाड़ी नव युवकों ने जोर पकड़ा और झरिया के श्री नागर मल लील्हा का विवाह एक विधवा के साथ करा दिया। इस विवाह से मारवाड़ी समाज दो दलों में विभक्त हो गया—(१) सुधारवादी नव युवकों का दल (२) पुराने विचारों के मारवाड़ी (जिसे सुधारवादी चपकनिया पार्टी कहते थे) सुधारवादी मारवाड़ी नवयुवकों ने महासभा के सुधारवादी आन्दोलन को आगे बढ़ाने का भरसक प्रयत्न किया।

pdfelement
Remove Watermark Now

दसवाँ अधिवेशन (सन् १९२८) स्थान बम्बई

महासभा का १०वाँ अधिवेशन सन् १९२८ में बम्बई नगर में हुआ। इस अधिवेशन के लिए सेठ हनुमान प्रसाद पोद्दार सभापति निर्वाचित हुए थे किन्तु महासभा में दलबन्दी के कारण उन्होंने सभापति का आसन ग्रहण करने से इन्कार कर दिया अतः उनके स्थान पर कलकत्ता के सेठ रंगीलाल जी जाजोरिया को अध्यक्ष बनाया गया और उन्होंने बिगड़ती परिस्थिति को सुधारा। पुराने विचार के मारवाड़ी अग्रवालों ने महासभा में अपनी विचारधारा चलती न देख कर अपना संगठन अलग बना लिया जिसका नाम "अग्रवाल महा पंचायत" रखा गया। इस अग्रवाल महा पंचायत का अधिवेशन बम्बई में मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के कक्ष में अधिवेशन के साथ बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस प्रकार मारवाड़ी अग्रवाल महासभा तथा अग्रवाल महा पंचायत नामक पृथक्-पृथक् दो संगठन बन गये।

ग्यारहवाँ अधिवेशन(सन् १९२९) स्थान अजमेर

महासभा का ग्यारहवाँ अधिवेशन सन् १९२९ में अजमेर नगर में बम्बई के राजा बहादुर सेठ गोबिन्द दास जी पित्ती की अध्यक्षता में हुआ और इस अधिवेशन में सभा ने स्पष्ट शब्दों में विधवा विवाह का समर्थन किया।

बारहवाँ अधिवेशन (सन् १९३०) स्थान उज्जैन

महासभा का बारहवाँ अधिवेशन सन् १९३० में उज्जैन नगर में श्री बा० देवीप्रसाद जी खेतान की अध्यक्षता में हुआ। इस अधिवेशन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि अ० भा० मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का नाम अ० भा० अग्रवाल महासभा कर दिया और "मारवाड़ी" शब्द निकाल कर इस सभा का द्वार अग्रवाल मात्र के लिए खोल दिया गया। साथ ही "मारवाडी अग्रवाल" पत्रिका नाम "अग्रवाल" कर दिया गया।

तेरहवाँ अधिवेशन (सन् १९३१) स्थान कलकत्ता

अ० भा० अग्रवाल महासभा का तेरहवाँ अधिवेशन कलकत्ता में लाहौर के श्री ला० फकीरचन्द जी एडवोकेट की अध्यक्षता में हुआ और पहली बार देशवासी अग्रवालों ने भी इस अधिवेशन में भाग लिया।

चौदहवाँ अधिवेशन (सन् १९३२) स्थान लाहौर

अ० भा० अग्रवाल महासभा का चौदहवाँ अधिवेशन लाहौर नगर में परम देशभक्त श्री पद्म राज जी जैन की अध्यक्षता में हुआ। इस अधिवेशन में घोषणा की गई कि जो विधवायें पुनर्विवाह करना चाहें उनके मार्ग में बाधा न डाली जाये।

पन्द्रहवाँ अधिवेशन (सन् १९३३) स्थान इलाहाबाद

महासभा का १५वाँ अधिवेशन सन् १९३३ में इलाहाबाद में कलकत्ता के कट्टर

सुधारक श्री बसन्तलाल जी मुरारका की अध्यक्षता में हुआ और ११वें अधिवेशन के विवाह के स्वीकृत प्रस्ताव का पुनः समर्थन किया गया।

सोलहवाँ अधिवेशन (सन् १९३४) स्थान जबलपुर

१६वाँ अधिवेशन सेठ रामकृष्ण डालमिया के सभापतित्व में कलकत्ता में होना था किन्तु विधवा विवाह के सम्बन्ध में सहमत न होने से वे सभा छोड़ कर चले गये

अतः अ० भा० अग्रवाल महासभा का १६वाँ अधिवेशन सन् १९३४ में जबलपुर नगर में कलकत्ता के दैनिक पत्र "विश्वमित्र" के संचालक श्री मूलचन्द जी अग्रवाल की अध्यक्षता में हुआ। विधवा विवाह के समर्थन में महासभा के ११वें तथा १५वें अधिवेशन में पारित प्रस्तावों का पुनः समर्थन किया गया और अग्रवाल समाज में क्रान्ति का शंखनाद फूँका गया।

दुर्भाग्य से महासभा के आगामी अधिवेशनों की श्रृंखला टूट गई। इसका मुख्य कारण यही प्रतीत होता है कि अग्रवाल जाति के प्रमुख सुधारवादी कार्यकर्त्ता देशव्यापी स्वतन्त्रता आन्दोलन में जूझ गये और उन्होंने देश की स्वतन्त्रता को आगे रखा। जब देश स्वतन्त्र हुआ तभी उनका ध्यान पुनः अग्रवाल महासभा की ओर गया।

दिनांक २३-५-१९४८ को देहली में एक सभा हुई जिसमें अग्रवाल महासभा को नये सिरे से संगठित कराया गया और इसकी रजिस्ट्री भी कराई गई। तत्पश्चात् महासभा के अधिवेशनों की श्रृंखला पुनः चल पड़ी। इसका श्रेय श्री मास्टर लक्ष्मी-नारायण अग्रवाल एवं श्री तनसुख राय जी जैन को है।

सत्रहवाँ अधिवेशन (सन् १९४८) स्थान दिल्ली

अ० भा० अग्रवाल महासभा का सत्रहवाँ अधिवेशन सन् १९४८ में देहली में आचार्य जुगलकिशोरजी की अध्यक्षता में हुआ। यह अधिवेशन १, २ तथा ३ अक्टूबर १९४८ को बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया। सभा का मन्त्री पद परम देशभक्त ला० लाजपतराय जी के भतीजे श्री चम्पतराय जी ऐडवोकेट ने संभाला। इस अधिवेशन का सबसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव अग्रवालों के आदि निवास स्थान अग्रोहा को पुनः बसाने सम्बन्धी था।

१८ वां अधिवेशन (सन् १९५०) स्थान अग्रोहा

अ० भा० अग्रवाल महासभा का १८वाँ अधिवेशन २६, २७ तथा २८ मार्च, १९५० को अग्रोहा में स्व० सेठ जमना लाल बजाज के सुपुत्र भी कमल नयन बजाज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष पंजाव ऐसेम्बली के भूतपूर्व सदस्य श्री ज्योति प्रसाद जी निर्वाचित हुए। श्री बा० मोहनलाल जी

parliament
Remove Watermark Now

डएवोकेट मन्त्री चुने गये। श्री मा० लक्ष्मी नारायण जी अग्रवाल महासभा के महा मन्त्री निर्वाचित हुए।

अधिवेशन में प्रमुख ८ प्रस्ताव पारित हुए जिनमें विधवा विवाह को सामयिक और उचित माना गया। अग्रोहा को पुनः बसाने के कार्य को प्राथमिकता दी गई तथा अग्रोहा में **"अग्रसेन इन्जीनियरिंग एण्ड टैक्नीकल कालेज"** स्थापित करने का निश्चय किया गया।

१९वाँ अधिवेशन, (सन् १९५३) स्थान नागपुर

अ० भा० अग्रवाल महासभा का १९वाँ अधिवेशन श्री ईश्वर दास जी जालान के सभापतित्व में हुआ। इस अधिवेशन को सफल बनाने का श्रेय श्री छगन लाल जी मारू (भूतपूर्व मन्त्री बरार मध्य प्रान्त १९३६) को है। इस अधिवेशन में देश भर के अनेक प्रमुख अग्रवाल बन्धुओं ने भाग लिया। इस अधिवेशन में पर्दा तथा दहेज कुप्रथाओं के विरुद्ध प्रस्ताव पारित किये गये।

बीसवां अधिवेशन :—सन् १९६८, स्थान देहली

अध्यक्ष-श्री जे० आर० जिन्दल, विशेषता—अग्रोहा निर्माण कार्य, एवं अग्रोहा तीर्थ मासिक पत्रिका का संचालन, और कुरीति निवारण का प्रयत्न।

इक्कीसवाँ अधिवेशन :—सन् १९७२, स्थान दिल्ली

अध्यक्ष-श्री जे० आर० जिन्दल, विशेषता—अग्रोहा में अग्रसेन इन्जीनियरिंग एण्ड टैकनीकल कालेज की स्थापना हेतु प्रयत्न एवं संगठन कार्य।

समाज की परिवर्तित परिस्थितियों में महासभा के सम्मुख कुरीति निवारण एवं समाज सुधार का कार्य बढ़ जाने के कारण महासभा का ध्यान इस ओर ही केन्द्रित रहा।

सन् १९७५ में इस महासभा के ही एक कार्यकारिणी सदस्य श्री रामेश्वरदास जी गुप्त ने इस महासभा से अलग होकर "अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन" के नाम से पृथक् संस्था का निर्माण कर लिया। अतः महासभा अपनी पुरानी नीति के अनुसार पारस्परिक संघर्ष से बचते हुए नवगठित सम्मेलन को अपना भरसक सहयोग दे रही है।

सन् १९७६ ई० में महासभा की एक इकाई अग्रोहा इन्जीनियरिंग एण्ड टैकनीकल कालेज सोसाइटी की ओर से अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन द्वारा गठित अग्रोहा विकास ट्रस्ट को २३ एकड़ भूमि निःशुल्क देकर अग्रोहा निर्माण कार्य में विशेष योगदान दिया। आज इसी २३ एकड़ भूमि पर अग्रोहा निर्माण का कार्य चल रहा है।

यतः गत १९७६ से अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन की सम्पूर्ण शक्ति अग्रोहा निर्माण कार्य में लग गई है अतः लम्बे विचार विमर्श के पश्चात् इस महासभा ने अपने पूर्ववर्ती समाज सेवी कार्यकर्ताओं की नीतियों का अनुसरण करते हुए समाज सुधार और

समाज सेवा के कार्यों को गति देने के लिए अपनी पूर्व परम्पराओं के अनुरूप इस वर्ष के लिए महासभा के निम्नांकित सेवा कार्य प्रारम्भ किये हैं—

१. महासभा के पूर्व गौरव को प्राप्त करने के लिए अखिल भारतीय स्तर पर सदस्यता अभियान।
२. विवाह योग्य अग्रवाल कन्याओं के लिए ऐसे सुयोग्य वरों की खोजकर एक रजिस्टर में अंकित करके कन्याओं के ऐसे अभिभावकों तक पहुँचाना जो दहेज की बढ़ती माँग को पूरा करने में असमर्थ हैं और अपनी कन्याओं के विवाह नहीं कर पाते।
३. आजीविका की खोज में भटकते हुए अग्रवालों को आजीविका दिलाने में सहयोग।
४. राजकीय संकटों में फँसे निर्दोष अग्रवालों को कानूनी एवं अन्य प्रकार से यथासम्भव सहायता देना और दिलाना।
५. देश के किसी भी भाग में, विशेषतः देहली में, अग्रवाल बन्धुओं के अटके हुए कार्यों को पूरा कराने में सहयोग।
६. सुयोग्य छात्रों को छात्रवृत्ति देना। ७. असहायों, को सहायता देना।

महासभा के वर्तमान पदाधिकारी

१. प्रधान—श्री जे. आर. जिन्दल, आनरेरी मजिस्ट्रेट, शाहदरा दिल्ली
२. उप० प्रधान—श्री सेठ तिलकराज अग्रवाल, बम्बई।
३. उपप्रधान—श्री देवकीनन्दन गुप्ता, रेडियो वाले, दिल्ली।
४. महामंत्री—वैद्य निरंजनलाल गौतम, शाहदरा
५. मन्त्री—श्री बाबूलाल सलमे वाले, दिल्ली।
६. कोषाध्यक्ष—श्री ला० सीताराम जी गुप्त, देहली
७. संरक्षक—श्री लक्ष्मी नारायण जी अग्रवाल, देहली
८. ,, ,, श्री प्रेमचन्द जी कुच्छल, शाहदरा

इनके अतिरिक्त भारत के ७ राज्यों में से ६५ कार्यकारिणी समिति के मनोनीत सदस्य महासभा की प्रबन्ध व्यवस्था के लिए उत्तरदायी हैं।

सम्पर्क सूत्र—

वैद्य श्री निरंजन लाल गौतम
महामंत्री—अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा (पंजीकृत)
७/२८, ज्वाला नगर, गौतम मार्ग
शाहदरा दिल्ली-३२

pdfelement
Remove Watermark Now

(३) सभाये आज़म, खुर्जा

१. वैश्यों का यह संगठन सन् १८९० में खुर्जा में 'सभाये-आजम' नाम से बना था जिसके अन्तर्गत "वैश्योन्नति चन्द्रिका" मासिक पत्र उर्दू में प्रकाशित होता था। यह पत्रिका १८९१ में हिन्दी और उर्दू में छपती रही। उस समय के सभा के प्रमुख कार्य कर्त्ताओं की नामावली निम्न प्रकार है—

(१) श्री मुन्शी दयाराम (२) श्री ला० नत्थी लाल

(३) श्री उदय राम पटवारी, रामनगर निवासी आदि।

उस समय 'सभाये आजम' द्वारा ८५ विधवा बहिनों को सहायता दी जाती थी, छात्रों को परीक्षा पास करने सम्बन्धी सूचनाएं प्रकाशित होती थीं। उसी समय इतिहास प्रसिद्ध छप्पनिया के अकाल में भी सभा ने सहायता की थी।

यह सभा १९०९ तक जीवित रही। फिर शिथिलता आ गई।

आगे चलकर सन् १९२६ में खुर्जा के प्रसिद्ध दानवीर सेठ नत्थीमल जी के प्रयत्नों से अ० भा० वैश्य अग्रवाल महासभा की स्थापना १९२६ में हुई जिसका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

(४) अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा

१. स्थापना—सन् १९२६ ई० में खुर्जा के प्रसिद्ध दानवीर, रायबहादुर सेठ नत्थीमल जी के प्रयत्नों से अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा की स्थापना अलीगढ़ में हुई। इसका प्रथम बृहद अधिवेशन बा० लक्ष्मणप्रसाद जी प्रिंसीपल डी० ए० वी० कालिज देहरादून के सभापतित्व में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। उसी अधिवेशन में विवाहों के रीति-रिवाजों में सुधार करने के लिए एक रीति नियमावली भी स्वीकृत हुई और जाति में विधवा विवाह करने को वैध माना जाकर प्रोत्साहित किया गया। ४० वर्ष से अधिक आयु वाले विधुरों को दूसरा विवाह करने से वर्जित किया गया और राष्ट्र भाषा हिन्दी का प्रचार करने हेतु बच्चों को हिन्दी पढ़ाना आवश्यक बताया गया एवं महासभा की समस्त कार्यवाही हिन्दी में करने का प्रस्ताव भी स्वीकृत किया गया। दहेज प्रथा में संशोधन करके निर्धन व अमीर जाति बन्धुओं के लिए विवाह एक ही स्तर पर करने के लिए एक रीति नियमावली के ही अनुसार विवाह करने तथा अन्य संस्कारों पर भी एक सी रस्म अदा करने के प्रस्ताव स्वीकृत हुए। उस समय के प्रधान बा० लक्ष्मण प्रसाद जी व महामन्त्री बा० ख्याली राम जी गुप्त (जापानी) चुने गए थे।

२. अधिवेशन—१९२७ ई० में खुर्जा में व १९२८ ई० में दिल्ली में बृहद अधिवेशन हुए परन्तु फिर कुछ काल तक महासभा के कार्य में प्रगति न हो सकी। किन्तु अलीगढ़ प्रान्तीय अग्रवाल सभा निरंतर अपने निर्वाचन व वार्षिक अधिवेशन करती रही।

१९३८ ई० तत्कालीन स्थानीय अग्रवाल सभा अलीगढ़ के प्रधान स्वर्गीय बा० जय प्रकाश चन्द्र जी एडवोकेट की प्रेरणा से उस समय के स्थानीय सभा के मन्त्री श्री प्रभु दयाल गुप्त एडवोकेट ने अपने अन्य सहयोगी बन्धुओं के सहयोग से पहले "अग्रवाल" नाम से, फिर बदल कर 'अग्रवाल सन्देश' मासिक पत्रिका स्थानीय सभा अलीगढ़ से प्रकाशित कराया और उसके प्रचार में दिन-रात दौड़-धूप करके जाति बन्धुओं में जोश उत्पन्न किया।

फलस्वरूप १९४३ ई० में अ० भा० वैश्य अग्रवाल महासभा का तृतीय बृहद अधिवेशन फिर अलीगढ़ में सम्पन्न हुआ और सन् १९४४ ई० में अधिवेशन दिल्ली में हुआ। रा० ब० फतेह चन्द जी डिस्ट्रिक इन्जीनियर बिजनौर ने अध्यक्ष का पद संभाला और निर्धन बन्धुओं की सहायता के लिए एक फण्ड स्थापित हुआ जिसमें से निर्धन छात्रों को सहायता दी जाती रही।

पंचम बृहद अधिवेशन सन् १९५१ ई० में अलीगढ़ में हुआ और छठा बृहद अधिवेशन सन् १९६६ ई० में देहली में बड़ी शान के साथ सम्पन्न हुआ। उक्त अधिवेशन में लगभग १८-२० हजार रुपये से एक असहाय विधवा सहायता निधि स्थापित की गई और तब से यह महासभा सैंकड़ों विधवाओं व निर्धन छात्रों को सहायता व ऋण देती रही है। राय साहब ला० फतह चन्द्र जी सन् १९४३ ई० से सन् १९६६ ई० तक महासभा के प्रधान रहे और मंत्री पद श्री छेदालाल सिंहल, श्री भद्रसेन गुप्त, श्री प्यारे लाल गुप्ता, श्री अयोध्या प्रसाद गुप्ता व श्री यादराव गुप्त ने संभाला।

१९६६ के अधिवेशन में श्री भानुप्रकाश मीतल मंत्री चुने गए और आदरणीय सेठ बद्री प्रसाद जी, मैसूर अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा के प्रधान निर्वाचित हुए। श्रीमान सेठ जी के नेतृत्व में यह सभा दिन दुगनी रात चौगनी उन्नति कर रही है। "अग्रवाल संदेश" पत्रिका को स्थानीय सभा, अलीगढ़ से महासभा ने अपने हाथ में लेकर पत्रिका को यथेष्ट प्रभावशाली व समुन्नत बना दिया है।

"अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा" का सप्तम बृहद अधिवेशन १४-१[illegible] नवम्बर १९७० ई० को अलीगढ़ में सम्पूर्ण सफलता के साथ सम्पन्न हुआ और आगे [illegible] लिए सेठ बद्रीप्रसाद जी, मैसूर प्रधान व श्री अयोध्याप्रसाद गुप्ता मन्त्री व प्रभु दया[illegible] गुप्त एडवोकेट सह मन्त्री निर्वाचित हुए। इस अधिवेशन में भी विधवा सहायता नि[illegible] में यथेष्ट धन जाति बन्धुओं ने दान में दिया है और भारत के हर कोने-कोने [illegible] प्रतिनिधि इस सम्मेलन में पधारे तथा नेपाल के भी प्रतिनिधि उपस्थित हुए थे।

महाधिवेशन में विभिन्न उपसमितियों का चुनाव हुआ और प्रचार उपसमि[illegible]

Remove Watermark Now

के संचालक श्री देवी चरण जी मीतल व पत्रिका के सम्पादक श्री कान्ति स्वरूप मीतल एडवोकेट चुने गये हैं।

सन् १९७६ में महासभा का अधिवेशन पुनः देहली में हुआ। श्रेष्ठी बद्री प्रसाद जी पुनः इसके अध्यक्ष निर्वाचित हुए और मन्त्री पद पर श्री ललित मोहन मीतल चुने गये।

"अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा" ने विभिन्न नगरों में स्थानीय अग्रवाल सभायें स्थापित कराई हैं, जो पूर्ण सफलता के साथ अपने वर्ग के जातीय संगठन का कार्य कर रही हैं।

वर्तमान पदाधिकारी

प्रधान—सेठ बद्रीप्रसाद जी गुप्त, मैसूर।
उपप्रधान—श्री ओमप्रकाश जी गोयल, लखनऊ।
" श्री रामगोपाल जी मित्तल, पिलखुवा।
मन्त्री—श्री अयोध्याप्रसाद जी गुप्त, अलीगढ़।
सहमन्त्री—श्री ओमप्रकाशजी गुप्त, नई दिल्ली।
उपमन्त्री एवं सम्पादक अग्रवाल सन्देश—श्री ज्वालाप्रसाद जी "अनिल", अलीगढ़।
" " श्री रामनारायण जी गंगल, अलीगढ़।
आय-व्यय निरीक्षक—श्री मिट्ठनलाल जी गोभिल, नई दिल्ली।
सम्पर्क सूत्र—श्री अयोध्याप्रसाद जी गुप्त।
शान्ति कुटीर, विष्णु पुरी, अलीगढ़।

प्रान्तीय वैश्य अग्रवाल सभा, अलीगढ़ के पदाधिकारी :—

१. प्रधान—श्री अयोध्या प्रसाद जी गुप्त, शान्ति कुटीर, विष्णुपुरी, अलीगढ़।
२. उपप्रधान—श्री रामचन्द्र जी सिंहल, विष्णुपुरी, अलीगढ़।
३. मन्त्री—श्री ज्वाला प्रसाद जी "अनिल", सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़।
४. उपमन्त्री—श्री शिवशंकर जी गोयल, कला भारतीय, रघुवीरपुरी, अलीगढ़।
५. कोषाध्यक्ष—श्री भगवतीप्रसाद गुप्त, अशोक मैडीकल हाल, सुदामापुरी, अलीगढ़।
६. आय व्यय निरीक्षक—श्री कान्ति प्रसाद जी गुप्त, लक्ष्मीपुरी, अलीगढ़।

(५) अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन

नई देहली निवासी श्री रामेश्वर दास जी गुप्त, ने सन् १९७४ में अग्रवाल जाति के प्रमुख समाज सेवियों से परामर्श करके देहली में अग्रवाल पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकों का एक सम्मेलन बुलाने का विचार किया। अतः इस विचार को मूर्त रूप देने हेतु देहली के पत्रकारों में से जिनके साथ श्री रामेश्वर दास जी का तत्सम्बन्धी परामर्श हुआ उनमें वैद्य श्री निरंजनलाल जी गौतम का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। श्री गौतम जी ने सभी वांछित जानकारी, भारत की अग्रवाल सभाओं की सूची, प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ताओं के पते आदि तो दिये ही लगातार सभी बैठकों में भाग लेकर श्री रामेश्वर दास जी गुप्त एवं श्री डा० वेद प्रताप जी वैदिक के साथ इस सम्मेलन की समस्त रूपरेखा तैयार करने में अपना सक्रिय सहयोग दिया।

पत्रकार सम्मेलन की पूर्ण रूपरेखा बनने के पश्चात् सभी को निमंत्रण पत्र भेजे गये। इसी बीच कई पत्रकारों के सुझाव आये कि पत्रकार सम्मेलन के स्थान पर अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन बुलाया जाये। अतः जनवरी १९७५ ई० में देहली की समस्त अग्रवाल सभाओं एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं की एक बैठक, धर्मभवन, साउथ एक्सटैंशन भाग-१, नई देहली में बुलाई गई। इस बैठक में सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि मार्च १९७५ के अन्त में या अप्रैल १९७५ के अन्त में दिल्ली की समस्त अग्रवाल सभाओं के तत्वावधान में **"अखिल भारतीय अग्रवाल प्रतिनिधि सम्मेलन"** के नाम से एक सम्मेलन का आयोजन किया जाये।

इस समस्त विचार मन्थन के परिणाम स्वरूप देहली की निम्नांकित अग्रवाल सभाओं के तत्वावधान में ५-६ अप्रैल सन् १९७५ में धर्म भवन, साउथ एक्सटेंशन भाग-१, नई दिल्ली में "अखिल भारतीय अग्रवाल प्रतिनिधि सम्मेलन" यज्ञ से आरम्भ होकर, जिसके संयोजक वैद्य श्री निरंजन जी लाल गौतम थे, बहुत सफलता के साथ सम्पन्न हुआ जिसमें देश के एक हजार से अधिक अग्रवालों ने भाग लिया।

अ० भा० अग्रवाल प्रतिनिधि सम्मेलन की देहली की आयोजक सभायें :—

१. रामेश्वरदास गुप्त धर्मार्थ ट्रस्ट, डी-३६ साउथ एक्सटैंशन, भाग-१ नई दिल्ली-४९
२. अग्रवाल सभा (रजि०), २४/९ शक्ति नगर, दिल्ली-७
३. अग्रवाल परिषद, १२/६६३ रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली-२२
४. वैश्य सभा दक्षिण दिल्ली, डब्ल्यू-४५, ग्रेटर कैलाश-१, नई दिल्ली-४८
५. वैश्य संगठन सभा(सदर बाजार), ५२३५-३६ गली बहूजी, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

pdfelement
Remove Watermark Now

६. अखिल भारतीय वैश्य अग्रवाल महासभा, ए-२०/५८, लोदी कालोनी, नई दिल्ली-३
७. बड़ी पंचायत (वैश्य बीसे अग्रवाल) कैलाश भवन, १५७९ दरीबा कलाँ, दिल्ली-६
८. अग्रवाल मित्र मंडल, १६५५-५६ हरगोविन्द नगर, बहादुरगढ़ रोड, दिल्ली-६
९. अग्रवाल सभा (करौलबाग), १६-ई, देवनगर, सरकारी क्वार्टर, नई दिल्ली-५
१०. त्रिनगर (रामपुरा) अग्रवाल सभा, १५९२-गणेशपुरा 'ए', त्रिनगर दिल्ली-३५
११. वैश्य अग्रवाल सभा, दिल्ली, टी १०/५ आई० एन० ए० कालोनी नई दिल्ली-२३
१२. सराय रोहिल्ला अग्रवाल सभा, २११/४ए, रासबिहारी मार्ग, पद्म नगर, दिल्ली-७
१३. श्री वैश्य समाज (पंजीकृत), ए ८४/बी, साउथ एक्सटैंशन, भाग-२ नई दिल्ली-४९
१४. अग्रवाल वेलफेयर सोसायटी (रजि०), डी-२, अशोक विहार, दिल्ली-६
१५. अग्रवाल परिषद्, २२/१०८० लोदी कालोनी, नई दिल्ली-३
१६. श्री अग्रवाल धर्मशाला ट्रस्ट (पंजी०) हरध्यानसिंह रोड, करौल बाग, नई दिल्ली-५
१७. प्रान्तीय अग्रवाल सभा, ४१३६-नया बाजार, दिल्ली-६
१८. अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा, ४४२१-नई सड़क, दिल्ली-६
१९. अग्रवाल सभा (साउथ एक्स०), डी-३५, साउथ एक्सटैंशन भाग-१ नई दिल्ली-४९
२०. मारवाड़ी यंगमैन एसोसिएशन, ७३-मोती बाजार, दिल्ली-६
२१. वैश्य मित्र मंडल, ९९५२ रासबिहारी मार्ग, न्यू रोहतक रोड, नई दिल्ली-५
२२. वैश्य सभा इन्द्रपुरी, नारायणा क्षेत्र, ए-१०५, इन्द्रपुरी, नई दिल्ली-१२
२३. वर्ल्ड कौंसिल फार कल्चर रिलेशन, ४५१७ दाईवाड़ा, नई सड़क, दिल्ली-६
२४. संगठित युवक संघ, ३८६९-चर्खेवालान, दिल्ली-६
२५. अग्रवाल पंचायत, ४५५५-मेन बाजार, पहाड़गंज, नई दिल्ली-५५
२६. शाहदरा अग्रबाल सभा, चौपुला, शाहदरा, दिल्ली-३२
२७. अग्रवाल सर्वहितकारी समाज, ७/२८ ज्वालानगर, शाहदरा, दिल्ली-३२
२८. श्री अग्रवाल धर्मशाला ट्रस्ट, २५३३-त्रिनगर, दिल्ली-३५
२९. आल इण्डिया अग्रवाल डायरेक्टरी, ५३५-मंटोला पहाड़गंज, नई दिल्ली-५५
३०. सर्वश्री अग्रसेन युवक मंडल, ४४१८-गली बहूजी, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६
३१. अग्रवाल बगीची ट्रस्ट, पंजाबी बाग, दिल्ली-२६
३२. अग्रवाल परिषद, ५/२ अग्रवाल भवन, जयदेव पार्क, रोहतक रोड दिल्ली-३५
३३. अग्रवाल गिंदोड़ियान सभा, गली बरना, दिल्ली-६
३४. वैश्य अग्रवाल सभा, ए-१६ ग्रीन पार्क, नई दिल्ली-१६
३५. वैश्य बीसा अग्रवाल पंचायत, द्वारा श्री अर्जुनलाल, गली उमराव, पहाड़ी धोरज, दिल्ली

३६. वैश्य पंचायत, नहर साहदत खाँ, श्यामाप्रसाद मुकर्जी मार्ग, दिल्ली-६
३७. अग्रवाल पंचायती धर्मशाला ट्रस्ट, माडल बस्ती, दिल्ली-५
३८. पंचायत वैश्य बीसा अग्रवाल, जोगीवाड़ा, नई सड़क, दिल्ली-६
३९. त्रिनगर वैश्य सभा (पंजी०), त्रिनगर, दिल्ली-३५
४०. नवयुवक विकास परिषद्, सी ४/७ माडल टाउन, दिल्ली-९
४१. क्षेत्रीय अग्रवाल सभा, सी-२ माडल टाउन, दिल्ली-९
४२. अग्रवाल युवा संघ, २४/९ शक्तिनगर, दिल्ली-७
४३. अग्रवाल महिला समाज, २४/९ शक्तिनगर, दिल्ली-७
४४. अग्रवाल चैरिटेबल डिस्पैन्सरी, अग्रवालभवन, माडलबस्ती, दिल्ली-५
४५. पंचायत, गली बदलियान, मौहल्ला चूड़ीवालान, दिल्ली-६
४६. धर्मपुरा पचीसी, २१७०-गली हनुमान प्रसाद, धर्मपुरा, दिल्ली-७
४७. मौहल्ला पंचायत, चूड़ीवालान, बाजार सीताराम, दिल्ली-६
४८. वैश्य बन्धु सभा, गली बताशाँ, चावड़ी बाजार, दिल्ली-६
४९. महाराजा अग्रसेन आश्रम ट्रस्ट (रजि०), २०/११ शक्तिनगर दिल्ली-७
५०. अग्रवाल सभा, कोटला मुबारकपुर, दिल्ली-३
५१. अग्रवाल नवयुवक सभा, ३८३-बी अनाजमंडी शाहदरा, दिल्ली-३२
५२. अग्रवाल मित्र मंडल, ३८६९-चर्खेवालान, दिल्ली-६

इस सम्मेलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यही थी कि सर्वसम्मति से "अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन" के गठन का निर्णय हुआ और तदनुसार ६-७ सितम्बर १९७५ में नागपुर अधिवेशन के अवसर पर इसका विधान पारित हुआ एवं आगामी निर्वाचन तक सम्मेलन के कार्य संचालन हेतु एक तदर्थ समिति का गठन किया गया।

सम्मेलन के प्रथम अध्यक्ष माननीय श्रीयुत श्रीकृष्ण जी मोदी, प्रथम महामन्त्री श्री रामेश्वर दास जी गुप्त तथा प्रथम कोषाध्यक्ष श्री ब्रज लाल जी चौधरी, मद्रास सर्वसम्मति से निर्वाचित घोषित हुए।

सम्मेलन ने अग्रवालों का एक ध्वज, महाराजा अग्रसेन का एक चित्र तथा अग्रवालों का एक प्रतीक तैयार करने का निर्णय किया। इन कार्यों को वैद्य श्री निरंजन लाल जी गौतम ने बड़ी तत्परता से पूरा करा के नागपुर अधिवेशन में इन्हें स्वीक कराया।

सम्मेलन ने अग्रोहा को तीर्थ के रूप में विकसित करने का ठोस कार्य अ हाथ में लिया। इसके प्रचार के लिए १० जनवरी १९७६ ई० में नवगठित अग्रव सम्मेलन की प्रथम बैठक हैदराबाद, बंगलौर तथा मद्रास में हुई जिनका विवरण प्रकार है:—

pdfelement
Remove Watermark Now

दक्षिण भारत में अ० भ० अग्रवाल सम्मेलन की प्रथम बैठकों का सफल आयोजन

हैदराबाद में—

१० जनवरी से १५ जनवरी १९७६ तक हैदराबाद, बंगलौर तथा मद्रास में क्रमशः १०-११, १२-१३ तथा १४-१५ जनवरी को अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन की बैठकों का आयोजन किया गया।

देहली से वैद्य श्री निरंजनलाल जी गौतम, जबलपुर से श्रीयुत बद्री प्रसाद जी अग्रवाल एवं श्रीमती स्वराज्य मणि जी अग्रवाल, नागपुर से श्री हरिकिशन जी अग्रवाल सपरिवार, मद्रास से श्री ब्रज लाल जी चौधरी, श्री बालकृष्ण जी गोइन्का, श्री इन्द्रराज जी बंसल आदि ने हैदराबाद पहुँच कर बैठकों में भाग लिया। सम्मेलन के महामन्त्री श्री रामेश्वर दास जी गुप्त सम्मेलनाध्यक्ष माननीय श्रीयुत श्रीकृष्ण जी मोदी संसद सदस्य, श्री तिलक राज जी अग्रवाल विमानों द्वारा हैदराबाद पहुंचे थे।

हैदराबाद में अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन के २५ आजीवन सदस्य बनाने का तत्काल निर्णय किया गया और संख्या १०० तक बढ़ सकेगी ऐसी आशा व्यक्त की गई। सम्मेलन की ओर से प्रमुख वक्ता महामन्त्री जी, अध्यक्ष जी तथा कोषाध्यक्ष जी थे।

बंगलौर में—

रेल द्वारा हैदराबाद से बंगलौर पहुंचने वाले श्री बद्रीप्रसाद जी अग्रवाल, श्री स्वराज्यमणि जी अग्रवाल, श्री ब्रजलाल जी चौधरी, श्री इन्द्र राज जी बंसल, श्री हरिकिशन जी अग्रवाल, वैद्य श्री निरंजनलाल जी गौतम का बंगलौर के प्रमुख बन्धुओं ने रेलवे स्टेशन पर पुष्प मालाओं द्वारा भव्य स्वागत किया। स्वागतार्थ स्टेशन पर पहुंचे बन्धुओं में सेठ बद्री प्रसाद जी गुप्त, सेठ गंगाधर जी, सेठ बत्तन लाल जी गुप्त, सेठ विश्वम्भर दयालु जी, श्री प्यारेलाल जी अग्रवाल, श्री सत्य नारायण जी कानौडिया श्री जितेन्द्र कुमार जी जैन, श्री कुन्दन लाल जी कानौडिया, श्री कामता प्रसाद जी गुप्त, श्री रामाकान्त जी मिश्र तथा श्री आनन्द दयालु जी आदि महानुभाव थे।

बंगलौर का आयोजन होटली वातावरण से हटकर आत्मीयता परक पारिवारिक था जिसकी इस समाज को परम आवश्यकता है। इस कार्य में सेठ गंगाधर जी द्वारा अपने बंगले पर अतिथियों के भोजनादि की ऐसी सुन्दर व्यवस्था की गई थी कि वह चिरकाल तक याद रहेगी। बंगलौर पहुंचकर अतिथियों को सर्वत्र पारिवारिक वातावरण दृष्टि गोचर होता रहा और उन्हें यह लगता ही न था कि वे अपने परिवारों से दूर किसी भिन्न स्थान पर हैं।

अतिथियों के निवास की व्यवस्था श्री सत्य नारायण जी अग्रवाल के टी० सी० आई० गैस्ट हाउस, कैलास पाल्यम में की गई था। १३ जनवरी को श्री सत्य नारायण जी द्वारा बंगलौर से बहुत दूर अपने भारुका स्टील गैस्ट हाउस में भोजन की

व्यवस्था उद्यानमय स्थान पर की गई थी। इसी स्थान पर भारुका मिडिल स्कूल, ४ एकड़ में अंगूरों का बाग तथा अन्य फलों के वृक्षों से आच्छादित वाटिकायें हैं।

बंगलौर में सम्मेलन की बैठकों के आयोजकों ने (१) वहाँ के सभी अग्रवालों को पहली बार एक मंच पर लाकर बैठा दिया और सभी ने कन्धे से कन्धा मिला कर आयोजनों की सफलता के लिए प्रयत्न किया।

(२) बंगलौर अधिवेशन के आयोजन के परिणाम स्वरूप अग्रवाल सभा बंगलौर की स्थापना हो गई।

(३) बंगलौर में अग्रवाल भवन निर्माण के लिए योजना बनी और उसे तेजी से चालू करने का निश्चय हुआ।

मद्रास में—

मद्रास की बैठकों में भाग लेने के लिए बंगलौर की बैठकों के समापन पर सेठ तिलक राज जी वायुयान से मद्रास पहुंचे और मद्रास के सभी बन्धु एक दिन पूर्व ही बैठकों की व्यवस्था हेतु मद्रास चले गए थे। अतः बंगलौर से रेल मार्ग द्वारा मद्रास पहुंचने वाले बन्धुओं में श्रीयुत रामेश्वर दास जी गुप्त, श्रीयुत माननीय श्रीकृष्ण जी मोदी, श्री बद्री प्रसाद जी अग्रवाल, श्रीमती स्वराज्यमणि जी, श्री हरिकिशन जी अग्रवाल तथा वैद्य श्री निरंजनलाल जी गौतम थे।

मद्रास स्टेशन पर श्री बाल कृष्ण जी गोइन्का, श्री ब्रजलाल जी चौधरी, श्री इन्द्रराज जी बंसल, श्री रामऔतार जी, सेठ हनुमान दास जी गुप्त, श्री सीताराम जी खेतान, श्री विश्वनाथ जी केडिया, श्री बिट्ठल दास जी आदि बन्धुओं ने बंगलौर से पधारे अतिथियों का भव्य स्वागत किया और पुष्प मालाएँ अर्पण कीं। स्टेशन से सभी अतिथियों को श्री रामा कृष्णा कल्याण मंडपम् (साहू बाला ट्रस्ट द्वारा निर्मित) के भव्य भवन में पहुंचाया गया। हैदराबाद से श्री बी० किशनलाल जी, श्री चुन्नीलाल जी अग्रवाल सपरिवार तथा श्री प्रहलाद राय जी पहले ही पहुंच चुके थे।

मद्रास में अतिथियों के सम्मान में दिए गए भोज और पार्टियों की जितनी सराहना की जाए थोड़ी है।

शान्ति बिहार में श्री श्रीनिवास गुप्त, चोला होटल में श्री हरिगोबिन्द जी केजड़ीवाल, मिर्जा पुरम हाउस, वैनस कोलोनी में श्री बाल कृष्ण जी गोइन्का, रामाकृष्ण कल्याण मण्डपम् में सेठ हनुमान दास जी गुप्त, अपने निवास स्थान पर श्री ब्रजलाल जी चौधरी, सुदर्शन होटल में श्री सीताराम जी पलसानी द्वारा आयोजित भोजों आदि के लिए सभी महानुभाव धन्यवाद के पात्र हैं।

मद्रास की बैठकों में भाग लेने वाले उपर्युक्त अतिथियों के अतिरिक्त उपस्थित स्थानीय महानुभावों में निम्नांकित नाम उल्लेखनीय हैं:—

श्री बृजलाल जी चौधरी, श्री इन्द्रराज जी बंसल, श्री बालकृष्ण जी गोइन्का श्री वासुदेय जी जालान, श्री हरिगोविन्द जी केजडीबाल, श्री सीताराम जी खेमका

pdfelement
Remove Watermark Now

श्री हनुमान दास जी साहूवाल, श्री मदनलाल जी गुप्त साहूवाला, श्री मनोहरलाल जी बगडिया, श्रीमती सावित्री देवी जी, श्री राधेश्याम जी जालान तथा श्री विश्वनाथ जी केडिया आदि।

अग्रवाल सभा, फैजाबाद के श्री राधेश्याम जी अग्रवाल ने भी विशेष रूप से बैठकों में भाग लिया।

मद्रास की सार्वजनिक सभा में अतिथियों के भव्य स्वागत के पश्चात माननीय श्रीकृष्ण जी मोदी, श्री हरिकिशन जी अग्रवाल, वैद्य श्रीनिरंजन लाल जी गौतम, श्री बद्रीप्रसाद जी अग्रवाल तथा श्रीमती स्वराज्यमणि जी के प्रभावशाली भाषण हुए।

सम्मेलन की उपलब्धियाँ

महाराजा अग्रसेन का डाक टिकट—सम्मेलन पंजीकरण एवं आयकर से मुक्ति प्रमाण पत्र के पश्चात इसकी उपलब्धियों में सबसे महान उपलब्धि २४ सितम्बर १९७६ को भारत सरकार के डाक-तार विभाग द्वारा महाराजा अग्रसेन की स्मृति में डाक टिकट प्रकाशित करना है। इससे महाराज अग्रसेन के अस्तित्व एवं प्रचलित ऐतिहासिक मान्यताओं की पुष्टि हुई है। यह बात बड़े गौरव की है कि अग्रोहागण राज्य संस्थापक महाराजा अग्रसेन के डाक टिकट का विमोचन संसार में सबसे बड़े गणराज्य भारत के महामहिम राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद के कर कमलों द्वारा हुआ।

दिनाँक ८ तथा ९ मई १९७६ को इन्दौर में सम्मेलन का प्रथम वार्षिक निर्वाचन कार्य सम्पन्न हुआ और निम्नांकित प्रमुख पदाधिकारी निर्वाचित हुये थे :—

प्रधान—श्री श्रीकृष्ण जी मोदी, महामन्त्री—श्री रामेश्वरदास जी गुप्त, उपमहामन्त्री—श्री हरिकिशन जी अग्रवाल, नागपुर, कोषाध्यक्ष—श्री बी० एल० चौधरी, मद्रास।

सम्मेलन का द्वितीय अधिवेशन २४-२५ सितम्बर, १९७७ को आगरा में हुआ जिसके प्रमुख पदाधिकारी यथापूर्व रहे।

देहली अधिवेशन में श्री बनारसीदास जी गुप्त भूतपूर्व मुख्यमन्त्री हरियाणा राज्य अध्यक्ष निर्वाचित हुए, महामन्त्री—श्री रामेश्वरदास जी गुप्त और कोषाध्यक्ष श्री बी० एल० चौधरी, मद्रास यथा पूर्व अपने पदों पर बने रहे।

सम्प्रति सम्मेलन के प्रमुख पदाधिकारी निम्नांकित हैं—

(१) प्रधान—श्री बनारसीदास जी गुप्त, (२) महामन्त्री—श्री रामेश्वरदास गुप्त, (३) कोषाध्यक्ष—श्री शिवचन्द्र जी अग्रवाल, जालन्धर।

अग्रोहा विकास ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री बालकृष्ण जी गोयनका, मद्रास के विशेष प्रयत्नों के फलस्वरूप महा सम्मेलन की अद्यतन विशेष उपलब्धि है अग्रोहा में महाराजा अग्रसेन मन्दिर का उद्घाटन और अग्रोहा निर्माण कार्य में प्रथम सफलता।

सम्पर्क सूत्र—श्री रामेश्वरदास जी गुप्त
महामन्त्री—अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन,
डी-३५, साउथ एक्सटेंशन, भाग-१, नई देहली-४९

(५) अखिल भारतीय अग्रवाल महासंघ, दिल्ली,

भारत में अखिल भारतीय रूप में सम्प्रति ९ से अधिक अग्रवाल सभायें समाज में सेवा कार्य कर रही हैं—

१. अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा (पंजीकृत) देहली-३२
(सेठ जमना लाल बजाज द्वारा सन् १९१८ ई० में स्थापित)
२. अखिल भारतीय वैश्व अग्रवाल महासभा, अलीगढ़
३. अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन, नई देहली
४. अखिल भारतीय गिंदौडिया अग्रवाल महासभा, मेरठ
५. अखिल भारतीय लोहिया अग्रवाल महासभा, आगरा
६. अखिल भारतीय अग्रवाल सर्वहितकारी समाज, नई देहली
७. अखिल मागधी अग्रवाल महासभा, डालटनगंज
८. अखिल भारतीय राजवंशी अग्रवाल महासभा, मेरठ
९. अखिल भारतीय अग्रवाल महासंघ, देहली-६

उपर्युक्त अखिल भारतीय सभाओं का एक संघ बनाने के लक्ष्य को लेकर जनवरी १९७५ ई० में श्री मास्टर लक्ष्मी नारायण जी अग्रवाल की अध्यक्षता में एक सभा का आयोजन किया गया। इस सभा के संयोजक प्रसिद्ध समाज सेवी ला० वशेशर नाथ जी गोटे वाला हैं।

इस संघ की कई बैठकों में विचारों के आदान-प्रदान के पश्चात् महासंघ का विधान पारित किया गया।

इस महासंघ के संस्थापक सदस्य निम्न प्रकार हैं—

१. प्रो० श्री रामसिंह जी, २३ वीडन पुरा करौलबाग, नई-देहली ५
२. श्री मास्टर लक्ष्मी नारायण जी अग्रवाल, ४४२१ नई सड़क, देहली ६
३. ला० वशेशर नाथ जी गोटेवाला, जी०/७/ए०, माडल टाउन, देहली
४. श्री जे० आर० जिन्दल, जी० टी० रोड, शाहदरा-देहली २
५. श्री प्रह्लाद राय जी गुप्ता, १ हेली रोड, नई देहली
६. श्री बिशन स्वरूप जी पटवारी, वीडन पुरा करौलबाग, नई देहली
७. श्री ग्यासीराम जी गुप्त, ४३३६ गली अहीरान, पहाड़ीधीरज
८. श्री ज्ञान चन्द जी अग्रवाल, शोरा कोठी पहाड़गंज, देहली-६
९. डा० श्री अनन्त पी० आनन्द अग्रवाल, रास्ता जाट का कुंआ, जयपुर
१०. श्री मदन लाल अग्रवाल, नया गंज, कानपुर

pdfelement
Remove Watermark Now

११. श्री मुरारी लाल जी अग्रवाल छत्ता बाजार, मथुरा
१२. वैद्य श्री निरंजन लाल जी गौतम, ७/२८, ज्वाला नगर, शाहदरा, देहली
१३. श्री धर्मचन्द जी गोयल देब नगर, करौलबाग, नई देहली-५
१४. श्री विश्वम्भरदयाल जी गुप्ता, बी०-९९, अशोक विहार, देहली

इस महासंघ का ऐतिहासिक विशाल अधिवेशन दिनाँक ९ तथा १० जुलाई १९७७ में गुजराती समाज, देहली के सभागार में बनाये नये अग्रसेन नगर में हुआ। इस ऐतिहासिक अधिवेशन की यह विशेषता थी कि इससे पूर्व ऐसे भव्य एवं सुविधा-जनक स्थान पर अग्रवाल समाज का कोई अधिवेशन नहीं हुआ। इस अधिवेशन में देहली से अतिरिक्त भारत के लगभग सभी राज्यों के ३४२ प्रतिनिधियों ने भाग लिया और माननीय श्री शान्ति भूषण, न्याय तथा विधि मन्त्री भारत सरकार के अतिरिक्त श्री शिवचरण गुप्ता, श्री धर्मवीरजी, श्री भारत भूषण जी, श्री वीरेन्द्र जी अग्रवाल, श्री श्यामा चरण जी गुप्त आदि राजनायकों ने इस अधिवेशन में भाग लेकर अधिवेशन को सफल बनाया।

इसी ऐतिहासिक अभिवेशन में अग्रवाल समाज के निमांकित ५ महानुभावों को उनकी विशिष्ट समाज सेवाओं के उपलक्ष्य में उन्हें ताम्र पत्र भेंट कर सम्मानित किया गया :—

१. सेठ गूजर मल मोदी (मरणोपरान्त)
२. श्री प्रो० रामसिंह जी
३. श्री मास्टर लक्ष्मी नारायण जी अग्रवाल
४. वैद्य श्री निरंजन लाल जी गौतम
५. मास्टर श्री चन्दगी राम जी

इस महासंघ ने देहली में एक विशाल अग्रवाल भवन बनाने का संकल्प लिया है और इस दिशा में सरकार से भूमि प्राप्त करने का प्रयत्न चल रहा है।

महासंघ ने समाज कल्याण कोष की स्थापना का भी निर्णय लिया जिसके ११ संस्थापक ट्रस्टी हुए हैं।

दिसम्बर १९८१ में संघ का जो अधिवेशन देहली में हुआ वह देहली के इतिहास में अपूर्व था। इस अधिवेशन में श्री केदारनाथ जी मोदी के स्थान पर श्री आर० पी० गोयनका जी प्रधान निर्वाचित हुए। इस महा संघ की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसने सभी वैश्यों को संगठित करने का प्रयत्न किया है।

सम्पर्क—श्री वशेशर नाथ गोटेवाला
महामन्त्री अ० भा० अग्रवाल महासंघ,
४१३६, नया बाजार, दिल्ली-६

अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष, बम्बई

सन् १९२० में अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल महासभा के बम्बई अधिवेशन पर एक प्रस्ताव द्वारा ९ लाख रुपये से इस संस्था की स्थापना मारवाड़ी सम्वत १९८० वि० (सन् १९२३ ई०) में हुई थी। इस प्रस्ताव को सन् १९२३ में कार्यान्वित किया गया और इसकी विधिवत् रजिस्ट्री कराई गई। इसकी प्रथम कार्यकारिणी समिति के सदस्यों के नाम निम्नांकित थे :—

१. सेठ राम नारायण जी रुइया, कालवादेवी रोड, बम्बई
२. सेठ शिवनारायण जी नेमाणी, हयुजेस रोड, बम्बई
३. सेठ श्रीराम जी झुंझुनूवाला, सेण्डहर्स्ट रोड, बम्बई
४. मेसर्स ताराचन्द घनश्याम दास, मुम्बादेवी रोड, बम्बई
५. मेसर्स बच्छराज जमनालाल बजाज, कालवादेवी रोड, बम्बई
६. सेठ केशवदेव नेवटिया, बम्बई
७. सेठ श्रीनिवास जी बजाज, खेतवाड़ी, बम्बई
८. सेठ आनन्दी लाल पोद्दार, मारवाड़ी बाजार, बम्बई
९. मेसर्स मामराज रामभगत, कालवादेवी रोड, बम्बई
१०. मेसर्स हरनन्दराय सूरजमल, कालवादेवी रोड, बम्बई
११. मेसर्स हरसुखराय गोपीराम, कालवादेवी रोड, बम्बई
१२. सेठ लच्छीराम चूड़ीवाला, मारवाड़ी बाजार, बम्बई
१३. मेसर्स मिरजामल गजानन्द, विट्ठलवाड़ी, बम्बई
१४. सेठ प्रताप सेठ, अमलनेर (खाम गाँव)
१५. श्री रंगलाल जी जाजोदिया, १४९, हरीसन रोड, कलकत्ता
१६. श्री मोती लाल प्रहलादका, सेन्ट्रल रोड, कलकत्ता

सन् १९२५ में यह जातीय कोष अनाथ, विधवाओं और छात्रों को २५००० रुपये की आर्थिक सहायता देता था।

सर्वप्रथम अग्रवाल जाति का इतिहास लिखाने के लिये इस कोष की ओर से १७५ रुपये मासिक की आर्थिक सहायता दी जाती रही जिसके फलस्वरूप सन् 19 में डा० श्रीयुत पं० सत्यकेतु जी विद्यालंकार कृत **"अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिह** समाज के सम्मुख आया जिसे अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय क बम्बई द्वारा प्रकाशित कराया गया।

सन् १९६५ में माटुंगा, बम्बई में इस जातीय कोष द्वारा **"अग्रवाल न**

pdfelement
Remove Watermark Now

बसाया गया जहाँ सामान्य किराये पर अग्रवालों को निवास की सुविधायें प्रदान की गईं।

इस प्रकार यह जातीय कोष गत ५९ वर्षों से लगातार देश एवं समाज के विभिन्न वर्गों की सेवा करता आ रहा है। होनहार नवयुवकों को आर्थिक सहायता देकर उनकी शिक्षा में सहायता करता है, असमर्थ भाइयों तथा बहनों के जीवन निर्वाह के लिये आर्थिक सहायता देता रहता है, रोगियों के लिये चिकित्सा तथा औषधियों की व्यवस्था इस कोष की ओर से की जाती है।

देश में शिक्षा के महत्व को देखते हुए छात्रों को देश तथा विदेश में शिक्षा दिलाने के लिये यह जातीय कोष अब तक दस लाख रुपये से अधिक व्यय कर चुका है।

परम्परागत रीति रिवाजों एवं विषमताओं से त्रस्त समाज के मध्यम वर्ग को राहत पहुँचाने के लिये मासिक सहायता तथा एक मुश्त सहायता के रूप में गत वर्षों में ४२ भाई बहनों को लगभग १६ हजार की सहायता दी गई है। विद्यार्थियों की सहायता के लिये सीकर, लक्ष्मणगढ़, तथा बम्बई में टाइप तथा शार्टहैंड की कक्षायें चलाई जाती हैं जिनसे नौकरी की तलाश में युवकों की तत्काल सहायता की जा सकती है।

यह जातीय कोष समान उद्देशीय तथा समाज के हितकारी कार्यों में संलग्न अन्य संस्था को भी आर्थिक सहायता देता रहता है।

दैवीय प्रकापों में पीड़ित व्यक्तियों के लिये समय-समय पर यह संस्था अपना आर्थिक योगदान करती रहती है। हाल ही में उड़ीसा के दंगों से पीड़ित भाइयों की सहायता के लिये इस कोष ने सराहनीय कार्य किया है।

समय-समय पर जातीय बन्धुओं की पदोन्नति तथा उनके सराहनीय कार्यों के लियें उन्हें सम्मानित करने के लिये स्वागत समारोहों का आयोजन भी इस संस्था की गतिविधियों का एक अंग है।

सम्पर्क सूत्र—
अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी जातीय कोष
२२७, कालबादेवी रोड, बम्बई ४०००२

दूरभाष—२५६४६७

(१) दक्षिण भारत की अग्रवाल सभाएं

अग्रवाल सभा, मद्रास

इस सभा की स्थापना अक्टूबर सन् १९४९ ई० में महाराजा अग्रसेन जयन्ती के पुण्य अवसर पर श्री मूल चन्द जी गुप्ता के निवास स्थान पर आयोजित बैठक में हुई। इस बैठक की अध्यक्षता श्री सी० एल० अग्रवाल जी ने की थी।

दिनाँक १६-१०-४९ को श्री महादेव लाल जी डालमिया की अध्यक्षता में हुई बैठक में अग्रवाल सभा, मद्रास का विधान एवं नियमावली पारित किए गए और मद्रास में बसे सभी अग्रवाल इस सभा के सदस्य बन गए।

सन् १९५१ ई० में प्रसिद्ध उद्योगपति एवं सामाजिक गण्यमान्य नेता श्री बाल कृष्ण जी गोइन्का की ४५०००) रुपये की एक मुश्त सहायता एवं सार्वजनिक धन संग्रह से सेठ श्रीराम जी हैदराबाद वालों का मकान ८००००) रुपये में क्रय किया गया। इस कार्य में श्री जय दयाल जी अग्रवाल, श्री छगन लाल जी गोयल, श्री महादेव लाल जी डालमिया, श्री ब्रज मोहन जी चौधरी, श्री मांगी लाल जी पीती, श्री ब्रजलाल जी चौधरी, श्री हरिगोपाल जी केजड़ीवाल तथा श्री सीताराम जी पलसानी आदि का सहयोग सराहनीय है।

इस भवन के निर्माण में रंगून निवासी श्री गौरीशंकर जी गोइन्का द्वारा १७०००) रुपये तथा तुमसर निवासी सर्व श्री श्रीराम दुर्गाप्रसाद द्वारा प्रदत्त ५०००) के दान उल्लेखनीय हैं जिनसे सभा भवन का तीसरा तल्ला सन् १९५८ में पूरा हुआ।

सभा ने सन् १९५६ में अग्रवाल सभा पुस्तकालय, १९६३ ई० में अग्रवाल नव-युवक सभा, १९६५ ई० में बर्तन भण्डार की स्थापना की। सामाजिक पुस्तकें एवं स्मारिकाएं भी समय-समय पर यहाँ से प्रकाशित होती रहती हैं। सभा समय-समय पर छात्रवृत्ति, विधवा सहायता, प्राकृतिक प्रकोपों के समय सहायता, तथा असहाय कन्याओं के विवाह आदि में उदारता पूर्वक सहायता करती रहती है।

सन् १९७४ में यह सभा अपनी रजत जयन्ती मना चुकी है। इस सभा के १५० आजीवन एवं १०० साधारण सदस्य हैं।

अग्रवाल सभा, मद्रास दक्षिण भारत में समाज सेवा का प्रकाश स्तम्भ है। इस सभा का विस्तृत इतिहास 'अग्रवाल परिचय ग्रन्थ' प्रथम खण्ड में उपलब्ध है।

सम्पर्क प्रधान मन्त्री—श्री मनोहर लाल जी बगडिया
अग्रवाल सभा, अग्रवाल भवन, २७, आदिप्पा स्ट्रीट, मद्रास-६००००१

Remove Watermark Now

अग्रवाल सभा, (कर्नाटक) बैंगलौर

बैंगलौर में अग्रवाल सभा की स्थापना का विषय बहुत समय से टलता आ रहा था, संयोग से १२-१३ जनवरी १९७६ ई० में अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन की कार्यकारिणी की बैठकें बैंगलौर में करने की घोषणा के साथ ही बैंगलौर के अग्रवाल समाज सेवियों ने अंगडाई ली और अग्रवाल सभा कर्नाटक की स्थापना की गई तथा इसने अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन के बैंगलौर अधिवेशन की व्यवस्था, निवास एवं आतिथ्य सत्कार का सम्पूर्ण भार अपने ऊपर ले लिया। अतः इस सभा की स्थापना एक ऐतिहासिक महत्व रखती है।

बैंगलौर के इतिहास में यह पहला अवसर था कि राजस्थानी, हरियाणवी, उत्तर प्रदेशीय एवं अन्य सभी अग्रवाल बन्धु एक मंच पर एकत्रित हुए और अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन के सदस्यों का ऐसा भव्य स्वागत सत्कार किया जो चिरकाल तक स्मरणीय रहेगा।

इसी अवसर पर बैंगलौर में अग्रवाल भवन निर्माण का भी संकल्प लिया गया। आज दिन यह संस्था एक वास्तविकता लेकर उपस्थित है। सभा की ओर से अग्रसेन जयन्ती समारोह के अवसर पर प्रथम बार श्री "अग्र प्रभा" नाम से भव्य नैनाभिराम एवं संपुष्ट स्मारिका प्रकाशित की गई थी, वह अग्रवाल जगत के लिए आदर योग्य प्रकाशन है।

सम्पर्क
मन्त्री-अग्रवाल सभा (कर्नाटक)
५७—५८ दूसरा क्रास, कलासी पालयम
न्यू एक्सटेन्शन, बैंगलौर-५६०००२

★

(२) आंध्र प्रदेश की सभाएं

अग्रवाल नवयुवक सभा हैदराबाद

लगभग ३०० वर्ष पूर्व राजस्थान तथा हरियाणा के अग्रवाल बन्धुओं का आगमन हैदराबाद में हुआ और उन्होंने हैदराबाद की उन्नति में उल्लेखनीय योगदान किया है।

अपनी व्यापारिक समृद्धि के साथ-साथ लगभग ५० वर्ष पूर्व से सामाजिक क्षेत्र में भी अग्रवाल समाज का योगदान सराहनीय रहा है।

सम्वत् १९८४ वि० में स्व० श्री लक्ष्मी नारायण जी गुप्त तथा श्री धरणीधर जी अग्रवाल ने सर्व प्रथम अग्रवाल नवयुवक सभा, चारकमान, हैदराबाद की स्थापना की थी।

इस सभा को श्री मनोहर लाल जी सत्संगी ने आसफ नगर में एक हजार वर्ग गज भूमि दान में दी। प्रारम्भ में इस सभा का कार्य क्षेत्र विद्वानों द्वारा भाषण, अग्रसेन जयन्ती, गणेश उत्सव तथा दीपावली स्नेह सम्मेलनों का आयोजन था। आगे चलकर सभा की मासिक बैठकें होने लगीं और विद्यार्थियों में जागृति लाने के कार्यक्रम भी चालू किए गए। इस सभा ने मुरली मनोहर का मन्दिर भी बनवाया।

अग्रवाल सभा आन्ध्र प्रदेश, हैदराबाद

इस सभा की स्थापना सन् १९६४ में हुई। सभा की स्थापना का उद्देश्य समाज में व्याप्त रूढ़िवाद तथा कुरीतियों का निवारण है। यह सभा समाज सुधार के लिए सफल आयोजन करती रहती है। श्री एम० पूरणमल अग्रवाल इस संस्था के प्राण हैं।

अग्रवाल सभा सिद्दी अम्बर बाजार, हैदराबाद

वैसे तो यह सभा चिरकाल से समाज सेवा कार्य कर रही है किन्तु इसक विधिवत पंजीयन सन् १९५६ ई० में हुआ। सम्प्रति सभा के दो निजी भवन हैं। इसक ओर से स्थाई जलशाला का संचालन होता है। श्री मुरारी लाल जी गोयल के प्रया से यह सभा अपना अस्तित्व बनाये हुये है।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल सभा, चारकमान, हैदराबाद

ज्येष्ठ कृष्णा ५, सम्वत् १९८४ वि० को हैदराबाद नगर के अग्रवालों की एक बैठक में अग्रवाल सभा, चारकमान की स्थापना हुई। इसकी स्थापना का उद्देश्य विवाहों पर होने वाले व्यर्थ के व्ययों को रोकना था। इस सभा का कार्यालय पंचायती मकान में स्थापित किया गया। स्व० श्री गोपीलाल जी वकील बहुत समय तक इस सभा के मन्त्री रहे। किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात सभा का कार्य शिथिल पड़ गया। आगे चलकर नवयुवकों ने इसे पुनः जागृत किया तथा इस सभा के प्रयत्नों से ही एक दिन का विवाह होने लगा। समाजोन्नति में यह सभा सदैव तत्पर है।

श्री अग्रसेन समिति, हैदराबाद

हैदराबाद में सन् १९६१ से १९६८ तक श्री अग्रसेन जयन्ती महोत्सव के तत्वावधान में अग्रसेन जयन्ती समारोह के आयोजन होते रहे और सन् १९६३ ई० से स्मृति ग्रन्थ प्रति वर्ष बृहत रूप लेता रहा।

सन् १९६९ ई० में इस समिति के लिये विधान बनाया गया और इसका नाम "श्री अग्रसेन समिति" निश्चित करके विधिवत पंजीकरण कराया गया।

इस समिति के मुख्य उद्देश्य समाज संगठन, सामाजिक जागृति तथा समाज के चहुँमुखी विकास में योगदान करना है।

इस समिति की और से प्रतिवर्ष चारकमान, घासी बाजार तथा सिद्दी अम्बर बाजार के सम्मिलित सहयोग से अग्रसेन जयन्ती का आयोजन बहुत उत्साह पूर्वक किया जाता है और स्मारिका का प्रकाशन भी होता है। प्रतिवर्ष बारी-बारी से तीनों क्षेत्रों (चार कमान, घासी बाजार तथा सिद्दी अम्बर बाजार) से पदाधिकारियों आदि का निर्वाचन होता है।

हैदराबाद में अग्रसेन समिति का कार्य देश में सभी अग्रवाल सभाओं के लिये प्रेरणादायक सिद्ध हुआ है।

सम्पर्क सूत्र—
अध्यक्ष—श्री रामशरण संघी
मन्त्री—श्री भगतराम गुप्त
अग्रसेन वाचनालय
सिद्दी अम्बर बाजार, हैदराबाद-५०००१२

अग्रवाल समाज, सिरपुर, कागज नगर (आन्ध्र)

इस समाज की स्थापना सन् १९६९ ई० में हुईहै। इस सभा की रजिस्ट्री विधिवत सन् १९७२ ई० में हुई। इसकी सदस्य संख्या १५० है यह समाज अपने क्षेत्र के १५० अग्रवाल परिवारों का प्रतिनिधित्व करती है।

इस समाज का अपना भवन है जिसका क्षेत्रफल ३६०० वर्ग फीट है और इसके निर्माण पर एक लाख पैंतालिस हजार रुपये व्यय हुए हैं। इस भवन का नाम "अग्रसेन भवन" है जो महात्मा गाँधी रोड पर स्थित है।

अग्रवाल महिला समाज, सिरपुर

इस सभा के साथ "अग्रवाल महिला समाज" भी सेवा कार्यरत हैं। इस महिला समाज की प्रथम बैठक श्री अग्रसेन भवन में; दिनाँक ३०-८-१९७६ को हुई और महिला समाज की कार्यकारिणी का निर्वाचन निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ :—

१. श्रीमती विद्या डाडा एवं श्रीमती जे० एन० गुप्ता—संरक्षक
२. श्रीमती विमला मित्तल—अध्यक्षा
३. श्रीमती पुरुषोत्तम अग्रवाल—उपाध्यक्षा
४. श्रीमती सन्तोष गुप्ता—मन्त्रिणी
५. श्रीमती रेणू अग्रवाल—उपमन्त्रिणी
६. श्रीमती गिन्न बाई रुंगटा एवं श्रीमती रंजना गुप्ता कार्यकारिणी की सदस्या हैं

यह महिला समाज नारी शिक्षा, घरेलू शिल्प कला, एवं उपयोगी गृह लघु उद्योगों के प्रशिक्षण की योजना बना रहा है।

pdfelement
Remove Watermark Now

(३) गुजरात की सभायें

अग्रवाल समाज, अहमदाबाद

इस संस्था की स्थापना सन् १९५७ में हुई थी। सम्प्रति इसके सदस्यों की संख्या ३०० है। यह समाज अपने क्षेत्र में लगभग २५०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करता है।

अग्रवालों की शैक्षणिक, सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति करना इस समाज के मुख्य उद्देश्य हैं।

सम्पर्क सूत्र—ब्रा० भगवत् शरण जी अग्रवाल,
मन्त्री—श्री अग्रवाल समाज,
प्रोसेसर्स क्वाटर्स, यूनिवर्सिटी क्वार्टर्स मार्ग,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद-९

अग्रवाल समाज, गांधीधाम (कच्छ)

इस समाज की स्थापना दिनाँक १७-९-७२ को हुई थी। इसके सदस्यों की संख्या ९० है। इस समाज के क्षेत्र में लगभग ६५० अग्रवाल हैं।

इस संस्था का प्रादुर्भाव समाज में बन्धुत्व भावना के प्रसार तथा सामाजिक उन्नति के कार्यों के सम्पादन हेतु हुआ है। यह समाज अपने क्षेत्र में समाज हित के कार्यों के प्रति सदैव जागरूक है।

इस समाज की यह विशेषता है कि गाँधी धाम के सभी अग्रवाल परिवार इसके सदस्य हैं और सभी विवाहित अग्रवाल भी पृथक रूप से इसके सदस्य हैं। इस प्रकार यह अग्रवाल समाज ६५० परिवारों का प्रतिनिधित्व करता है।

इस समाज का अपना भवन शहर के निकट ही है। इस भवन के भूखण्ड तल में १८ दूकानें तथा एक भण्डार घर बना हुआ है। इसके साथ ही रसोई घर तथा भट्टियां आदि बनी हैं जिनका उपयोग सामूहिक उत्सवों आदि पर किया जाता है। इस तल पर लगभग साढ़े तीन लाख रुपये लग चुके हैं और निर्माण कार्य चल रहा है जिस पर अभी अढाई लाख रुपये और व्यय होने का अनुमान है।

सभा के पदाधिकारियों तथा कार्यकारिणी सदस्यों के नाम निम्न प्रकार हैं—

अध्यक्ष—श्री नन्दलाल जी गुप्त
उपाध्यक्ष—श्री प्रह्लादराय जी गर्ग
मन्त्री—श्री ओम प्रकाश जी गोयल
उपमन्त्री श्री नौरतमल जी गुप्त
उपमन्त्री—श्री ज्ञान चन्द जी गर्ग
कोषाध्यक्ष—श्री बंसल लाल जी गोयल

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री आत्मा राम जी गोयल, रामवतार जी गोयल, फकीर चन्द जी बंसल, रामजीवन जी पोद्दार, नटवर लाल जी अग्रवाल, नरेश कुमार जी, सुदर्शन कुमार जी अग्रवाल, घनश्यामदास जी गुप्त; सुन्दर लाल जी गुप्त, किशन लाल जी गुप्त, के० एम० अग्रवाल।

सम्पर्क सूत्र—श्री ओम प्रकाश जी गोयल
मन्त्री—अग्रवाल समाज, अग्रवाल भवन,
प्लाट नं० १२६, सैक्टर-९, श्री अग्रसेन मार्ग, गाँधी धाम, (कच्छ)

अग्रवाल समाज ट्रस्ट (रजि०) सूरत

इस ट्रस्ट की स्थापना अगस्त १९७८ में हुई और नई कार्यकारिणी का निर्वाचन २६-९-८२ को हुआ। इसके २७५ सदस्य हैं जो ३०० परिवारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस ट्रस्ट से सामाजिक कार्यों के हितकारी कार्यों के लिए अब तक २ लाख ५० हजार रुपये का कोष एकत्रित किया है। यह समाज सर्वप्रथम अपना भवन निर्माण का कार्य प्राथमिकता के आधार पर अपने हाथ में ले रहा है। इसके लिए भवन समिति बन चुकी है। नियमित कार्यालय स्थापित कर दिये गये हैं।

वर्तमान पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य—

सभापति—श्री राम विलास जी गोयल,
उपसभापति—श्री ख्याली राम जी गुप्त
उपसभापति—श्री सुशील कुमार जी बिंदल
मन्त्री—श्री बी० एम० अग्रवाल जी
संयुक्त मन्त्री—श्री वासुदेव जी अग्रवाल
कोषाध्यक्ष—श्री तारा चन्द जी गोइन्का

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री राजकुमार गुप्त, सुरेन्द्र कुमार डालमिया, बाबू लाल मित्तल, कृष्ण कुमार अग्रवाल, पन्ना लाल जी गोयल, मोतीलाल जी मोदी, रामचन्द गुप्त, वजीरचन्द बंसल, भगवानदास झुन्झुनूवाला, रामनिरंजन अग्रवाल, एस० एम० अग्रवाल, राजकुमार कोकडा, रामवतार जी अग्रवाल, केशवदेव जी अग्रवाल,

सम्पर्क सूत्र—श्री बी० एम० अग्रवा
मन्त्री—अग्रवाल समाज ट्रस्ट (रजि०
जी० १३१६, ग्राउन्ड फ्लोर, सूरत टैक्सटाइल, रिंग रो
सूरत-३९५००२ (गुजरात

Remove Watermark Now

(४) महाराष्ट्र की अग्रवाल सभायें

अग्रवाल समाज पूना की स्थापना दिनांक २४-९-१९५७ ई० में हुई थी। सम्प्रति इस सभा के ४०० सदस्य हैं। इस सभा की स्थापना के उद्देश्य निम्न प्रकार हैं—

१. अग्रवाल समाज की सर्वांगीण उन्नति करना।
२. समाज में ऐसा वातावरण उत्पन्न करना जिससे आपस में भ्रातृभाव बढ़े और पारस्परिक विवादों का आपस में ही मिलजुल कर निपटारा कराया जाये।
३. अग्रवाल समाज में धार्मिक भावना को सुदृढ़ करने के लिये सत्संग सभा, कथा कीर्तन, मांगलिक कार्य उत्सव, विद्वान सन्तों और बाहर से आये हुये प्रवासी भाइयों के ठहरने के लिये "भवन" का निर्माण करना।
४. कुरीतियों का बहिष्कार एवं सद्गुणों का प्रसार।
५. असहाय, निर्धन, विधवा तथा अनाथ बालकों की सहायता करना,
६. होनहार विद्यार्थियों को आवश्यकतानुसार सहायता देना।
७. दैविक और भौतिक विपत्तियों में फँसे विपत्तिग्रस्त व्यक्तियों को सहायता पहुँचाना।
८. प्रतिवर्ष महाराजा अग्रसेन और समाज के महापुरुषों की जयन्ती मनाना।
९. मानव कल्याण के लिये विद्यालय, औषधालय, अस्पताल, पुस्तकालय, आदि की स्थापना करना।
१०. सभा की अचल सम्पत्ति की रक्षा के लिये न्यास (ट्रस्ट) की स्थापना करना।

अग्रवाल समाज पूना द्वारा सभा के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु "**श्री महाराजाधिराज अग्रसेन भवन ट्रस्ट**" का निर्माण किया गया है। इसी ट्रस्ट के अन्तर्गत अग्रसेन भवन का निर्माण किया गया है। इस भवन के निर्माण पर १९६१ से १९७२ तक ५ लाख रुपये की लागत आई है इस सभा भवन का अपना इतिहास है। हम इसे इस दृष्टि से अंकित कर रहे हैं कि इससे अन्य सभायें भी उत्साह प्राप्त कर सकें।

अग्रसेन भवन का इतिहास

पूना के अग्रवाल बन्धुओं की उत्कट अभिलाषा, द्विजवर पं० गजानन दायमा की प्रेरणा तथा श्री हीरा लाल जी सर्राफ की योजना से प्रेरित होकर समाज के कार्य-

कर्ताओं ने १९५७ ई० में अग्रवाल समाज की स्थापना की थी। इसके पश्चात १३ जनवरी १९६० ई० को श्री मान् राजा मुकुन्द लाल जी पित्ती के शुभ आशीर्वाद से एवं कार्यकर्ताओं के भागीरथ प्रयत्नों से अग्रवाल भवन के लिये भूमि क्रय की गई किन्तु दुर्भाग्य से महानगर पालिका ने इस भूखण्ड को नगर सुधार योजना के लिए सुरक्षित कर दिया। अतः कार्यकर्ताओं के सम्मुख बहुत विकट स्थिति पैदा हो गई। किन्तु सर्वश्री माखन लाल जी बगड़िया, राम किशन जी पित्ती, बद्री प्रसाद जी अग्रवाल आदि सज्जनों के अथक् परिश्रम तथा पूर्ण प्रयत्नों के फलस्वरूप ६ जून १९६१ को महानगर पालिका ने अपना निर्णय बदल दिया। अतः १४ दिसम्बर १९६१ ई० में श्री राजा मुकुन्द लाल जी पित्ती के करकमलों से रामटेकड़ी के उदासीन गुरु श्री १०८ श्री शारदा राम जी बाबा की अध्यक्षता में उत्साह पूर्ण वातावरण में सभा भवन की नीव रखी गई और तीन मंजिला सभा भवन का कार्य १९६७ में पूरा हो गया।

सभा भवन का कार्य योजनाबद्ध ढंग से सन् १९७२ तक चलता रहा। आज दिन सभा भवन चार मंजिला बन कर तैयार है और इसका वर्तमान मूल्य लगभग ५० लाख रुपये है।

अग्रवाल भवन ट्रस्ट के वर्तमान ट्रस्टी

आजीवन ट्रस्टी	प्रबन्धक ट्रस्टी
१. श्री राजा नन्दलाल मुकुन्दलाल पित्ती (चीफ ट्रस्टी)	१. सर्वश्री राधेश्याम मोहनलाल बगड़िया
२. श्री बाबूलाल चिरंजी लाल अग्रवाल	२. ,, मदनलाल सुभालाल अग्रवाल
३. श्री बद्रीप्रसाद किशोरीलाल अग्रवाल	३. ,, गंगाविसन टीकाराम अग्रवाल
४. श्री कपूरचन्द चन्दूलाल अग्रवाल	४. ललितकुमार ईश्वरलाल अग्रवाल
	५. राधेलाल अनन्तराम पाटौदिया
	६. श्रोतीलाल श्रीराम मित्तल
	७. जगन्नाथ बल्लेराम अग्रवाल

अग्रवाल सभा पूना के अन्तर्गत निम्नांकित संस्थायें सुचारु रूप से चल रही हैं—

१. श्री बंसीलाल रामनाथ अग्रवाल हिन्दी विद्यालय—यह विद्यालय महाराष्ट्र में हिन्दी माध्यम से प्रशिक्षण का संस्थान है जिसमें हिन्दी के माध्यम से ३५० विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस विद्यालय की इमारत का निर्माण सन् १९७७ में हुआ था।

२. अग्रसेन गृह निर्माण मण्डल—इस योजना के अन्तर्गत कोरेगाँव पार्क, में सहकारी ढंग से १०७ प्लाट्स बनाये गये हैं। इनके बीच में अग्रसेन हाल है।

३. अग्रवाल समाज महिला मंडल—महिलाओं में चेतना, जागृति और धार्मि भावों को बढ़ाने के लिये सभा के अन्तर्गत महिला मंडल का गठन किया गया है। मंडल के माध्यम से समाज में कुरीति निवारण और सद्गुणों की वृद्धि के उद्देश्य पूर्ति में आशातीत सफलता प्राप्त हुई है।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल समाज, पुणे के पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य निम्नांकित हैं—

अध्यक्ष—श्री राजा नन्दलाल मुकुन्दलाल पित्ती

उपाध्यक्ष—श्री बद्रीप्रसाद किशोरीलाल अग्रवाल श्री बाबूलाल चिरंजी लाल अग्रवाल
श्री कपूरचन्द चन्दूलाल अग्रवाल श्री मदनलाल सुभालाल अग्रवाल

प्रधान मन्त्री—श्री राधेलाल अनन्त राम पाटौदिया

सहायक मन्त्री—श्री द्वारकाप्रसाद बाघमल अग्रवाल
श्री देवकीनन्दन मोहनलाल अग्रवाल

कोषाध्यक्ष—श्री राधेश्याम मोहन लाल बगडिया

कानूनी सलाहकार—श्री रतनलाल घिसालाल जैन

आन्तरिक लेखा निरीक्षक—श्री जगन्नाथ बल्लेराम अग्रवाल

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री रघुनाथ बद्रीप्रसाद अग्रवाल, शान्ताराम बेणीराम अग्रवाल, श्रोतीसाल श्रीराम अग्रवाल, बशेश्वर जी गोयल, बालकिशन आर० मित्तल भगवती प्रसाद जानकी प्रसाद सराफ, सत्यनारायण श्रीनिवास जालान, कंवरलाल चिरंजीलाल चमड़िया, चण्डीप्रसाद मक्खनलाल, गोबिन्द गजानन जालान।

सम्पर्क सूत्र—श्री राधेलाल अनन्तराम पाटौदिया,
प्रधान मन्त्री—अग्रवाल समाज, अग्रसेन भवन,
१०८८ रविवार पेठ, पूना-४११००२

अग्रवाल सर्व सेवा सोसायटी, अग्रवाल नगर, चेम्बूर, बम्बई

आज से लगभग ३५ वर्ष पहले, जब देश का विभाजन हुआ था तब अनगिनत नर-नारी, बालक और वृद्ध अपने-अपने जन्म स्थानों को छोड़ने के लिए विवश हुए थे। यह विवशता केवल अपना और अपने पुरखों का स्थान छोड़ने की ही नहीं थी अपितु रोजी और रोटी की तलाश भी थी। इसी खोज में पंजाब के कुछ जिलों (जो आजकल हरियाणा राज्य में हैं) के कुछ अग्रवाल परिवार, अपने-अपने घर से दूर, बम्बई नगर के सुदूर उपनगर चैम्बूर के उस निर्जन स्थान में आकर बस गए, जहाँ वासी नाम का छोटा सा गाँव है। इसी स्थान को, इन पुरुषार्थियों ने अपने पौरुष और परिश्रम से जो आकार दिया उसी का नाम **"अग्रवाल" नगर** है।

संघर्ष भरे जीवन को जब थोड़ी सी शक्ति मिली, परिवारों के बिखरे लोग एक स्थान पर एकत्रित हो सके। सिर छिपाने का घर और धन्धा करने के लिए यहाँ के अग्रवाल भाइयों ने जब अपनी छोटी-छोटी दुकानें शुरू कर दीं तो सभी के मन में एकता, संगठन और एक ईंट तथा एक रुपये के उस आदर्श समाज को स्थापित करने की भावना जागी जिसकी स्थापना अग्रवाल जाति के आदि पुरुष प्रातः स्मरणीय महाराजा अग्रसेन जी ने की थी। वैसे भी महाराजा अग्रसेन जी के प्रति सभी के मन में संस्कार गहराई के साथ जमे हुए थे क्योंकि उनके जन्म स्थान महाराजा अग्रसेन जी की कर्म भूमि अग्रोहा

नगरी के आस-पास है। इन सभी आग्रेय वंशीय (अग्रवालों) ने अपनी धार्मिक, वैवाहिक और सामाजिक गतिविधियों और आवश्यकताओंके लिए एक ऐसे स्थान की आवश्यकता का अनुभव किया जहाँ वे सब एक साथ, एक जगह बैठकर, इन गतिविधियों का संचालन कर सकें। आवश्यकता पूर्ति के इस प्रस्ताव को चेम्बूर क्षेत्र में बसे सभी अग्रवाल भाइयों ने मान्यता प्रदान की। अत्यन्त अल्प अवधि में एक सुदृढ़ संस्था की स्थापना हो सकी। यही है वह संस्था **"अग्रवाल सर्व सेवा सोसाइटी"** इन सब में भावना थी, संगठन और सहयोग था। संस्था के बनने और उसके पंजीकरण होने में समय नहीं लगा। सभी सदस्यों और पदाधिकारियों ने इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए दिल खोलकर दान दिया और थोड़े से समय में ही अग्रवाल समाज भवन का निर्माण हो गया। इस निर्माण की पृष्ठभूमि में सभी अग्रवाल भाइयों का सहयोग तो है ही, वह धन भी है, जो सभी ने खुले दिल से दिया। संस्था के सभी सदस्य आजीवन सदस्य हैं। जैसा कि नाम से स्पष्ट है यह भवन देश के सभी धर्मों और जातियों की सेवा का मन्दिर है।

महाराजा अग्रसेन जी की पुण्य जयन्ती के शुभ अवसर पर २४ दिसम्बर १९७६ को श्री भजनलाल तुलाराम अग्रवाल की अध्यक्षता में अग्रवाल समाज भवन का वेद मन्त्रों के गान तथा महाराजा अग्रसेन जी की आरती के साथ उद्घाटन हुआ।

सभा की स्थापना सम्बन्धी विवरण

रजिस्ट्रेशन नम्बर : बम्बई २९६/७५/ जी बी० बी० एस डी एक्ट/एफ- ३७६२ (ब)
बी० पी० टी० एक्ट

टैक्स एक्जेम्पशन सर्टिफिकेट : BRC/SEC-80 [G]/CH-542-A/76-77 B,R NO, TERH/795[2]/191/76-77

स्थापना तिथि : अग्रसेन जयन्ती २४ अक्तूबर १९७६ तथा प्रथम पदाधिकारी

अध्यक्ष—श्री भजनलाल तुलाराम अग्रवाल
उपाध्यक्ष—श्री जनार्दन जगन्नाथ अग्रवाल
उपाध्यक्ष—श्री ओमप्रकाश मांगे राम अग्रवाल
कोषाध्यक्ष—श्री देवी चन्द काशी राम अग्रवाल
मन्त्री—श्री बदलूराम मंशाराम अग्रवाल
सांस्कृतिक मन्त्री—श्री सरस्वती कुमार जी दीपक

संस्था के प्रथम पांचों पदाधिकारी ही संस्था के ट्रस्टी हैं। संस्था के शेष ५ सदस्य हैं और सभी आजीवन सदस्य हैं।

इस संस्था का मूल उद्देश्य अन्य अग्रवाल संस्थाओं से सम्बन्ध स्थापित क उत्तम एवं ठोस विचारों का आदान-प्रदान करना व उन्हें जीवन में अपनाने का यत करना है।

pdfelement
Remove Watermark Now

संस्था ने अपने निजी समाज भवन में दैनिक प्रातः कालीन निःशुल्क योगासन व प्राणायाम की कक्षायें चलती हैं। इसके साथ ही संस्था ने वैदिक धर्म पर आधारित साप्ताहिक सत्संग का क्रम भी समाज भवन में शुरू कर दिया है।

अग्रवाल समाज संस्था, आर्वी (महाराष्ट्र)

इस संस्था की स्थापना सन् १९६१ ई० में हुई। सभा के सदस्यों की संख्या केवल सात है। किन्तु यह संस्था सामाजिक उन्नति एवं बुराइयों के निवारण के कार्यों में सदैव तत्पर रहती है।

यह सभा अपने क्षेत्र के लगभग ३०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करती है।

अग्रसेन स्मारक भवन अग्रवाल समाज, गोंदिया (महाराष्ट्र)

गोंदिया नगर भारत के मुख्य औद्योगिक नगरों में से एक है। यहाँ से सम्पूर्ण भारत के लिए चावल, लाख, गोंद एवं प्रसिद्ध बीड़ियाँ निर्यात होती हैं। सभी व्यवसायों में स्थानीय अग्रवाल समाज का मुख्य रूप से सहयोग है।

इसी नगर में श्री अग्रसेन स्मारक समिति, गोंदिया भारत में अग्रवाल बन्धुओं का एक प्रेरणास्पद संगठन है। इस समिति की स्थापना से पूर्व सन् १९५३ में स्थानीय अग्रवाल बन्धुओं की सदप्रेरणा से यहाँ "अग्रवाल सेवा समिति" की स्थापना अग्रसेन जयन्ती उत्सव पर की गई थी। इसके पश्चात् सन् १९५६ में समाज के कल्याण हित को दृष्टि में रखते हुए श्री 'अग्रसेन स्मारक भवन' के निर्माण की एक विशाल योजना बनाई गई। इस कार्य की सफलता के लिए स्थानीय अग्रवाल बन्धुओं ने मुक्त हस्त से योगदान दिया इसी अवसर पर श्री अग्रवाल सेवा समिति का नाम बदलकर श्री "अग्रसेन स्मारक समिति" रखा गया।

समाज हेतु शहर के मध्य में स्थान की आवश्यकता थी। कामठी निवासी श्री रामबाबू अग्रवाल व उनके परिजनों के उदार स्तुत्य दान से यह समस्या हल हो गई। इस भवन निर्माण का प्रमुख श्रेय श्रीमती जयदेवी बाई गंगा राम जी अग्रवाल गोंदिया निवासी को है। उन्होंने अपने जीवनकाल में ही अपने मकान का दान पत्र श्री "अग्रवाल सेवा समिति" के नाम से कर दिया था। उनकी मृत्यु के पश्चात् इस मकान को ७७११ रु० में बेच दिया गया। यह पुष्कल कोष ही आगे चलकर श्री "अग्रसेन स्मारक भवन" के निर्माण में सहायक हुआ।

इस विशाल स्मारक भवन का शिलान्यास ब्रह्मलीन परमश्रद्धेय समाजरत्न दानवीर सेठ सूरज मल जी अग्रवाल द्वारा दिनाँक ८-३-५८ को अति उत्साह पूर्ण वातावरण में हुआ।

यह संस्था समाज सेवा का सुदृढ़ स्वप्न है।

सम्पर्क—अग्रवाल समाज,
अग्रसेन स्मारक भवन,गोंदिया, (महाराष्ट्र)

अग्रसेन मंडल, नागपुर

नागपुर में अग्रवालों का आगमन १९वीं सदी में सन् १८१३ के आसपास हुआ। इसके पूर्व उस समय आबाद कामठी में, जो नागपुर से १० मील दूर है एक बड़ी फौजी छावनी थी तथा है। यहां अग्रवालों का आगमन १८वीं सदी में ही हो चुका था। विदर्भ में तो आगमन का काल १६वीं और १७वीं सदी है जब देश में मुगल शासन था और वे भारत के पश्चिम दक्षिण में भी अपने साम्राज्य का विस्तार कर रहे थे तो उनके साथ राशन दाना पूर्ति के लिए अग्रवाल भी आए और यहीं बस गए।

श्री अग्रसेन मंडल नागपुर की स्थापना सन् १९५० में श्री अग्रसेन जयन्ती उत्सव के अवसर पर हुई थी। इसकी रजत जयन्ती १९७५ में जयन्ती पर्व पर मनाई गई। संस्थापक अध्यक्ष श्री बाबू लाल जी गोयनका थे। सर्व श्री हरिकिशन अग्रवाल, स्व० मोती लाल तोदी, स्व० घनश्याम दास गोयनका, बिसम्बर दास घीवाले, रा० सा० गोपी किशन अग्रवाल आदि के सहयोग, परिश्रम और लगन से मंडल आज नागपुर विदर्भ और महाराष्ट्र में ही नहीं देश की एक ठोस संस्था बन गई है। श्री अग्रसेन भवन और श्री अग्रसेन छात्रावास अपनी उपयोगिता और जन सेवा से देश भर में ख्याति प्राप्त कर चुके हैं।

श्री अग्रसेन भवन नागपुर ही नहीं विदर्भ और महाराष्ट्र का एक सर्वोत्तम सार्वजनिक भवन है। यह नागपुर के हृदय स्थल गांधीबाग में है। १९५५ में इसके लिए ५० हजार रुपये में १२५०० वर्ग फुट जमीन ली गई और १९६०-६१ में इसका निर्माण प्रारम्भ हुआ। आज उसी भूमि पर विशाल भवन बना हुआ है

वर्तमान में शादी, विवाह, सभाओं आदि के लिए सभी साज सज्जा व सामग्री से युक्त यह भवन बहुत ही उपयोगी और सुविधाजनक है। इसकी २५००० रु० से अधिक वार्षिक आय से भवन निर्माण और समाजोपयोगी कार्य हो रहे हैं। भवन निर्माण में सर्व श्री बनवारी लाल पचेरी वाला, स्व० हरद्वारी मल गोयल, दुर्गा प्रसाद सर्राफ आदि का भारी योगदान है।

भवन के सामने चौक का नाम भी अग्रसेन चौक हो गया है और यहाँ अग्रसेन जी की मानवाकृत मूर्ति स्थापित भी की जा चुकी है जिस पर अनुमान से १।। लाख रुपये खर्च हुये हैं। नागपुर की बस्ती में भी ऐसे और अग्रसेन भवन बनाने की श्री अग्रसेन मण्डल की योजना है। इसके रजत जयन्ती वर्ष में एक अग्रसेन भवन बनाने का निर्णय भी कर लिया गया है।

सम्पर्क—श्री मन्त्री जी—अग्रसेन मंडल
अग्रसेन भवन, गांधी बाग; नागपुर

अग्रवाल सभा, नागपुर

मई १९७५ में नागपुर के पूरे अग्रवाल समाज की, श्री अग्रसेन भवन में, श्री

pdfelement
Remove Watermark Now

गोबिन्द लाल अग्रवाल की अध्यक्षता में हुई एक आम सभा में, सर्वानुमति से अग्रवाल सभा नागपुर की स्थापना की गई और श्री हरिकिशन अग्रवाल को उसका संयोजक चुना गया।

सभा ने विवाह सम्बन्धी अनेक क्रान्तिकारी सुधार किए हैं। यह सभा समाज में व्याप्त सामयिक बुराइयों को दूर करने के लिए सदैव तत्पर है।

सम्पर्क—श्री हरिकिशनजी अग्रवाल
राष्ट्रदूत, धर्मपेठ नागपुर

श्री अग्रवाल नवयुवक मण्डल, जलगांव (महाराष्ट्र)

इस संस्था का जन्म २६ जनवरी १९७१ को हुआ। इसके सदस्यों की संख्या २० है। यह मण्डल अपने क्षेत्र के लगभग ६० घरों का प्रतिनिधित्व करता है।

अग्रवाल समाज की जो भी सेवा सम्भव है उसके लिए इस संस्था के नवयुवक सदैव तत्पर रहते हैं।

अग्रवाल युवक मंडल, खाम गांव (महाराष्ट्र)

इस मण्डल की स्थापना सन् १९७०-७१ में हुई थी। सम्प्रति इसके सदस्यों की संख्या ३०० है। यह संस्था अपने क्षेत्र के लगभग १२०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करती है।

इस मण्डल का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक, शैक्षणिक, एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में समाज तथा देशोन्नति के लिए प्रयत्न करना है। मण्डल के अन्तर्गत अग्रवाल मुक्तद्वार वाचनालय चलता है।

मण्डल का अपना भवन 'अग्रवाल भवन' के नाम से विख्यात है। इस भवन पर लगभग दो लाख रुपये व्यय हुए हैं।

श्री राजस्थानी महिला मंडल, यवतमाल

यवतमाल नगर में राजस्थानी महिलाओं के पारस्परिक मिलन का कोई समुचित संस्थान न था अतः श्रीमती शान्ताबाई मोर की अध्यक्षता में २८-९-७१ में राजस्थानी महिला मंडल, यवतमाल की स्थापना की गई।

इस संस्था का मुख्य उद्देश्य पारस्परिक मिलन एवं त्यौहारों और धार्मिक उत्सवों को सम्मिलित रूप से मनाना है।

त्यौहारों के अतिरिक्त यह मंडल महाराजा अग्रसेन के जन्म दिवस पर विविध मनोरंजन कार्यक्रम एवं नाटिका का भी आयोजन करता है।

यह मंडल इतना उपयोगी सिद्ध हुआ है कि थोड़े समय में ही इसकी सदस्य संख्या १०८ पहुंच गई।

श्री अग्रसेन जयन्ती उत्सव (समिति), यवतमाल

इस संस्था की स्थापना सन् १९३१ में हुई थी। इसके सदस्यों की संख्या ३१ है। इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या लगभग २५०० है।

इस संस्था का उद्देश्य समाज सुधार है। इस कार्य की पूर्ति के अतिरिक्त यह समिति प्रति वर्ष अग्रसेन जयन्ती मनाती है और सामाजिक सुधार कार्यों के प्रति जागरूक है।

(५) राजस्थान की अग्रवाल सभायें

(३) राजस्थान अग्रवाल संघ (रजि०)

सर्व श्री सतीश चन्द्र जी अग्रवाल (भूतपूर्व) राजस्थान विधान सभा सदस्य के संयोजकत्व में, जयपुर के श्री गोकुल दास जी गोटेवाले, प्रो० नाथू लाल जी गर्ग, भगवान दास जी लड़ीवाला, दामोदर जी टाटी वाला, रामजी दास जी मगोड़ी वाला, बालकृष्ण जी गर्ग अजमेर, महादेव प्रसाद जी गोयल अलवर, गोपाल दास जी भरतपुर घनश्याम दान जी सवाई माधोपुर, श्याम लाल जी बंसल उदयपुर, खैराती राम जी जोधपुर, सीताराम जी टोंक, शिवनारायण जी मेड़ता सिटी, कृष्ण कुमार जी गोयल कोटा निवासी ने सन् १९५९ ई० में प्रान्तीय स्तर पर राजस्थान का अग्रवाल संगठन गठित करने की आवश्यकता अनुभव की। तदनुसार दिनाँक १९-५-५९ ई० को अग्रवाल कालेज भवन, जयपुर में, श्री सतीश चन्द्र जी अग्रवाल की अध्यक्षता में, दिनाँक २३-५-५९ को श्री रतीराम जी की अध्यक्षता में, तथा दिनाँक १९-८-५९ को श्री बालकृष्ण जी की अध्यक्षता में तदर्थ समितियों की बैठकें हुईं जिनमें प्रान्तीय स्तर पर राजस्थान का अग्रवाल संगठन गठित करने की रूप रेखा तैयार की गई और विधिवत इसके लिए संविधान का प्रारूप तैयार किया गया।

दिनाँक १३-९-५९ को अग्रवाल कालेज, जयपुर में श्री विजय लाल जी तायल, उदयपुर निवासी की अध्यक्षता में अग्रवाल प्रतिनिधि सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में "श्री राजस्थान अग्रवाल संघ" की स्थापना की गई और इसका विधान स्वीकार कर लिया गया।

इसी अवसर पर श्री चन्द्रभान जी टमाणी की अध्यक्षता में प्रथम कार्यकारिणी के निम्नांकित पदाधिकारी एवं सदस्य निर्वाचित हुए :—

अध्यक्ष—सर्व श्री बालकृष्ण जी गर्ग, अजमेर
उपाध्यक्ष—श्यामलाल जी, बंसल, उदयपुर
उपाध्यक्ष—खैराती राम जी अग्रवाल, जोधपुर
मन्त्री—गोकुल दास जी गोटा वाला
संयुक्त मन्त्री—भगवान दास जी लड़ीवाला
कोषाध्यक्ष—नाथू लाल जी गर्ग, जयपुर

pdfelement
Remove Watermark Now

कार्यकारिणी सदस्य—

१. सर्व श्री सतीश चन्द्र जी अग्रवाल, २. चन्द्रभान जी टमाणी, ३. माधव बिहारी जी ताल्लुका, जयपुर, ५. गोपाल दास जी, भरतपुर, ६. घनश्याम दास जी, सबाई माधोपुर, ७. सीताराम जी विदावत, सीकर, ८. श्याम लाल जी गर्ग, फुलेरा, ९. राम निवास जी, जौबनेर, १०. राम लाल जी सर्राफ, निवाई, ११. रामस्वरूप जी, किशन गढ़, १२. शिवनारायण जी, मेड़ता, १३. महादेव प्रसाद जी गोयल, अलवर, १३. कृष्ण कुमार जी गोयल, कोटा, १४. सर्वेश्वर लाल जी अग्रवाल, अजमेर, १५. श्री हरिश्चन्द्र जी गोयल, उदयपुर

जयपुर के इस प्रथम अधिवेशन में पारित प्रस्ताव निम्न प्रकार हैं :—

(१) आर्थिक दशा से पीड़ित अग्रवालों की दशा सुधारने के लिए सहकारी संस्थाओं की स्थापना की जाए।

(२) जातीय कोष की स्थापना करने का निश्चय हुआ जिसके माध्यम से होनहार छात्रों की शिक्षा, स्त्री शिक्षा एवं निर्बल वर्ग को आर्थिक सहायता देने का निर्णय हुआ।

(३) समाज में व्याप्त पर्दा-प्रथा को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त किया जाए।

आगामी अधिवेशनों का क्रम

१. श्री राजस्थान अग्रवाल संघ का द्वितीय अधिवेशन ११ जून १९६१ ई० को अजमेर में हुआ।

२. इस संघ का तृतीय अधिवेशन २-३ जून १९६२ को अलवर में हुआ।

३. ६ जौलाई १९६३ को चतुर्थ अधिवेशन ब्यावर में सम्पन्न हुआ।

इसके पश्चात् संघ को बड़े संघर्ष का सामना करना पड़ा। लेकिन कर्मठ कार्यकर्ताओं ने बड़े साहस एवं त्याग से इस संस्था को आगे बढ़ाने के भरसक प्रयत्न किए।

४. अन्तिम अधिवेशन जोधपुर में १३-१४-१५ सितम्बर १९७२ में हुआ।

५. दिनाँक २०-२-७२ को ब्यावर में कार्यकारिणी की बैठक हुई जिसमें संघ की उन्नति के लिए गम्भीरता से विचार हुआ।

सदस्यों से सम्पर्क बनाए रखने के लिए अग्रसेन जयन्ती १९७२ से एक "त्रयमासिक पत्रिका" प्रकाशित करने का निश्चय किया गया।

यह सभा लगातार अपने प्रयत्नों के प्रति जागरूक है और इसके अधिवेशन लगातार होते रहते हैं। सम्प्रति इसके साथ २६ से अधिक अग्रवाल सभायें सम्बद्ध हैं।

वर्तमान पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य

१. **अध्यक्ष**—श्री माणक चन्द जी गुप्त, १ अशोक सर्किल, अलवर। फोन-२८२२३८,

२. **वरिष्ठ उपाध्यक्ष**— श्री भगवान दास डाणी, लालान गली, ब्यावर (राजस्थान)

३. **उपाध्यक्षा**—श्रीमती फूलकंवर देवी अग्रवाल, १६, सिटी स्टेशन रोड, उदयपुर

४. **महामन्त्री**—श्री देवकी नन्दन अग्रवाल, हलवाई बाजार, फुलेरा (राजस्थान)

५. **मन्त्री**—श्री रूपचन्द जी सर्वश्री नर्वदाप्रसाद रूपचन्द, बजाजा बाजार, अलवर

६. **मन्त्री**—श्री राजकुमार मानसिंहका, सर्वश्री मानसिंहका इलेक्ट्रिक स्टोर्स, भीलवाड़ा

७. श्री मोहनलाल जी सिंहल, केशवकुंज, अग्रसेन बाजार, कोटा (राजस्थान)

कार्यकारिणी सदस्य

१. श्री दामोदर प्रसाद जी अग्रवाल, गुलाबचन्द रामनिवास, विजयनगर

२. श्री मगतूराम जी गर्ग, राजेश कृषि यंत्रालय, गोबिन्दगढ़ (अलवर) राजस्थान

३. श्री रामनिवास जी गोयल, हैडक्लर्क संकलन कार्यालय, पश्चिमी रेलवे, अजमेर

४. श्री राजेन्द्र प्रसाद अग्रवाल, ऐडवोकेट, सदर बाजार, केकड़ी (अजमेर)

५. श्री पुरुषोत्तमदास अग्रवाल, गोपाल सदन मानकपाडा, बाडी (धौलपुर)

६. श्री राधेश्याम बंसल, बंसल तम्बाकू कम्पनी, पेच एरिया, भीलवाडा (राजस्थान)

७. श्री बालकिशन जी पोद्दार, सर्वश्री कृष्णा ट्रेडिंग कम्पनी, बाजार न० ३, भीलवाड़ा

८. श्री सत्यनारायण जी सिंहल, सर्वश्री सिंघल इंजीनियरिंग कम्पनी, टोंक (राज०)

९. श्री प्रेम कुमार जी श्री आत्माराम प्रेम कुमार, ८/१६, दर्जीगली, ब्यावर

१०. श्री चंचल कुमार गोयल, ६, शिवाजीनगर, सिटी स्टेशन रोड, उदयपुर (राज०)

११. श्री मोहन लाल जी गर्ग, ७/२१, क्रिश्चियनगंज, ब्यावर (राजस्थान)

१२. श्री राधाकृष्ण जी गोयल, ऐडवोकेट, सुभाष बाजार, टोंक (राजस्थान)

१३. श्री पुष्कर मेडतिया, सर्वश्री मेडतिया ब्रदर्स, सूरजपोल, उदयपुर (राजस्थान)

१४. श्री वीरेश जी सिंघल, सिंघल टैक्सटाइल हाउस, टाउनहाल रोड, उदयपुर

१५. श्री बनारसी दास अग्रवाल, सर्वश्री रामजीलाल बनारसीदास, खैरथल (राज०)

१६. श्री अजी रामजी, कठूमर रोड, खेरली (अलवर) राजस्थान

१७. श्री केदार शरण सिंहल, अग्रवाल नवयुवक मंडल, नगर (भरतपुर) राजस्थान

१८. श्री अमोलक चन्द जैन, सरपंच अरनिया केदार, झराना (टोंक) राजस्थान

१९. श्री शिव लाल किल्ला, किल्ला भवन, अग्रवाल स्ट्रीट, लाडनूं (नागौर) राजस्थान

२०. श्री चिरंजी लाल जी पोद्दार, अग्रवाल सभा, भरतपुर (राजस्थान)

२१. श्री गयाजीत लाल गुप्त, ऐडवोकेट, श्री कुहूमल बजाज, करौली, राजस्थान

२२. श्री घनश्याम दास जी, अग्रवाल-समिति, बहादुरपुर (अलवर) राजस्थान

२३. श्री नन्नूमल अग्रवाल, अग्रवाल समाज समिति, बड़ौदा मेव (अलवर) राजस्थान

२४. श्री जगदीश प्रसाद जी गोयल, अग्रवाल समाज, गढ़ी सवाईराम, (अलवर) राज०

२५. श्री शिवचरण लाल जी ऐडवोकेट, प्लाट नं० २९३, आर्यनगर, अलवर (राज०)

२६. श्री सीताराम जी मंगल, अग्रवाल नवयुवक सम्मेलन, अजीतगढ़ (सीकर) राज०

parliament
Remove Watermark Now

सम्पर्क सूत्र

१. श्री माणक लाल जी गुप्त,
(१) अशोक सर्किल, अलवर (राजस्थान)
(२) ३८, होप सर्कस, अलवर (राजस्थान)

श्री देवकी नन्दन अग्रवाल,
महामन्त्री—राजस्थान अग्रवाल संघ,
हलवाई बाजार, फुलेरा (राज०)

श्री अग्रवाल समाज समिति, जयपुर

(१) **श्री अग्रवाल समाज समिति**—यह संस्था जयपुर समाज की सभी गतिविधियों का संचालन करती है। इसके अन्तर्गत बहुत बड़ी चल-अचल सम्पत्ति है। यह समिति उसकी भी देखभाल करती है तथा अग्रसेन जयन्ती महोत्सव व अन्य सामाजिक आयोजन करती है। अपनी आय का आधा भाग श्री अग्रवाल शिक्षा समिति को शिक्षण संस्थायें चलाने हेतु देती हैं।

यह समिति समाज में कुरीतियों के निवारण के कार्य में सदैव सतर्क रही है।

(२) **श्री अग्रवाल शिक्षा समिति**

यदि अग्रवाल समाज समिति के साथ इसकी महान संस्था अग्रवाल शिक्षा समिति का परिचय न कराया जाये तो यह परिचय अधूरा ही रह जाएगा। इसके अन्तर्गत जयपुर में चार शिक्षण संस्थाएं चलती हैं—१. अग्रवाल कालेज, २. अग्रवाल हायर सैकण्डरी स्कूल, ३. अग्रवाल प्राइमरी स्कूल, ४. अग्रसेन शिशु मन्दिर।

इस शिक्षण संस्था का पूर्व इतिहास सबके लिए प्रेरणा का स्रोत है। अतः इसका संक्षिप्त परिचय हम यहाँ दे रहे हैं :—

यह शिक्षा केन्द्र १९४८ तक शहर में विद्याधर के रास्ते मैं स्थित भवन में था जिसे सेठ धोंकल जी लड़ी वालों ने दान दिया था। सन् १९४८ में समाज के प्रतिष्ठित महानुभावों के अथक प्रयासों के फलस्वरूप वर्तमान श्री अग्रसेन कटला, सवा चार लाख रुपये की धनराशि से खरीदा गया जिसका मुख्य श्रेय सूरज मल जी समरायवालों को है। इसके वर्तमान स्वरूप में श्री अग्रवाल कालेज होस्टल, श्री अग्रवाल उच्च माध्यमिक विद्यालय, तरुण ताल एवं खेलों के मैदान स्थित हैं।

शिशु कक्षा से विधि संकाय तक लगभग ४००० छात्र एवं छात्राएँ विद्याध्ययन करते हैं। इनकी शिक्षा हेतु यहाँ विशेष योग्यता प्राप्त प्राध्यापक, अध्यापक एवं अध्यापिकाएँ हैं जिनकी संख्या १६२ है। कालेज में कुछ विदेशी छात्र भी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इनमें बर्मा व अफ्रीका के छात्र भी हैं। कालेज होस्टल में ३८ कमरे हैं।

अग्रवाल कालेज—जयपुर में आगरा रोड पर अग्रसेन कटला (पूर्व नाम श्री नथमल जी का कटला) सुविख्यात है। इस स्थान पर एक विशाल भवन के दर्शन होते हैं जहाँ २००० के लगभग विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं। इसी भवन का नाम अग्रवाल कालेज भवन है।

१० जुलाई, १९१८ ई० का शुभ दिन धन्य था जब अंकुर रूप में प्राथमिक

स्कूल का उदय हुआ। सन् १९२० में यही अंकुर बढ़ कर माध्यमिक विद्यालय का रूप धारण कर गया। सन् १९४४ में यह संस्था बढ़कर उच्च विद्यालय में बदल गई। सन् १९५४ में वाणिज्य कला संकाओं में इण्टर मीडिएट की कक्षाएँ चालू हो गईं। सन् १९५७ ई० में वाणिज्य में 'स्नातक स्तर' कक्षाएँ लगने लगीं और १९१८ ई० का अंकुर १९५७ में बढ़ कर डिग्री कालेज का रूप धारण कर गया। इस कालेज में १९५८ ई० में कला संकाय एवं १९६२ ई० में विज्ञान संकाय भी प्रारम्भ हो गये।

अब इस कालेज में वाणिज्य, कला तथा विज्ञान की 'स्नातक स्तर' की शिक्षा का ऐसा सुन्दर प्रबन्ध है कि यह संस्था राजस्थान की अग्रणीय शिक्षण संस्थाओं में अपना विशिष्ट स्थान बनाये हुए है।

हाल ही में श्री अग्रवाल महाविद्यालय, जयपुर को उसकी विशिष्टता को ध्यान में रखते हुए, प्रसिद्ध उद्योगपति श्री नन्दकिशोर जी अग्रवाल ने ५१०००) का अनुदान दिया है।

इस कालेज की स्वर्ण जयन्ती सन् १९६८ में मनाई गई थी।

श्री अग्रवाल समाज समिति की कीर्ति ध्वजा, जयपुर शहर के मध्य में स्थित विद्याधर के रास्ते में पुराने सुन्दर भवन में अग्रवाल शिशु मन्दिर मान्टेसरी पद्धति के प्रमुख विद्यालय तथा इसी भवन में 'अग्रवाल ब्राँच स्कूल' पर भी, फहरा रही है।

सम्पर्क सूत्र

श्री वीरेन्द्र प्रसाद जी ऐडवोकेट,
प्रधान—श्री अग्रवाल समाज समिति,
४०६, गोविन्दराय जी का रास्ता,
जयपुर (राज०) फोन-७६२७

श्री वेदव्रत गुप्त ऐडवोकेट,
मन्त्री—श्री अग्रवाल समाज समिति,
२ ख-१६, जवाहर नगर, जयपुर

श्री अग्रवाल नवयुवक मंडल, जयपुर

इस मंडल की स्थापना २८ जून, १९५५ ई० में हुई थी। इस क्षेत्र में लगभग १५०० अग्रवाल हैं। इस मंडल की स्थापना में निम्नांकित सदस्यों का विशेष योगदान रहा :—

सर्वश्री कुमार मित्तल, योगेश्वर, सतीश चन्द अग्रवाल, भगदान दास लड्डीवाला, नाथू लाल तथा दामोदर दास।

यह संस्था अपने नगर की सक्रिय संस्था है जिसका कार्य क्षेत्र विस्तृत है। इसके द्वारा जनहित के जो कार्य होते हैं उनमें प्रमुख हैं—१. बुक बैंक, २. वृद्धावस्था पेंशन, ३. मैरिज ब्यूरो, ४. रोजगार ब्यूरो, ५. महिला सिलाई केन्द्र।

सम्पर्क—श्री बिहारी लाल सामौदिया
सामौदिया भवन, खेतड़ी रोड, जयपुर (राज०)

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल पंचायत समिति, लक्ष्मणगढ़

इस संस्था की स्थापना २६ मार्च सन् १९६३ में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या २१ है। इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या २००० है। इसकी स्थापना का उद्देश्य नगर के समस्त अग्रवालों की सर्वतोमुखी उन्नति के लिए प्रयत्न करना है।

इस पंचायत समिति का अग्रवाल धर्मशाला नाम से एक भवन है जिसकी लागत लगभग एक लाख रुपये है। साथ ही इस संस्था के संरक्षण में एक अग्रवाल नवयुवक संघ सक्रिय रूप से कार्यरत है जो इस समिति के सभी कार्यों में सदैव तत्पर रहता है और समाज की अच्छी सेवा करता है। यहाँ के नवयुवकों में उत्साहपूर्वक समाज के हित में कुछ करने की क्षमता है। सभा के पास एक साथ १० विवाहों पर काम आने वाला सामान उपलब्ध है।

वर्तमान पदाधिकारी

अध्यक्ष—श्री नागरमल जी जाजोदिया **उपाध्यक्ष**—श्री मोहन लाल जी सरावगी
मन्त्री—श्री ब्रह्मदत्त जी डिडवानिया **भण्डारी**—श्री भोलाम राम जी
उपमन्त्री एवं कोषाध्यक्ष—श्री मांगी लाल जी मगलूणवाला

सम्पर्क सूत्र—श्री मांगी लाल जी मगलूणवाला,
अग्रवाल पंचायत समिति, लक्ष्मणगढ़ (सीकर)

अग्रवाल संसद्, चूरू (राजस्थान)

इस संस्था की स्थापना सम्वत् २०३३ विक्रमी में हुई थी। इसके सदस्यों की संख्या १०० से अधिक है। यह सभा अपने क्षेत्र के घने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है।

प्रति वर्ष अग्रसेन जयन्ती सोल्लास मनाना, सभी भारतीय पर्वों पर उत्सवों का आयोजन करना, समाज में कुरीतियों का निवारण करना, समाज के कमजोर वर्ग को हर प्रकार से सहायता और सहयोग देना आदि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इस सभा का उदय हुआ है। इस सभा की एक अनुकरणीय विशेषता यह है कि यह प्रतिवर्ष समाज के वृद्धजनों को मानपत्र तथा अंग वस्त्रम् भेंट करके, सम्मानित करती है। अपने समाज का बौद्धिक स्तर उठाने के लिए यह सभा बाहर से विद्वानों को आमन्त्रित करके उनके प्रवचन कराती रहती है।

अग्रवाल संसद्, चूरू (राजस्थान) की सुपरिचित और जागृत सार्वजनिक सामाजिक संस्था है।

सम्पर्क सूत्र

श्री राम निवास जी बाजोरिया — अध्यक्ष—अग्रवाल संसद्, चूरू (राजस्थान)
श्री विश्वनाथ जी धानुका — मन्त्री—अग्रवाल संसद्, चूरू (राजस्थान)

अग्रवाल संघ, जौबनेर (राज०)

अग्रवाल संघ, जौबनेर एक पुरानी संस्था है। जब से इस संस्था का प्रादुर्भाव एवं उत्थान हुआ है तभी से इसके अध्यक्ष पद पर श्री श्रीनारायण अग्रवाल 'सेवक' आसीन रहे हैं जो राजस्थान अग्रवाल संघ के खजाँची तथा अणुव्रत समिति, जौबनेर के प्रधान मंत्री रहे हैं।

इस संस्था में विवाह आदि कार्यों में काम आने वाले कई प्रकार के बर्तन, दरियाँ तथा अन्य वस्तुएँ उपलब्ध हैं, जो सामाजिक कार्यों में निःशुल्क तथा अन्य वर्ग को सामान्य किराए से प्राप्त हो सकती हैं।

यहाँ एक अग्रवाल धर्मशाला तथा एक पंचायती भवन है जहाँ यात्रियों को ठहरने की पर्याप्त सुख-सुविधाएँ हैं। संघ के अध्यक्ष जी सात्विक वृत्ति के सुशिक्षित एवं हिन्दी के माने हुए व्यक्ति व कुशल लेखक हैं, जो सामाजिक कार्यों में यथा समय अपना पूर्ण योगदान प्रदान करते रहते हैं। यहाँ के लोगों में पूर्ण संगठन है। यहाँ अग्रवालों के ३५ घर हैं जो सभी सिंहल गोत्री हैं।

सम्पर्क—श्री श्रीनारायण अग्रवाल
प्रधान—अग्रवाल संघ, जौबनेर (राज०)

अग्रवाल युवा संघ, बीकानेर

इस संस्था की स्थापना ६ जून, सन् १९७६ में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या २०० है। पुरानी लीक से हट कर समाज में नया प्रकाश और नई लहर लाना तथा जर्जरित रूढ़ियों से समाज को मुक्त कराना इस संस्था का प्रमुख लक्ष्य है। पत्र प्रकाशन, सामाजिक कुरीति उन्मूलन, साक्षरता अभियान, शिक्षण संस्थाओं की स्थापना, सीखो और कमाओ योजना का प्रचार एवं साहित्य सृजन इस युवा संघ का कार्यक्रम है। अग्रवाल समाज में फैली दहेज प्रथा के विरुद मोर्चा लेना और समाज को इस बुराई से मुक्त कराने का भरसक प्रयत्न इस संघ का मूल लक्ष्य है।

सम्पर्क सूत्र—

श्री राजेश जी गोयल,
गंगाशहर रोड, बीकानेर

श्री सुभाष चन्द्र जी अग्रवाल
अग्रवाल युवा, संघ,
रानीबाजार, बीकानेर

अग्रवाल महा सभा, अलवर

इस सभा की स्थापना श्री अग्रसेन जयन्त पर्व सन् १९४७ में हुई थी। इस सभा के प्रचार क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या ८००० है और सभा के सदस्यों की संख्या ६०० है। इस सभा का कार्य बहुत विस्तृत है अतः कार्य को सुचारु रूप से संचालित करने के लिये निम्नांकित प्रबन्ध समितियाँ कार्यरत हैं—

pdfelement
Remove Watermark Now

१. छात्रावास प्रबन्ध कमेटी, २. श्री मन्दिर प्रबन्ध कमेटी, ३. श्री धर्मशाला प्रबन्ध कमेटी, ४. पाठशाला प्रबन्ध कमेटी, ५. अन्नक्षेत्र प्रबन्ध कमेटी, ६. वाचनालय कमेटी, ७. वस्तु भण्डार कमेटी, ८. सत्संग भवन कमेटी, ९. निर्माण कमेटी, १०. श्री अग्रवाल नवयुवक मंडल, ११. श्री महिला मंडल सिलाई, कढ़ाई बुनाई केन्द्र कमेटी।

जिला अलवर के समस्त ग्रामों और तहसीलों में भी इस सभा की समाज सेवा का कार्य फैला हुआ है। इस सभा का कार्यालय श्री अग्रवाल धर्मशाला में ही स्थापित किया गया है।

इस सभा की स्थापना के उद्देश्य समाज संगठन, समस्त अग्रवाल बन्धुओं की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक उन्नति करना है। पारस्परिक मतभेदों को शान्तिपूर्वक निपटाने का प्रयत्न करना भी इस सभा के कार्य क्षेत्र में है। असहाय तथा बेरोजगार बन्धुओं की आजीविका का प्रबन्ध करना इस सभा का प्रमुख कार्य है।

सभा का अपना भवन है जिसका क्षेत्रफल १२०८.७५ वर्ग फीट है। इस भवन में धर्मशाला, मन्दिर, छात्रावास, विद्यालय, सत्संग भवन की दुमंजली इमारत तथा सामने के भाग में दूकान तथा गैराज हैं।

धर्मशाला का प्रयोग यात्रियों के ठहरने के लिये तथा विवाह आदि समारोहों के लिये होता है। इस में चार बारातें एक साथ ठहर सकती हैं। धर्मशाला का भवन दो मंजिला है जिसके साथ सुन्दर बगीचा है। इसका विस्तृत प्रांगण है, निजी जलपूर्ति शाला है और सभी सुविधाओं से परिपूर्ण है।

माध्यमिक विद्यालय में ७५० के लगभग छात्र एवं छात्राएँ वर्तमान में विद्याध्ययन कर रहे हैं कि जिसमें छोटे बच्चों के लिये मॉटसरी पद्धति से प्रारम्भिक शिक्षा का ज्ञान भी कराया जाता है।

इसी भवन में एक छात्रावास बना हुआ है जिसमें करीब १०० छात्रों के आवास की व्यवस्था है तथा वार्डन छात्रावास का आवासीय भवन भी प्रथक से इसी कक्ष में बना हुआ है। इसी प्रांगण में एक पुस्तकालय एवम् वाचनालय भी चलता है जिसमें प्रतिदिन सैकड़ों नागरिक आकर उसका लाभ उठाते हैं।

इसी भवन में अग्रवाल महिला मंडल द्वारा संचालित केन्द्रों में कन्याऐं सिलाई कढ़ाई व बुनाई का निशुल्क प्रशिक्षण प्राप्त करती है, आत्मनिर्भर होने की दिशा हेतु प्रायोगिक शिक्षा की भी व्यवस्था है।

इसी प्रांगण में भगवान श्री लक्ष्मीनारायण जी महाराज के मन्दिर में प्रतिदिन सैकड़ों भक्त लोग आकर दर्शन लाभ उठाते हैं और मन की शान्ति पाते हैं। प्रतिदिन सैकड़ों नर नारी सत्संग भवन में महापुरुषों के सत्संग का व प्रवचनोंका लाभ उठाते हैं।

भगवान श्री लक्ष्मीनारायण जी की कृपा से अनवरत चला आ रहा अन्न क्षेत्र हैं जिसके अन्तर्गत प्रतिदिन लगभग ४०-५० व्यक्ति निशुल्क भोजन प्राप्त करते है।

श्री अग्रवाल महा सभा, अलवर के पदाधिकारी और कार्यकारिणी सदस्य—

१. **अध्यक्ष**—श्री बाबू लाल जी गोयल, अग्रवाल
वरिष्ठ उपाध्यक्ष—श्री गंगा सहाय जी
उपाध्यक्ष—श्री भगवानदास जी सिंघल
४. **मन्त्री**—श्री राजेन्द्र कुमार जी मित्तल
५. **मन्त्री**—श्री कश्मीरी लाल जी गोयल
६. **प्रचार मन्त्री**—श्री बुद्ध लाल जी सिंघल
७. **एकाउंटेंट**—श्री नानग राम जी सिंघल
८. **कोषाध्यक्ष**—श्री भजन लाल जी अग्रवाल
९. **संयोजक निर्माण**—श्री श्याम लाल जी गोयल,
१०. **संयोजक विद्यालय**—श्री रूप चन्द जी बंसल,
११. **संयोजक पुस्तक भंडार**—श्री पुरुषोत्तम दास जी,
१२. **संयोजक वाचनालय**—श्री सुशील कुमार जी बंसल,
१३. **संयोजक छात्रावास**—श्री कान्तीचन्द्र जी गर्ग,
१४. **संयोजक धर्मशाला**—श्री श्रीनिवास जी
१५. **संयोजक सत्संग**—श्री मंगत राम जी गुप्त,,
१६. **संयोजक अन्न क्षेत्र**—श्री ओस प्रकाश जी गुड़वाले,
१७. **संयोजक नवयुवक मंडल**—श्री महावीर प्रसाद जी,
१८. **संयोजक सिलाई, कढ़ाई, बुनाई केन्द्र एवं महिला मंडल**-श्रीमती रमा जी गोयल,

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री योगेश चन्द्र जी गोयल भूतपूर्व उपाध्यक्ष, पुरुषोत्तम नारायण जी कसेरा, ज्ञानचन्द जी खेरलीवाले, बाबूराम जी अटेलीवाले, श्यामसुन्दर जी अग्रवाल, ओम प्रकाश जी गुड़वाले, श्रीमती इन्दुवाला जी, सुश्री इन्द्रा जी अग्रवाल।

सम्पर्क सूत्र—श्री राजेन्द्र कुमार जी मित्तल
मन्त्री—श्री अग्रवाल महा सभा,
अग्रसेन मार्ग, अग्रसेन भवन, अलवर (राजस्थान)

अगवाल समाज, खेरली (अलवर)

राजस्थान के अलवर जिले में खेरली एक प्रसिद्ध व्यापारिक मण्डी है। इसकी स्थापना लगभग ७५ वर्ष पूर्व तत्कालीन अलवर नरेश महाराज जयसिंह ने की थी। इसी कारण इसका नाम जयगंज खेरली पड़ा।

यह स्थान अलवर, जयपुर, भरतपुर रियासतों के मध्य में होने के कारण इ मण्डी का विशेष महत्व रहा है। इसी कारण यह स्थान अग्रवालों का प्रमुख व्यापारि केन्द्र बन गया है। सम्प्रति इस मण्डी में अग्रवालों के २२५ परिवार निवास करते जिनकी जनसंख्या १००० से अधिक है। इन परिवारों में अग्रवालों के १८ गोत्रों में १३ गोत्र के अग्रवाल पाये जाते हैं।

संगठन : राजनीतिक विचार भिन्नता के रहते हुए भी अग्रवाल संगठन क

pdfelement
Remove Watermark Now

दृष्टि से सभी परिवारों के विचार एक हैं। इसी कारण समाज सुधार के जितने भी नियम अग्रवाल समाज की ओर से प्रचलित किये जाते हैं उनका विधिवत सभी अग्रवाल परिवार सहर्ष पालन करते हैं। खेरली के अग्रवालों की एकमात्र सामाजिक संस्था "श्री अग्रवाल समाज" है। इसकी स्थापना दिनांक २२-१०-६७ को कतिपय अग्रवाल बन्धुओं की प्रेरणा से हुई।

सभा का सर्वप्रथम विधान : सर्वप्रथम इस संस्था का विधान बनाने का कार्य श्री ला० भगवती प्रसाद जी अग्रवाल को सौंपा गया और उनके द्वारा प्रस्तुत विधान का प्रारूप दिनांक ११-१-६८ को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। इस विधान के प्रकाशन में अग्रोहाज्योति के सम्पादक श्री निरंजन लाल गौतम, शाहदरा दिल्ली का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ।

सदस्यता अभियान : स्थानीय समस्त अग्रवाल परिवारों की वास्तविक स्थिति की जानकारी हेतु वार्षिक सदस्यता फार्म भरवाए गये जिनसे समाज की जन-संख्या, शिक्षा, गोत्र आदि की जानकारी प्राप्त हो गई। सदस्यता शुल्क प्रति परिवार से १) वार्षिक लिया गया।

वस्तु भण्डार की स्थापना : दिनांक ३-२-६८ को समाज ने एक वस्तु भण्डार की स्थापना मात्र ८०००) आठ हजार की लागत से की और जन साधारण को सामान किराये पर देकर सुविधा प्रदान की गई। आज इस भण्डार का स्वरूप विशाल रूप धारण कर चुका है और इसका वर्तमान मूल्यांकन १ लाख रुपये से अधिक का है।

अग्रवाल भवन की योजना : इस संस्था ने अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु एक भूखण्ड १२५०) में क्रय किया जिस पर धर्मशाला और छात्रावास के लिए विशाल भवन का निर्माण कराया गया। इस पर लगभग दो लाख रुपये व्यय हुए हैं।

समाज सुधार : यह संस्था प्रतिवर्ष महाराजा अग्रसेन जयन्ती पर विचार गोष्ठियों में समाज सुधार के लिए नियम बनाती है और गत वर्ष के बनाये गये नियम पालन का जायजा लेती है।

(१) सर्वप्रथम इस समाज ने विवाह पर दहेज दिखावा, अश्लील गीत, नाटक, सिनेमा, आतिशबाजी आदि पर पाबन्दी लगाई और उनका समाज द्वारा पालन कराया।

(२) दूसरे चरण में निकासी सीमित की तथा मृत भोज पूर्ण रूप से बन्द कर दिया। लड़की देखने या गोद भरने के लिए केवल पाँच व्यक्ति (स्त्री-पुरुष) जा सकते हैं।

अग्रोहाज्योति एवं अखिल भारतीय परिचय ग्रन्थ के सम्पादक श्री निरंजन लाल गौतम का, जो खेरली की कई जयन्तियों पर भाग लेते रहे हैं, विचार गोष्ठियों में यह सुझाव दण्ड या बहिष्कार से नियम पालन नहीं होंगे अपितु नियमों के उल्लंघन होने पर या नियम भंग होने की सम्भावना होने पर व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा समझा बुझा कर

नियम पालन कराने की नीति अधिक सफल हुई है, अत्यन्त सराहनीय एवं सफल सिद्ध हुआ है।

यह संस्था प्रतिवर्ष महाराजा अग्रसेन जयन्ती भव्यता के साथ मनाती आ रही है। प्रतिवार महाराजा अग्रसेन की सवारी प्रत्येक अग्रवाल परिवार के द्वार तक जाती है जहाँ आरती उतारी जाती है और चढ़ावा भी चढ़ाया जाता है। महाराजा अग्रसेन की सवारी का यह दृश्य अविस्मरणीय होता है।

इस समाज के कर्मठ कार्यकर्ता श्री ज्ञान चन्द जी, केदार नाथ जी तथा भगवती प्रसाद जी सर्राफ का इस संस्था को प्रारम्भ से ही सहयोग प्राप्त रहा है।

अग्रवाल सभा, तिजारा (अलवर)

इस सभा की स्थापना सन १९७१ ई० में हुई थी। इस क्षेत्र में १५५ अग्रवाल, परिवार हैं जिनमें ९५ परिवार जैन धर्मावलम्बी अग्रवालों के हैं। इन परिवारों में पुरुषों की संख्या २२८, स्त्रियों की संख्या २१०, बालकों की संख्या ४३८ तथा बालिकाओं की ७६२ है।

अग्रवाल संघ, कोटपूतली (राज०)

इस संस्था का बीजारोपण दि० २-४-१९७२ को हुआ था। संस्था का कार्य क्षेत्र तहसील कोटपूतली है। तहसील भर में अग्रवालों की संख्या करीब ३० हजार है।

अग्रवालों में पढ़े लिखे लोगों की औसत ९०% है और उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों की संख्या १०% है। स्त्री जाति में भी शिक्षा का प्रचार प्रसार सन्तोषजनक है।

उच्च पदाधिकारी यथा—प्लीडर, रीडर, कलेक्टर, प्रोफेसर, डिप्टी सुपरिण्टेन्डेन्ट, मैनेजर तथा राज्य पत्रित उच्च स्तर के अनेकों अग्रवाल पदाधिकारी इस क्षेत्र में हैं।

उद्योगपतियों की गणना में करोड़पतियों तक इस क्षेत्र के अग्रवाल बन्धु हैं। यहाँ के लोगों का व्यवसाय अधिकतर ऊँचे स्तर का तो कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली आदि में है और जीवन निर्वाह योग्य व्यवसाय स्थानीय स्तर पर भी चलता है।

तहसील कोटपूतली अग्रवाल संघ का मुख्य उद्देश्य जाति में व्याप्त भयंकर कुरीतियों को मिटाना, निर्धन छात्रों की सहायता करना और बेरोजगार लोगों को मदद करना है।

इस क्षेत्र में जहाँ अच्छे खासे धनी लोग हैं वहाँ गरीबी और बेकारी भी विकट है। अग्रवालों के पढ़े लिखे लड़कों के किये रोजगार की समुचित व्यवस्था की आवश्यकता है।

यह संस्था हर वर्ष श्री अग्रसेन जयन्ती का उत्सव मनाती है और उसी दिन अपनी वर्ष की कार्यकारिणी का चयन करती है। जाति सुधार पर विशेष ध्यान दिया

pdfelement
Remove Watermark Now

जाता है। इस समय यह संस्था एक भवन एक छात्रावास व श्री अग्रसेन मन्दिर बनाने के लिए प्रयत्नशील है।

सेठ बनवारी लाल जी अध्यक्ष एवं मन्त्री स्व० मास्टर मुसद्दी शरण गुप्ता, एम० ए० अपने समय में संस्था के कर्मठ और दृढ़ सेवक रहे जिनके हृदय में सामाजिक बुराइयों के प्रति सजग रहकर अपना यथा सम्भव योगदान समाज सुधार में देते रहे।

श्री प्रभुदयाल मौरीजावाला ने संस्था को एक भवन करीब ५० हजार रुपये दान में देकर संस्था को स्थायित्व प्रदान किया है।

संस्था के अन्य सदस्य भी समय-समय पर तन मन धन से सहयोग देकर समाज को आगे ले जाने में प्रयत्नशील हैं।

श्री अग्रवाल महासभा, भरतपुर

श्री अग्रवाल महासभा, भरतपुर अग्रवाल जाति के संगठन की बहुत पुरानी संस्था है जिसका कार्य सदैव ही विकासोन्मुख एवं जागरूकता के साथ इसके कार्यकर्ताओं द्वारा चलता आ रहा है। बीच में कुछ वर्षों पूर्व स्थानीय परिस्थितियों एवं कार्यकर्ताओं की उदासीनता के कारण अग्रवाल समाज के विकास, रूढ़िवादिता समापन एवं प्रगति पथ पर अग्रसर होने की गति में बहुत सी बाधाएँ उत्पन्न हुई, परन्तु विशेष सक्रिय उत्साही कार्यकर्ताओं द्वारा जन जागरण एवं नवीन चेतना व स्फूर्ति का संचार किया गया तथा आधुनिक बालिग मताधिकार के आधार पर इस संस्था का पुनर्गठन किया गया।

नवीन प्रणाली के अनुसार, श्री अग्रवाल महासभा, भरतपुर की कार्यकारिणी समिति का सर्वप्रथम निर्वाचन सन् १९५८ में श्री मालती प्रसाद जी जैन तत्कालीन प्रबन्धक पंजाब नेशनल बैंक, भरतपुर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ था। तभी से इस संस्था का कार्य नवीन विधानानुसार प्रत्येक तृतीय वर्ष में निर्वाचित की गई कार्यसमिति द्वारा सुचारु रूप से एवं विकासोन्मुख गति से लगातार चला आ रहा है। नवीन विधान की अनूठी विशेषता यह है कि चालू सत्र में जो पदाधिकारी होंगे वे अगले सत्र में पदाधिकारी नहीं रह सकेंगे। इस प्रथा से पद लोलुपता से इस संस्था को मुक्त रखा गया है तथा समाज के प्रत्येक वर्ग व व्यक्ति को किसी भी पद पर आसीन रहकर समाज का मार्ग दर्शन एवं तन, मन, धन तीनों प्रकार से सेवा करने का अवसर प्राप्त हो सकता है।

इस समय यह संस्था अपने अन्तर्गत तीन समितियों द्वारा तीन कार्यों का संचालन कर समाज की अनुपम सेवा कर रही है :—

(१) श्री अग्रवाल महासभा वस्तु केन्द्र जिसके अन्तर्गत बड़े-बड़े उत्सवों व विवाह आदि समारोहों के अवसर पर समाज के सार्वजनिक उपयोग के लिए सभी प्रकार की आधुनिकतम व अत्यधिक उपयोगी वस्तुओं का विशाल भण्डार है, जिसका

इस वस्तु केन्द्र की स्थापना से पूर्व भरतपुर समाज में बहुत बड़ा अभाव था व बड़े उत्सवों पर वस्तुओं को उपलब्ध कर संकलन करने में बड़ी परेशानी का सामना करना पड़ता था। श्री अग्रवाल महासभा, भरतपुर ने उन सभी वस्तुओं को एक ही स्थान पर संकलित कर उपलब्ध कराने की व्यवस्था करके समाज की बहुत बड़ी सेवा की है।

(२) श्री अग्रवाल विद्या मन्दिर एवं श्री महिला कला मन्दिर समाज के बालक-बालिकाओं को विद्याध्ययन एवं औद्योगिक प्रशिक्षण देकर समाज के भावी कर्णधारों का सर्वांगीण विकास करने का विकास कर रहा है। इनके अतिरिक्त श्री अग्रवाल महासभा अन्य सामाजिक कार्य भी समय-समय पर करती रहती है। संस्था ने अपने शहर के अग्रवाल समाज की जनगणना करके एक सूची तैयार की थी। साथ ही अविवाहित बालकों की एक सूची उनके आवश्यक विवरण के साथ तैयार करवा कर समाज के समक्ष प्रस्तुत की थी जिसमें समय-समय पर आवश्यक संशोधन भी किये जाते रहे हैं।

महाराजा श्री अग्रसेन जयन्ती महोत्सव के शुभ अवसर पर प्रति वर्ष अग्रवाल समाज का वार्षिक अधिवेशन भी इस संस्था द्वारा आयोजित किया जाता है जिसमें सामाजिक संगठन आदि पर विचार-विमर्श किये जाने के साथ-साथ समाज सुधार के प्रस्ताव भी पारित किये जाते हैं तथा लोगों को इन प्रस्तावों का पूर्ण रूप से पालन करने के लिए प्रेरित किया जाता है। अब तक पारित किये गए प्रस्तावों को लागू करने में समाज को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है।

सम्पर्क—श्री चन्द्र भान गुप्ता
मन्त्री—अग्रवाल महासभा
दाल बाजार, भरतपुर

अग्रवाल समाज, ब्यावर

इस सभा की स्थापना, आश्विन शुक्ला १ सम्वत् २०११ वि० में हुई थी। सभा के संस्थापक सदस्यों के नाम निम्नांकित हैं—

१. श्री गोविन्द प्रसाद जी डाणी, २. श्री बृज मोहन जी डाणी, ३. श्री राधेश्याम रामपुरिया, ४. श्री किशन गोपाल जी, ५. श्री श्याम सुन्दर अग्रवाल।

स्थापना के समय समाज के लिए निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये थे :

१. अग्रवाल समाज की सर्वतोमुखी उन्नति करना अर्थात् शारीरिक, आध्यात्मि और आर्थिक, २. कुरीति निवारण, ३. बौद्धिक प्रशिक्षण और पुस्तकों द्वारा ज्ञान व के उपाय करना, ४. समाज में प्रेम भाव को बढ़ावा देना है।

सभी सुविधाओं से युक्त सभा का भवन है जिसका लागत मूल्य ५ लाख है। इस भवन का उपयोग सार्वजनिक समारोहों, सभाओं और उत्सवों एवं विवाह शुभ कार्यों के लिए किया जाता है। सभा के पास बड़ी संख्या में स्टील के बर्तनों के

pdfelement
Remove Watermark Now

और अन्य सामान हैं जिनकी विवाह आदि अवसरों पर आवश्यकता होती है।

समाज के प्रचार क्षेत्र में अग्रवालों के लगभग ६०० परिवार आते हैं जिनमें पुरुषों की संख्या १५००, स्त्रियों की संख्या १८०० तथा बच्चों की संख्या २००० है।

यह सभा समाज हितकारी कार्यों में सदैव अग्रसर रही है अतः इस सभा के अन्तर्गत एक सिलाई व कढ़ाई हेतु प्रशिक्षण केन्द्र चल रहा है तथा महाविद्यालय स्तर तक की पुस्तकों का एक बुक बैंक चलता है जिससे छात्रों को बहुत लाभ पहुँचता है।

इस सभा की प्रबन्ध व्यवस्था के लिए एवं उद्देश्यों को क्रियान्वित करने के लिए निम्नांकित पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी सदस्य अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हैं:—

अध्यक्ष—श्री भगवान दास जी डाणी **उपाध्यक्ष**—श्री बाबू लाल जी गर्ग
मन्त्री—श्री जगदीश प्रसाद जी मित्तल **सहमन्त्री**—श्री प्रेम कुमार जी वालोतरिया
सहमन्त्री—श्री रामचरण जी गोयल ऐडवोकेट
कोषाध्यक्ष—श्री जगदीश प्रसाद जी बंसल

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्रीविष्णु प्रकाश जी बाजारी, विधायक, बृजमोहन रामपुरिया, मोहन लाल जैन, मोहन लाल गोयल, राधेश्याम डाणी, रमेश बंसल, नवल किशोर गोयल, श्याम सुन्दर गर्ग, मोती लाल, राम गोपाल बंसल, नरेश कुमार बंसल, दामोदर सिंहल, सत्य नारायण गोयल, गोपाल कृष्ण मंगल, बद्री प्रसाद मित्तल।

सम्पर्क सूत्र—श्री जगदीश प्रसाद मित्तल, व्याख्याता,
मन्त्री—श्री अग्रवाल समाज (पंजीकृत),
६१११६, डिग्गी मोहल्ला, ब्यावर-३०५६०१

श्री अग्रवाल संघ, विजयनगर (अजमेर)

इस संस्था की स्थापना दिनाँक ८-८-१६७१ ई० में हुई। इसके सदस्यों की संख्या २०० है। इस क्षेत्र में अग्रवाल परिवारों की संख्या लगभग २५ है जिनमें ८१ पुरुष, ६२ बालक एवं ७७ बालिकायें हैं।

अग्रवालों की सब प्रकार से हित चिन्तना करना एवं उन्हें लाभान्वित करना इस सभा के मुख्य उद्देश्य हैं।

श्री अग्रवाल संघ, नसीराबाद (अजमेर)

नसीराबाद में श्री अग्रवाल संघ अग्रवालों का प्राचीन संगठन है जो सन् १६६० ई० से सुचारु रूप से कार्यरत है।

संघ द्वारा शिक्षा समिति का गठन सर्वश्री प्यारे लाल गोयल तथा नवल किशोर गर्ग के संयोजकत्व में किया गया था जिससे अनेक अग्रवाल छात्र लाभान्वित हुए हैं।

संघ के सराहनीय कार्य—संघ की स्टेशन के पास की धर्मशाला की धन राशि

सेठ नोरत मल जी ने देकर संघ की सुदृढ़ बनाने में सराहनीय योगदान दिया। संघ के अन्तर्गत सभी इमारतों का जीर्णोद्धार कराया गया। जनता की सुविधा के लिए सिनेमा के पास स्थित स्नान घर में नई पाइप लाइन लगवाई, श्री नृसिंह गऊशाला को अकाल के समय उपयुक्त अनुदान दिया तथा श्री कान्ति राम जी की प्याऊ के लिए ग्रीष्म काल में अनुदान दिया जाता है, इसके अतिरिक्त समाज संगठन श्री लादू राम धर्मशाला का जीर्णोद्धार, जीवनी आश्रम में स्नान घर की व्यवस्था, छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्तियों की व्यवस्था, छात्राओं की कलात्मक रुचि को परिस्कृत करने हेतु बढ़ावा देना, शिक्षा सम्बन्धी कार्यों में सहयोग, विधवाओं एवं असमर्थ बन्धुओं को आर्थिक सहायता देना, तथा नवयुवकों को रोजगार दिलाने में सहयोग देना आदि सार्वजनिक हित के कार्य स्तुत्य हैं।

संघ की वार्षिक आय ५०००० से अधिक है तथा ५०१ से अधिक बर्तन आदि वस्तु भण्डार में हैं जिनसे सर्व साधारण को बहुत लाभ पहुँचता है।

इस संघ के अंतर्गत निम्नांकित अचल सम्पत्ति है :—

१. श्री लादू राम धर्मशाला, २. स्टेशन की धर्मशाला, ३. अग्रवाल व्यायामशाला, ४. जीवनी आश्रम, ५. श्री कान्ती राम की प्याऊ, ६. स्नान घर, ७. माता जी का मण्डप,

श्री अग्रवाल पंचायत, फुलेरा

इस पंचायत की स्थापना दिनाँक १६-८-६२ को हुई थी। चसके सदस्यों की संख्या ३० है। यह पंचायत अपने क्षेत्र के ५० अग्रवाल परिवारों का प्रतिनिधित्व करती है।

समाज के निर्बल वर्ग का उत्थान, समाज संगठन तथा अग्रसेन जयन्ती मनाना संस्था के मुख्य उद्देश्य हैं।

पंचायत ने सन १६७२ में एक भवन क्रय किया था। आजकल उसी में इस पंचायत का कार्यालय है।

साँभर अग्रवाल समाज, साँभरलेक

साँभर अग्रवाल समाज, साँभरलेक की स्थापना सन् १६६० में वर्षों से चली आ रही छोटी एवं बड़ी पंचायतों को विघटित करके की गई। तभी से यह संस्था भारत के प्रमुख नमक उत्पादन केन्द्र साँभरलेक का एक मात्र जातीय संगठन है।

साँभर में लगभग २०० अग्रवाल परिवार हैं। सभी परिवारों के मुखिया इस सदस्य हैं। संस्था का पंजीयन २५ मार्च १६६३ को हुआ तभी से संस्था उत्तरोत्त प्रगति पर है।

विभिन्न व्यक्तियों में बिखरी हुई चल-अचल सम्पत्ति को संग्रहीत कर व्यवस्थि रूप से किराये पर देने हेतु छत्र, चंवर छोटे-बड़े बर्तन, बिछायतें, सायवान, टेबि

pdfelement
Remove Watermark Now

कुर्सियाँ आदि हजारों रुपयों की चल सम्पत्ति, जो सामाजिक उत्सवों पर काम आती है, समाज के पास है।

साँभर नगर से लगभग एक किलो मीटर दूर देवयानी नामक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। इस तीर्थ स्थान पर समाज द्वारा निर्मित कल्याण जी का मन्दिर तीर्थ यात्रियों के लिये प्रमुख आकर्षण है। श्री कल्याण जी के दैनिक भोग एवं पूजा की व्यवस्था भी समाज द्वारा की जाती है। मन्दिर के सामने धर्मशाला एवं बगीची भी समाज की अचल सम्पत्ति है।

अग्रसेन मण्डल, नागौर

इस संस्था का नाम अग्रसेन मण्डल, नागौर है। इसकी स्थापना आषाढ़ सुदी १५ सम्वत् २०१७ वि० में हुई थी। सम्प्रति इसके सदस्यों की संख्या ४० है। अग्रवाल समाज का सर्वांगीण विकास, शिक्षा तथा व्यापार में सहायता करना, विधवाओं व असहाय छात्रों को आर्थिक सहायता देना आदि इस मण्डल का मुख्य उद्देश्य है। सभी आवश्यक सुविधाओं से युक्त सभामण्डल का विशाल भवन है जिसमें तीन हाल तथा पाँच कमरे तथा अन्य सुविधा स्थल बन चुके हैं जिस पर अब तक एक लाख रुपया लग चुका है और निर्माण कार्य चल रहा है।

सभा के वर्तमान पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी सदस्य

अध्यक्ष—श्री रामधन जी मित्तल **उपाध्यक्ष**—श्री अमर चन्द जी पित्ती
मन्त्री—श्री मांगी लाल जी पित्ती **कोषाध्यक्ष**—श्री राम प्रकाश जी जालान
सामान अध्यक्ष—श्री चन्द्र प्रकाश जी गुप्त
सहायक सामान अध्यक्ष—श्री शिवकान्त जी पित्ती

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री राजा राम पित्ती, सत्य नारायण जी जालान, राजा राम पित्ती, बाबू लाल पित्ती, तुलसी राम जी अग्रवाल, सुरेश कुमार पित्ती।

सम्पर्क सूत्र—श्री मांगी लाल जी पित्ती,
मन्त्री—श्री अग्रसेन मण्डल, पित्तीवाड़ा,
नागौर-३४१००१ (राजस्थान)

अग्रसेन नवयुवक संघ,नागौर

इस संघ की स्थापना दिनांक १३-१०-१९७७ में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या २५ है। इसके कार्यक्षेत्र में अग्रवालों की संख्या ८००० है। समाज की चहुंमुखी उन्नति तथा विकास, सामाजिक कुरीतियों का निवारण, समाज संगठन तथा सांस्कृतिक और साहित्यिक विकास इसके मुख्य उद्देश्य हैं।

पदाधिकारी—

अध्यक्ष—श्री रामेश्वर लाल जी अग्रवाल **सचिव**—श्री मांगी लाल जी बंसल

कोषाध्यक्ष—श्री इन्द्र चन्द्र बंसल **क्रीड़ामन्त्री**—श्री चांद रतन जी
सांस्कृतिक मन्त्री—श्री श्याम सुन्दर अग्रवाल

सम्पर्क सूत्र—श्री रामेश्वर लाल अग्रवाल
अध्यक्ष—श्री अग्रसेन युवक संघ,
वाजरबाड़ा चौक, नागौर

अगवाल नवयुवक संघ, वागरवाड़ा (नागौर)

इस संघ की स्थापना १९७३ ई० में हुई थी। इस क्षेत्र में लगभग ७० अग्रवाल परिवार हैं।

यह संस्था अपने क्षेत्र के अग्रवालों की यथा शक्ति सेवा करती है।

सम्पर्क—श्री दाउ दयाल अग्रवाल
वागरवाड़ा (नागौर) राज०

अग्रवाल पंचायत, बाडमेर

यह पंचायत चिरकाल से अपने क्षेत्र के १३२ अग्रवाल परिवारों में सेवा कार्य कर रही है। इन परिवारों में पुरुष संख्या २५०, स्त्रियों की संख्या १५० है एवं ३०० बच्चे हैं। पंचायत का अपना भवन है।

श्री ओमप्रकाश गर्ग मधुप
मन्त्री—अग्रवाल पंचायत
अग्रवाल भवन, वाड़मेर

अग्रवाल समाज समिति, कुचामन सिटी

इस समिति की स्थापना सन् १९६० ई० में हुई।

इस क्षेत्र में २५० अग्रवाल परिवार हैं जिनमें ६०० पुरुष, ५०० स्त्रियाँ तथा ९०० बालक हैं।

यह समिति अग्रवाल समाज के हितों की रक्षक है।

अध्यक्ष—श्री मदनलालजी सिंहल
पंचायत—अग्रवाल पंचायत,
अग्रवाल भवन, वाडमेर

अग्रवाल युवक संघ, बालोतरा (बाडमेर)

इस संघ के क्षेत्र में अग्रवाल परिवारों की संख्या १७५ है। इन परिवारों २५० पुरुष, २७५ स्त्रियाँ तथा ४२५ बच्चे हैं।

यह संघ अपने क्षेत्र के अग्रवालों की चहुमुखी उन्नति के प्रति सतर्क है।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल बाल मण्डल, बालोतरा

इस संस्था की स्थापना लगभग १९६७ में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या २० है। बालकों में सद्गुणों का प्रसार तथा चेतना उत्पन्न करना इस मंडल का मुख्य उद्देश्य है। इसके साथ वाचनालय, क्रीडास्थल, हैं। इस मंडल के सभी कार्यो का संचालन अग्रवाल समाज भवन में चलता है।

अग्रवाल बाल मण्डल के पदाधिकारी—

१. **अध्यक्ष** —श्री महेशकुमार जिन्दल, २. **उपाध्यक्ष**—श्री महेश कुमार गोयल ३. **सचिव**—श्री अनिल कुमार सराफ, ४. **कोषाध्यक्ष**—पुरुषोत्तमदास सिंहल, ५. **आलेखक**—श्री राजकुमार गुप्त, ६. **सहआलेखक**—श्री महेशकुमार सर्राफ, ७. **सूचना एवं प्रसारण मन्त्री**—श्री वासुदेव, ८. **क्रीड मन्त्री**—श्री नन्दकिशोर सिंहल, ९. **पुस्तकालय उपध्यक्ष**—श्री सुरेन्द्र कुमार, १०. **पुस्तकालय उपाध्यक्ष** – श्री चतुर्भुज सिंहल, ११. **पुस्तकालय प्रभारी**—श्री राजेशकुमार सिंहल तथा श्री पवनकुमार सिंहल

उपर्युक्त छात्रों ने एक अग्रवाल छात्र संघ भी बनाया हुआ है जो दिनांक ३०-१०-१९७८ से छात्रों में संगठन का कार्य कर रहा है। इसका कार्यालय नृसिंहजी का मन्दिर, बालोतरा में है। इसके सदस्यों की संख्या ७० है।

सम्पर्क सूत्र—श्री महेश कुमार सिंहल जी अग्रवाल बाल मण्डल,
बृन्दावन बगीची, राम चौक, बालोतरा

अग्रवाल क्षेत्रीय सभा, आबू पर्वत

इस सभा की स्थापना १० फरवरी सन् १९७० ई० में हुई थी। इसके प्रचार क्षेत्र में २०० ग्राम पंचायतें हैं और इस सभा के शाखा कार्यालय सुमेपुर, भीनमाल, सरूप गंज, अम्बाली, रेवदर तथा इकबाल गढ़ में हैं।

इस क्षेत्र में अग्रवालों के लगभग २००० परिवार हैं। समस्त अग्रवाल परिवारों के संगठन और उनमें समाज सुधार के कार्यों की प्रेरणा देना इस सभा के मुख्य उद्देश्य हैं। यह सभा अग्रवाल समाज के सभी परिवारों के साथ सम्पर्क का प्रबल माध्यम है।
सभा के पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य निम्नांकित हैं :—

१. **अध्यक्ष**—श्री सेडू राम जी गोयल, आबू रोड,
२. **उपाध्यक्ष**—श्री वसन्ती लाल जी, इकवालगढ़, श्री प्रभुदयाल जी, रेवदर,
३. **महामन्त्री**—श्री बद्री लाल अग्रवाल, आबू पर्वत,
४. **कोषाध्यक्ष**—श्री अमर चन्द जी अग्रवाल, आबू रोड।

सम्पर्क सूत्र—श्री बद्री लाल अग्रवाल
महामन्त्री—श्री अग्रवाल क्षेत्रीय सभा,
सूर्य दर्शन भवन, आबू पर्वत (राजस्थान)

अग्रवाल समाज, चौरासी, टोंक (राज०)

अग्रवाल समाज चौरासी एक बहुत बड़ा अग्रवाल संघ है। इसमें चार जिले के अग्रवाल बन्धु सम्मिलित हैं। सवाई माधोपुर, अजमेर और जयपुर जिले के कुछ भाग एवं टोंक जिले का सम्पूर्ण भाग इस संघ में सम्मिलित है, जिसमें लगभग १५ तहसीलों का समावेश हो जाता है। इस संघ में ५०० ग्रामों के अग्रवाल बन्धु सम्मिलित हैं।

इस चौरासी समाज का प्रथम अधिवेशन ३ व ४ अक्तूबर को सन् १९७० में निवाई में हुआ था। इस अधिवेशन में समूचे क्षेत्र से लगभग १५०० अग्रवाल बन्धुओं ने भाग लिया था। इसी अवसर पर क्षेत्रीय प्रगतिशील अग्रवाल युवा परिषद् की स्थापना होकर उसका गठन हुआ। युवा परिषद् के सभी सदस्यों ने सम्मेलन में प्रतिज्ञा कर समाज के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण हाथ बंटाने का निश्चय किया। विश्वास है कि यह समाज, जिसने कुरीति निवारण, आध्यात्मिक, शैक्षणिक, बौद्धिक, आर्थिक, सामाजिक एवं नैतिक उत्थान का कार्य आरम्भ किया है, अपने कार्य में पीछे नहीं रहेगा।

यह क्षेत्र सवाई माधोपुर महासंघ के क्षेत्र से मिला हुआ है। इस प्रकार यह क्षेत्र और महा संघ का क्षेत्र मिलकर कार्य करें तो राजस्थान भर में यह संघ चोटी का कार्य कर सकता है। इसका कारण यह भी है कि दोनों ही क्षेत्रों के बन्धु, सरल एवं सजग वृत्ति वाले हैं जो युग के साथ कदम मिलाकर चलने में पीछे नहीं रहना चाहते। श्री कल्याण मल झण्डेवाला ने इस चौरासी समाज को सुझाव दिया था कि परस्पर की रीति-रिवाजों में जो थोड़ा सा फर्क है उसे दूर कर लिया जाये तो हम और आप एक वृहत् महासंघ के रूप में दोनों क्षेत्रों में अच्छा काम कर सकते हैं तथा आगे बढ़ने में आने वाली अड़चनों को सहज ही दूर कर विकास कर सकेंगे। इसके क्षेत्र के सुयोग्य महामन्त्री श्री राधाकृष्ण जी गोयल एवं मन्त्री श्री राम लाल जैन झराना ने श्री झण्डेवाला के सुझाव का स्वागत किया और वे इस ओर उनके सुझाव को कार्य रूप में परिणित करने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं, ताकि दोनों संघों की एक रीति-नीति बनाकर आगे बढ़ने का प्रस्ताव साकार रूप ले सके।

चौरासी समाज के मुख्य कार्यकर्ता श्री फूल चन्द जी जैन निवाई, श्री राधा किशन जी गोयल, टोंक, श्री राम लाल जी जैन, झराना, श्री अमोलक चन्द जी भगत, मेहरुकलाँ, श्री सूरज मल जी सूरासाही, श्री सूरज मल जी चांदसेना, श्री राज मल जी चौथका, वरवाड़ा, श्री चिरंजी लाल जी, श्री गम्भीर मल जी, सिवाड़, श्री अमोलक चन्द जी अरणिया, श्री राम गोपाल जी चाकसू वाले हैं। युवा परिषद् में प्रोफेसर श्री सत्य नारायण राजस्थान यूनिवर्सिटी, श्री पदम चन्द जैन लावा, श्री लाल चन्द जैन वनेठा एवं श्री आत्मा राम, देवली प्रमुख हैं।

अग्रवाल समाज, धौलपुर

धौलपुर नगर के समस्त अग्रवाल समाज को संगठित करने के लिए दिनां

pdfelement
Remove Watermark Now

२१ मार्च, १९८२ को श्री कैलाश चन्द जी चौधरी के निवास स्थान पर नगर के समस्त अग्रवालों की एक सभा का आयोजन किया गया। सभा की अध्यक्षता नगर के वयोवृद्ध श्री भवानी शंकर जी गर्ग कोठारी ने की और सर्वसम्मति से श्री अग्रवाल समाज, धौलपुर नाम से इस संस्था का विधिवत् गठन किया गया।

इस संस्था के पास एक साथ चार विवाहों के लिए काम में आने वाला सभी सामान उपलब्ध है तथा इसे और भी विस्तार दिया जा रहा है।

इस सभा के नवगठन में अग्रवाल सभा मनिया और बाडी ने भी अपना-अपना सहयोग दिया और मार्गदर्शन किया।

इस नवगठित समाज के पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी सदस्य निम्न प्रकार हैं :—

अध्यक्ष—सेठ श्री हरविलास जी मित्तल **उपाध्यक्ष**—श्री गोपाल दास जी ऐडवोकेट
मन्त्री—श्री विश्वम्भर दयाल जी बाडीवाले **सहमन्त्री**—श्री गोवर्धन दास जी बंसल
कोषाध्यक्ष—श्री विशन स्वरूप जी गर्ग
भंडार संरक्षक—श्री नकुल चन्द जी गर्ग
निरीक्षक—श्री गोपाल दास जी सलीमों वाले

कार्यकारिणी सदस्य एवं वार्ड प्रभारी—सर्वश्री ओम प्रकाश जी गर्ग, सुरेश चन्द्रजी, पुरुषोत्तम बंसल, कैलाश चन्द सिंघल, महेशचन्द मंगल, ओम प्रकाश मित्तल, रामेश्वर दयाल, ओम प्रकाश जसूपुरावाले, लज्जा राम पुरेनीवाले, राधेश्याम गर्ग सी० ए०, दाता राम सिंघल, कामता प्रसाद बुकसेलर, रामबाबू जसूपुरावाले, मदनलाल बीलपुरवाले, गोपालदास जी पोद्दार।

इस सभा ने अग्रसेन जयन्ती स्मारिका का भी इस वर्ष प्रकाशन किया है जिसके सम्पादक हैं श्री महेश चन्द्र जी मंगल। यह प्रकाशन अपने उद्देश्य में सफल सिद्ध हुआ है।

सम्पर्क सूत्र—श्री विश्वम्भर दयाल बाडीस्टोर
मन्त्री—श्री अग्रवाल समाज, धौलपुर

श्री अग्रवाल समाज सेवा संघ, मनियां (धौलपुर)

इस संघ की स्थापना-तारीख ६-१०-७५ अग्रसेन जयन्ती पर्व है। संघ का निजी कोई भवन नहीं है लेकिन एक अग्रवाल भाई द्वारा निर्मित पुराना मन्दिर है। वही संघ की मीटिंग आदि कार्यों का मुख्य स्थान है।

संघ अपने स्थापना काल से ही शादियों में बरात व घरात के उचित प्रबन्ध व व्यवस्था कार्य तथा गाँव में जैन समाज के बहुत बड़े मेले के आयोजन में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने हेतु कार्यरत रहा है, सार्वजनिक मेलों में पीने के पानी के लिए भी व्यवस्था, अखिल भारतीय कार्यक्रमों को भी सफल बनाने तथा समस्त अग्रवाल बन्धुओं में दहेज

व फिजूल खर्ची के विरुद्ध भावना जागृत करने हेतु समय-समय पर सभाओं के उचित कार्यों का आयोजन भी करता आ रहा है।

अग्रवाल समाज सेवा संघ के कार्य क्षेत्र में इस समय करीब ६० अग्रवाल परिवार हैं जिनकी सदस्य संख्या करीब ५०० है। आगे कार्य क्षेत्र बढ़ाने की योजना भी है।

उद्देश्य—(१) अग्रवाल युवक व युवतियों की पुरानी रूढ़िवादी प्रवृत्ति को समाप्त कर नई जागृति की भावना पैदा करना तथा दहेज व फिजूल खर्ची का विरोध करने हेतु उचित कार्यक्रमों का आयोजन करना, एवं स्वच्छ चरित्र का निर्माण करना, (२) संघ द्वारा सदस्यों की रुचि अनुसार व्यायाम शाला, वाचनालय आदि का प्रबन्ध करना, (३) अग्रवाल समाज में व्याप्त कुरीतियों के विरुद्ध कदम उठाकर स्वच्छ समाज बनाने का यत्न करना, (४) सार्वजनिक मेलों व अन्य कार्यक्रमों में शक्ति अनुसार कार्य में सहयोग करना, (५) अग्रवाल समाज व अन्य समाजों के बुलाने पर अनुशासित ढंग से उनके आयोजनों को सफल बनाना, (६) अग्रवाल समाज के कार्यक्रमों को पूरा करने में योगदान करना, (७) महाराजा अग्रसेन जयन्ती पर्व को धूम-धाम के साथ सादगी से मनाना व महाराजा अग्रसेन के इतिहास की जानकारी देना और अग्रवाल समाज में प्रचार करना।

सम्पर्क
श्री महेशचन्द्र अग्रवाल
मनिया (धौलपुर)

अग्रवाल सभा (पंजीकृत), वाडी (धौलपुर)

इस सभा का नाम श्री अग्रवाल सभा (पंजीकृत), वाडी है। इसकी स्थापना सन् १९५६ ई० में हुई थी। इस सभा के सदस्यों की संख्या ५०० है। यह सभा अपने क्षेत्र के छः सौ अग्रवाल परिवारों का प्रतिनिधित्व करती है और इसका कार्य क्षेत्र वाड़ी नगर है।

इस सभा का उद्देश्य—समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना तथा समाज को संगठित करना है।

श्री अग्रवाल सभा, वाडी के अन्तर्गत निम्नांकित संस्थायें सुचारु रूप से समाज की सेवा कर रही हैं :—

१. अग्रसेन सहायता समिति—इस संस्था की स्थापना गरीब बच्चों की शिक्षा वृद्ध एवं असहाय जनों को सहायता देने तथा असहाय परिवारों की कन्याओं के विवाह में सहायता करने के लिए की गई है। सहायता के इस कार्यक्रम को स्थायित्व प्रदान करने के लिए सभा ने एक लाख रुपये की बैंक में फिक्स डिपाजिट कराया है और उसके ब्याज से यह सहायता कार्यक्रम चलाया जाता है।

pdfelement
Remove Watermark Now

२. महाराजा अग्रसेन सिलाई प्रशिक्षण केन्द्र—इस केन्द्र के भवन का निर्माण कार्य पूरा हो चुका है। इसमें समाज की कन्याओं के प्रशिक्षण के लिए सिलाई-बुनाई का प्रशिक्षण केन्द्र चलाया जायेगा। इस समाज सेवा के कार्य से अग्रवाल महिलाओं के समय का सदुपयोग भी होगा।

३. अग्रवाल सभा भवन—वाडी, मोहल्ला मोदीपाडा में इस सभा का निजी भवन है। इसी भवन के एक कमरे में इस सभा का कार्यालय स्थाई रूप से चलता है। भवन के शेष भाग का उपयोग विवाह आदि के उत्सवों के लिए किया जाता है। इसी सभा भवन में विवाह आदि अवसरों पर काम आने वाले बर्तनों और अन्य सामान का भण्डारघर भी चलता है। सम्प्रति सभा के इस भण्डार में लगभग एक लाख रुपये का सामान है। इस भवन के दूसरे मंज़िल का कार्य पूरा हो चुका है। इस समय इस भवन का मूल्य दो लाख रुपये है।

यह सभा अपने क्षेत्र की जीवित जागृत सामाजिक संस्था है।

इस सभा की व्यवस्था के लिए वर्तमान पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी के सदस्यों की नामावली निम्नांकित है :—

अध्यक्ष—श्री रामभरोसी लाल बंसल
उपाध्यक्ष—श्री रामेश्वर दयाल जमींदार
मन्त्री—श्री एस० के० मंगल पत्रकार
उपमन्त्री—श्री रामेश्वर दयाल पटवारी
कोषाध्यक्ष—श्री रमेश चन्द्र डांगवाले
निरीक्षक—श्री हरिविलास मंगल, अध्यापक
सामान संरक्षक—श्री सालिग राम गर्ग

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री ओम प्रकाश बुकसेलर, विष्णु दयाल घीमरीवाले, रामनाथ मित्तल पटवारी, विनोद कुमार अग्रवाल, रामबाबू मंगल बजाज, मनोज कुमार बंसल, रमेश चन्द्र गोयल, रामजी लाल गर्ग पेड़ेवाले, मुरारी लाल मंगल, सीताराम गर्ग।

सम्पर्क सूत्र—श्री एस० के० मंगल पत्रकार,
मन्त्री—श्री अग्रवाल सभा (पंजीकृत)
अनुराधा प्रकाशन, गंजम दरवाजा,
वाडी (धोलपुर) राजस्थान

अग्रवाल सभा, जोधपुर

अग्रवाल सभा, जोधपुर की स्थापना सन् १९३२ में हुई थी। इस सभा के इस समय ५०० सदस्य हैं जो अपने प्रचार क्षेत्र के लगभग ४००० अग्रवालों की सेवा करते हैं। यह सभा अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अग्रवालों के उत्थान, संगठन, समृद्धि, युवक तथा नारी जागरण के सराहनीय कार्यक्रम चलाती रहती है।

अग्रवाल स्नेही पत्रिका के संस्थापक, परम देश भक्त, हिन्दू राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत स्व० श्री ला० खेराती लाल जी अग्रवाल ने इस सभा को अपने कठोर परिश्रम से सींचा था। आज दिन इनके सुपुत्र श्री रोशन लाल जी अग्रवाल अपने पूज्य पिताश्री के पद चिह्नों पर चलते हुए अग्रवाल समाज की सराहनीय सेवा कर रहे हैं। इनके द्वारा सम्पादित "अग्रवाल स्नेही" अग्रवाल समाज में जानी-मानी मासिक पत्रिका है। अग्रवाल सभा का भवन निर्माण कार्यक्रम सभा के कर्मठ कार्यकर्ताओं के विचाराधीन है।

इस सभा के वर्तमान पदाधिकारीगण निम्नांकित हैं :—

अध्यक्ष—श्री रोशन लाल जी अग्रवाल
मन्त्री—श्री मेघराज जी अग्रवाल
कोषाध्यक्ष—श्री सोहन लाल जी अग्रवाल

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री देव राज जी मंगल, दाऊ दास जी अग्रवाल, रामजस सर्राफ, राम प्रताप सिंहल आदि २१ सदस्य।

सम्पर्क सूत्र—श्री रोशन लाल जी अग्रवाल,
अध्यक्ष—अग्रवाल सभा, हिन्दू सन्देश प्रेस,
सोजती गेट, जोधपुर (राजस्थान), दूरभाष-२२०२६

अग्रवाल सम्मेलन, डीडवाना

इस सम्मेलन की स्थापना दिनांक १६-८-१९५६ ई० में हुई थी। इसके सदस्यों की संख्या लगभग २०० है। इस क्षेत्र में २३४ अग्रवाल परिवार हैं जिनकी संख्या लगभग २००० है।

उद्देश्य—अपने समाज को संगठित करना और तन, मन, धन से एक जुट होकर समाज की उन्नति करना ही इस सम्मेलन का उद्देश्य है।

सम्मेलन के सेवा कार्य—१. बारह मासी अग्रवाल प्याऊ की व्यवस्था करना, २. धार्मिक आयोजनों के लिए सहयोगी बनने की दृष्टि से अग्रवाल भवन को निःशुल्क देना, ३. बाहर से आने वाले अग्रवाल बन्धुओं को सुख-सुविधा के साथ निवास की निःशुल्क व्यवस्था करना, ४. समाज में धार्मिक भावों के प्रचार के लिए पारायण पाठ कराना और साधु-महात्माओं के प्रवचनों की व्यवस्था करना, ५. आँखों का निःशुल्क आपरेशन कैम्प लगाना, ६. प्रत्येक अग्रसेन जयन्ती पर नवयुवकों के खेलों का आयोजन तथा मेंहदी प्रतियोगिता का आयोजन करना, ७. इस सम्मेलन ने अग्रवाल नवयुवक मण्डल, डीडवाना का गठन किया है जिसके १६ पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य हैं।

सभा भवन—प्रारम्भ में सभा के पास सन् १९५६ में "खुवा कई" नामक एक बगीची थी जिस पर सम्मेलन ने नव निर्माण कराया था और वह आज भी "**पुराना भवन**" के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त सन् १९७६ में सम्मेलन के प्रयास से नया "**अग्रवाल भवन**" का निर्माण हुआ है। इसके साथ ही सम्मेलन के पास एक नौहरा है जिसका उपयोग रसोई के कार्यों में होता है। सम्मेलन के इन भवनों का लागत मूल्य लगभग ४-५ लाख रुपया है।

pdfelement
Remove Watermark Now

सम्मेलन के पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य

१. **अध्यक्ष**—श्री रामौतार जी मोदी (नगरपालिका चेयरमैन),
२. **उपाध्यक्ष**—श्री वशेशर लाल जी कुम्पावत, ३. **मन्त्री**—श्री श्याम सुन्दर दास भारुका, ४. **उपमन्त्री**—श्री परमानन्द जी कुम्पावत, ५. **कोषाध्यक्ष**—श्री गोविन्द लाल जी पोद्दार, ६. **हिसाब परीक्षक**—श्री रणछोड़ दास जी दलाल, ७. **संयोजक**—श्री सत्यनारायण जी सर्राफ।

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री रामेश्वर लाल जी कुम्पावत, बजरंग लाल भारुका, कन्हैयालाल जी घ्यावाला, मालचन्द जी लपनियां, रामरख जी गिनोडिया, जगदीश प्रसाद जी घ्यावाला, लालचन्द जी घ्यावाला, लक्ष्मीनारायण जी, जगदीश प्रसाद जी नगडिया, मांगी लाल जी पटवारी, बजरंग लाल जी बगडिया, मदनलाल जी बेगसरवाला, गोविन्द लाल जी रूवाटिया, कालूराम जी मोदी।

स्थायी रूप से आमंत्रित सदस्य—सर्वश्री ओंकारमल जी पटवारी, सूरजमल कुम्पावत, महावीर प्रसाद जी, गोपाल प्रसाद जी घ्यावाला, श्री रामगोपाल जी।

सम्पर्क सूत्र—श्री श्यामसुन्दर जी भारुका
मन्त्री—श्री अग्रवाल सम्मेलन,
अग्रवाल भवन, डीडवाना (नागौर)

सवाई माधोपुर जिला अग्रवाल नवयुवक संघ

अरावली पहाड़ की श्रृंखला में दुर्ग रणथम्भौर का अपनी बलिदानी गौरव गाथा के लिए इतिहास में एक अनूठा स्थान है। उसी की तलहटी में बसा हुआ जिला सवाई माधोपुर राजस्थान में एक ऐतिहासिक महत्व रखता है। इस जिले में अग्रवाल बन्धुओं की जनसंख्या लगभग १० हजार है। ऐसे सुरम्य एवं बलिदानी क्षेत्र में सन् १९७० में कुछ उत्साही नवयुवकों ने "जिला सवाई माधोपुर अग्रवाल नवयुवक संघ" की स्थापना की, जिसने क्रान्तिकारी कदम उठाकर बदलते हुए मूल्यों के साथ अग्रवाल बन्धुओं को ढालने के लिए जहां सद्प्रयत्न किया है वहाँ सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में भी काफी उन्नति की है। जिले के पास एक लाख रूपये का कोष है, जिसके ब्याज से छात्रों, विधवाओं एवं असहाय अपाहिजों को सहायता दी जाती है।

जिले के प्रत्येक उपजिलों में अर्थात् गंगापुर, हिण्डोना करौली और सवाई माधोपुर में समाज के अग्रवाल नवयुवक संघ सम्मिलित हैं। इनके द्वारा संगठन का कार्य प्रगति पर है। वैसे अग्रवाल नवयुवक संघ जिले के प्रमुख कस्बों में भी संगठित हैं जिनकी संख्या लगभग १०० है। गंगापुर, हिण्डौना, करौली व सवाई माधोपुर में तो समाज के अपने विशाल भवन एवं धर्मशालाएँ हैं जो सार्वजनिक उपयोग में आती हैं।

जिले की ३६ अग्रवाल सभायें इस संघ से सम्बद्ध हैं। इस संघ का मुख्य कार्यालय गंगापुर सिटी में है। गंगापुर सिटी में अग्रवाल धर्मशाला, अग्रवाल वस्तु

भण्डार, अग्रवाल-खण्डेलवाल धर्मशाला, इस नगर की शोभा हैं। इनका स्थानीय सहायता कोष भी है। इसी संघ के तत्वाधान में एक महिला हस्तकला प्रशिक्षण केन्द्र भी चलता है। श्मशान स्थलों पर लकड़ी की टाल की भी व्यवस्था की हुई है। गंगापुर सिटी में अग्रसेन मन्दिर तथा अग्रवाल कालेज खोलने की योजना इस संघ के विचाराधीन है।

इस संघ की एक इकाई द्वारा हिडौन सिटी में एक विशाल अग्रवाल धर्मशाला सर्व साधारण की अच्छी सेवा कर रही है। इस संस्था के स्वामित्व में कई अन्य मकान हैं। वाचनालय, वस्तु भण्डार, स्थानीय सहायता कोष अग्रवाल संघ हिण्डौन के कीर्तिमान हैं।

इस जिला अग्रवाल संघ की दूसरी इकाई के तत्वाधान में सवाई माधोपुर में अग्रवाल भवन, अग्रवाल टैण्ट हाउस, अग्रवाल शिक्षा समिति के माध्यम से सेवा कार्य सुचारु रूप से चलाये जा रहे हैं।

इस संघ की एक प्रमुख इकाई करौली में भी है। इसका भी अपना अग्रवाल भवन है और अग्रवाल संघ, करौली की ओर से समाज सेवा के लिए एक वस्तु भण्डार भी चलता है।

जिले के अन्य नगरों में भी अग्रवाल धर्मशालायें और अग्रवाल भंडार हैं।

जिले में तहसील समितियाँ बनी हुई हैं जिनका सम्बन्ध जिला संगठन से है और वे अपने-अपने क्षेत्रों में संगठन एवं सुधार के कार्य करती हैं तथा प्रत्येक तहसील समितियों के नीचे पूरी तहसील के अग्रवाल नवयुवक संघ कार्यरत हैं। इस प्रकार जिले के संगठनात्मक रूप का सुन्दर गठन हो रहा है और यही कारण है कि यह जिला राजस्थान भर में सामाजिक गतिविधियों में शीर्षस्थ कहा जा सकता है।

अग्रवाल नव युवक संघ, गंगापुर सिटी द्वारा एक अग्रवाल मासिक पत्रिका "अग्रसेन वाणी" सन् १९७० से प्रकाशित हो रही है, जिसने सामाजिक संगठन को मजबूत बनाने में अद्वितीय कार्य किया है। इस पत्रिका का सम्पादन प्रारम्भ से १९७३ तक श्री बाबूलाल जी एडवोकेट ने अपने हाथ में लेकर इस पौधे को पोषित कर सराहनीय योगदान दिया।

१९७३ से १९७६ तक श्री ललित किशोर प्रधान सम्पादक तथा सम्पादक श्री कल्याण मल झण्डेवाला ने इसका सम्पादन अपने हाथ में लिया, तब से यह मध्य समाज में एक नव क्रान्ति दृष्टा बना है और यही कारण है कि श्री झण्डेवाला जी जिले में इसके माध्यम से अपने विचारों को मूर्त रूप देने में सफल हो सके। अब प्रध सम्पादक के रूप में श्री बाबू लाल जी ऐडवोकेट की सशक्त लेखनी, सूझ-बूझ, सतर्क एवं अथक परिश्रम से यह पत्रिका आज अग्रवाल समाज में अपना विशिष्ट स्थान ब चुकी हैं।

pdfelement
Remove Watermark Now

इस सवाई माधोपुर जिला अग्रवाल संघ के ६३० आजीवन सदस्य है और इसके साथ जिले की निमोकित ३७ अग्रवाल सभायें सम्बद्ध हैं :—

१. अग्रवाल संघ, कटरा बाजार, हिण्डौन, २. अग्रवाल नवयुवक संघ, गंगापुर सिटी, ३. अग्रवाल नवयुवक संघ, सपोटरा, ४. अग्रवाल संघ, खेडला तहसील महुवा, ५. अग्रवाल समाज, महुवा, ६. अग्रवालसंघ, खण्डार, ७. अग्रवाल नवयुवक मण्डल, सवाई माधोपुर, ८. अग्रवाल समाज, करौली, ९. अग्रवाल संघ, गुढ़ाचन्दजी तहसील नादोती, १०. अग्रवाल संघ, कोटरी तहसील हिण्डौन, ११. अग्रवाल नवयुवक मण्डल, बोली, १२. अग्रवाल नवयुवक मण्डल, बालेर तहसील खण्डार, १३. अग्रवाल नवयुवक मण्डल, बहरावडा खुर्द, तहसील खण्डार, १४. अग्रवाल संघ, टोडाभीम, १५. अग्रवाल संघ, वजीरपुर तहसील गंगापुर सिटी, १६. अग्रवाल संघ, कोटा महोली तहसील करोली, १७. अग्रवाल संघ, मंडरायल तहसील करोली, १८. अग्रवाल संघ, कचरोली (फुलवाडा) तहसील हिण्डौन, १९. अग्रवाल संघ, खोडा जमालपुर हिण्डौन, २०. अग्रवाल संघ, श्री महावीरजी तहसील हिण्डौन, २१. अग्रवाल संघ, महसवा तहसील टोडाभीम, २२. अग्रवाल संघ, कैमला तहसील नादोती २३. अग्रवाल संघ, ठिडोरा तहसील हिण्डौन, २४. अग्रवाल संघ, सूरोठ तहसील हिण्डौन, २५. अग्रवाल संघ, पावटा तहसील महुवा, २६. अग्रवाल संघ, छोटी उदेई तहसील गंगापुर, २७. अग्रवाल संघ, बालाहेडी तहसील महुवा, २८. अग्रवाल संघ, मंडावर, तहसील महुवा, २९. अग्रवाल संघ, नारोली तहसील सपोटरा, ३०. अग्रवाल संघ, शहर तहसील नादोती, ३१. अग्रवाल समाज, सलैमपुर तहसील सपोटरा, ३२. अग्रवाल संघ, भासलपुर तहसील करौली, ३३. अग्रवाल संघ, भोहचा तहसील गंगापुर, ३४. अग्रवाल नवयुवक मण्डल, शेरपुर खिलचीपुर तहसील सवाई माधोपुर, ३५. अग्रवाल संघ, चौडा गाँव तहसील सपोटरा, ३६. अग्रवाल संघ, महू इब्राहिमपुर, तहसील हिण्डौल, ३७. अग्रवाल समाज, कमालपुर तहसील टोडा भीम।

सवाई राधोपुर जिला अग्रवाल संघ की वर्तमान प्रबन्ध व्यवस्था एवं संचालन जिन अधिकारियों के हाथ में है उनके नाम निम्न प्रकार हैं :—

१. **अध्यक्ष**—श्री दामोदर प्रसाद जी गुप्त, हिण्डौन;
२. **उपाध्यक्ष**—श्री खेम चन्द जी गुप्त अध्यापक, करौली,
३. **मन्त्री**—श्री राघवदास जी गोयल ऐडवोकेट, गंगापुर सिटी,
४. **सहमन्त्री**—श्री नेमी चन्द जी ऐडवोकेट, करौली,
५. **कोषाध्यक्ष**—श्री ललित किशोर जी अग्रवाल ऐडवोकेट, गंगापुर सिटी,
६. **संगठन मन्त्री**—श्री गयाजीत लाल जी बजाज, करौली,
७. **प्रचार मन्त्री**—श्री सीताराम जी गुप्त ऐडवोकेट, हिण्डौन सिटी।

८. **कार्यकारिणी सदस्य**—सर्वश्री रामविलास, गंगापुर सिटी, राधेश्याम अग्रवाल, रघुवीर शरण सरल, गंगापुर सिटी, गिरीज प्रसाद मित्तल, रायपुर, कैलाश चन्द सिंहल, रामस्वरूप गर्ग, मनोहर लाल बंसल, महुआ, कल्याण प्रसाद पटवारी, मोहन मुरारी, हिण्डौन सिटी, किरोड़ी लाल भगत, हिण्डौन, शिवचरन हलवाई, करौली, मथुरा लाल गोयल, खेड़ा जमालपुर, शुक्लाम्बर बंसल।

सम्पर्क सूत्र—श्री राघवदास जी गोयल, ऐडवोकेट,
मन्त्री—सवाई माधोपुर जिला अग्रवाल संघ,
कचहरी रोड, गंगापुर सिटी (जिला सवाई माधोपुर) राजस्थान
पिन कोड—३२२२०१

क्षेत्रीय अग्रवाल महासंघ

श्री कल्याण मल झण्डेवाले के सद्प्रयत्न से १७-४-१९७६ को चार क्षेत्र, जिनमें करीब एक हजार ग्राम हैं, सवाई माधोपुर, बौली, खण्डार (राजस्थान) एवं श्योपुर कलाँ (मध्यप्रदेश) क्षेत्र को मिलाकर एक क्षेत्रीय अग्रवाल महा संघ बनाया है। इस संघ ने सामाजिक क्षेत्र में युगानुकूल अपने आप को ढालने का क्रांतिकारी कदम उठाकर बिखरे हुए बन्धुओं को एक मंच पर लाने का साहसिक कार्य किया है।

श्री झण्डेवाला का विचार है कि इस महासंघ के कार्य क्षेत्र को और बढ़ाया जाये इसलिए वे चाहते हैं कि इसके पड़ोसी चौरासी अग्रवाल क्षेत्र, जिसमें लगभग १००० ग्राम हैं, को भी इसी महासंघ में सम्मिलित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए जिससे हम आर्थिक व सामाजिक दोनों क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें। इस सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी अग्रवाल समाज चौरासी, टोंक के परिचय में दी गई है।

इस जिले के प्रमुख कार्यकर्ता श्री कल्याण मल जी अग्रवाल, जो जिला संघ के अध्यक्ष एवं संयुक्त क्षेत्रीय अग्रवाल महासंघ के मन्त्री के रूप में कार्यरत हैं, की सूझ-बूझ एवं कुशाग्र बुद्धि द्वारा जिस प्रकार जिला संगठन एवं संयुक्त क्षेत्रीय महासंघ का संचालन हो रहा है, वह इस जिले के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। वर्तमान में यह संगठन राजस्थान में ही नहीं बल्कि समूचे देश में अपना अद्वितीय स्थान बनाता जा रहा है।

जिले के प्रमुख कार्यकर्ता सर्वश्री रामजीदास जी गोयल, मुथरेश दास जी गोयल, ललिता प्रसाद जी गोयल, सुरेश चन्द्र जी गर्ग, सवाई माधोपुर, श्री दामोदर प्रसाद हिण्डोन, श्री हजारी लाल जी एडवोकेट, श्री गयाजीत लाल करोली, श्री ललित किशोर जी अग्रवाल, श्री राघव दास जी गोयल, श्री राम दयाल जी वैद्य, बौली एवं श्री दुली चन्द जी जैन, खण्डार, श्री कुंज बिहारी लाल जी गोयल, भगवत गढ़ एवं श्री हुक्म चन्द जी सर्राफ, श्री दामोदर लाल मित्र, श्योपुर कलाँ (म० प्र०) हैं।

सम्पर्क सूत्र—

श्री श्रीदास ऐडवोकेट
अध्यक्ष—क्षेत्रीय अग्रवाल महासंघ
सवाई माधोपुर (राज०)

श्री गोंकुल चन्द गोयल आचार्य
महामन्त्री—क्षेत्रीय अग्रवाल महासंघ
अग्रवाल धर्मशाला, सवाई माधोपुर

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल संघ, हिन्डौन

राजस्थान में हिण्डौन (जिला सवाई माधोपुर) पत्थर के व्यापार की अच्छी मण्डी है। इस नगर में अग्रवालों की संख्या लगभग ५ हजार है। अतः समाज के हित के लिये सन् १९५२ में अग्रवाल संघ, हिण्डौल की स्थापना की गई। सम्प्रति इस संघ के सदस्यों की सदस्य संख्या २००० है।

यह संघ अपने स्थापना काल से ही निम्नांकित उद्देश्यों को लेकर चला है:— (१) समाज में फैली कुरतियों का निवारण. (२) समाज के गरीब तथा असहाय व्यक्तियों तथा विधवाओं की सहायता करना, (३) असहाय माता-पिताओं की कन्याओं के विवाह में सहायता करना, (४) असहाय रोगियों की चिकित्सा में सहायता करना (५) समाज संगठन करना।

इस संघ के अन्तर्गत एक युवा मण्डल भी सेवा कार्य में सहयोगी है। अग्रवाल धर्मशाला, कटरा बाजार, हिण्डौन, इस संघ का कीर्तिमान है। यह विशाल धर्मशाला नगर के मध्य में स्थित है और यात्रियों के ठहरने के लिये, सामाजिक कार्यक्रमों के आयोजनों के लिये तथा विवाह आदि शुभ कार्यों के लिये सर्वसाधारण के लिये सुलभ है और नगर की शोभा है। इसी धर्मशाला के एक भाग में संघ का कार्यालय है जहाँ से समाज सेवा के कार्यक्रम चलते हैं। इसी धर्मशाला में संघ की ओर से एक वाचनालय चलता है।

अग्रबाल संघ हिण्डौन के वर्तमान पदाधिकारियों और कार्यकारिणी सदस्यों के नाम

१. **अध्यक्ष**—श्री दामोदर लाल जी गुप्त, २. **उपाध्यक्ष**—श्री शिव भगवान जी पिलानी वाले, ३. **मन्त्री**—श्री रामेश्वर लाल जी गोयल, ४. **उपमन्त्री**—श्री नरेश चन्द्र जी बंसल, **कोषाध्यक्ष**—श्री महेश कुमार जी मित्तल, ६. **भण्डारी**—श्री सुरेश चन्द्र जी गर्ग, ७. **भण्डारी**—श्री देवकी नन्दन जी गर्ग, ८. **संगठन मन्त्री**—श्री बृज बल्लभ जी सर्राफ, ९. **सांस्कृतिक मन्त्री**—श्री छगन लाल जी अध्यापक, १०. **वाचनालय मन्त्री**—श्री हरि चरण जी गर्ग, ११. **प्रचार मन्त्री**—श्री करोड़ी लाल जी रुदावलवाले।

कार्यकारिणी सदस्य—सर्व श्री ओम प्रकाश जी खेडलावाले, विजय कुमार जी गर्ग, भंवर लाल जी जैन, रामअवतार जी बंसल, गोबिन्द प्रसाद जी गुप्त, शिवचरण लाल जी अध्यापक, बल्लभ राम जी, रामस्वरूप बांसवाले, पुरुषोत्तम लाल, जी फतहपुरवाले, जगदीश प्रसाद जी कम्बलवाले।

सम्पर्क सूत्र—श्री रामेश्वर लाल जी गोयल, ऐडवोकेट
मन्त्री—अग्रवाल संघ, अग्रवाल धर्मशाला,
कटरा बाजार, हिण्डौन (सवाई माधोपुर)

अग्रवाल सभा, पदमपुर श्रीगंगानगर

यह ३० वर्ष पुरानी सभा है जिसका गठन समाज में व्याप्त कुरीतियों का निवारण और रूढ़ीवाद से समाज को मुक्त कराना तथा अपव्यय को रोकना है।

इस सभा ने विवाह में मितव्ययता और सादगी लाने के लिये कई नियम बनाये हैं जिनका पालन करना अनिवार्य है। सभा के पास लगभग एक एकड़ भूमि है जिसमें सभा का अपना भवन बना हुआ है। इस सभा के प्रचार क्षेत्र में लगभग दो हजार अग्रवाल हैं।

सम्पर्क सूत्र—श्री रिछपाल जी जैन,
सर्व श्री नानूराम रिछपाल जी जैन,
पदमपुर (श्री गंगानगर) राजस्थान

pdfelement
Remove Watermark Now

(६) मध्य प्रदेश की अग्रवाल सभाएं

मध्य प्रदेश अग्रवाल महासभा

मध्य प्रदेश अग्रवाल महासभा, जबलपुर का स्थापना समारोह २९ दिसम्बर, १९७४ को मुख्य अतिथि श्रीयुत् क्षेत्रपाल जी गुप्ता, डिप्टी जनरल मैनेजर व्हीकल फैक्ट्री, जबलपुर की उपस्थिति में शहीद स्मारक भवन, गोल बाजार, जबलपुर में हुआ।

यह बड़ी गौरवपूर्ण एवं उल्लेखनीय बात है कि इस संस्था के स्थापना समारोह में मध्यप्रदेश के लगभग ५० प्रमुख व्यक्तियों ने प्रतिनिधि रूप में भाग लिया। उन्होंने इस नवोदित संस्था के पदाधिकारी एवं कार्यकारिण सदस्य निर्वाचित करके संस्था को स्थाई रूप प्रदान किया।

इस अधिवेशन में निम्नाँकित स्थानों से प्रतिनिधि पधारे थे :—जबलपुर, इन्दौर, मंडला, सतना, मनेन्द्रगढ़, भोपाल, रीवाँ, बिलासपुर, होशंगाबाद, दमोह, सहडोल, सिहोरा, करेली, बालघाट, छतरपुर, नरसिंह पुर, राजनांद गाँव तथा दुर्ग।

सम्पर्क—श्रीयुत घनश्यामदास जी गुप्त
प्रधान—मध्यप्रदेश अग्रवाल महासभा
५ इन्दिरा गांधी नगर, केशर बाग, इन्दौर (म० प्र०)

अग्रवाल नवयुवक मंडल, जबलपुर

सन् १९२७ में विजयदशमी के पुण्य पर्व पर सराफा चौराहे पर स्थित श्री गोरे लाल अग्रवाल ट्रस्ट भवन में 'अग्रवाल नवयुवक मण्डल' का गठन हुआ था। इसके संस्थापक सदस्य थे बाबू बाल गोविन्द जी गुप्त, बाबू हनुमान प्रसाद जी, श्री हजारी लाल जी, श्री नारायण दास जी, श्री ठाकुर दास जी, श्री दुर्गा प्रसाद जी घड़ी साज, श्री छुनमुन लाल जी मद्रास वाले, श्री बल्लभ दास जी, श्री नोने लाल जी, श्री गुलाब चन्द जी 'मैहर वाले' श्री रतन चन्द जी, श्री राजा राम जी तथा श्री गुलाब चन्द जी सिगरेट वाले।

संस्था के गठन के तत्काल बाद ही मंडल के उक्त युवा सेनानियों ने आजादी की लड़ाई में अपना सक्रिय योग देना प्रारम्भ कर दिया। मण्डल भवन में पोस्टर तैयार होते व रातों रात शहर की सड़कों पर चिपका दिए जाते। अंग्रेज सरकार के

हिन्दुस्तानी सिपाहियों को १८५७ की याद दिलाने वाले उत्तेजक संदेश से युक्त बुलेटिन बनते एवं मिलिटरी बैरकों में बांटे जाते। इसी प्रयास में बल्लभ दास जी, (सुपुत्र स्व० श्रीचतुर्भुज दास जी) एवं श्री द्वारका प्रसाद जी (सुपुत्र स्व० श्री शिवदीन लाल जी) गिरफ्तार हुए और ६ माह का सश्रम कारावास भोगा।

गांधी इरविन समझौते के खिलाफ तथा बाद में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के समय भी मण्डल के उत्साही नवयुवक सक्रिय रहे एवं परिणामस्वरूप सर्वश्री बल्लभ दास जी, द्वारका प्रसाद जी, मुकुन्द लाल जी, नारायण दास जी, छेदी लाल जी, श्याम लाल जी व गोविन्द प्रसाद जी को जेल यातनाएँ सहनी पड़ीं।

जब देश की परिस्थितियाँ सामान्य हुईं तब मंडल के नवयुवकों का ध्यान समाज में व्याप्त कुरीतियों की ओर गया। सन् १९४६ में महाकौशल में अग्रवाल नवयुवक मंडल ही एकमात्र ऐसी संस्था थी जिसमें एक महान "अग्रवाल मात्र में रोटी बेटी का सम्बन्ध" विषयक क्रान्तिकारी प्रस्ताव स्वीकार किया और उस पर अमल भी किया। समाज सुधार की दिशा में अन्य महत्वपूर्ण निर्णय लेकर उन्हें पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। उस समय मण्डल के अध्यक्ष श्री रतन चन्द जी व मन्त्री श्री बैजनाथ जी थे।

मण्डल ने अपना पुस्तकालय तैयार किया व सजातीय विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की। प्रतिभाशाली छात्रों को प्रति वर्ष पुरस्कृत करने की योजना पर अनेक वर्षों तक कार्य होता रहा जिसमें श्री कन्हैया लाल जी, श्री दुर्गा प्रसाद जी, श्री मोहन लाल जी, श्री अवध बिहारी जी, श्री सीता राम जी, श्री विश्वनाथ जी व श्री श्याम सुन्दर जी गुप्त का उल्लेखनीय योगदान रहा। मण्डल की साहित्य व कला विषयक अपनी समितियाँ होती थीं जो समय-समय पर अपने कार्यक्रम आयोजित करती थीं जिनमें श्री इन्दर बाबू व श्री द्वारिका प्रसाद जी मालगुजार विशेष रूप से सक्रिय रहते थे।

सन् १९५४-५५ में श्री सुरेश चन्द जी, श्री बाल कृष्ण जी, श्री घनश्याम जी व श्री बृज बिहारी जी के सद्प्रयासों से मण्डल का एक किशोर वर्ग तैयार हुआ जो कि 'अग्रवाल किशोर समिति' के बैनर में अनेक वर्षों तक सक्रिय रहा। इस समिति को स्वर्गीय दास जी (श्री नरसिंह दास जी अग्रवाल, सदर) का विशेष आशीर्वाद प्राप्त था।

जौलाई १९६० में मंडल के अन्तर्गत 'अग्रवाल बाल मंडल' की स्थापना की गई एवं इसका सफल संचालन श्री विनोद कुमार जी, श्री घनश्यामदास जी, श्री बृजबिहारी जी अनेक वर्षों तक करते रहे। यह बाल मंडल अपनी रंगारंग गतिविधियों सहित आज भी गतिशील है। १९६५ में मण्डल ने एक क्लब की स्थापना की जिसका प्रमुख आकर्षण 'टेबिल टेनिस' है।

वर्तमान में सर्राफा स्थित श्री गोरे लाल जी अग्रवाल धर्मशाला में मंडल का अपना कार्यालय है जो प्रतिदिन संध्या ७-३० बजे से १० बजे रात्रि तक खुला रहता है। सदस्य यहीं एकत्रित होकर अपना मनोरंजन करते हैं, वाचनालय एवं पुस्तकालय का लाभ प्राप्त करते हैं एवं सामाजिक गतिविधियों पर विचार विमर्श होता है।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल सेवा समिति, जबलपुर

नगर में समाज के करीब २५० अग्रवाल परिवारों का प्रतिनिधित्व करने वाली इस संस्था का जन्म सन् १९५३ में स्वर्गीय श्री नरसिंह दास जी अग्रवाल, श्री रामनाथ जी अग्रवाल, श्री कमल नारायण ऐडवोकेट, श्री प्रेम नारायण जी, श्री द्वारका दास जी और श्री राम किशोर जी अग्रवाल के सद्प्रयासों से हुआ।

समाज को सुसंगठित कर उसमें एकता लाने के उद्देश्य से इस समिति के उत्साही नवयुवकों ने समय-समय पर समाज में फैली हुई कुरीतियों, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि को दूर कर अनेकों आदर्श स्थापित किए। हटा मध्य प्रदेश अग्रवाल सभा के तत्वाधान में हुए एक विशाल अधिवेशन में आदर्श विवाह की जिस नवीन परम्परा का बीजारोपण हुआ, समिति आज तक उस परम्परा का पालन करती आ रहीं है। समाज के विभिन्न अंगों में पारस्परिक विवाह सम्बन्धों की स्थापना भी समिति का स्तुत्य प्रयास रहा है।

समाज के मानसिक एवं बौद्धिक विकास हेतु समिति ने श्री मिठाई लाल जी की अध्यक्षता में सन् १९६३ में जयन्ती पत्रिका प्रकाशित करने का निर्णय लिया। इसके प्रथम सम्पादक होने का गौरव श्री कौशल कुमार को प्राप्त हुआ।

समिति सामाजिक कार्यों में सदैव अग्रणी रही है। समिति ने समाज के उपयोग हेतु पचास स्टेनलैस स्टील के थाली कटोरी के सैट उपलब्ध किए हैं। इसका उपयोग समाज के कार्यों में अग्रवाल धर्मशाला, कोतवाली बाजार के माध्यम से हो रहा है।

क्षेत्रीय अग्रवाल सेवा समिति, जबलपुर

जबलपुर नगर की बढ़ती हुई परिधि के कारण हमारे सजातीय बन्धु भी नगर के कौने-कौने में फैल रहे हैं। इनको एकत्र कर इनसे परिचय बढ़ाना तथा आपस में स्नेह सम्बन्ध स्थापित करने हेतु कुछ अग्रवाल बन्धुओं के सुप्रयासों से क्षेत्री अग्रवाल सेवा समिति की स्थापना सन् १९७० में की गई, तब से श्री प्रकाश चन्द सिंघला, श्री ज्ञानेन्द्र कुमार मित्तल, श्री रामनाथ अग्रवाल तथा श्री राम गोपाल के कठिन परिश्रम के फलस्वरूप समिति निरन्तर वृद्धि करती हुई सन् १९७३ तक सामाजिक कार्यों में दिनोंदिन अपनी रुचि का परिचय देती रही।

समिति के प्रथम अध्यक्ष श्री ज्ञानेन्द्र कुमार और सचिव श्री रामगोपाल जी ने इस समिति के सदस्यों को अधिकाधिक निकट लाने के लिए हर सम्भव प्रयत्न द्वारा महीने में एक बैठक बुलाने का आयोजन किया जिसकी परम्परा भी १९७३ तक चलती रही।

१९७०-७१ के पदाधिकारियों में श्री क्षेत्रपाल गुप्ता, (मैनेजर जी० सी० एफ०) ने कई सराहनीय कार्य किए। उन्होंने अपने कार्य काल में पिकनिक, होलिकोत्सव, दिवाली उत्सव, शरदोत्सव आदि कार्यक्रम की परम्परा डालकर समिति के सदस्यों का

भरपूर मनोरंजन किया। इसके अतिरिक्त अग्रसेन जयन्ती पर भव्य कार्यक्रम प्रस्तुत कर समिति के गौरव को बढ़ाने में सहायता दी। समिति के मुख्य कार्यों में अग्रवाल बन्धुओं की विवरण पत्रिका छपवाना, छात्रवृत्ति एवं अग्रवाल भवन के लिए धन संग्रह करना, प्रशंसनीय थे। समिति के अन्य आकर्षक कार्यक्रमों में शरदोत्सव होलिकोत्सव प्रमुख रहे। 'अग्रवाल सभा' के प्रथम सचिव श्री धनपत लाल जी अग्रवाल रहे। महासचिव श्री नरसिंग दास जी भी अत्यधिक सक्रिय पदाधिकारी सिद्ध हुए।

किन्तु काल चक्र में फँसकर समिति के कार्य में विघ्न होकर सन् १९७४ में यह संगठन छिन्न-भिन्न हो गया। तब जबलपुर के सेवा कार्यों में संलग्न कुछ व्यक्तियों ने इस संगठन की रजिस्ट्री करा ली।

अग्रवाल विकास मंडल, जबलपुर

दिनांक ५-९-७१ को रामनाथ जी अग्रवाल के निवास स्थान पर अग्रवाल विकास मंडल' का गठन श्री चौधरी योगेन्द्र दत्त की अध्यक्षता में हुआ तथा मण्डल के गठन में सर्वश्री राम नाथ जी, चौधरी योगेन्द्र दत्त, हर नारायण, फदाली लाल, हेमकरण, भरत कुमार, दिनेश कुमार, महेश कुमार, सुदामा प्रसाद, शंकर लाल, रघुनन्दन, प्रसाद, हरिश्चन्द्र एवं अशोक कुमार का सराहनीय योगदान रहा।

प्रथम जयन्ती समारोह २०-९-७१ को श्री कमल नारायण जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री कृष्ण दास अग्रवाल की उपस्थिति उल्लेखनीय रही। मंडल के विशेष उत्थान कार्यों में आदर्श विवाह, दहेज मुक्त विवाह प्रशंसनीय रहे। आदर्श विवाह में श्री लखन लाल जी की शादी उल्लेखनीय रही।

मण्डल ने समाज की प्रगति हेतु भिन्न-भिन्न परिवारों से सम्पर्क साधकर उनकी कठिनाइयों को सुना एवं उसे दूर करने का भी भरसक प्रयत्न किया।

मण्डल के तत्कालीन पदाधिकारियों में सर्वश्री रामनाथ जी अध्यक्ष, लक्ष्मी चन्द्र जी सचिव, श्री हेमचन्द जी सहसचिव, रघुनन्दन प्रसाद जी कोषाध्यक्ष एवं गुलाब चन्द जी तथा हरिशंकर जी का योगदान सराहनीय रहा है।

अग्रवाल सभा, कटंगी (जबलपुर)

सेठ परस राम जगदीश प्रसाद, कटंगी निवासी के सद्प्रयत्न से इस सभा की स्थापना हुई जिसके १० सदस्य हैं।

यह सभा अपने क्षेत्र के लगभग १७५ अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करती है।

अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु यह सभा सदैव सतर्क है। सम्प्रति इस सभा का मुख्य प्रयास महाराजा अग्रसेन जयन्ती का प्रतिवर्ष आयोजन एवं सेठ धर्मसिंह टीकाराम द्वारा सं० १९५४ वि० में ५० हजार रुपए की लागत से निर्मित शिवालय तथा राधा कृष्ण की मूर्ति की प्रबन्ध व्यवस्था है।

pdfelement
Remove Watermark Now

नवयुवक अग्रवाल समाज, छतरपुर

नवयुवक समाज, छतरपुर का अत्यन्त पुराना अग्रवाल सामाजिक संगठन है। समय के अनुसार इस संगठन के स्वरूप बदलते रहे हैं। पूर्व में समाज के वृद्धजन इसमें सक्रिय भाग लेकर सामाजिक उन्नति के लिए प्रयत्नशील रहे, बाल मंडल, सेवा समितियों के माध्यम से कार्य किया। वर्तमान में इस सभा के अध्यक्ष श्री छोटेलाल जी सर्राफ हैं। आप सामाजिक कार्यों में विशेष रुचि रखते हैं। यहाँ के एक प्रतिष्ठित, सम्पन्न परिवार के सदस्य हैं। राजनैतिक गतिविधियों में भी आप पूर्ण सक्रिय योगदान देते हैं।

जिला अग्रवाल समाज, छतरपुर

मार्च १९६८ में श्री बाबू लाल अग्रवाल की प्रेरणा से कुछ उत्साही बन्धुओं ने एक गोष्ठी में जिला स्तरीय संगठन बनाने का निर्णय लेकर दिनांक २-९-६९ को जिले के समस्त अग्रवाल प्रतिनिधियों की बैठक में संगठन का विधान स्वीकृत कर इसे पंजीकृत कराने तथा पुरानी रूढ़ियों को हतोत्साहित कर प्रगतिशील समाज की रचना करने हेतु दृढ़ संकल्प लिए। यह संस्था म० प्र० समिति अधिनियम के अन्तर्गत दिनांक १०-३-७० को पंजीकृत हुई।

जिला अग्रवाल समाज के तत्वाधान में चौ० श्री लक्ष्मण दास बिहारी लाल जी सर्राफ की धर्मशाला में 'श्री अग्रसेन पुस्तकालय' संचालित किया गया जिसमें समाज के प्रतिभाशाली, साधनहीन विद्यार्थियों को शिक्षा तथा अध्ययन में सहायतार्थ पुस्तकें भी उपलब्ध कराई गईं।

समाज ने सामूहिक विवाह पद्धति नियमावली पारित कर इसे अपनाने के लिए समाज का आह्वान किया तथा इस यज्ञ में सम्मिलित पक्षों का समस्त व्यवस्था भार इस संस्था द्वारा ग्रहण किया गया। समाज के प्रमुख कार्यकर्ताओं द्वारा जिलान्तर्गत ग्रामों में भ्रमण कर अग्रवाल परिवारों की जनगणना की है तथा कार्यालय में लड़के-लड़कियों की टीपनीएँ संकलित कर वर कन्या के चयन में समुचित सहयोग दिया जाता है। इस सभा की ओर से आज दिन सामूहिक विवाह आन्दोलन एक वास्तविकता का रूप धारण कर चुका है और अब तक ५५० विवाह सामूहिक मंच से हो चुके हैं।

अग्रवाल सभा, छतरपुर

इस सभा की स्थापना दिनाँक १९-३-६८ को हुई थी। इसके १९६ सदस्य हैं। यह सभा अपने क्षेत्र के बहुत बड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। इस क्षेत्र में सामूहिक विवाहों का आयोजन इस सभा की विशेषता है।

सभा के उत्साही प्रधान हैं श्री किशन लाल जी राठवाले एवं मन्त्री हैं श्री उमा शंकर अग्रवाल।

अग्रवाल नवयुवक मंडल, दुर्ग

इस मंडल की स्थापना सन् १९६९ ई० में हुई थी। उस समय के प्रमुख कार्यकर्ता श्री चन्द्रभानु जी विन्दल तथा श्री राम विलास जी अग्रवाल थे। दोनों ही महानुभावों ने संगठन को सबल बनाने का भरसक प्रयत्न किया किन्तु कोई ठोस कार्य न हो सका। हाँ, अग्रसेन जयन्ती प्रतिवर्ष मनाई जाती रही।

सम्वत् २०२९ में मारवाड़ी विद्यालय में महाराजा अग्रसेन जयन्ती पूर्ववत् मनाई गई। मंडल की शिथिलता को दूर करने के लिए नव निर्वाचन किया गया।

नवगठित मंडल ने निम्नांकित उद्देश्य अपने सम्मुख रखे :—

(१) नवयुवकों का संगठन, (२) अग्रवाल समाज में जागरूकता, (३) विवाहादि अवसरों पर काम आने वाले बर्तन आदि का संग्रह, (४) समाज में व्याप्त कुरीतियों का निवारण, (५) दुर्ग में अग्रसेन भवन का निर्माण।

सम्वत् २०३० विक्रमी में आयोजित अग्रसेन जयन्ती पर अग्रसेन भवन हेतु ११००१) एकत्रित हुआ और बर्तन आदि की संख्या में भी वृद्धि हुई। कुछ अग्रवाल बन्धुओं ने अग्रवाल भवन निर्माण के कार्य में सहयोग देने की घोषणा की।

इस मंडल के ४१ सदस्य हैं और यह अपने क्षेत्र के लगभग ५०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करता है।

अग्रवाल समाज, नागदा एवं बिरला ग्राम

इस सभा की स्थापना हेतु उत्साही युवक सर्वश्री भगवानदास जी मित्तल, रामकरण जी अग्रवाल तथा बृज मोहन जी गर्ग के प्रयत्नों से २१ मई, १९६६ को नगर के प्रमुख अग्रवाल बन्धुओं की सभा बुलाई गई। उपस्थित बन्धुओं ने इस उत्साही समाज सेवी बन्धुओं की सराहना के साथ उसी दिन विधिवत् उपर्युक्त संगठन का निर्णय ले लिया।

यह सभा अपने जन्म काल से अनेकों सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत कर चुकी है। बीच में कुछ समय की शिथिलता के पश्चात् १९७५ ई० में इस सभा का नया निर्वाचन हुआ और कर्तव्य निष्ठ श्री आत्मा राम जी सरावगी के प्रधान पद पर निर्वाचित होने से इस संस्था में नवीन चेतना आई है। तभी से अग्रसेन जयन्ती, स्वजाति जनगणना तथा कई सम्मेलनों का आयोजन किया जिसका विषय था :— "दहेज प्रथा का उन्मूलन कानून के द्वारा सम्भव है।"

सभा की ओर से गरीब छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है।

इस सभा के भवन निर्माण हेतु ५०' × १००' आकार का एक भूमि खण्ड बिरला मन्दिर के ठीक सामने श्री मान गिरधारी लाल जी लाठ ने सभा को प्रदान कर दिया है।

सभा की ओर से १९७६ में 'अग्रदूत' स्मारिका का प्रकाशन होकर सराहनीय कार्य हुआ है।

pdfelement
Remove Watermark Now

छत्तीस गढ़ में अग्रवाल समाज

मध्य प्रदेश का दक्षिण-पूर्व विभाग जिसमें रायपुर, बिलासपुर, सरगुजा, राजनाँद गाँव, जिले एवं बालाघाट जिले का पूर्वी भाग, मण्डला जिले का दक्षिण-पूर्वी भाग तथा बस्तर जिले का उत्तरी भाग छत्तीस गढ़ कहलाता है। यह अक्षाँश १९.५० तथा २३.७० उत्तर तथा देशाँश ८०.४३ एवं ८३.४८ पूर्व के मध्य बसा हुआ क्षेत्र है। इस क्षेत्र में रतनपुर व हैहय क्षत्रियों के १८ गढ़ एवं रायपुर के हैहय क्षत्रियों के १८ गढ़ होने के कारण इस क्षेत्र का नाम छत्तीसगढ़ पड़ा।

बादशाह जहांगीर के काल में रतनपुर के राजा कल्याणसाव के साथ ५ गोत्र के अग्रवाल दिल्ली से यहाँ आये। इन्हीं पाँच गोत्रों के अग्रवालों का विस्तार सम्पूर्ण छत्तीस गढ़ में है।

छत्तीस गढ़ में इन ५ गोत्रों के वीसा अग्रवाल, जो छत्तीस गढ़ी अग्रवाल कहलाते हैं, के वंशज निवास करते हैं। इनका व्यापक सुदृढ़ संगठन है। ये मूलतः कृषि कार्य में संलग्न हैं। इनमें व्यवसायी भी हैं। युवक वर्ग आजकल इंजीनियरिंग, डाक्टर व वकालत के व्यवसाय की ओर उन्मुख हैं। राइस मिल, मुद्रण व्यवसाय (टाईपिंग इंस्टीट्यूट व प्रिंटिंग प्रेस), एग्रो सर्विस सेंटर व किराना मनिहारी का थोक व्यवसाय भी ये करते हैं। मूलतः कृषि एवं साहूकारी इनका पैतृक व्यवसाय है पर वर्तमान परिस्थितियों के कारण ये अब छोटे-मोटे व्यवसाय की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं।

ये बहुत ही धर्मभीरु होते हैं। पुरानी पीढ़ी ने मुख्यतः मन्दिर, धर्मशाला, कुआँ-तालाब, अस्पताल, पाठशाला आदि के लिए मुक्त हस्त से दान दिया एवं बहुत सी अमराइयाँ भी लगवाईं। दानशीलता की इनकी उदात्त परम्परा रही है। वर्तमान में मूल पाँच गोत्रों के साथ नागल गोत्र के भी अग्रवाल यहाँ हैं। सिंघल, गोयल, गर्ग, मुद्गल एवं वासिल गोत्र के अग्रवाल तो अपना इतिहास वृत्त उक्त कल्याण साव के साथ बताते हैं पर नागल गोत्र का अग्रवाल यहाँ कब आया, यह पता नहीं चलता है। वर्तमान में निम्नाँकित २९ परिवारों के लगभग ८५०० अग्रवालों का छत्तीसगढ़ में निवास है :—

१. सिंघल गोत्रीय शिव साव परिवार अकलतरा, बलौदा
२. सिंघल गोत्रीय शिब साव करोड़ सिंग केदार सिंग परिवार, मडला
३. सिंघल गोत्रीय दिलीप साव परिवार, तरेंगा
४. सिंघल गोत्रीय नथई साव बसावनसाव परिवार, आरंग-बलौदा बाजार
५. सिंघल गोत्रीय सुख देव साव परिवार, रायपुर
६. सिंघल गोत्रीय नवल साव परिवार, रायपुर
७. सिंघल गोत्रीय लक्ष्मीनाथ साव परिवार, तरेंगा
८. गोयल गोत्रीय चैन सिंह देवान परिवार, बिलासपुर
९. गोयल गोत्रीय चैन सिंह गनपत सिंह जगन्नाथ साव परिवार, रायपुर
१०. गोयल गोत्रीय पुरुषोत्तम साव परिवार, रायपुर

११. गोयल गोत्रीय शिव प्रसाद देवान परिवार, अकलतरा
१२. गोयल गोत्रीय राम प्रसाद साव परिवार, रायपुर
१३. गोयल गोत्रीय मन्नू लाल बाल मुकुन्द परिवार, जबलपुर
१४. गोयल गोत्रीय मोती लाल परिवार, रतनपुर
१५. वांसिल गोत्रीय गढ़ी साव परिवार, रायपुर
१६. वांसिल गोत्रीय मोहन लाल साव परिवार, रतनपुर
१७. वांसिल गोत्रीय माखन लाल साव परिवार, जबलपुर
१८. वांसिल गोत्रीय ननकू साव परिवार, बरोंघा, रीवाँ, बलौदा
१९. वांसिल गोत्रीय भोलानाथ साव परिवार, जगदपुर बलौदा बाजार
२०. गर्ग गोत्रीय छत्ते साव नारायण साव परिवार, आरंग
२१. गर्ग गोत्रीय छत्ते साव फत्ते साव परिवार, आरंग
२२. गर्ग गोत्रीय नन्हें लाल साव परिवार, लेवई
२३. गर्ग गोत्रीय डोमन लाल साव परिवार, मण्डला
२४. मुद्गल गोत्रीय विश्वनाथ साव परिवार, आरंग
२५. मुद्गल गोत्रीय शिवनाथ साव परिवार, रतनपुर
२६. मुद्गल गोत्रीय चोखे लाल साव परिवार, मण्डला
२७. मुद्गल गोत्रीय गिरधारी लाल परिवार, मण्डला
२८. मुद्गल गोत्रीय माई लाल परिवार, आरंग
२९. नागल गोत्रीय अजराइलमोदी परिवार, रतनपुर, रायपुर-गुढ़ियारी

ये समस्त अग्रवाल परिवार छत्तीसगढ़ी बीसा अग्रवाल कहलाते हैं। ये शांत, धीर, गंभीर स्वभाव के बुद्धिमान एवं सुविधा सम्पन्न व्यक्ति हैं। शिक्षा में इनकी बहुत रुचि है, नारी शिक्षा भी यहाँ व्यापक है। आजकल पर्दा प्रथा भी इनमें नहीं है, मुख्यतः पितृ सत्तात्मक परिवार में सम्मिलित परिवार की व्यवस्था के अन्तर्गत इनका जीवन है। नौकरी पेशा अग्रवालों के कारण अब संयुक्त परिवार क्रमशः टूट रहे हैं।

इन वर्णित अग्रवालों के सिवाय दुर्ग जिले में दसा अग्रवाल भी पाये जाते हैं। इनका खान-पान व्यवहार कुछ अलग किस्म का है एवं ये छत्तीसगढ़ी बीसा अग्रवालों के पहले छत्तीसगढ़ी में आये, ऐसा कहा जाता है। इनका कोई संगठन ठीक से नहीं है। छत्तीसगढ़ी बीसा अग्रवालों से इनका रोटी-बेटी का सम्बन्ध नहीं है, पर वर्तमान में छुटपुट विवाह सम्बन्ध अब होने लगे हैं।

छत्तीस गढ़ में इन दोनों वर्गों के अग्रवालों के बाद आज से करीब १५० वर्ष पहले मारवाड़ से आये अग्रवाल जो अपने को मारवाड़ी अग्रवाल कहते हैं, रहते हैं। इनकी जनसंख्या करीब २००० है एवं रायपुर, भाटापारा, खरसिया, खम्हरिया, बिलासपुर, रायगढ़ आदि स्थानों में इनके सामाजिक संगठन भी हैं। ये मूलतः व्यवसायी प्रकृति के हैं एवं काफी समृद्ध हैं। सत्तीसगढ़ के समस्त बड़े व्यवसायों में इनका ह है। जहाँ छत्तीसगढ़ी बीसा अग्रवाल मुख्यतः कृषि एवं साहूकारी में लगा रहा व

pdfelement
Remove Watermark Now

मारवाड़ी अग्रवालों ने साहूकारी तो की ही, साथ में इनकी व्यावसायिक प्रवृत्ति ने इन्हें समृद्धि के शिखर पर पहुँचा दिया। आजकल छत्तीसगढ़ का अग्रवाल एक होने की तड़प में संगठन की ओर दृढ़ता से बढ़ रहा है। इसमें मारवाड़ी अग्रवालों में व्याप्त पर्दा प्रथा एवं अशिक्षा, दसा, बीसा एवं मारवाड़ी में आपस विलगांव के कारण काफी कठिनाइयाँ आ रही हैं।

छत्तीस गढ़ी अग्रवाल समाज (केन्द्रीय), रायपुर

इस संस्था का कार्यालय जैतु साव मठ, पुरानी बस्ती, रायपुर, पिन कोड ४९२००१ (म० प्र०) में स्थित है। इसकी स्थापना तिथि २५ मई, १९७४ है। छत्तीस गढ़ की समस्त क्षेत्रीय इकाइयों के समस्त सदस्य इसके सदस्य माने जाते हैं जिनकी संख्या लगभग १००० है। केन्द्रीय इकाई होने के कारण इसकी सीधी सदस्यता नहीं है।

इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या करीब ८५०० है। इस समाज का कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण छत्तीस गढ़ है।

इसका भवन रायपुर पुरानी बस्ती में है। लागत करीब १५०००) एक लाख पचास हजार रुपए है।

क्षेत्रीय इकाइयों का संगठन, समाज सुधार व सामाजिक जागृति इस समाज के मुख्य उद्देश्य हैं।

इस समाज से सम्बद्ध संस्थायें—

(१) अग्रवाल समाज, बलौदा बाजार, (२) अग्रवाल समाज, महासमुन्द, (३) अग्रवाल परिषद्, आरंग, (४) छत्तीसगढ़ी अग्रवाल समिति, भाटापारा, (५) अग्रवाल विकास एवं सेवा समिति, बिलासपुर, (६) अग्रवाल समिति, रायपुर।

अग्रवाल समाज, बालौदा बाजार (म० प्र०)

अग्रवाल समाज, बालौदा बाजार की स्थापना मई १९७० ई०में हुई थी। इसके कार्यालय का पता मीनल बुक डिपो, बालौदा बाजार पिन कोड ४९३३४२ (म० प्र०) है। इसके सदस्यों की संख्या ८५ है। इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या ३३७ है।

इसका कार्यक्षेत्र भाटापारा एवं सिमगा विकास खण्ड को छोड़कर सम्पूर्ण बालौदा बाजार तहसील एवं तिलदानेवरा विकास खण्ड है।

इसका उद्देश्य सामाजिक ऐक्य, कुरीति उन्मूलन, सामाजिक-जनगणना, दहेज हीन आदर्श विवाह, अग्रवाल युवा मंच की स्थापना आदि हैं। इससे सम्बद्ध संस्थाएँ हैं :—

(१) अग्रवाल युवा मंच, बालौदा बाजार।

(२) अग्रवाल जनगणना कार्यालय, बलौदा बाजार।

अग्रवाल परिषद्, आरंग (म० प्र०)

अग्रवाल परिषद्, आरंग की स्थापना सितम्बर १९७१ को हुई थी। इसका कार्यालय अग्रसेन चौक, आरंग—४९३४४१ (म० प्र०) है। इसके सदस्यों की संख्या १०० है। इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या १५०० है। इसका कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण आरंग विकास खण्ड है।

इसके उद्देश्यों में प्रमुख हैं : १. सामाजिक हितों की श्रीवृद्धि, २. अग्रसेन चरित्र का विकास, ३. धार्मिक कूपमण्डूकता एवं छुआछूत व दहेज के विरोध में स्वर मुखर करना।

इस संस्था ने अग्रसेन चौक तथा अग्रसेन भवन का निर्माण कराया है। इसकी लागत करीब ७५०००) पचहत्तर हजार रुपए है।

अग्रवाल समिति, रायपुर (म० प्र०)

अग्रवाल समिति, रायपुर इकाई की स्थापना १९ दिसम्बर, १९७१ को हुई थी। इसका कार्यालय व्यास टाइपिंग स्पौट, सत्ती बाजार, रायपुर में स्थित है : इसकी सदस्य संख्या लगभग ५० है। इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या ३५० परिवारों की है, जिनके ४५०० सदस्य अनुमानित हैं। इसका कार्यक्षेत्र रायपुर नगर व गुढ़ियारी, रायपुर, सरसीवां विकास खण्ड एवं भिलाई हैं। इसके उद्देश्य हैं :—शादी-ब्याह, नियमन, मितव्ययता, असहाय वृद्ध, विधवा निर्धन विद्यार्थी सहायता, स्थानीय संगठन आदि। इससे संबद्ध संस्थायें अग्रवाल नवयुवक मण्डल, गुढ़ियारी है।

अग्रवाल विकास एवं सेवा समिति, बिलासपुर

अग्रवाल विकास एवं सेवा समिति की स्थापना ३ सितम्बर, १९७२ ई० को हुई थी। इसका कार्यालय अग्रवाल टाइपिंग स्पौट, जूना, बिलासपुर में स्थित है।

इसके सदस्यों की संख्या लगभग १०० है। इम क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या लगभग २००० है। इसका कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण बिलासपुर जिला है। इसके उद्देश्य आपसी सद्भाव, सामाजिक एकरूपता, कुरीति उन्मूलन, कुटीर उद्योग प्रोत्साहन आदि हैं।

इससे सम्बद्ध संस्थाएँ हैं : (१) अग्रवाल समाज, रतनपुर, (२) अग्रवाल समाज, बलौदा अकलतरा।

छत्तीस गढ़ी अग्रवाल समिति, भाटापारा

इस संस्था का नाम छत्तीसगढ़ी अग्रवाल समिति, भाटापारा इसका कार्यालय भाटापारा, जिला रायपुर (म० प्र०) में स्थित है। इसकी स्थापना मार्च, १९७४ को हुई थी, इसके सदस्यों की संख्या लगभग १०० है। इस क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या लगभग १२०० है। इसका कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण भाटापारा एवं विकास

pdfelement
Remove Watermark Now

खण्ड है। इसके प्रमुख उद्देश्य हैं कुरीतियों का समूल उन्मूलन, ठोस सामाजिक संगठन, मितव्ययता आदि।

अग्रवाल समाज, महासमुन्द (रायपुर)

इस समाज की स्थापना दिनांक २६-३-१९७४ ई० को हुई। इसकी सदस्य संख्या ३५ है। यह सभा अपने क्षेत्र के ५१ परिवारों (लगभग ७०० अग्रवालों) का प्रतिनिधित्व करती है। इसका कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण महासमुन्द तहसील तथा हरियार रोड है।

इस सभा के उद्देश्य अपने क्षेत्र के अग्रवालों को प्रेमसूत्र में बाँधना एवं समाज की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति एवं कुरीति निवारण है। वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार प्रचलित रीति-रिवाजों में आवश्यकतानुसार संशोधन, संवर्धन एवं परिवर्तन करना भी इस सभा का उद्देश्य है।

सभा भवन निर्माण के लिए सभा के कार्यकर्ता प्रयत्नशील हैं। इससे सम्बद्ध संस्था अग्रवाल नवयुवक संगठन, महासमुन्द एवं अग्रवाल स्वयं सेवक दल हैं।

अग्रवाल जागरण समिति, सरसीवां

अग्रवाल जागरण समिति का गठन श्री गोबिन्द राम जी अग्रवाल ने अखिल भारतीय आधार पर सरसीवां (रायपुर) क्षेत्र में सन् १९७० में आरम्भ किया था। रायपुर, रायगढ़, रबर सियान, सारगढ़, चन्दगढ़ आदि क्षेत्रों में इसकी शाखाएँ खुल चुकी हैं। समिति विशेष तौर पर सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक गतिविधियों से सम्बन्ध रखती है।

इस समिति के गठन का मूल उद्देश्य अपने समाज में टीका प्रथा (तिलक समारोह) पर मात्र १) एवं नारियल तथा नेग के लिए फल एवं मिठाई लेने-देने की प्रथा चलाना है। दिखावा आदि प्रदर्शन, विवाहादि किसी भी अवसर पर न किया जाये। फिजूल खर्ची जैसे आतिशबाजी, फुलवारी, वाहन सजावट आदि बन्द करना। विवाह पर अनावश्यक, भारयुक्त, कष्ट प्रद दहेज देना अथवा लेना असंगत अर्थात् सीमित दहेज लेना अथवा देना। अश्लील नृत्य एवं सांग बन्द करना तथा बाजे वालों की संख्या क्रम ११ तक होगी। द्वार चारा सन्ध्या पूर्व करना। आभूषणों की मात्रा कम करना। नेग आदि पर पाँच व्यक्तियों से ज्यादा न जाना। एक नेग में मात्र एक अंगूठी का प्रयोग करना। मृतक भोज पर पूर्ण पाबन्दी लगाना।

अग्रवाल नवयुवक मंडल, हटा (दमोह)

दमोह जिलान्तर्गत सुनार नदी के तट पर बसा हटा एक ऐतिहासिक नगरी है। इसके छोटे से आँचल में बसे अग्रवालों की प्रतिनिधि सभा वर्षों से समाज सेवा कार्य में संलग्न है।

सन् १९६८ से अग्रज्योति वार्षिक पत्रिका द्वारा समाज में जागरण कार्य में संलग्न रही है।

यह संस्था अग्रवाल सम्मेलनों एवं सामूहिक विवाहों के आयोजनों द्वारा भी अग्रवाल समाज की अच्छी सेवा कर रही है।

इन्दौर नगर अग्रवाल नवयुवक संघ, इन्दौर

नवोदित इस संघ का उदय निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अग्रसेन जयन्ती पर हुआ है :—

(१) सामूहिक विवाहों का आयोजन, (२) विधवा विवाह को प्रोत्साहन, (३) अग्रोहा विकास के लिए तन, मन, धन से सहयोग हेतु, (४) मेधावी छात्रों का अभिनन्दन, (५) सहकारी बैंक की स्थापना, (६) दहेज प्रथा पर प्रतिबन्ध, (७) अ० भा० अग्रवाल संस्थाओं एवं मध्य प्रदेश अग्रवाल महासंघ के निर्णयों को क्रियान्वित करना, (८) जयन्ती समारोह एवं स्मारिका का प्रकाशन आदि।

इस संघ की ओर से 'अग्रगामी' नाम से स्मारिका का प्रकाशन सुन्दर रूप में किया जाता है।

मध्य भारत अग्रवाल सभा, इन्दौर (म० प्र०)

श्री मध्यभारत अग्रवाल सभा की स्थापना १ जनवरी सन् १९२० में हुई थी। सभा के सदस्यों की संख्या ६०० है तथा इसके प्रचार क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या लगभग ३०००० है।

इस सभा द्वारा अनेक संस्थानों का संचालन होता है जैसे धर्मशाला, मन्दिर, पाठशाला, हायर सेकण्ड्री विद्यालय, बैंक आदि।

सभा की स्थापना का उद्देश्य समाज में एकता व भाईचारे की भावना को पैदा करना है।

सभा द्वारा सन् १९२० व सन् १९७६ में अ० भा० अग्रवाल सम्मेलन आयोजित किए गए। अग्रसेन जयन्ती उत्सव तथा समाज संगठन के अनेकानेक कार्यक्रम समय-समय पर आयोजित किए जाते रहे हैं और भविष्य में भी किए जाएँगे।

अग्रवाल डोडवाना पचायत ट्रस्ट, इन्दौर

इस ट्रस्ट की स्थापना सन् १८७७ में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या ७ है। वैसे तो इन्दौर नगर में अग्रवालों की संख्या लगभग ३० हजार है किन्तु यह ट्रस्ट १५० अग्रवाल परिवारों का प्रतिनिधित्व करता है।

असहायों की सहायता तथा जाति संगठन, इस ट्रस्ट के मुख्य उद्देश्य हैं।

इस ट्रस्ट की अचल सम्पत्ति निम्मांकित है :—

pdfelement
Remove Watermark Now

१. अग्रवाल डीडवाना पंचायत ट्रस्ट धर्मशाला, ५९, सर हुकमचन्द मार्ग, इन्दौर ।
२. श्रीराम मन्दिर ५८, सर हुकमचन्द मार्ग, इन्दौर ।
३. नृसिंह मन्दिर इन्दौर तथा मन्दसौर स्थित इस ट्रस्ट के चार मकान ।

सम्पर्क सूत्र—श्री बाबूलाल मित्तल
मन्त्री—अग्रवाल डीडवाना पंचायत ट्रस्ट,
५९, सर हुकमचन्द मार्ग, इन्दौर (म० प्र०)

उत्तर प्रदेशीय अग्रवाल संघ, इन्दौर

इस संघ की स्थापना अप्रैल सन् १९७४ में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या १५० है जिनमें अधिकांश उत्तर प्रदेशीय अग्रवाल हैं। इस संघ के प्रचार क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या लगभग १००० है।

अग्रवाल समाज में व्याप्त दस्सा बीसा आदि का भेदभाव मिटाना, और अग्रवालों की उपजातियों को एक सूत्र में बांधना, दहेज प्रथा का उन्मूलन, असहाय व्यक्तियों की कन्याओं के विवाह में सहायता देना, महिलाओं के उत्थान के लिये गृह उद्योग स्थाहित करना, तथा महिला सिलाई केन्द्र आदि की स्थापना करना इस संघ के मुख्य उद्देश्य हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु यह संघ सदैव तत्पर रहता है।

सभा के वर्तमान पदाधिकारी—

अध्यक्ष—श्री गौरी शंकर जी गुप्त

मन्त्री—श्री शिव प्रसाद जी गर्ग

कोषाध्यक्ष—श्री मनोहर लाल जी गुप्त

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री सतीश चन्द्र जी गुप्त, केशव चन्द्र जी जैन, लक्ष्मी नारायण जी अग्रवाल, शिव प्रसाद जी गर्ग, जितेन्द्र कुमार जी बंसल, सुरेन्द्र जी अग्रवाल।

सम्पर्क सूत्र—१. श्री शिव प्रसाद जी गर्ग,
मन्त्री—उत्तर प्रदेशीय अग्रवाल संघ
७, नीलकण्ठ कालोनी, इन्दौर (म० प्र०)
२-शुद्ध खादी भण्डार, १८७, जेल रोड, इन्दौर (म० प्र०)

श्री अग्रवाल सभा, भिण्ड

श्री अग्रवाल सभा, भिण्ड की स्थापना सन् १९७४ में हुई थी। वर्तमान में सभा की सदस्य संख्या करीब १०० थी। सभा के विधान के अनुसार एक परिवार से एक सदस्य होता है।

भिण्ड नगर में करीब ६०० अग्रवाल परिवार हैं तथा जनसंख्या लगभग दो हजार है।

सभा का निजी भवन है। दो मन्दिर भी सभा के संचालन में हैं जिनमें एक मन्दिर के स्वामित्व का मामला चल रहा है। बारह मासी प्याऊ भी हैं। आर्थिक दृष्टि से कमजोर छात्र एवं छात्राओं को कक्षा ९ से स्नातकोत्तर कक्षाओं तक पुस्तकों के रूप में सहायता दी जाती है।

समाज में फैली कुरीतियों को दूर करना, संगठन बद्ध होकर कार्य करना व आपस में प्रेम भाव पैदा करना समाज के उद्देश्य हैं।

अग्रवाल समाज, भितरवार (ग्वालियर)

भितरवार में अग्रवालों के लगभग ३५ घर हैं। पहले यहाँ अग्रवालों का बहुत अच्छा संगठन था किन्तु कुछ समय से इसमें शिथिलता आ गयी थी। अतः सन् १९९९ में श्री घनश्याम दास जी गुप्त, भोपाल के प्रयत्नों ने इस संगठन को पुनर्जीवित किया है।

समाज की ओर से एक पुस्तकालय एवं वाचनालय चल रहे हैं।

अग्रवाल सभा, मुरैना (ग्वालियर)

मुरैना में अग्रवालों का पुराना संगठन है किन्तु शिथिलता आने के कारण सन् १९९९ ई० में अ० भा० अग्रवाल महासभा (रजि०) देहली की प्रेरणा पर श्री घनश्याम दास जी गुप्त भोपाल निवासी ने इस संगठन को पुनर्जीवित किया।

प्रसन्नता की बात है कि यहाँ का नवयुवक वर्ग समाज की उन्नति के लिए कटिबद्ध है। मुरैना में प्रतिवर्ष अग्रसेन जयन्ती का आयोजन उत्साहपूर्वक होता है।

इस नगर में अग्रसेन मन्दिर की स्थापना हो चुकी है जिसमें योग विद्या केन्द्र, स्वाध्याय मंडल, आध्यात्मिक केन्द्र स्थापित किए गए हैं।

अग्रवाल सभा मुरैना द्वारा संचालित मुरैना नगर के सराफा में एक अग्रसेन वाचनालय की स्थापना सन् १९५१ में हुई थी। सन् १९६१ तक इसके पास लगभग ५०० पुस्तकें थीं और वर्तमान में नाना प्रकार की पुस्तकों की संख्या लगभग २५०० बताई जाती है इनमें विद्यार्थियों की पुस्तकें तथा साहित्यिक पुस्तकें भी सम्मिलित की गई हैं।

वाचनालय के पास उपयोगार्थ अपनी सात अलमारियाँ हैं व ३ बिजली के पंखे हैं। इसका हाल सुन्दर चित्रों से सुसज्जित है। वाचनालय सभी के लिए प्रातः ७ बजे से १० बजे तक समान रूप से खुला रहता है।

इसमें लगभग १००-१२५ खाते दार हैं जो पुस्तकालय से पढ़ने के लिए पुस्तकें ले जाते हैं। वाचनालय में प्रतिदिन पाठकों की औसत उपस्थिति ४०-५० रहती है इसका अपना विधान है तथा एक कार्यकारिणी द्वारा इसका प्रबन्ध संचालन होता है।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल सिलाई प्रशिक्षण केन्द्र—मुरैना में छोटी बजरिया में अग्रवाल समाज की ओर से एक महिला समाज सिलाई प्रशिक्षण केन्द्र का संचालन हो रहा है। केन्द्र में इस समय लगभग २० छात्राएँ है जो कढ़ाई व सिलाई का प्रशिक्षण ले रही हैं। सिलाई के लिए १) तथा कढ़ाई के लिए २) मासिक शुल्क लगता है।

अग्रवाल समाज, तूमड़ा (नरसिंह पुर)

मध्य प्रदेश के नरसिंह पुर जिले में रेलवे स्टेशन गाडरवारा से १८ मील पश्चिम दिशा में तूमड़ा एक छोटा सा कस्बा है जिसमें लगभग ३० घर अग्रवाल भाइयों के है। सभी अग्रवाल भाई कृषि एवं व्यवसाय की ओर अग्रसर व उन्नतिशील हो रहे हैं। ग्राम में अग्रवाल समाज संगठन लगभग बीस वर्ष पूर्व से कार्यरत है।

यह तूमड़ा ग्राम "साँई खेड़ा अग्रवाल मंडल" का एक अंग है। साँई खेड़ा अग्रवाल मंडल करीबन ३५ ग्रामों में फैला हुआ है। सामाजिक इतिहास की दृष्टि से साँई खेड़ा मंडल मध्य प्रदेश में गोंडवाना का प्रमुख अग्रवाल थोक माना गया है।

इस ग्राम में अग्रवाल समाज का अच्छा संगठन है। यहाँ समाज के प्रत्येक परिवार ने आपस में धनराशि एकत्र कर अपने समाज के लिए आवश्यक बर्तन आदि सामान एकत्र कर लिए हैं, जो हमेशा विवाह आदि के अवसर पर हर परिवार को उपयोग करने को निःशुल्क मिलता है।

इस ग्राम के निवासी श्री पटेल प्रेम नारायण जी अग्रवाल ने सन् १९६१ में प्रान्तीय अग्रवाल सभा का आयोजन किया था। इस ग्राम के प्रायः सभी अग्रवाल परिवार धन जन से सम्पन्न हैं। इनमें श्री गनेश राम जी अग्रवाल एवं उनकी धर्म परायणा श्रीमती बसन्ती बाई जी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने पुत्र अभाव की पूर्ति हेतु ईश्वर की प्रेरणा से इस ग्राम में भगवान का एक विशाल मन्दिर एक लाख रुपये की लागत से बनाया है जिसकी प्रतिष्ठा दिनाँक १३-५-६८ को की गई थी। समाज में कोई भी कार्य आता है तो हार्दिक भाव से समाज की सेवा तन मन धन से करने को तत्पर रहती है।

अग्रवाल बाल विकास मंडल, उज्जैन (म० प्र०)

अग्रवाल बाल विकास मण्डल की स्थापना १ सितम्बर, १९६४ को हुई थी। गत १३ वर्षों में मंडल ने यथेष्ट प्रगति की है। मण्डल का उद्देश्य अग्रवाल बालकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास करना है। इसी उद्देश्य को लेकर मंडल अपना कार्य कर रहा है।

मण्डल कई छोटी बड़ी प्रतियोगिताएँ एवं समारोह आयोजित करता रहता है जिनमें शरदपूर्णिमा, बाल दिवस, २६ जनवरी, वार्षिक दिवस तथा रक्षा बन्धन आदि मुख्य हैं।

मंडल द्वारा एक वाचनालय तथा पुस्तकालय भी चलाया जाता है। इस पुस्तकालय में सदस्यों को सभी प्रकार की पुस्तकें उपलब्ध हैं। इस पुस्तकालय में करीब ४ हजार पुस्तकें हैं इसके साथ-साथ कई दैनिक पत्र तथा कई मासिक पत्रिकाएँ भी मंगवाई जाती हैं। सन् १९६५ से गरीब छात्रों को निःशुल्क पुस्तकें प्रदान की जाती हैं। क्रीड़ा विभाग को मजबूत बनाने तथा सदस्यों का शारीरिक विकास करने के लिए मंडल द्वारा सन् १९६६ में अग्रसेन क्लब की स्थापना की गई। क्लब में बेडमिंटन, कैरम, शतरंज, कबड्डी आदि खेलों के साथ-साथ भाषण, वाद-विवाद तथा निबन्ध आदि साहित्यिक विषयों की भी व्यवस्था है। क्रीड़ा मंडल सार्वजनिक है लेकिन प्रधानता जातीय बन्धुओं के लिए ही है।

मंडल ने सन् ६६ में ही गरीब अग्रवाल बन्धुओं की सहायतार्थ एक फण्ड की स्थापना की है। इस फण्ड से कक्षा एक से आठ तक के निर्धन छात्र एवं छात्राओं की फीस दी जाती है।

मंडल ने एक मासिक पत्र 'अग्र सन्देश' का प्रकाशन जयन्ती पर्व १९६६ ई० से समाज को दृढ़ एवं मजबूत बनाने के लिए प्रारम्भ किया। इस पत्रिका को समाज के कई प्रतिष्ठित महानुभावों का सहयोग प्राप्त है।

सिरोंजिया अग्रवाल पंचायत, भोपाल

इस पंचायत की स्थापना सन् १९७३ में हुई थी। इसके सदस्यों की संख्या १५०० है। सामाजिक संगठन, शिक्षा प्रसार, सामाजिक कार्यों को सम्पन्न करना आदि कार्य इस पंचायत के प्रमुख उद्देश्य हैं। इस पंचायत के अधिकार में एक अग्रवाल पाठशाला है जिसके जीर्णोद्धार पर ६०००० /-रुपये व्यय हुये हैं। इसके अधिकार क्षेत्र में एक पंचायती मन्दिर तथा गोपी लाल मिट्ठू लाल ट्रस्ट भी है।

सन् १९३७ में श्री गोपीलाल मिट्ठूलाल ट्रस्ट के संस्थापक श्री मिट्ठूलाल जी ने अन्तिम इच्छा प्रकट की थी कि उनकी सम्पत्ति से सार्वजनिक हित के लिये एक धर्मशाला बनवाई जाये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये सर्वश्री रतनलाल राधाकिशन सर्राफ ने कादरमियां का महल ५५००० रुपये में क्रय किया और सिरोंजिया अग्रवाल बन्धुओं ने दान देकर ७०००० रुपये की लागत से इस भवन का निर्माण कराया। आज दिन इस भवन का मूल्य ५ लाख रुपये से अधिक है।

इस सभा के पास विवाह आदि अवसरों पर काम आने वाले वर्तनों का विशा
भण्डार है।

सम्पर्क सूत्र—श्री राजमल जी मंग
मन्त्री—सिरोंजिया अग्रवाल पंचाय
राजरंग कटपीस हाउस, ४६ चौक, भोपाल (म० प्र

pdfelement
Remove Watermark Now

मारवाड़ी अग्रवाल समाज, विदिशा

इस संस्था का नाम श्री मारवाड़ी अग्रवाल समाज, विदिशा है। यह मारवाड़ी अग्रवालों की बहुत पुरानी समाज है। इस समाज का मूल उद्देश्य समाज संगठन तथा समाज में व्याप्त कुरीतियों का निवारण करना है। इस समाज के ७८ परिवार सदस्य हैं।

इस समाज के अन्तर्गत अग्रवाल युवक संगठन, अग्रवाल युवा क्लब तथा अग्रवाल महिला मण्डल सक्रिय रूप से समाज का कार्य करते हैं। यह समाज अपने क्षेत्र की सर्वाधिक पुरानी संस्था है जो चिरकाल से समाज की सेवा करती आ रही है। इस समाज के प्रचार क्षेत्र में अग्रवालों की संख्या ६०० है।

इस समाज की प्रबन्ध व्यवस्था जिन महानुभावों के हाथों में है उनकी नामावली निम्न प्रकार है :—

अध्यक्ष—श्री नरवदा प्रसाद जी मंगल **मन्त्री**—श्री प्रकाश चन्द्र जी गर्ग,
सहमन्त्री—श्री मनमोहन दास जी बंसल **कोषाध्यक्ष**—श्री सत्य नारायण जी पाटौदिया

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री लक्ष्मी चन्द जी बंसल, रामेश्वर दयालु जी बंसल, मोहन बाबू सिंहल, हरिशंकर जी एरण, रमेश कुमार जी गर्ग तथा चन्द्र मोहन जी बंसल।

सम्पर्क सूत्र—(१) श्री प्रकाश चन्द्र जी गर्ग, एम० एस० सी०,
मन्त्री—मारवाड़ी अग्रवाल समाज,
८८, नदवाना मारमाड़ी अग्रवाल पंचायत, विदिशा (म० प्र०)
(२) अग्रवाल घी स्टोर, तिलक चौक विदिशा

अग्रवाल सभा, मण्डला

अग्रवाल सभा, मण्डल की स्थापना सन् १९३२-३३ में हुई थी। इस सभा के सदस्यों की संख्या १५० है तथा कार्य क्षेत्र मण्डल जिला है। यह सभा अपने क्षेत्र के लगभग २५०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करता है।

इस सभा का मुख्य उद्देश्य है—सामाजिक संगठन और इसके माध्यम से समाज को आगे ले जाना।

इस सभा के अन्तर्गत निम्नांकित संस्थायें कार्यरत हैं :—

१. अग्रवाल पंचायत, मण्डला, २. अग्रवाल नवयुवक मण्डल, मण्डला, ३. अग्रवाल महिला मण्डल, मण्डला, ४. अग्रवाल सार्वजनिक पुस्तकालय, मण्डला, ५. अग्रवाल समाज का टेंट हाउस।

उपर्युक्त सभी संस्थाओं के कार्यक्रम सभा के अपने भवन में चलते हैं। सभा भवन तथा संस्थाओं के सामान का मूल्य १ लाख २० हजार रुपये है।

अग्रवाल सभा, मण्डला का संगठन बहुत पुराना है। सभा की परम्परा की रक्षार्थ सभी अग्रवाल बन्धु बहुत उत्साहपूर्वक सभा के कार्यक्रमों में भाग लेते हैं। सरकार से मान्यता प्राप्त अग्रवाल पुस्तकालय में ८००० पुस्तकें हैं इनमें से कई महत्व की पांडुलिपियाँ भी हैं।

वर्तमान में इस सभा एवं उसकी संस्थाओं की प्रबन्ध व्यवस्था निम्नांकित पदाधिकारियों के हाथ में है :—

१. अग्रवाल पंचायत
सरपंच—श्री गोकुल प्रसाद जी बजाज,
उपसरपंच—श्री बद्री प्रसाद जी अग्रवाल,
मन्त्री—श्री गिरजा शंकर जी अग्रवाल

२. अग्रवाल नवयुवक मंडल
अध्यक्ष—श्री नन्द किशोर जी अग्रवाल,
उपाध्यक्ष—श्री रमेश चन्द जी अग्रवाल,
मन्त्री—श्री सुरेश चन्द जी अग्रवाल,

३. अग्रवाल महिला मण्डल
अध्यक्षा—श्रीमती मनोरमा देवी अग्रवाल,
उपाध्यक्ष—श्रीमती विद्या देवी अग्रवाल,
मन्त्री—श्रीमती रामा देवी अग्रवाल

४. अग्रवाल सार्वजनिक पुस्तकालय,
अध्यक्ष—श्री नरेश चन्द जी अग्रवाल,
मन्त्री—श्री गिरजा शंकर जी अग्रवाल,
ग्रन्थपाल—श्री केदार नाथ जी अग्रवाल
व्यवस्थापक—श्री राम विलास जी अग्रवाल।

सम्पर्क सूत्र—श्री गिरजा शंकर जी अग्रवाल,
मन्त्री – अग्रवाल सभा, मण्डला (म० प्र०)

अग्रवाल जयन्ती समारोह, कांसाबेल (रायगढ़)

इस संस्था का नाम श्री अग्रसेन जयन्ती समारोह है। इस संस्था की स्थापना १० अक्टूबर १९८० में हुई थी। इसकी सदस्य संख्या ६५ है। समाज में एकता स्थापित करना, तथा पारस्परिक प्रेम भाव बढ़ाना तथा महाराजा अग्रसेन जयन्ती मनाना है।

इस संस्था के पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी सदस्य निम्नांकित हैं :—

अध्यक्ष—श्री जवाहर लाल जी जिन्दल, **उपाध्यक्ष**—श्री सतीश कुमार जी गर्ग
सचिव—श्री गोकुल चन्द जी जिन्दल **सांस्कृतिक सचिव**—श्री राम भगत जी गोयल
कोषाध्यक्ष—श्री तारा चन्द जी गोयल

संरक्षकगण—सर्वश्री मनोहर लाल जी बंसल, गोपी राम जी बंसल, रामेश्वर दास जी गोयल, श्रीराम गोयल, इन्द्रमल जी सिंहल।

सम्पर्क सूत्र—श्री जवाहर लाल जी, जिन्दल
अध्यक्ष—श्री अग्रसेन जयन्ती समारोह,
कांसाबेल (रायगढ़) म० प्र०

तरुण अग्रवाल मंडल, इटारसी

तरुण अग्रवाल मंडल की स्थापना सन् १९५२ में हुई तथा १९५४ में पंजीकरण

pdfelement
Remove Watermark Now

हुआ। इसके ६६ सदस्य हैं। नगर में लगभग ११५ अग्रवाल परिवार हैं।

मंडल का सभी सुविधाओं से युक्त एक अग्रवाल भवन है। समाज सेवा, कुरीतियों की समाप्ति, संगठन, सामाजिक उन्नति, मृत्युभोज व आतिशबाजी बन्द। मिलनी पर नियंत्रण, सामाजिक चेतना, पीड़ित एवं असहाय मानव की सेवा, मरीजों को फल वितरण आदि मंडल के उद्देश्य हैं।

अग्रवाल तरुण मण्डल के वर्तमान पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्यों के नाम निम्नांकित हैं :—

१. **अध्यक्ष**—श्री जे० पी० अग्रवाल, २. **उपाध्यक्ष**—श्री राम नारायण जी अग्रवाल, ३. **मन्त्री**—श्री बाबू लाल जी अग्रवाल ४. **उपमन्त्री**—श्री राजेन्द्र कुमार अग्रवाल ५. **कोषाध्यक्ष**—श्री श्याम सुन्दर जी अग्रवाल

कार्यकारिणी के सदस्य—सर्व श्री डा० बी० जी० अग्रवाल, डा० आर० बी० अग्रवाल, घनश्यामदास अग्रवाल।

सम्पर्क सूत्र—श्री बाबू लाल जी अग्रवाल,
मन्त्री – तरुण अग्रवाल मण्डल,
तालाब के पास, इटारसी (म० प्र०)

अग्रसेन जनकल्याण समिति, भिलाई

भिन्न भिन्न प्रांतों से भिलाई नगर आये अग्रवाल बन्धुओं को गठित करने का प्रयास सर्वप्रथम १३ नवम्बर १९६६ को किया गया था। इसके बाद संगठन का प्रयास लगातार जारी रखा गया जिसका सुखद परिणाम निकला ३ दिसम्बर १९६६ की तीसरी बैठक में, जबकि संगठन के नियमित संचालन के लिए विधिवत् एक कमेटी का गठन किया गया, जिसमें श्री भूमित्र गुप्ता को संगठन के प्रथम संस्थापक अध्यक्ष होने का गौरव प्राप्त हुआ। सचिव पद पर चुना गया श्री वासुदेव मित्तल को। आरंभ में संगठन का नाम 'अग्रवाल समाज' रखा गया तथा सीमित सदस्यों के इस संगठन की गतिविधियाँ लगातार चलती रहीं, इसी तारतम्य में संगठन के लिए एक भवन निर्माण का प्रस्ताव अग्रवाल समाज की चतुर्थ बैठक में १८ दिसम्बर १९६६ को स्वीकृत किया गया।

अग्रवाल समाज, भिलाई नगर द्वारा प्रथम "अग्रसेन जयन्ती" समारोह ४ अक्टूबर १९६७ को सनातन धर्म सभा मन्दिर में मनाया गया। समारोह की अध्यक्षता श्री शिवकुमार जी ने की। इस समारोह में महिलाओं व बच्चों के लिए विभिन्न कार्यक्रम भी आयोजित किए गये। इससे पूर्व अग्रवाल समाज द्वारा प्रथम बार "होली मिलन" का आयोजन २६ मार्च १९६७ को सफलता पूर्वक किया गया २९ जनवरी १९६७ को मड़ौदा टैंक के समीप प्रथम सार्वजनिक वनभोज का आयोजन भी किया गया था।

अग्रवाल समाज ने प्रथम वार्षिक बैठक महासभा के रूप में ४ फरवरी १९६८ को मैत्री बाग में आयोजित की जिसमें समाज के ५५ सदस्य सपरिवार सम्मिलित हुए। महासभा की बैठक में संविधान में कुछ संशोधन स्वीकृत किए गये। इसी बैठक में नयी कार्यकारिणी का गठन किया गया और सेठ बालकृष्ण जी समाज के नये अध्यक्ष निर्वाचित हुए जो जीवन पर्यन्त अध्यक्ष बने रहे। इस कार्यकारिणी में सचिव पद पर श्री परमात्मा सरन गर्ग निर्वाचित हुए। अग्रवाल समाज द्वारा आयोजित किये जाने वाले होली मिलन, पिकनिक तथा अग्रसेन जयन्ती समारोह जैसे कार्यक्रम नियमित रूप से प्रतिवर्ष सम्पन्न किये जाते रहे हैं, महासभा की तीसरी बैठक में, जो कि ८ फरवरी १९७० को मैत्री बाग में आयोजित की गई, अग्रवाल समाज का नाम परिवर्तित करके "अग्रसेन जन कल्याण समिति" रखने का निर्णय लिया गया। इसके साथ ही समिति को पंजीकृत कराने का निर्णय भी लिया गया ताकि भवन निर्माण का कार्य प्रारम्भ करने में सुविधा हो सके। इस वर्ष फिर श्री बासुदेव जी मित्तल सचिव पद के लिए निर्वाचित हुए जिनका कार्य काल दो वर्ष रहा, इसके बाद १९७२ से ३ वर्ष के लिए सचिव पद पर श्री रामनाथ गर्ग रहे, तथा १९७५ में इस पद का भार सौंपा गया श्री प्रेमचन्द बंसल को।

अग्रसेन जन कल्याण समिति का पंजीयन १९७० में हो जाने के पश्चात अग्रसेन भवन के निर्माण के लिए भूमि आबंटन के संबंध में प्रयास तेज कर दिये और इसके लिए भिलाई इस्पात संयंत्र के महा प्रबन्धक से सम्पर्क किया गया, जिसमें समिति को सफलता भी प्राप्त हुई। भिलाई इस्पात संयंत्र की ओर से २७ जून १९७३ को प्राप्त पत्र के आधार पर रु० २९३८/- जमा करा दिये गये। भिलाई प्रबंधकों द्वारा अग्रसेन भवन के लिए भूमि पहले सेक्टर—६ के विश्राम गृह के निकट आबंटित की गई थी, जिसे समिति ने सहर्ष स्वीकार कर लिया था लेकिन बाद में भूमि की उपयुक्तता पर विशेषज्ञों तथा समिति के प्रबुद्ध सदस्यों द्वारा शंका व्यक्त करने के बाद एवं आबंटित भूमि पर भवन निर्माण में अत्याधिक व्यय की संभावना को ध्यान में रखते हुए समिति की ओर से आग्रह किया गया कि आबंटित भूमि के बदले किसी अन्य उपयुक्त स्थान पर भूमि प्रदान की जाये।

१४ जुलाई १९७५ को समिति के अध्यक्ष श्री बालकृष्ण जी के निधन से समिति ने अपना अमूल्य मार्गदर्शक तथा शुभचिंतक खो दिया। उनके असामयिक निधन के कारण, "अग्रसेन भवन" निर्माण संबंधी तैयारियों में बाधा सी उत्पन्न हो गई। उनके निधन के पश्चात निर्वाचित समिति के नये अध्यक्ष श्री बलवन्त राय जी जैन के कुश[illegible] नेतृत्व में "अग्रसेन भवन" के निर्माण संबंधी योजना को मूर्तरूप प्रदान करने के लि[illegible] प्रयास तेज कर दिया गया।

भिलाई संयंत्र के प्रबन्धकों ने समिति के आग्रह को अन्ततः स्वीकार [illegible] लिया और इस प्रकार संयंत्र की ओर से ३०,८०० वर्ग फुट भूखण्ड सेक्टर-६ में [illegible]

pdfelement
Remove Watermark Now

मंदिर तथा आर्य समाज मंदिर एवं रशियन ब्लाक्स के बीच में प्रदान किया गया जिसके लिए १८,०००) जमा करा दिए गए और भू-खण्ड की रजिस्ट्री कराई गई। भवन की संयोजना के लिए रायपुर के प्रसिद्ध वास्तुशिल्पी श्री टी० एम० घाटे को मानचित्र बनाने का कार्य सौंपा गया। सात लाख रुपये की अनुमानित लागत से बनने वाले "अग्रसेन भवन" के लिए धन एकत्र करने के लिए उपहार-युक्त दानपत्रों की बिक्री की गई और इस प्रकार दो प्रयासों में एक लाख-चालीस हजार रुपये एकत्र किये गये।

१९७७ में समिति ने अपने संविधान में कुछ संशोधन करके यह निश्चित किया कि कार्यकारिणी में एक महा-सचिव, २ सचिव व चार उपसचिवों का चुनाव किया जाये। प्रथम महासचिव श्री रामनाथ गर्ग हुए इनके एक वर्ष बाद १९७८ में श्री परमात्मा सरन गर्ग तथा १९७९ से इस पद पर श्री प्रेमचन्द बंसल असीन हैं। सम्प्रति इस सभा की सदस्य संख्या ३५० है।

"अग्रसेन भवन" निर्माण के लिए भूमि पूजन ५ मार्च १९७८ को किया गया। हवन की पूर्ण आहुति अध्यक्ष श्री बलवन्त राय जी जैन की अनुपस्थिति में समिति के उपाध्यक्ष श्री कुलदीप कुमार ने दी।

भवन निर्माण कार्य आरम्भ होने के साथ ही भवन के लिए आबंटित भूमि के पूर्व दिशा में २०४० वर्ग फुट तथा दक्षिण दिशा में संयंत्र ने २३२० वर्ग फुट संलग्न भूमि प्रदान करना स्वीकार कर लिया। इसके पश्चात भी समिति की ओर से उत्तर दिशा में संलग्न २०० × १०० भूखण्ड प्राप्त करने का प्रयास लगातार बना हुआ है।

'अग्रसेन भवन' के एक भाग का उद्घाटन संयंत्र के तत्कालीन प्रबन्ध निदेशक श्री शिवराज जैन द्वारा २२ सितम्बर १९७९ को सम्पन्न हुआ और उस वर्ष का अग्रसेन जयन्ती समारोह प्रथम बार अपने निजी भवन "अग्रसेन भवन" में आयोजित किया गया।

समिति की गतिविधियां एवं उपलब्धियाँ

१. समिति द्वारा प्रतिवर्ष होली मिलन कार्यक्रम का आयोजन।
२. समिति द्वारा प्रतिवर्ष किसी एक दर्शनीय स्थल का भ्रमण और पिकनिक का कार्यक्रम।
३. समय समय पर सामूहिक-भोज का आयोजन।
४. प्रतिवर्ष अग्रसेन जयन्ती समारोह के अवसर पर सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं खेलकूद का आयोजन।
५. समिति द्वारा सदस्यों के परिवारों के मेधावी छात्र/छात्राओं को प्रथम श्रेणी में सर्वाधिक अंक पाने पर पुरस्कारों द्वारा सम्मानित करना।
६. सदस्यों के परिवारों के ऐसे मेधावी छात्र/छात्राओं को जो आर्थिक कठिनाई

के कारण उच्च शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ हैं, उन की आर्थिक सहायता का प्रयास।

७. योग्य वर एवं बधुओं के चयन में सदस्यों को मार्गदर्शन।
८. समिति की ओर से समिति के प्रेरणा स्रोत स्व० सेठ बालकृष्ण जी की स्मृति में, उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र/छात्राओं के लिए प्रतिवर्ष वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। वर्तमान में यह दुर्ग जिला स्तर पर किया जा रहा है। परन्तु निकट भविष्य में इसके विस्तार की योजना है। इस प्रतियोगिता में व्यक्तिगत पुरस्कारों के अतिरिक्त विजेता-विद्यालय को "सेठ बालकृष्ण स्मृति रनिंग ट्राफी" भी प्रदान की जाती है।
९. हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि है नवनिर्मित 'अग्रसेन भवन'। यह भवन सर्व-साधारण के लिए उपलब्ध हैं।

यह भवन मुख्यतः अग्रवाल परिवारों एवं संस्थाओं द्वारा प्राप्त धन राशि से बना है किन्तु वह सर्वसाधारण के उपयोग के लिए खुला है। इस भवन के निर्माण में सबसे उल्लेखनीय योगदान श्री लाला जीया लाल जी सिंहल से मिला जिसके कारण यह भवन मात्र तीन वर्ष में पूरा हो गया। भवन निर्माण में अन्य सहयोगी एवं कर्मठ कार्यकर्ताओं में सर्वश्री ज्ञानचन्द जी अग्रवाल, सरदारमल गुप्त, श्रीकृष्ण सिंहल, रामकुमार गुप्त, धन प्रकाश जी गोयल, कुलदीप कुमार के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

१०. शादी विवाह एवं अन्य भोज समारोहों के लिए आवश्यक बर्तन एवं अन्य सामान भी समिति के पास उपलब्ध है।

इन सब उपलब्धियों के साथ-साथ भविष्य के लिए भी कुछ योजनाऐं हैं:—

१. अग्रसेन भवन में पुस्तकालय का शुभारंभ।
२. अग्रसेन महिला-मंडल, जिसकी पहली बैठक १५ फरवरी १९८१ को ही सम्पन्न हुई थी, उसे पूर्ण विकसित रूप देकर महिला-प्रतिभाओं को समाज में सही स्थान दिलाना।
३. भिलाई इस्पात संयंत्र के प्रबन्धकों से प्रयास करके उत्तर दिशा की ओर संलग्न भूखण्ड प्राप्त करना तथा अग्रसेन भवन का विस्तार।
४. योग प्रशिक्षण।
५. एक रक्त कोष की स्थापना।
६. अग्रसेन किशोर मंडल की स्थापना के लिए प्रयास।

भवन का उद्घाटन श्रीमती शकुन्तला देवी धर्म पत्नी स्व० सेठ बालकृष्ण जी के कर कमलों द्वारा हुआ था।

pdfelement
Remove Watermark Now

अग्रवाल समाज सेवा समिति, भिलाई

इस समिति की स्थापना १५ अगस्त, १९६० ई० में हुई थी। इसके ७२ सदस्य हैं और यह समिति अपने क्षेत्र के ६०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करती है।

समाज में व्याप्त दहेज कुप्रथा एवं कुरीतियों का निवारण इस समिति के मुख्य उद्देश्य हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु समिति ने अपनी ३०-५-७६ की बैठक में समाज में नयी चेतना लाने के लिए निम्नांकित निर्णय किए हैं जिनके परिपालन कराने में यह समिति जागरूक है :—

(१) विवाह सम्बन्ध के योग्य लड़की देखने व दिखाने के अवसर पर लड़के सहित ५ स्त्री-पुरुष से अधिक न जायेंगे न बुलाये जायेंगे, (२) मिलनी में ४) से अधिक देना वर्जित है, (३) टीका के शुभ मुहूर्त पर चाय, पान, सिगरेट से ही उपस्थित जनों का स्वागत किया जा सकेगा। अन्य कोई आडम्बर न होगा, (४) विवाह पर जीवनवार बन्द रहेगी। विवाह के पश्चात् स्वल्पाहार दिया जा सकेगा, (५) बारात के स्वागत में मार्ग में चाय या नास्ता आदि नहीं दिया जायेगा, (६) बारात केवल एक दिन ठहरेगी, (७) बारात में केवल ११ आदमियों का बैंड रहेगा जिसमें विवाह की रोशनी जनरेटर, रथ, आतिशबाजी तथा भंगड़े आदि आडम्बर नहीं हो सकेंगे।

सम्पर्क—श्री हजारी लाल जी दीवान
नया खुर्सी पार, भिलाई, (दुर्ग) म० प्र०

अग्रवाल पंचायत कमेटी, सागर

यह कमेटी बहुत पुरानी है जिसके २० सदस्य हैं। इस संस्था का अपना भवन है जो **"अग्रवाल सत्संग भवन"** के नाम से प्रसिद्ध है।

इस पंचायत के पदाधिकारी—

प्रधान—श्री सूरजमल जी अग्रवाल **मन्त्री**—श्री भगवान दास अग्रवाल
सम्पर्क सूत्र—श्री सूरजमल हरीवल्लभ जी अग्रवाल,
सराफा बाजार, सागर (म० प्र०)

अग्रवाल परिषद्, अम्बाह (मुरेना)

यह पुरानी संस्था है किन्तु कुछ समय से शिथिल पड़ी थी अतः इस की नवीन स्थापना सन् १९७१ में हुई थी। इसके सदस्यों की संख्या २११ है। यह परिषद् अपने प्रचार क्षेत्र के लगभग ८०० अग्रवालों का प्रतिनिधित्व करती है।

समाज सुधार, समाजोन्नति और समाज हितकारी कार्यों को लेकर इस सभा का उदय हुआ था। इस परिषद् ने अग्रवाल महिलाओं के हितार्थ महिला प्रौढ़शाला खोली है और सर्वसाधारण की भलाई के लिये स्थान-स्थान पर प्याऊ खोली गई हैं।

सभा ने अग्रवाल युवकों में चेतना उत्पन्न करने के लियु नवयुवक अग्रवाल संघ की स्थापना की है।

इस परिषद् का अपना भवन है जिसमें परिषद् का कार्यालय चलता है। अग्रवाल नवयुवक संघ विवाह आदि अवसरों पर समाज सेवा का सराहनीय कार्य करता है और भविष्य में भी यह अग्रसर होगा।

सन् १९७६ में नगर अम्बाह के अग्र बंधुओं की जनगणना की गई जिसका विवरण निम्नांकित है :—

परिवार	मुखिया	विवाहित		योग
	स्त्री पुरुष	लड़का,	लड़की	
१. बंसल परिवार	२६	१४	१४	५४
२. गोयल परिवार	९५	६७	६२	२२४
३. गोयन परिवार	२	२	१	५
४. मंगल परिवार	५५	३४	२९	११८
५. सिंगल परिवार	३३	२२	१२	६७
६. गर्ग परिवार	३६	२१	११	६८
७. मित्तल परिवार	१०	६	४	२०
सर्व योग	२५७	१६६,	१३३,	५५६

परिषद् के वर्तमान पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी सदस्य—

अध्यक्ष—श्री राम चरण लाल जी बंसल, **उपाध्यक्ष**—श्री जगदीश प्रसाद जी सिंघल, **महामन्त्री**— श्री सुरेश चन्द्र जी बंसल, **उपमहामन्त्री**—श्री श्री देवी राम जी गर्ग, **मन्त्री**—श्री राम लाल जी बंसल, **सहायक मन्त्री**—श्री राजा राम जी गर्ग, **कोषाध्यक्ष**—श्री रमेश चन्द्र जी गोयल, **आडीटर**—श्री श्री एल० एन० अग्रवाल।

कार्यकारिणी सदस्य—सर्वश्री विश्वम्भर दयाल जी गोयल, रमेश चन्द्र जी गोयल, गिरराज बंसल, विजय कुमार अग्रवाल।

सम्पर्क सूत्र

श्री राम चरण लाल जी बंसल
अध्यक्ष—अग्रवाल परिषद्
अग्रवाल भवन, अम्बाह (मुरेना)

श्री सुरेश चन्द जी बंसल
महामन्त्री—अग्रवाल परिषद्
अग्रवाल भवन, अम्बाह (मुरेना)

pdfelement
Remove Watermark Now